नमस्कार महामंत्र-
एक अनुशीलन

भाग - 1

साध्वी पुण्ययशा

© Jain Vishva Bharati   For Personal & Private Use Only   https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र—
एक अनुशीलन

भाग-1

साध्वी पुण्ययशा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकाशक : **जैन विश्वभारती**
लाडनूँ-341306 (राजस्थान)

© जैनविश्वभारती, लाडनूँ

आर्थिक सौजन्य : स्व. पिताश्री रामलालजी डागा एवं
मातुश्री सुरजीदेवी डागा की पुण्य स्मृति में
जीवनमल, मोहनलाल, गुलाबचन्द डागा परिवार
बीदासर/मुम्बई

प्रथम संस्करण : 2009

मूल्य :

लेजर टाइप सेटिंग : मोहन कम्प्यूटर्स, लाडनूँ, 9887111345

मुद्रक : श्री वर्धमान प्रेस, दिल्ली

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आशीर्वचन

नमस्कार महामंत्र साधना का शक्तिशाली प्रयोग है। साध्वी पुण्ययशा ने उसके अनेक पक्षों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

प्रत्येक वस्तु को अनेक कोणों से देखा जा सकता है। इससे उसके व्यापक स्वरूप को समझने का अवसर मिलता है। पाठक वर्ग के लिए यह उपयोगी हो सकेगा।

15 जनवरी, 2009 **आचार्य महाप्रज्ञ**

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वकथ्य

नवोन्मेषीय-प्रतिभा के धनी विवेकानन्द जब साधना करने के उद्देश्य से रामकृष्ण परमहंस के पास पहुँचे, तब रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द की मन:स्थिति का परीक्षण करते हुए कहा–''मेरे पास अष्ट सिद्धियां हैं, वे तुम्हें देना चाहता हूँ।'' आत्मजिज्ञासु, मुमुक्षु विवेकानन्द जिज्ञासा के स्वर में बोले– गुरुदेव! क्या सिद्धियों से ईश्वर की प्राप्ति हो सकेगी? रामकृष्ण परमहंस ने कहा–नहीं। तब विवेकानन्द बोले–मुझे तो पहले ईश्वर के दर्शन करने हैं।

भगवान् बुद्ध से शिष्य ने पूछा–भंते! पानी पर चलने की क्षमता वाली विलक्षण विद्या का क्या मूल्य है? भगवान् बुद्ध ने कहा–''सिर्फ दो कोड़ी, क्योंकि केवल पानी पर चलने के लिए इतनी साधना करनी व्यर्थ ही तो है। नदी तो दो कोड़ी देकर नाव से भी पार की जा सकती है।

उपरोक्त दोनों घटनाओं के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि सच्चे साधक का साध्य सिद्धियां और सुख-सुविधाएं नहीं हो सकती, उसका साध्य है–आत्मदर्शन। आत्मा और परमात्मा के अन्तर को यदि एक ही शब्द में बताया जाये तो वह है–विषमता। जब इस स्वरूप की विषमता का अन्तर समाप्त हो जाता है तब स्वरूप की समता प्रकट होती है। स्वरूप की समता प्रकट होते ही सम्पूर्ण निर्मलता की आभा प्रस्फुटित हो जाती है। वह आभा ही आत्मा की परम स्थिति है और उसे आत्मा से परमात्मा बनाती है। एक शेर में कहा गया है–

खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर के पहले
खुदा बन्दे से खुद पूछे बोल तेरी रजा क्या है?

भगवान् महावीर ने कहा–''अप्पा सो परमप्पा'' अर्थात् खुद से खुदा बनता है। जो आत्मा है, वही परमात्मा बनता है। नर से नारायण, आत्मा से परमात्मा यही प्रकृति का प्राकृतिक विकास क्रम है। नर से जुदा नारायण नहीं होता और आत्मा से अलग परमात्मा नहीं होता है।

अप्पा सो परमप्पा का सिद्धान्त प्रत्येक ऊँच-नीच आत्मा में सम्यक् आस्था स्थापित करता हुआ उनमें उच्चतम विकास कर लेने की अटूट प्रेरणा भरता है। केवल इस हद तक खुद को बुलन्द बनाने की अपेक्षा है। इस बुलन्दी या आत्मदर्शन की भूमिका में नमस्कार महामंत्र नींव के समान है। यह परम आध्यात्मिक मंत्र है। मंत्राधिराज महामंत्र अचिन्त्य चिंतामणि, अलौकिक पारसमणि और अद्वितीय हीरकणी है। यह अनन्त-अनन्त शक्तियों का भंडार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तथा अपाय-निरोध का राजमार्ग है। यह अनुपम, अनुत्तर, अपराजित असाम्प्रदायिक और अनादि मंत्र है। इसके जप से हिंसक मनोवृत्तियां क्षीण होती हैं। फलत: अहिंसा के प्रति आन्तरिक अनुराग जागृत होता है। इस अपेक्षा से प्राचीन आचार्यों ने इसे अहिंसक मंत्र भी कहा है। अहिंसक मंत्र होने के कारण इसकी साधना सुखकर, शांतिप्रद और अभयकारक है। इस प्रकार इसे समता, शांति, समृद्धि और श्रेष्ठता का प्रतीक मंत्र कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक हमेशा जिज्ञासु, विनम्र, धैर्यशील और अन्वेषण में संलग्न रहता है उसी प्रकार साधना के क्षेत्र में भी एकाग्रता, अविचल संकल्प, धैर्य, लगन, नि:संशय और सतत् साधना साधक की सफलता के सशक्त सोपान हैं।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में राधावेध को साधना, पर्वत को मूल से उखाड़ना तथा गगन में गमन करना दुर्लभ नहीं रहा है परन्तु अलौकिक महिमा से अभिमंडित इस परमेष्ठी-मंत्र की प्राप्ति दुर्लभ ही नहीं, अत्यन्त दुर्लभ है। इस शक्तिशाली और सिद्ध मंत्र में हमारे जीवन के सारे उद्देश्य निहित हैं। जगत् में कोई ऐसा मंत्र नहीं होगा, जिसमें जीवन के उद्देश्य लिखे गये हों। व्यक्ति-सापेक्ष न होकर गुण-सापेक्ष होना ही इस महामंत्र की विरल विशेषता है। मंत्र स्थित अर्हत् आत्मा का स्वरूप है, सिद्ध आत्मा का पूर्ण शुद्ध स्वरूप है, आचार्य चारित्रिक निर्मलता के प्रेरक हैं, उपाध्याय ज्ञान के देवता और मुनि निष्काम सेवा के संवाहक हैं। सचमुच नमस्कार महामंत्र एक मात्र आध्यात्मिक उन्नयन का महान सेतु है।

इसकी रचना, शक्तिशाली वर्णों की संयोजना, ध्वनि प्रकंपन और शब्द विज्ञान अपने आप में अनूठा और अद्वितीय है। कुछ समय पूर्व तक सूक्ष्म ध्वनि तरंगों का कर्तृत्व धार्मिक जगत् तक ही सीमित था, किन्तु वर्तमान युग में सूक्ष्म ध्वनि वैज्ञानिक तत्त्व बन गई है। सम्पूर्ण विश्व की घटनाओं को एक टेबल पर लाना अब इन्टरनेट के द्वारा आसान हो चुका है। कम्प्युटर के द्वारा चेट (विचार-विमर्श) के प्रयोग की तुलना जैन आगमों में प्राप्त आहारक लब्धि से की जा सकती है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनि अपनी जिज्ञासा का समाधान प्राप्त करने के लिए अपने शरीर से एक पुतला निकालते थे, जिसे आहारक शरीर कहा जाता था। जिसके माध्यम से वे विशिष्ट ज्ञानी (केवल ज्ञानी) व्यक्ति से जिज्ञासा का बिना विलम्ब समाधान पा लेते थे। वर्तमान में चेट के द्वारा विशेष व्यक्तियों से अपनी जिज्ञासा का समाधान शीघ्र पाया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सुना है एक बार सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ ओंकारनाथ लाहौर के प्राणीगृह को देखने गये। पंडितजी को देखते ही एक बाघ गर्जना करने लगा। तुरंत ही पंडितजी ने एक राग छेड़ी।............राग का श्रवण करते ही वह बाघ पालतू कुत्ते की भाँति एकदम शांत होकर पंडितजी को देखने लगा।

रूसी वैज्ञानिक एस.बी. कोदाफे ने एक संगीत ध्वनि के द्वारा आँखों की बीमारी दूर करने के सफल प्रयोग किये हैं।

जापान में स्वप्न रिकॉर्ड करने के लिए एक मशीन का निर्माण किया गया है जो मनुष्य की आँखों और जबड़ों पर फीट की जाती है। क्योंकि स्वप्न देखते समय मनुष्य की आँखों की पुतलियां बहुत तेजी से काम करती हैं। इस मशीन का उपयोग अपराध भावना की जानकारी करने हेतु विशेष रूप से किया जाता है।

अर्हत् भगवान मालकोश राग में देशना (प्रवचन) देते थे जिसे सुनते ही प्राणियों के रौद्र परिणाम तुरन्त नष्ट हो जाते थे और वे अत्यन्त शांत व गंभीर बन जाया करते थे।

वैज्ञानिक प्रयोगों ने भी यह सिद्ध किया है कि यदि विशेष प्रकार का मधुर संगीत बजाया जाये तो वृक्ष अधिक फल देने लगते हैं, गायें अधिक दूध देती हैं। थोड़े आगे के प्रयोगों ने यह प्रमाणित किया है कि यदि लगातार प्रिय संगीत बजाया जाये, मंत्रों का प्रयोग किया जाये तो वृक्ष मौसम से पहले ही फल देने लगते हैं। शब्द की प्रभावशाली शक्ति को कौन इन्कार कर सकता है? ध्वनि तरंगों की शक्ति शारीरिक शक्तियों से अपेक्षाकृत सूक्ष्म है। आधुनिक संचार-विज्ञान के अनुसार ध्वनि-तरंगें अधिक दूरी की यात्रा नहीं कर सकती। इसलिए ध्वनि तरंगों को विद्युत् चुम्बकीय तरंगों में बदलकर प्रेषित किया जाता है। इस प्रक्रिया का नाम 'मोड्युलेशन' है। मंत्रविद्या में भी ध्वनि तरंगों को विद्युत प्रकंपनों में बदला जाता है। इन विद्युत् तरंगों को मंत्र-शास्त्र में अग्नि-बीज कहा जाता है। ये अग्नि-बीज मस्तिष्क की उच्च ट्रांसमिशन क्षमता से सुदूर अदृश्य लोक में प्रतिष्ठित देवता तक मंत्र, आदेश वैसे ही पहुँचा देते हैं जैसे आज उपग्रह के जरिये मैनफ्रेम (मुख्य कम्प्युटर) तक संदेशों का ट्रांसमिशन किया जाता है।

प्राचीन समय में भी टेलीपेथी प्रक्रिया के द्वारा संदेशों का आदान-प्रदान ऋषि-मुनि करते थे। लगभग साठ वर्ष पूर्व की एक घटना है। एक वैज्ञानिक उत्तरी-ध्रुव की खोज में निकला था। उसके साथ एक शक्तिशाली वायरलेस सेट

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

था। इस यंत्र से वह अपने केन्द्र को समाचार भेजता था। एक व्यवस्था साथ में और भी की गई थी। एक अतीन्द्रिय चेतना सम्पन्न व्यक्ति से भी संदेशों का आदान-प्रदान होता था। वैज्ञानिकों को उस समय बहुत आश्चर्य हुआ जब मौसम की खराबी के कारण वायरलेस मैसेज (रेडियो-संदेश) न भेजे जा सके। जो भेजे गये, वे भी बाद में मिलाने पर 72 प्रतिशत से ज्यादा सही न निकले। जबकि उस अतीन्द्रिय दृष्टि प्राप्त व्यक्ति के माध्यम से भेजे और प्राप्त किये जाने वाले संदेश 80 प्रतिशत से 92 प्रतिशत तक सही और स्पष्ट सिद्ध हुए।

आजकल रूस और अमेरिका जैसे संपन्न तथा उन्नत देशों के वैज्ञानिक यह जानने के लिए बहुत समुत्सुक हैं कि जब आधुनिकतम यंत्र भी इतना अच्छा कार्य नहीं करते तब कैसे मनुष्य का साइकिक पावर सफल हो जाता है?

इन तथ्यों से निष्कर्ष निकलता है कि साइंस की शक्ति की अपेक्षा योग शक्ति के चमत्कार अधिक शक्तिशाली हैं। भौतिक जगत् में भाप की शक्ति, इलेक्ट्रोनिक शक्ति, विद्युत् शक्ति, गुरुत्वाकर्षण शक्ति—ये शक्तियां बड़ी मानी जाती हैं पर आत्मविश्वास उन सबका संचालक होने से उसकी शक्ति सबसे अधिक है। आत्मशक्ति व संकल्प-शक्ति का विकास ही शिव-संकल्प, भीष्म-प्रतिज्ञा अथवा भगीरथ प्रयत्न का पर्यायवाची बन सकता है जो नियति तथा प्राकृतिक शक्तियों को बदलने की क्षमता रखता है।

इतिहास यह भी बताता है कि आयुद्धशाला से युद्ध मैदानों तक अस्त्र-शस्त्र भी मंत्रों द्वारा भेजे जाते थे। ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, पाशुपतास्त्र आदि कई नाभिकीय प्रक्षेपास्त्रों को ढोने और दागने के लिए मंत्र-विद्या का प्रयोग किया जाता था। परामनोविज्ञान की भाषा में इसे दूर चालन कहते हैं। रणभेरी बजाने के पीछे भी यही उद्देश्य है कि सैनिक इतने जोश में आ जाये कि मरने का डर भूल जाये। इस जोश में ऐसे लड़े की शत्रुओं को परास्त कर दे। यह भी अनुभव किया जाता है कि पुंगी बजाने से सर्प आता है हारमोनियम, सितार, सारंगी आदि बजाने से नहीं। यह सारा शब्द ध्वनियों का ही चमत्कार है। ध्वनि तरंगों का विज्ञान, मंत्र-विज्ञान अति प्राचीन है। मंत्र-शक्ति से आत्मा की सुप्त चेतना का जागरण तथा अधोगामी चेतना का उर्ध्वीकरण किया जाता है।

यद्यपि चुम्बक चेतनाहीन होता है फिर भी इसके दोनों छोर किसी दूसरे चुम्बक के छोरों की मैत्री या घृणा को पहचान सकते हैं, या एक दूसरे को दूर फेंक सकते हैं। ऐसा क्यों होता है? कुछ नहीं कहा जा सकता, पर होता है। ठीक इसी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकार मंत्र शरीर और मन के विकारों को दूर फैंकता है। शरीर की प्रतिक्रियाओं पर प्रभाव डालता है। रक्त और स्नायुओं के माध्यम से रक्त संचार के विकार दूर करता है। इससे स्नायुओं को बल मिलता है। बुद्धिजीवी लोग जैसे न्यायाधीश, वकील, अध्यापक आदि नियमित रूप से नमस्कार महामंत्र का जप करें अथवा ध्यान करें तो वे अपने कार्यक्षेत्र में भी बहुत सफल और लाभान्वित हो सकते हैं।

मंत्रों के रचयिता महापुरुष बहुत सामर्थ्यवान होते हैं। उनकी रचनाओं में विशिष्ट प्रकार की सिद्धियां सन्निहित होती हैं। नमस्कार महामंत्र तो अर्हत् वाणी है। इसमें अष्ट कर्म क्षय का पूर्ण सामर्थ्य है। अत: इसके आराधक मोक्ष मंजिल को तो पाते ही हैं, पर साथ-साथ जिनकी वाणी और हृदय में यह महामंत्र रम जाता है उनके व्याधि, जल, अग्नि, चोर, सिंह, हाथी, संग्राम, तथा सर्प आदि के भय भी स्वत: नष्ट हो जाते हैं। इस महामंत्र के प्रभाव से शत्रु मित्र-रूप, विष अमृत-रूप, विपत्ति सम्पत्ति-रूप और दु:ख सुख-रूप में बदल जाते हैं। यह महाप्रभावी, विघ्न-विनाशक और मंगलकारी मंत्र है।

आत्म विकास के अभ्युदय में निमित्तों की सहभागिता भी अपना विशेष मूल्य रखती है। न जाने जिंदगी में कब, कौन किसका प्रेरक बन जाये? वि.सं. 2061, माघ शुक्ला त्रयोदशी (इ. सन् 22 फरवरी, 2005) मेरा संयम पर्याय के बाईसवें बसंत में प्रवेश। लाडनूं विश्वभारती का पावन प्रांगण। प्रमुदित मन। शुभ संकल्पों से अनुप्राणित प्राण चेतना। महाप्राण आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का पावन ऊर्जावलय। मैं श्रीचरणों में सविनय पंचाग प्रणति वंदन कर रही थी। साध्वी श्री सरोजकुमारी जी ने कहा—गुरुदेव! आज पुण्ययशाजी का दीक्षा दिवस है। परमाराध्य आचार्य प्रवर ने अमीय दृष्टि का वर्षण करते हुए मुझसे पूछा—''संयम पर्याय के कितने वर्ष हो गये।'' मैंने कहा—गुरुदेव! इक्कीस वर्ष पूरे हो गये आज बाईसवें वर्ष में प्रवेश हो रहा है।'' आचार्य प्रवर ने स्मित वदन आशीर्वाद की मुद्रा में फरमाया—''तुमने बहुत अच्छा विकास किया है, इस वर्ष और अधिक विकास करो।'' नि:संदेह गुरु शिष्यों के आत्मविद्युत् प्रवाह को एक मार्ग देते हैं। गुरु के मुख रूपी मलयाचल से नि:सृत वचन रस चन्दन के स्पर्श सदृश होता है। कवि ने बहुत सुन्दर और यथार्थ कहा है—

टिक जाती जिस शिष्य पर गुरुदृष्टि विशाल।
बस जाती उस रसना में सरस्वती तत्काल॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्य प्रवर के आशीर्वाद एवं प्रेरणा पाथेय से मेरे मानस में एक रचनात्मक संकल्प जगा।

आचार्य प्रवर का मंगल-पाठ सुन 1 मार्च, 2005 को हमने लाडनूँ से भीलवाड़ा चातुर्मास हेतु विहार किया। मैंने कुछ लेख लिखे जो प्रेक्षाध्यान पत्रिका में प्रकाशित होते रहे। भीलवाड़ा चातुर्मास के लगभग डेढ़ माह पश्चात् एक दिन कुछ लेख प्रोफेसर डी.सी. जैन (धर्मचन्दजी जैन) को संशोधन की दृष्टि से दिखाए। जिसमें एक लेख का शीर्षक था—''अध्यात्म-विज्ञान, मनोविज्ञान में नमस्कार महामंत्र।'' प्रो. जैन ने सुझाव की भाषा में कहा—साध्वीश्री जी आप अपनी चेतना को विभिन्न दिशाओं में न लगाकर एक नमस्कार महामंत्र पर ही केन्द्रित करें। इस एक विषय पर लिखें और आज से ही लिखना आरम्भ कर दें।

साध्वी श्री सरोजकुमारी के प्रोत्साहन और प्रो. डी.सी. जैन की प्रेरणा से मैंने उसी दिन से नमस्कार महामंत्र को अपनी लेखनी का विषय बनाया। लगभग 50 पृष्ठ लिखकर मैंने जैन साहब को पढ़ाये। उन्होंने मेरे उत्साह को वृद्धिंगत करते हुए कहा—आप लिखते रहें। समय-समय पर प्रदत्त उनके सुझाव तथा दिशा-निर्देश ने मेरी लेखनी को सुदृढ़ बनाया। जैन भारती के सम्पादक शुभू पटवा ने भी नमस्कार महामंत्र के कुछ लेखों को संशोधित परिमार्जित कर उन्हें न केवल प्रकाशित ही किया अपितु दर्शन कर मुझे उत्साहित भी किया। संकल्प प्राणवान बनता गया तथा टार्च के फोक्सड् प्रकाश वत् मैंने अपनी चेतना को नमस्कार महामंत्र के अध्ययन, मनन एवं प्रयोगों में केन्द्रित करने का प्रयास किया। दृष्टि की अन्वेषणशीलता में कदम-कदम चलते-चलते मंत्रद्रष्टा जयाचार्य और नमस्कार महामंत्र—इस विषय पर लिखने के बाद स्वयं मुझे भी आश्चर्य होता है कि लेखनी में तीव्रता कैसे आई? इसे मैं महामंत्र की अचिन्त्य महिमा, गुरु का अनुग्रह या शक्तिपात ही मानती हूँ। परमपूज्य आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की सृजनधर्मी प्रेरणा एवं असीम शक्ति संप्रेषण दोनों का योग मुझे मिला है। इस योग ने ही कुछ कर गुजरने की आकांक्षा पैदा की है। मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि मेरा लघु और प्रारम्भिक प्रयास जब गुरुबल और पुरुषार्थ के साथ चला तो सफल परिणाम तक पहुँच गया।

पक्षी अपने पंखों के बल से अनन्त आकाश का पार नहीं पा सकता फिर भी उड़ना नहीं छोड़ता। वह अपनी शक्ति भर अनन्त आकाश में भ्रमण करता ही है तथा इस विचार से वह प्रसन्न भी होता है कि जिसमें मैं परिभ्रमण कर रहा हूँ वह आकाश अनन्त है। मंत्र के रहस्यों का उद्घाटन एक मंत्रविद् आचार्य या

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रत्यक्षदर्शी ऋषि ही कर सकते हैं। तत्त्वद्रष्टा प्रज्ञापुरुषों ने नमस्कार महामंत्र पर बहुत कुछ लिखा है, कहा है, किन्तु फिर भी वह आलोक्य और अकथ्य ही रहा है। एक अल्पजीवी व्यक्ति के द्वारा इसके अनन्त रहस्यों का द्वार कभी नहीं खुल सकता। इस महामंत्र का एक-एक अक्षर अपने आप में महान रहस्यों को समेटे हुए है। कहाँ, कैसे और किस प्रकार उनको प्रयुक्त कर चेतना के प्रसुप्त तारों को झंकृत किया जा सके, यह गुरुजनों की कृपा बिना संभव नहीं है। नमस्कार महामंत्र का अर्थ पूरा न जान सकने पर भी इस पवित्र, शक्तिशाली एवं तेजस्वी महामंत्र के अवगाहन में मुझे अहर्निश जिस आनन्द की अनुभूति हुई वह अनिर्वचनीय है। मुझे प्रसन्नता इस बात की है कि मैंने जिस महामंगल रूप महामंत्र में अवगाहन करने का प्रयास किया है, वह अनन्त है।

सिद्धान्त-दर्शन, जीवन-दर्शन, आत्म-दर्शन और परमात्मा-दर्शन के चार दार्शनिक खंभों पर महामंत्र का आध्यात्मिक, व्यावहारिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक स्वरूप वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत करने का मैंने विनम्र प्रयास किया है अत: इस कृति का नाम–''नमस्कार महामंत्र-एक अनुशीलन (भाग-1)'' रखा गया है। इस कृति को मैंने दो भागों में विभाजित किया है। प्रथम भाग में महामंत्र के दार्शनिक और वैज्ञानिक पक्ष को उजागर करने का प्रयास किया है तथा द्वितीय भाग में महामंत्र के आध्यात्मिक और व्यावहारिक पक्ष को उजागर करने का प्रयत्न रहा है। जो लेख इस पुस्तक के निर्माण में प्रेरक और नींव तुल्य बना उस लेख की सामग्री पुस्तक के अलग-अलग लेखों में पुनरावर्तित होने पर भी उसको मैंने यथावत् ही रखा है, जो द्वितीय भाग के प्रारम्भ में लिखा गया है। इस पुस्तिका में महामंत्र के जिन प्रयोगों को दर्शाया गया है, वे काफी प्रभावी पाये गये हैं। नि:संदेह नमस्कार महामंत्र व्यक्ति से लेकर समष्टि तक सत् परिवर्तन की क्रांतिकारी क्षमता रखता है। सचमुच यह महामंत्र महाशक्ति है, महाऊर्जा है, महाप्राण है, महानिधि है, महामंगल है और महाश्रुत रूप है।

गण या गणि के अनन्त उपकारों से उपकृत, आचार-निष्ठ, संघ व संघपति के प्रति समर्पित, तत्त्वज्ञान व संस्कार प्रदात्री स्वर्गीया साध्वी श्री सुखदेवां जी एवं स्वर्गीया तपस्विनी साध्वी श्री भत्तूजी के जीवन से मुझे जो मिला उसे कभी नहीं भुलाया जा सकेगा। मुझे सहज ही गौरव की अनुभूति होती है कि गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ने जीवन निर्माण के उन अपूर्व क्षणों में मुझे उन कलात्मक हाथों में सौंपा जिससे यह लघुकृति निर्मित हो पाई।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मैं श्रद्धानत हूँ गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी के प्रति जिन्होंने इस वीणा में किया वीणा का सरगम ललाम। अर्थात् अमूल्य संयम रत्न प्रदान कर मेरे जीवन की दिशा को बदला।

श्रद्धासिक्त प्रणति है आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के पावन पादारविन्दों में जिनकी अतीन्द्रिय चेतना से नि:सृत पवित्र रश्मियों के उजास ने मेरे पथ को प्रशस्त किया है।

प्रणत हूँ आचार-निष्ठा और अध्यात्म-निष्ठा के प्रतीक श्रद्धेय युवाचार्य श्री महाश्रमण जी के प्रति जिनकी अबोल प्रेरणा हर पल शक्ति-संप्रेषण और शक्ति-संवर्धन करती रहती है।

नत मस्तक हूँ अहर्निश सारस्वत साधना में संलग्न आदरणीया महाश्रमणी साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभा जी के प्रति जिनके वात्सल्य नेत्र हमें प्रोत्साहित करते रहते हैं। मैं आभारी हूँ मुख्य नियोजिका जी की जिन्होंने मुझे इस दिशा में उत्साहित किया। बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ अग्रगामी साध्वी श्री सरोज कुमारीजी के प्रति जिनका पूरा-पूरा सहयोग व मार्ग-दर्शन मुझे बराबर मिलता रहा। विशेष आभारी हूँ साध्वी श्री चन्द्र लेखाजी एवं साध्वी श्री सोमप्रभाजी की जिन्होंने समीक्षा के द्वारा मेरी लेखनी को सुदृढ़ बनाया तो प्रमोद भावना के द्वारा मेरे उत्साह को भी बढ़ाया। साध्वीश्री उदितयशाजी, साध्वीश्री संगीतप्रभाजी एवं समणी सुमेधाप्रज्ञाजी ने भी प्रुफ संशोधन में अपना पूरा श्रम लगाया है। मैं नहीं भूल सकती साध्वीश्री प्रभावनाश्री जी एवं साध्वी विनीतयशाजी को भी जिनका व्यक्त-अव्यक्त सतत् सहयोग मिलता रहा। कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ साध्वीश्री विमल प्रज्ञाजी, साध्वीश्री श्रुतयशाजी, साध्वीश्री शुभ्रयशाजी एवं समणी मल्लिप्रज्ञाजी व समणी प्रतिभाप्रज्ञाजी के प्रति, जिन्होंने इस कृति को सजाने, संवारने एवं समृद्ध बनाने में अपने श्रम, समय और शक्ति का नियोजन किया है। मैं भाव-विभोर हूँ प्रोफेसर डी.सी. जैन के प्रति जिन्होंने मुझे अपने जीवन के विराट लक्ष्य नमस्कार महामंत्र में अभिस्नात करने के लिए प्रेरित किया। अन्त में मैं उन सब विद्वद् रचनाकारों की हृदय से आभारी हूँ जिनकी साहित्य-स्रोतस्विनी में यत्किंचित् अवगाहन कर मुझे महामंत्र को समझने की दिव्य दृष्टि मिली। जो पढ़ा, समझा वही संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है। प्रेस संबंधी दायित्व के निर्वहन में बहिन कमला कठोतिया ने जो श्रम और सहयोग किया है, उसे भी भुलाया नहीं जा सकता। मोहन ने इस पुस्तक के टंकण कार्य को शीघ्रातिशीघ्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

टंकित करके मेरे कार्य में सहयोग दिया है। यह कृति पाठक के हृदयाम्बुधि में आनन्द की उर्मियों का सृजन करेगी, इसी भावना के साथ नमस्कार महामंत्र जो अनन्त-अनन्त आस्थाओं का केन्द्र है, इस महामंत्र के विषय में मेरा स्वकथ्य क्या हो सकता है, केवल नमन-नमन अन्तहीन नमन.......।

''कोई भीगता बाहर से कोई भीगता भीतर से।
पर वह भीगना भीगना है जो आर-पार भीगे॥
मैं इस महामंत्र रूपी गंगोत्री में आर-पार भीग जाऊँ।
परमेष्ठी नमन से अपने शुद्ध स्वरूप को शीघ्र पाऊँ॥''

इन्हीं मंगल भावों के साथ हृदय सम्राट आचार्यश्री तुलसी की निम्नोक्त पंक्तियों से यह स्वकथ्य स्वतथ्य बने, दीक्षा पर्याय के पच्चीसवें वर्ष प्रवेश पर गुरुदेव के इसी आशीर्वाद के साथ-

''नमन हमारा अरहंतों को, सिद्धों को आचार्यों को है।
आगम पुरुष उपाध्यायों को, और लोक के सब सन्तों को॥
नमस्कार पंचक यह पावन, करता सब पापों का नाश।
सभी मंगलों में प्रधान है, प्रकटे भीतर दिव्य प्रकाश॥''

-साध्वी पुण्ययशा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अनुक्रम

विषय	पृष्ठ
1. मंत्र आराधना : एक विवरण	02-18
2. महामंत्र : अर्थ, प्रकृति और स्वरूप	19-34
3. नमस्कार महामंत्र : एक सर्वे	35-50
4. मंत्रद्रष्टा जयाचार्य और नमस्कार महामंत्र	51-71
5. शक्ति जागरण का अलौकिक मंत्र : नमस्कार महामंत्र	72-85
6. नमस्कार महामंत्र और जप	86-99
7. नमस्कार महामंत्र और योग (1)	100-108
8. नमस्कार महामंत्र और योग (2)	109-116
9. ध्यान की पराकाष्ठा : महामंत्र जप	117-128
10. महामंत्र और प्राणायाम	129-139
11. नाड़ी शोधन प्राणायाम : महामंत्र विधियां	140-146
12. चैतन्य-केन्द्रो की सक्रियता का सेतु : नमस्कार महामंत्र	147-160
13. वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में नमस्कार महामंत्र की अर्थवत्ता	161-174
14. मनोविज्ञान और नमस्कार महामंत्र	175-187
15. आयुर्वेद और नमस्कार महामंत्र	188-197
16. स्वर विज्ञान : महामंत्र जप	198-209
17. मंत्र जप : मुद्रा की वैज्ञानिक उपयोगिता	210-225
18. महामंत्र का दार्शनिक स्वरूप	226-237
19. तप और नमस्कार महामंत्र	238-250
20. महामंत्र के संदर्भ में रंगों की उपादेयता	251-259
21. परमेष्ठी का रंगों के साथ तुलनात्मक अध्ययन	260-268
22. महामंत्र सिद्धान्त और गणित	269-283
23. नमस्कार महामंत्र का गणितानुयोग	284-301
परिशिष्ट-1 : महामंत्र की प्रभावक घटनाएं	302-335
परिशिष्ट 2 : उद्धृत, उल्लिखित अथवा अवलोकित ग्रंथों की तालिका	336-340

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

णमो अरहंताणं

णमो सिद्धाणं

णमो आयरियाणं

णमो उवज्झायाणं

णमो लोए सव्व साहूणं

एसो पंचणमुक्कारो, सव्व पावपणासणो।

मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. मंत्र आराधना : एक विवरण

* मंत्र ध्वनि तरंगों का एकीकृत रूप है।
* मंत्र साधक व इष्ट के बीच का सेतु है।
* मंत्र गुप्त शक्ति को जागृत कर अपने अनुकूल बनाने वाली विद्या है।
* मंत्र दिव्य शक्तियों को आहूत करने की एक प्रक्रिया है।
* मंत्र धर्म व मोक्ष प्राप्ति की प्रेरक शक्ति है।
* मंत्र समस्याओं की वैतरणी को तैरने के लिए एक नौका है।
* मंत्र प्राण चेतना से संबंधित, अनुबंधित ऊर्जा है।

भारतीय दर्शनों में मंत्रों का बहुत विकास हुआ है। वह विकास इसलिए हुआ है कि उसके माध्यम से जीवन में कुछ उपलब्धियां अर्जित की जा सकें। उपलब्धि भरे उद्देश्य की पूर्ति के परिप्रेक्ष्य में मंत्र-जप का प्रमुख लक्ष्य रहा है– आत्माराधना, देवाराधना, कार्यसिद्धि तथा विघ्ननिवारण। मंत्र में असीमित शक्ति होती है। वह साधक को सशक्त बनाता है। उसमें विस्फोट व प्रभावकारी शक्ति होने के कारण वह शक्ति संपन्न, असाधारण, सामर्थ्यवान तथा वेगवान होता है। साधना की परिपक्वता के लिए मंत्र-सिद्धि से पूर्व उस प्रक्रिया की परिक्रमा अत्यन्त अपेक्षित है जो मंत्र को सचेतन बना सके, मंत्र के प्रत्येक पहलू पर प्रकाश डाल सकें, मंत्र की श्रेष्ठता, सर्वोत्तमता तथा महिमा व गरिमा को उजागर कर सकें।

उद्भव काल व जैन परम्परा में तंत्र–मंत्र का स्वतंत्र अस्तित्त्व

मंत्रों का उद्भव काल अज्ञात है। इनका प्रचलन कब हुआ? इनका आदिकर्त्ता कौन है? ये प्रश्न आज भी अनुत्तरित हैं। हाँ, इतना अवश्य है कि मंत्रों की उत्पत्ति वेदों की रचना से बहुत पहले की है।

प्राचीन जैन इतिहास के अनुसार आगम युग में मंत्र और तंत्र के स्थान पर 'विद्या' शब्द का प्रयोग होता था। लगता है आठवीं सदी तक पहुँचते-पहुँचते मंत्र शब्द के अर्थ का कुछ विस्तार हुआ, उसके बाद पंच-परमेष्ठी और शासन देवता दोनों की आराधना का माध्यम मंत्र मान लिया गया। जैन साहित्य में दसवाँ विद्यानुवाद-पूर्व जो मंत्र-विद्या का अक्षय भंडार माना जाता था, उसका कुछ ही भाग हमारे युग तक पहुँच पाया है, तथापि यह स्पष्ट है कि जैन परम्परा में भी यंत्र,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्र तथा तंत्र का स्वतंत्र अस्तित्व रहा है, यह बौद्ध और शैवों से अनुदित नहीं है।

जैनों का शिखरी और प्रभावशाली मंत्र है—नमस्कार महामंत्र। इसका उद्भवकाल भी उपलब्ध नहीं है पर अनेक उपलब्ध स्रोतों के आधार पर कहा जा सकता है कि यह मंत्र अनादि है क्योंकि प्रत्येक कल्पकाल में होने वाले तीर्थंकरों के द्वारा उसके अर्थ का और उनके गणधरों द्वारा उसके शब्दों का निरुपण किया जाता है। इस महामंत्र में जिन पाँच महान आत्माओं को नमस्कार किया गया है, वे प्रवाह रूप से अनादि हैं और उनका स्मरण करने वाले जीव भी अनादि हैं। वास्तव में देखा जाये तो यह महामंत्र आत्मा का स्वरूप है। आत्मा अनादि है अत: यह मंत्र भी अनादि काल से गुरु परम्परा द्वारा प्रतिपादित किया जाता रहा है। इसलिए आत्मा के समान ही यह अनादि और अनीश्वर है। इसके अतिरिक्त अपने-अपने कल्प-काल में होने वाले तीर्थंकर इसका प्रवचन करते चले आए हैं।

इस विषय में एक दूसरा तर्क भी युक्ति-संगत प्रतीत होता है कि जैन धर्म में अनन्त चौबीसियां मानी गई हैं, उनकी कोई आदि नहीं है। प्रत्येक चौबीसी में होने वाले प्रत्येक तीर्थंकर दीक्षा ग्रहण करने से पूर्व अपने से पूर्व में हुए सिद्धों को अपने लिए आदर्श रूप मानकर 'णमो सिद्धाणं' का उच्चारण करके उन्हें नमस्कार करते हैं। इससे भी यह ध्वनित होता है कि यह महामंत्र अनादि है, शाश्वत है।

जैन परम्परा में नमस्कार-महामंत्र, सनातन परम्परा में गायत्री-मंत्र, मुसलमान अल्लाह का तथा बौद्ध ऊँ का जप करते हैं। जैन-मंत्रों में ह्रीं, वैदिक-मंत्रों में क्लीं, दुर्गा के मंत्रों में क्रीं की प्रधानता है। क्रीं, क्लीं, और ह्रीं—ये तीनों शक्ति जागरण के मंत्र हैं। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के शब्दों में ''जो व्यक्ति अन्तर्दर्शन की शक्ति जागृत करना चाहता है उसके लिए 'श्रीं' का प्रयोग बहुत शक्तिशाली है।'' इन सब मंत्रों का प्रयोग आत्मसिद्धि, विघ्ननिवारण, विद्या-सिद्धि तथा अनेक प्रयोजनों से किया जाता है। एक युवक ने आचार्यश्री महाप्रज्ञजी से निवेदन किया—मन बहुत बैचेन रहता है, कोई ऐसा प्रयोग बतायें जिससे मेरा मन शांत हो जाये। उसने आचार्यश्री के निर्देशानुसार 'ऊँ क्षौं क्षौं' मंत्र का जप किया। जप के इस प्रयोग से उसका मन शांत हो गया। सारी बेचैनी दूर हो गई।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह कहा जा सकता है कि मंत्र-विद्या का ज्ञान विश्व की समस्त जातियों में, विभिन्न धर्मों में किसी न किसी रूप में विद्यमान था, है तथा रहेगा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बीज व नाद की उपयोगिता तथा उत्पत्ति

जिस प्रकार अपनी पहचान के लिए नामकरण संस्कार की परम्परा चली आ रही है उसी प्रकार मंत्रों में स्थित भिन्न-भिन्न देवताओं के भिन्न-भिन्न संकेत बीज कहलाते हैं। जैसे ॐ—प्रणववाचक, ब्रह्मबीज, ह्रीं—कल्याण वाचक, श्रीं—कीर्ति वाचक, क्ष्वीं—योग व विषादहर वाचक, क्लीं—द्रव्य व भाव लक्ष्मी प्राप्त वाचक, स्वाहा—शांति वाचक, नमः—शोधन बीज आदि।

बीजमंत्र विभिन्न देवताओं, धर्मों एवं उनके संप्रदायों की साधना के माध्यम से साधक को भिन्न-भिन्न प्रकार के रहस्यों से परिचित करवाता है। शैव, शाक्त, वैष्णव, गाणपत्य, जैन व बौद्ध धर्मों के सभी सम्प्रदायों में ह्रीं, क्लीं एवं श्रीं आदि बीजों का मंत्र-साधना में समान रूप से प्रयुक्त होना इसका साक्ष्य है। बीजमंत्र समस्त अर्थों का वाचक एवं बोधक होने के बावजूद अपने आप में गूढ़ है। अपने आराध्यदेव का समस्त स्वरूप उसके बीजमंत्र में निहित होता है। ये बीजमंत्र तीन प्रकार के होते हैं— 1. मौलिक, 2. यौगिक, 3. कूट।

1. इनको कुछ आचार्य एकाक्षर, बीजाक्षर एवं घनाक्षर भी कहते हैं। जब बीज अपने मूल रूप में रहता है तब मौलिक बीज कहलाता है, जैसे—एं यं रं लं क्षं आदि।

2. जब यह बीज दो वर्णों के योग से बनता है, तब यौगिक कहलाता है। जैसे—ह्रीं, क्लीं, श्रीं, क्षौं आदि।

3. इसी तरह जब बीज तीन या उससे अधिक वर्णों से बनता है, तब वह कूट बीज कहलाता है। यह श्रीविधा जैन एवं बौद्ध मंत्रों में अधिक मिलता है। खास बात यह है कि बीज-मंत्रों में समग्र शक्ति विद्यमान होते हुए भी गुप्त रहती है।

बीजाक्षरों में जो अनुस्वार तथा अनुनासिक संकेत लगाये जाते हैं, उन्हें नाद कहते हैं। नाद के द्वारा अप्रकट शक्ति को प्रकट किया जाता है।

बीजकोश में बतलाया गया है कि ॐ बीज समस्त णमोक्कार मंत्र से, ह्रीं की उत्पत्ति नवकार मंत्र के द्वितीय पद से, क्षीं, क्ष्वीं की उत्पत्ति नवकार मंत्र के प्रथम, द्वितीय और तृतीय पदों से, क्लीं की उत्पत्ति प्रथम पद में प्रतिपादित तीर्थंकरों की यक्षिणियों से, अत्यन्त शक्तिशाली एकल मंत्रों में व्याप्त ह्रं की उत्पत्ति नवकार के प्रथम पद से, द्रां द्रीं की उत्पत्ति नवकार के चतुर्थ व पंचम पद से हुई है। ह्राँ ह्रीं ह्रूँ ह्रौं ह्रः—ये बीजाक्षर प्रथम पद से, क्षाँ क्षीं क्षूं क्षें क्षैं क्षः—ये बीजाक्षर प्रथम द्वितीय और पंचम पद से निष्पन्न हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नवकार मंत्र कल्प, भक्तामर, यंत्र-मंत्र, कल्याण-मंदिर, यंत्र-मंत्र संग्रह पद्मावती मंत्र कल्प, योग-शास्त्र (हमेचन्द्र कृत) आदि मांत्रिक ग्रंथों के अवलोकन से ज्ञात होता है कि समस्त मंत्रों के रूप बीज पल्लव इसी नवकार महामंत्र से निःसृत हैं। कुछ आचार्यों के अभिमतानुसार नमस्कार महामंत्र का नौ लाख जप करने वाला नरक गति में उत्पन्न नहीं होता। इसलिए इस मंत्र की नवलाख जप की आराधना विशेष महत्त्व रखती है।

बीजाक्षर मंत्र लघुकाय होते हुए भी आध्यात्मिक शक्ति के अक्षय स्रोत होते हैं। यही कारण है कि किसी भी मंत्र के साथ बीजाक्षर का योग करने से उसमें एक अद्भुत शक्ति पैदा हो जाती है। ''नमः शान्तये'' यह शांति नाथ भगवान को नमस्कार करने का मंत्र है किन्तु इसके साथ यदि ॐ बीजाक्षर मंत्र संयुक्त कर दिया जाता है तो वह बहुत शक्तिशाली हो जाता है। ''नमः शान्तये'' केवल शांतिनाथ प्रभु को नमस्कार हुआ और ॐ बीजाक्षर मंत्र जोड़ने पर शांतिनाथ प्रभु के साथ-साथ पंच-परमेष्ठी को नमस्कार की भावना जुड़ जाती है। इस संदर्भ में एक घटना प्रस्तुत है—

घटना वि. सं. 2030 की है। ताराचन्द जी बैद की धर्मपत्नी श्रीमती कलकत्ती बैद ने पूज्य गुरुदेवश्री तुलसी के दर्शन किये। वहीं पर उन्हें भयंकर दौरा आ गया। उनका भाई तत्काल उनको वहां से उठाकर ले गया। अगले दिन जब उन्होंने गुरुदेव के दर्शन किये तब गुरुदेव ने कहा—तुमको बहुत भयंकर रूप से दौरा आता है। ऐसे दौरे कितने वर्षों से आ रहे हैं? बहिन ने कहा—लगभग बीस वर्षों से मैं इस बीमारी से परेशान हूँ। देश-विदेश की अनेकों दवाइयां लेने के बावजूद भी कोई सुधार नहीं हुआ। गुरुदेव ने करुणा वर्षाते हुए कहा—''ॐ शांति का जप करो, फिर बताना कि दौरे आते हैं या नहीं?'' घर आते ही बहन ने छः माह तक दवा न लेने का संकल्प कर लिया। जितना भी समय मिलता वह 'ॐ शांति' का जप करती रहती। जप व गुरु शक्ति का ऐसा जादुई प्रभाव हुआ कि बहन कलकत्ती बिल्कुल स्वस्थ हो गई। ऐसे ही किसी भी प्रकार के मंत्र के साथ उसके उपयुक्त बीजाक्षर का प्रयोग करने से वह महान फलदायक, सिद्धिदायक बन जाता है। जब वही मंत्र गुरु के मुखारविंद से प्राप्त हो जाता है तब उसकी शक्ति शतगुणित हो जाती है।

मातृका जप : फलश्रुति

योग के ग्रंथों में मातृका के निम्नलिखित चार प्रकार उल्लिखित है—

1. केवल मातृका - अ सि आ उ सा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. बिंदु युक्त मातृका - अर्हं
3. विसर्ग युक्त मातृका - ह्ः
4. बिंदु और विसर्ग युक्त मातृका - ह्रीं ह्ः

उपरोक्त चारों प्रकार की मातृका के न्यास अथवा जप के द्वारा लौकिक और लोकोत्तर दोनों प्रकार की सिद्धियां प्राप्त होती हैं। जिसे हम व्यंजन लब्धि या अक्षर-सिद्धि कहते हैं उसका अपर नाम मातृका न्यास है। व्यंजन सिद्धि का तात्पर्य है एक अक्षर के बोलने से पूरे श्लोक का ज्ञान हो जाना। योग शास्त्र में मातृका के फल का निर्देश करते हुए इसे ज्ञानात्मक विकास के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बताया है—

संस्मरन् मातृकामेवं, स्यात श्रुतज्ञान पारगः।
ध्यातोऽनादिसंसिद्धान, वर्णनितान् यथाविधि।
नष्टादिविषये ज्ञानं ध्यातुरुत्पद्यते क्षणात्॥[1]

अर्थात् श्रुत का ध्यान करने वाला श्रुत (शास्त्रों का) पारगामी हो जाता है। इस ध्यान से इन्द्रियातीत चेतना भी जागृत होती है, फलस्वरूप नष्ट, विस्मृत पदार्थों से संबद्ध भूत, वर्तमान और भविष्यकालीन ज्ञान करने की क्षमता पैदा होती है।

समस्त मंत्रों की मूलभूत मातृकाएं नमस्कार महामंत्र में निम्न प्रकार से विद्यमान है,[2] जिसको निम्नोक्त विश्लेषण से समझा जा सकता है।

मंत्र पाठ

णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं,
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्व साहूणं।

विश्लेषण

ण् + अ + म् + ओ + अ + र् + इ + ह् + अं + त् + आ + ण् + अं + ण् + अ + म् + ओ + स् + इ + द् + ध् + आ + ण् + अं + ण् + अ + म् + ओ + आ + य् + अ + र् + इ + य् + आ + ण् + अं + ण् + अ + म् + ओ + उ + व् + अ + ज् + झ् + आ + य् + आ + ण + अं + ण् + अ + म् + ओ + ल् + ओ + ए + स + व् + व् + अ + स् + आ + ह् + ऊ + ण् + अं

इस विश्लेषण में से स्वरों को पृथक किया तो—

अ ओ, अ (र) इ अं, आ अं अ, ओ, इ आ अं, अ ओ, आ, अ, इ आ, अं, अ, ओ, उ अ आ आ अं अ ओ (ल्) ओ, ए अ आ ऊ अं।

पुनरूक्त स्वरों को निकाल देने के पश्चात् रेखांकित स्वरों को ग्रहण किया तो—

अ, आ, इ (इ+इ) ई, उ ऊ (र्) ऋ ॠ (ल्) लृ लॄ ए, (आ+इ) ऐ, (अ+उ) ओ (ओ+ओ) औ अं (अं+अ) अः (स्वरमाला)। व्यंजन—ण् र् ह् त् ण् ण् म् स् द् ध् ण् म् य् र् य् ण् ण् म् व् ज् झ् य् ण् म् ल् व् व् स् ह् घ् ण्

ध्वनि सिद्धान्त के आधार पर वर्गाक्षर वर्ग का प्रतिनिधित्व करता है, अतः पुनरूक्त व्यंजनों को निकाल देने के पश्चात्—

3	5	7	4	10	6	8	9	2		1
ण	म	र	ध	स	य	ल	व	ज	ह	(घ)

(1) घ्—क वर्ग (2) ज्—च वर्ग (3) ण्—ट वर्ग
(4) ध्—त वर्ग (5) म्—प वर्ग (6) य् (7) र्
(8) ल् (9) व् (10) स्—श् ष् स् ह्।

उपर्युक्त ध्वनियां ही मातृका कहलाती हैं।

''शक्ति शक्ति को आकर्षित करती है'' इस कहावत के अनुसार नमस्कार महामंत्र के निरन्तर जप से अनेक अदृश्य शक्तियां जाग उठती हैं। क्योंकि इसमें प्रयुक्त प्रायः सभी अक्षर कंपन बहुल और आकृति प्रधान हैं। जहां आकृति विशेष निर्मित होती है, वहां विशिष्ट मंत्र नायक शक्तियों का आकर्षित होना स्वाभाविक है। यद्यपि शब्दों की शक्ति सीमित है फिर भी वे असीम भाव बोध का प्रतिनिधित्व करते हैं।

इसी संदर्भ में मंत्र, विद्या और स्तोत्र तीन शब्द प्रयुक्त होते हैं। इन तीनों के सूक्ष्म अन्तर को समझना भी अत्यन्त आवश्यक है।

विद्या स्त्रीदेवताधिष्ठिता पूर्व सेवादि प्रक्रिया साध्य वा..........।
मंत्रा पुरुष देवताधिष्ठिताः पठित सिद्धा वा।[3]

संसाधना विद्या असाधनो मंत्रः।................यस्याधिष्ठात्री
देवता सा विद्या, यस्य पुरुषः स मंत्रः।[4]

जो स्त्री देवता अधिष्ठित है और जो पूर्व सेवा आदि प्रक्रिया से साध्य है, साधने से सिद्ध होते हैं, वह विद्या है। जिसका अधिष्ठाता पुरुष देवता होता है

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

और जो साधे बिना पठन मात्र से सिद्ध होता है, वह मंत्र है। (जो ह्रीं आदि वर्ण विन्यासात्मक है, वह मंत्र है)

मंत्र कभी परिवर्तित नहीं किये जा सकते जबकि स्तोत्र के भावों को पर्यायवाची शब्दों की सहायता से व्यक्त किया जाता है। एक देवता के अनेकों स्तोत्र हो सकते हैं परन्तु मंत्र एक होता है। मंत्राक्षरों में नाद व बिन्दु का उपयोग दैविक शक्ति को प्रकट करने के लिए ही होता है। जिन मंत्रों को हम उच्चारित करते हैं, उनसे ध्वनि पैदा होती है। ध्वनि का मंत्र के साथ प्रभाव होता है। ध्वनि के भीतर एक प्रकार की शक्ति छिपी रहती है, जिससे प्रलय व सृजन होता है। मंत्रोचारण के प्रभाव से जो मंत्र जिस इष्ट देव से संबंधित होता है, उसकी शक्ति को जागृत कर आत्मसात् कर लेता है जिससे मंत्र साधक स्वयं देवता तुल्य होकर जन कल्याण करने लगता है।

जप प्रक्रिया

किस समस्या के समाधान हेतु किस मंत्र का जप करें? इसके लिए गुरु का मार्ग-दर्शन तो अपेक्षित है ही पर मंत्र के साथ भाव चेतना और चित्त शुद्धि का मणि-काञ्चन योग सिद्धि का स्वयंभू हस्ताक्षर है। आचार्यश्री तुलसी के शब्दों में–

अन्तर शोधन के बिना, साध्य सिद्धि है दूर।
नहीं बहिर्मुख चेतना, हो सकती रसपूर॥

जप के साथ समय और क्षेत्र का भी महत्त्व है। सामान्यत: जिस समय मस्तिष्क शांत हो, वह जप के लिए उत्तम समय है। रात्री दो बजे से चार बजे तक का समय मंत्र जप के लिए उत्तम है। आचार्यश्री तुलसी ने मनोनुशासनम् में लिखा है– 'निद्रा त्यागे जपो ध्यानं च' निद्रा खुलते ही जप और ध्यान करना चाहिए। नमस्कार महामंत्र का जप कभी भी किसी भी समय शांत स्वच्छ वातावरण में तन्मयता पूर्वक किया जा सकता है। क्योंकि इसका प्रयोजन कर्मक्षय या मंगल प्राप्ति है। आवश्यक निर्युक्ति के अनुसार–इत्थं य पओयणमिणं, कम्मक्खओं मंगलागमो चेव...........।[5]

जप्य मंत्रों के शब्दों का उत्थान कहाँ से होता है? वे कहाँ समाप्त होते हैं? जप साधक को यह जानना भी आवश्यक है। प्राणमय (सूक्ष्म) शब्दों का उत्थान शक्तिकेन्द्र (मूलाधार चक्र) से होता है, वहां से वह उच्चारण के स्थानों तक पहुँच जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वर्ण	**उच्चारण के स्थान**
ङ ञ ण न म से युक्त हकार	उर
अ, क वर्ग, ह, विसर्ग	कण्ठ
झ, ट वर्ग, र, ष	दन्त
अनुस्वार	नासिका
उ,प वर्ग	औष्ठ
इ, च वर्ग, य, श	तालु

जिस मंत्र का जप करना है, उसका स्पष्ट और शुद्ध उच्चारण करने से ही सफलता की संभावना की जा सकती है। उच्चारण अशुद्धि से अर्थ सर्वथा नष्ट हो सकता है। विपरीत अर्थ भी हो सकता है। कई बार आवश्यक अर्थ में कमी रह सकती है। कई बार सत्य किन्तु अप्रासंगिक अर्थ हो सकता है। इस दृष्टि से मंत्रोच्चारण में उतावलापन, उच्चारण की अस्पष्टता और कायिक अस्थिरता—इन तीनों से अवश्य बचना चाहिए। जैसे कुंभकरण ने जल्दबाजी में इन्द्रासनं देहि की जगह निद्रासनं देहि कह दिया। जिसका परिणाम उन्हें छ: माह तक नींद में रहना पड़ा। उच्चारण अशुद्धता से कभी इस प्रकार अनिष्ट भी हो सकता है और ज्ञान की भी आशातना होती है। नमस्कार महामंत्र जैन आगमों का सार है अत: इसको खुले मुँह बोलने से तथा उच्चारण अशुद्धता से आगम की आशातना होती है तथा ज्ञानावरणीय कर्म का आंशिक बंध भी होता है। आचार्य श्री तुलसी ने प्रेक्षा संगान में मार्मिक अभिव्यक्ति देते हुए लिखा है—

जीवन भर जपता रहे, केवल शाब्दिक जाप।
शाश्वत सुख उसको कहाँ, होता क्रिया कलाप॥

मंत्र साधक को मंत्रोच्चारण की विधि का ज्ञान तथा विधि के प्रमुख सूत्रों पर ध्यान देना जरूरी है, जो निम्नलिखित है—

- ✼ मंत्र के वर्ण का उच्चारण करते समय पूर्व वर्ण व उत्तर वर्ण के उच्चारण में अन्तराल न रहें।
- ✼ बीजाक्षरों का उच्चारण करते समय ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत मात्राओं पर ध्यान रहे। मंत्राक्षरों का उच्चारण न अति शीघ्र हो न अति विलंब से। उच्चारण की मध्यम पद्धति उचित है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

- मंत्र का उच्चारण स्वाभाविक श्वास के साथ करें। श्वास यदि शीघ्र गति से चलता है, तो मंत्र का उच्चारण बीच में ही रूक जाता है। इसलिए मध्यवाही श्वास के साथ उच्चारण करें।
- मंत्र जप में निरन्तरता रहें, क्योंकि लंबा जप ही शरीर और चेतन के बीच एक नई हलचल पैदा करता है।
- स्थान पवित्र, स्वच्छ व एकान्त हो।
- जप का समय और संख्या निर्धारित हो।
- पृष्ठरज्जु और गर्दन सीधी रहें।
- मंत्रजप के समय मुद्रा चंचल नहीं शांत और विनम्र रहें।
- नयनयुगल अर्धनिमीलित रहें।
- इन्द्रियों का संयम रखें।
- शरीर को स्थिर रखें।
- किसी एक आसन में बैठकर माला फेरें। यथा—पद्मासन, वज्रासन, सुखासन आदि।
- माला दाहिने हाथ से हृदय के पास रखते हुए धीरे-धीरे मध्यमा अंगुली और अंगूठे से माला के मनके को घुमायें।
- माला जपते समय माला के सुमेरु को लांघे नहीं, हाथ से माला को उलट कर आगे की माला फेरें।
- माला को जमीन या पैर से न लगायें तथा गले में भी न पहने।
- मंत्र जप के समय 'मनोवहा' सुषुम्ना का योग लाभप्रद होता है।
- मंत्र साधना के समय कार्तिक, आश्विन, बैशाख, माघ, मार्गशीर्ष, फाल्गुन और श्रावण मास उत्तम है। पूर्णिमा, द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, दशमी और त्रयोदशी तिथि उत्तम है। रविवार, शुक्रवार, बुधवार, गुरुवार को मंत्र जप सिद्धिकारक माना गया है। शुक्ल पक्ष में शुभ चन्द्र व शुभ वार के अनुसार मंत्र जप अति उत्तम माना गया है। पुनर्वसु, श्रवण, रेवती, अनुराधा, रोहिणी नक्षत्र सिद्धि हेतु उत्तम है।
- मंत्र जप के समय मुँह पूर्व या उत्तर दिशा में रहें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उपरोक्त नियमों का ध्यान रखते हएु साधना काल में हल्का व सात्विक भोजन उपयुक्त है। ब्रह्ममुहूर्त में जागरण, उत्तेजक पदार्थों का वर्जन, दुर्व्यसन त्याग, तथा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन—इस प्रकार त्याग के साथ किया गया जप शीघ्र फलदायी व सात्विक विचारों को वृद्धिंगत करता है।

मंत्र–सिद्धि : पूर्व व उत्तर दिशा का माहात्म्य

केवल मंत्र जप के समय ही नहीं, दीक्षा देने में, स्वाध्याय या ध्यान के समय में, अनशन कराने में एवं अन्य मांगलिक कार्यों में, मंगलपाठ के समय भी इन्हीं दो दिशाओं को महत्त्व दिया गया है। कारण क्या है? शास्त्रों में स्पष्टीकरण नहीं मिलता, पर कुछ तथ्यों के आधार पर इन दिशाओं के महत्व की अभिव्यंजना को समझा जा सकता है।

पूर्व दिशा का वाचक 'प्राची' शब्द है। वह प्र पूर्वक अञ्चु धातु से बना है। इसका अर्थ होता है—आगे बढ़ना, उन्नति करना, प्रगति का साधन करना, अभ्युदय को प्राप्त करना एवं ऊपर चढ़ना।

सूर्य ग्रह, नक्षत्र एवं तारागण पूर्व दिशा में उदित होकर ही ऊपर चढ़ते हैं एवं जगत् को प्रकाशित करते हैं, अत: पूर्व दिशा हमें उदय मार्ग की सूचना एवं तेजस्विता बढ़ाने का उपदेश देती है।

मूर्तियां और मंदिर भी पूर्व दिशा में होते हैं। क्योंकि इस दिशा को मंगलदायक माना गया है। पूर्व दिशा में सूर्योदय होने पर कमल खिलते हैं। हमारे शरीर में भी कमल ही कमल है—चरण कमल, नयन कमल, कर कमल, हृदयकमल, सहस्रार दल कमल आदि। कमल निर्लिप्तता का प्रतीक है। हमारे भीतर भी यदि ये कमल विकसित रहते हैं तो अनासक्त चेतना का विकास होता है। इस प्रकार यह दिशा मंगलदायक और त्याग चेतना की प्रतीक भी है।

उत्तर दिशा का वाचक जो उत्तर शब्द है वह उत् और तर से बना है। इसका अर्थ है उच्चता से अधिक भाव अर्थात् ऊँची गति, ऊँचा जीवन एवं ऊँचा आदर्श पाने का संकेत। मनुष्य का हृदय, जो श्रद्धा, भक्ति एवं पवित्रता का केन्द्र है वह भी बायीं बगल की ओर यानि उत्तर दिशा में है। उत्तर दिशा का दूसरा नाम ध्रुव दिशा है। जगत-प्रसिद्ध ध्रुव नक्षत्र सदैव उत्तर दिशा में स्थिर रहता है। ध्रुव-यंत्र यानि कुतुबनुमा में जो लोह चुम्बक की सुई होती है, वह भी हमेशा उत्तर दिशा में रहती है अत: उत्तर दिशा को स्थिरता का द्योतक मानना चाहिए। उत्तर दिशा में जो वायब्रेशन होते हैं वे उत्तर से दक्षिण की ओर चलते हैं। पृथ्वी मंडल पर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यह सतत् होता रहता है। इस प्रक्रिया के कारण ही संभवत: उत्तर दिशा को विघ्नान्तक दिशा कहा गया है। इसलिए कुतुबनुमा यंत्र उत्तर-दक्षिण बताता है।

पूर्व दिशा प्रगति या अभ्युदय का संकेत देती है और उत्तर दिशा उसमें सुदृढ़, स्थिर व निश्चल रहने की प्रेरणा देती है।

शास्त्रों के अनुसार पूर्व का स्वामी इन्द्र, उत्तर का स्वामी सोम, दक्षिण का स्वामी यम एवं पश्चिम का स्वामी वरुण है। यम और वरुण दोनों क्रूर माने गये हैं। संभव है इसलिए इनकी दिशाओं को महत्त्व नहीं दिया गया है।

एक मान्यता के अनुसार पूर्व दिशा को मोहान्तक, पश्चिम को पद्मान्तक, उत्तर को विध्नान्तक एवं दक्षिण को यम दिशा माना गया है। इस अपेक्षा से भी पश्चिम और दक्षिण दिशा के प्रकंपन मंगलकारी नहीं होते हैं। यही कारण है कि भारत में जितनी श्मशान भूमियां हैं, वे सब दक्षिण दिशा में रखी जाती हैं।

भगवती, आराधना, सागर धर्मामृत, वैधक ग्रंथ, कल्याण कारक तथा कल्पसूत्र आदि ग्रंथों में उत्तर और पूर्व के बीच की जो अपर दिशा है 'ईशान' इसकी ओर सिर करके अन्तिम क्षणों में लेटे रहने से बहुत शांति मिलती है, ऐसा कहा गया है। अपने आप स्वत: जैसे कोई शर्ट उतार रहा हो पुराना इस तरह प्राण निकल जाते हैं। अर्थात् 'ईशान' में सिर और नैऋत्य मे पैर मुमुर्षु की यह शरीर स्थिति होनी चाहिए।

ज्योतिष शास्त्रानुसार हमारा जगत संक्रमण शील है। इसमें वस्तु एक देश से दूसरे देश में संक्रामक होती है और उससे दूसरे द्रव्य प्रभावित होते हैं। सौर जगत से परमाणु प्रवाह आता है, उससे भी मनुष्य प्रभावित होता है। देश और काल में दोनों माध्यम उसके प्रभावित होने में योग देते हैं। जैसे विभिन्न महिनों में आने वाला सौर जगत् का प्रवाह मनुष्य के विभिन्न अंगों को प्रभावित करता है, वैसे ही विभिन्न दिशाओं से आने वाला सौर प्रवाह भी मनुष्य के विभिन्न अंगों एवं चैतन्य केन्द्रों पर भिन्न-भिन्न प्रभाव डालता है। ध्यान के लिए पूर्व व उत्तर दिशा से आने वाले सौर जगत के तत्त्व प्रवाह अधिक अनुकूल होते हैं। संभवत: इसीलिए ध्याता को पूर्व व उत्तर दिशा की तरफ मुँह कर ध्यान, जप, स्वाध्याय आदि क्रियाएं करने का निर्देश दिया गया है।

माला जप : आध्यात्मिक वैज्ञानिक आधार

माला को अंगुष्ठ और मध्यमा अंगुली से जपा जाता है। माला जपते समय हाथ हृदय के पास रहता है। इस विधि से जप करते समय अंगुष्ठ और अंगुली

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

के संघर्षण से एक विलक्षण प्रकार की विद्युत उत्पन्न होती है, जो धमनी के तार द्वारा सीधी हृदय चक्र को प्रभावित करती है जिससे चंचल मन को स्थिर होने में सहयोग मिलता है।

अपने हाथ की अंगुलियों के ऊपरी पोरवों में से हर समय प्रकाश निकलता है। जब व्यक्ति माला जपते समय हाथ की अगुलियों का झुकाव हृदय की तरफ रखता है। तब वे प्रकाश रश्मियां अपने आनन्द-केन्द्र यानि हृदय तक पहुँचती है, जिससे आनंद का स्रोत खुलता है एवं सुखानुभूति उत्तरोत्तर बढ़ती चली जाती है। यह माला जप का वैज्ञानिक आधार हुआ।

एक्यूप्रेशर के अनुसार हमारी अंगुलियों में शरीर की चार हजार नाड़ियों का अन्त होता है। इन्हीं के कारण विभिन्न मुद्राओं का चमत्कारी प्रभाव देखा गया है। क्योंकि नाड़ियों का संबंध शरीर के अनेक अंगों के साथ जुड़ा हुआ है। वे उन अंगों को प्रभावित कर आराम देती है, उन्हें उत्तेजित व नियंत्रित भी करती हैं। हमारी मध्यमा अंगुली और अंगूष्ठ का संबंध आकाश तत्त्व का संतुलन भी रखता है।

आध्यात्मिक दृष्टि से मध्यमा अंगुली की धमनी का हृत्प्रदेश से सीधा संबंध है। हृदय स्थल में ही आत्मा का निवास है। आत्मा से सीधा संबंध जोड़ने के लिए माला का मनका मध्यमा अंगुली से फिराया जाता है।

एक सौ आठ मनकों की पृष्ठभूमि में छिपे रहस्य

माला के मनकों की संख्या सभी धर्मों में एक सौ आठ मानी गई है। इसके पीछे सभी के अपने-अपने ठोस आधार उपलब्ध हैं।

वैदिक परम्परा के अनुसार साकार ब्रह्म और निराकार ब्रह्म में सारा विश्व समा जाता है। वहां साकार ब्रह्म बारह आदित्यों के समान हैं। निराकार ब्रह्म नौ के अंक के समान है। बारह और नौ का गुणन करने पर एक सौ आठ की संख्या बनती है। इसे ही माला के एक सौ आठ मनकों का आधार माना गया है।

जैन परम्परा के अनुसार एक सौ आठ की संख्या पंच परमेष्ठी की आन्तरिक गरिमाओं का कारण है। अर्थात् पंच परमेष्ठी के एक सौ आठ गुण हैं।

अरिहंत	-	बारह गुणों के धारक
सिद्ध	-	आठ गुणों के धारक
आचार्य	-	छत्तीस गुणों के धारक
उपाध्याय	-	पच्चीस गुणों के धारक
साधु	-	सत्ताइस गुणों के धारक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इस प्रकार 12 + 8 + 36 + 25 + 27 = 108 गुण होते हैं। इसी आधार पर माला के एक सौ आठ मनकें माने गये हैं।

इस संबंध में एक दूसरी मान्यता भी प्राप्त है—जैन दर्शन में तीन शब्द प्रचलित हैं— 1. संरम्भ, 2. समारम्भ, 3. आरम्भ।

1. संरम्भ— हिंसा आदि कार्य करने के लिए उद्यत होना।

2. समारम्भ— साध्य के अनुरूप साधन जुटाना।

3. आरम्भ— जुटाये हुए साधनों का उपयोग करना।

संरम्भ, समारम्भ और आरम्भ—इन तीनों प्रवृत्तियों को मन, वचन व शरीर इन तीन योगों से गुणा करने पर 3 x 3 = 9। इन नौ प्रवृत्तियों को करना, कराना तथा अनुमोदन करना—इन तीन करण से गुणा करने पर 9 x 3 = 27। इन सत्ताइस प्रवृत्तियों को क्रोध, मान, माया व लोभ इन चार कषायों से गुणा करने पर 27 x 4 = 108। इन एक सौ आठ प्रवृत्तियों को त्यागने का संकल्प माला के एक सौ आठ मनकों का प्रतीक है।

कुछ आचार्यों का अभिमत है—हमारी चेतना के एक सौ आठ स्तर है। सभी चेतना के स्तरों के जागने का संकेत इन मनकों के साथ जुड़ा है। प्रत्येक मणि के घुमाव के साथ एक चेतना बिंदु की यात्रा तय हो जाये यह भावना की गई है।

कई आचार्यों ने लिखा है—मणि के परावर्तन से मन पर जमी सभी मैल की परतें धुलती है। इससे चेतना के आरोहण का क्रम प्रारम्भ हो जाता है।

तांत्रिक लोगों का मानना है कि माँ काली के गले में एक सौ आठ खोपड़ियों की माला है, अत: इस स्मृति में यह एक परिकल्पना की गई है।

ज्योतिष शास्त्रानुसार माला का क्रम नक्षत्रों की संख्या के आधार पर रखा गया है। भारतीय ऋषियों ने कुल सत्ताइस नक्षत्रों की खोज की। प्रत्येक नक्षत्र के चार चरण होते हैं। 27 x 4 = 108।

कुल मिलाकर 108 की संख्या तय की गई है। और यह संख्या परम पवित्र मानी गई है।

मंत्र साधना विधि

मंत्र फलीभूत बनेगा या नहीं, यह निष्कर्ष निकालने के लिए मंत्र-शास्त्रों में एक प्रक्रिया उपलब्ध है जिसको समझने से मंत्र-जप के निर्धारण में आसानी हो सकती है, यथा—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जिस मंत्र की साधना करनी हो उस मंत्र और मंत्र साधने वाले मनुष्य के नामानुसार स्वर और व्यंजन अलग-अलग करके अनुक्रम से ऊपर-नीचे स्थापन करना। अर्थात् मंत्र के नाम के अक्षर ऊपर लिखना और साधक व्यक्ति के नाम के अक्षर नीचे लिखना। ऋ, ॠ, ऌ, ॡ—ये नपुंसक वर्ण हैं। यदि ये वर्ण आये तो उन्हें छोड़कर मंत्र के अक्षरों को साधक के नाम के अक्षरों से गुणा करना और जो संख्या आये उसको चार से भाग देना। चार से भाग देने से जो शेष बचे वह आय कहलाती है। उस आय को अनुक्रम से 1, 2, 3, 4 स्थापन करें। एक वर्ण शेष हो तो सिद्ध, दो वर्ण शेष हों तो साध्य, तीन वर्ण शेष हों तो सुसिद्ध तथा चार वर्ण शेष रहें तो शत्रु जानना। यदि शून्य शेष रहे तो उसे चार जानना। इन चारों में से सिद्ध और सुसिद्ध ग्रहण करना चाहिए। साध्य और शत्रु आय हो तो मंत्र निष्फल जाता है। दृष्टांत के रूप में घंटाकर्ण का मंत्र साधना है और साधने वाला व्यक्ति हीरालाल है। उदाहरण—

घंटाकर्ण—घ्+अ+ण्+ट्+आ+क्+अ+र्+ण्+अ=10

हीरालाल—ह्+ई+र्+आ+ल्+आ+ल्+अ=8

दोनों संख्याओं का गुणन किया—10×8=80

चार से विभाजन किया—80÷4=20

(0) शून्य शेष बचें तो चार जानना, अत: शत्रु आय जानना अर्थात् घंटाकर्ण का मंत्र हीरालाल को साधने के लिए अनुकूल नहीं है क्योंकि शत्रुता है।[6]

नोट—नमस्कार महामंत्र के लिए शास्त्र का यह नियम नहीं है क्योंकि यह मंत्र सबके लिए मैत्री स्वरूप है। यह मंत्र शत्रुता के भावों का नाश करने वाला है। इसलिए यह मंत्र शत्रुरूप नहीं है। इस महामंत्र की आराधना के लिए अनेकों विधियां उपलब्ध हैं। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने एसो पंच णमोक्कारो में लिखा है कि नमस्कार-महामंत्र के णमो अरहंताणं पद की चौरासी विधियां हैं। 'मंत्र : एक समाधान' में भी अनेकों विधियों का उल्लेख है।

महामंत्र की कुछ आराधन विधियां

1. बीजाक्षरों के बिना मंत्र की आराधना।
2. बीजाक्षरों के साथ मंत्र की आराधना।
3. एसो पंच.........इस चुलिका के साथ महामंत्र की आराधना।
4. केवल बीज मंत्र की आराधना (अ सि आ उ सा नम:)।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. ॐ के साथ पांच पदों की आराधना (ॐ पूर्ण परमेष्ठी का वाचक है)।
6. कई आचार्यों ने ह्रींकार के साथ पांच पदों की आराधना का उल्लेख किया है।
7. अर्हत् का प्रतीक अर्हं को मानकर उसकी आराधना का भी उल्लेख मिलता है।
8. प्राण विशुद्धि के लिए यैं पैं वैं रैं लैं—इन पांच बीजमंत्रों के साथ आराधना।
9. चैतन्य-केन्द्रों के साथ आराधना।
10. रंगों के साथ आराधना।
11. श्वास के साथ आराधना।
12. अनुलोम-विलोम प्राणायाम के साथ आराधना।

मुख्यत: मंत्र-साधना के तीन सौपान हैं—

1. विकल्प—विचारात्मक।
2. संजल्प—अंतर्जल्प।
3. विमर्श—निर्विकल्प ज्ञान।

विकल्प प्रारम्भिक अवस्था है। संजल्प की अवस्था में मंत्र का पुन:-पुन: मानसिक उच्चारण होता है। उससे मंत्र की अर्थात्मा स्पष्ट होती है। संजल्प का अभ्यास करते-करते मंत्र देवता के साथ अभेद प्रणिधान हो जाता है। इस अवस्था में ध्येय का साक्षात्कार हो जाता है। यह मंत्र की निर्विकल्प अवस्था है।

अजपाजप

हठयोग में अजपाजप का बहुत महत्त्व रहा है। उसके लिए सोऽहं का प्रयोग किया जाता है। यह श्वास की ध्वनि का प्रतीक है। श्वास लेते समय 'सकार' और श्वास के रेचन के समय 'ह' की ध्वनि का अनुभव होता है।

अजपाजप के लिए (1) सोऽहं (2) हंस: (3) ॐ (4) अर्हम् (5) हुँ का प्रयोग किया जाता है। 'हुँ' कर्म नाड़ी का बीज है। यह महाध्वनि है। उसके अजपाजप तक पहुँचने पर विकार विसर्जित हो जाते हैं।

गुरुकुल वास में अध्ययनरत शिष्यों में से एक शिष्य जो दिन-रात सोते-जागते, चलते-फिरते राम-राम बोलता रहता। उसके प्रत्येक श्वास में राम शब्द

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

की अनुगूंज थी। एक दिन गुरु ने उस शिष्य से कहा—तुम निश्चित समय पर ही राम नाम बोला करो, दिन भर नहीं। गुरु ने उसका मुँह बंद कर दिया। कहते हैं उस राम भक्त के पूरे शरीर में प्रकंपन होने लगा और रोम-रोम से राम धुन निकलने लगी।

यद्यपि जैन साधना पद्धति में अजपाजप का स्पष्ट उल्लेख नहीं है। किन्तु इसके स्थान पर जैन आगमों में 'भावना' शब्द का प्रयोग मिलता है, जिसका अर्थ है—किसी एक सद्विचार के रंग से चेतना को रंगना। उसके रंग में लीन हो जाना। भावनाओं के प्रकार असंख्य हो सकते हैं। उन्हें किसी वर्गीकरण से नहीं बांधा जा सकता है, फिर भी दिशा-निर्देश के रूप में एक-दो वर्गीकरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

प्रथम वर्गीकरण में बारह भावनाओं का उल्लेख है— 1. अनित्य, 2. अशरण, 3. भव, 4. एकत्व, 5. अन्यत्व, 6. अशौच, 7. आश्रव, 8. संवर, 9. निर्जरा, 10. धर्म, 11. लोक-संस्थान, 12. बोधि-दुर्लभता।

दूसरे वर्गीकरण में चार भावनाओं का उल्लेख है— 1. मैत्री, 2. प्रमोद, 3. कारुण्य, 4. माध्यस्थ।

बौद्ध शासन में अति प्राचीन काल से 'आनापान सती' का एक स्वस्थ साधना क्रम चल रहा है। वैदिक परम्परा में गौरखनाथ जैसे अनेक योगियों ने इस साधना का प्रलम्ब अभ्यास करके चैतन्य की दिशा में एक नया आयाम खोल दिया। संत कबीर, सूर और तुलसी ने इसके जो यशोगीत गाये हैं, इन गीतों के पीछे गीता का प्राणयज्ञ आधार रहा है। गीता की व्याख्या में यज्ञ का अर्थ है—स्थूल प्राणों को सूक्ष्म प्राणों में होम देना (विलीन कर देना) प्राणान्-प्राणेषु जुहवषि इसी का नाम अजपाजप है।

अजपाजप साधना के द्वारा हमारी चेतना आसानी से ध्यान कोष्ठक में प्रविष्ट हो जाती है। यह जाप ध्यान की पूर्व भूमिका प्रशस्त करता है। इसके लंबे अभ्यास के बाद चित्त की गहराई में छिपे मानसिक विकास की रेखाएं कभी धीमी गति से और कभी तेज गति से चेतन मन की परतों पर उभर आती हैं। यह उभार चित्तशुद्धि का महानतम उपक्रम है। यह जाप साधक के स्नायुतंत्र, मस्तिष्क तंत्र, सुषुम्ना नाड़ी, कुण्डलिनी जागरण की संभावनाओं को प्रबल करता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि एकाग्रता पूर्वक मंत्रोच्चारण तथा बीज-मंत्रों से भिन्न-भिन्न शक्तिशाली तरंगें निर्मित होती हैं। वे तरंगें मस्तिष्कीय क्षमताओं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

को विकसित करती हैं। स्वरयंत्र को सक्रिय बनाती है। अन्तःस्रावी ग्रंथियों के स्राव को संतुलित करती हैं। कर्म निर्जरा के साथ-साथ प्रशस्त और तेजस्वी आभामण्डल को निर्मित करती है। दीर्घजीवन और आरोग्यता के रहस्य भी मंत्र चेतना से संपृक्त हैं। लम्बे समय तक पुनः-पुनः मंत्र का पुनरावर्त्तन होने से वातावरण में उन ध्वनी तरंगों का विशेष प्रभाव हो जाता है। अपेक्षा है संत कबीर की निम्नोक्त पंक्तियों को हृदयंगम करने की—

सुमिरन सुरत लगाय के, मुख से कछुआ न बोल।
बाहर के पट देय कर, अन्तर के पट खोल॥

सन्दर्भ—

1. योगशास्त्र-8, 4, 5.
2. यंत्र-तंत्र-मंत्र विज्ञान (प्रथम विभाग), पृ. 41/42
3. वृहत्कल्प भाष्य, 1235 की वृत्ति
4. व्यवहार भाष्य, 876 की वृत्ति
5. आवश्यक निर्युक्ति, 1010
6. मंत्र-यंत्र-तंत्र विज्ञान (प्रथम भाग), पृ. 30

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. महामंत्र : अर्थ, प्रकृति और स्वरूप

णमो अरहंताणं	:	अरहंतों को नमस्कार।
णमो सिद्धाणं	:	सिद्धों को नमस्कार।
णमो आयरियाणं	:	आचार्यों को नमस्कार।
णमो उवज्झायाणं	:	उपाध्यायों को नमस्कार।
णमो लोए सव्व साहूणं	:	लोक के सब सन्तों को नमस्कार।

एसो पंच णमुक्कारो, सव्व पावपणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलं॥

नमस्कार महामंत्र जैन-धर्म का सार्वभौम मांगलिक मंत्र है। यह सम्प्रदायवाद की सभी संकीर्णताओं से रहित मानवीय एकता का प्रभावशाली मंत्र है। कई अन्य मंत्र भी प्रचलित हैं, लेकिन यह तो मंत्र नहीं, 'महामंत्र' है। यह मंत्र सब तरह के मनोरथों की सिद्धि करने वाला, पापों को नष्ट करने वाला, विघ्नविनाशक तथा सभी मंगलों में प्रधान मंगल माना जाता है। इस महामंत्र में अक्षर चाहे स्वल्प हैं, पर बारह अंगों से सारभूत अर्थ का संग्रह आ जाने से श्रुतकेवली आचार्य भद्रबाहु ने इसे महान अर्थ वाला बताया है और इसकी महिमा का उल्लेख किया है।

नमस्कार महामंत्र में मूलत: वीतराग को ही नमन किया गया है। प्रथम पद में 'अरहंत'—जो साक्षात् वीतराग होते हैं, उन्हें नमन किया गया है। दूसरे पद में सिद्ध भगवन्त—जो वीतराग की गुणात्मकता के आधार पर सिद्ध बनते हैं, इसलिए उनको किया गया नमस्कार भी वीतराग को किया गया नमस्कार ही माना जाता है। तीसरे पद में आचार्य—जो वीतराग के साधक होते हैं, दूसरों की वीतरागता की साधना के पथ-दर्शक एवं प्रेरक होने से उन्हें किया गया नमस्कार भी वीतराग को ही नमस्कार माना जाता है। चौथे पद में उपाध्याय—जो वीतराग के संदेशों-उपदेशों को सुनाते हैं और स्वयं भी वीतरागता के साधक हैं, अत: उन्हें किया गया नमस्कार भी वीतराग को किया गया नमस्कार ही माना जाता है। साधु भी वीतरागता के साधक होते हैं, अत: उन्हें किया गया नमस्कार भी वीतराग को किया गया नमस्कार ही माना जाता है—यह पांचवां पद है। इस तरह इस मंत्र को 'वीतराग मंत्र' भी कहा जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इसका आगमिक नाम—श्री पंच मंगल महाश्रुत स्कंध है।

इसका सैद्धान्तिक नाम—श्री पंच परमेष्ठी नमस्कार महामंत्र है।

इसका व्यावहारिक नाम—श्री नमस्कार महामंत्र है।

इसका रूढ़ नाम—श्री नवकार मंत्र है।

इसका संक्षेप नाम—असिआउसा नम: है।

इसका संस्कृत नाम—नमस्कार मंत्र है।

नमस्कार मंत्र : शब्द मीमांसा

नमस्कार शब्द 'नम:' और 'कार'—इन दो शब्दों के योग से बना है। नम: का एक अर्थ है—नमन (झुकना) और दूसरा अर्थ है—द्रव्य तथा भाव से संकोच करना। नम्रता और भक्ति से किसी के सामने झुकना नमन है। नमन के तीन प्रकार हैं—

1. द्रव्य नमन—दो हाथ, दो पांव और मस्तक—इन पांचों अंगों को झुकाना।
2. भाव नमन—आत्मा को अप्रशस्त भावों से निकालकर किसी के प्रशस्त गुणों में लीन करना।
3. द्रव्य-भाव नमन—द्रव्य और भाव, दोनों से नमन करना।

नम: शब्द के साथ 'कार' शब्द जुड़ा हुआ है, जो नमन् की क्रिया का द्योतक है। इस प्रकार नमस्कार का अर्थ नमन करने की क्रिया है। नमस्कार के साथ आये हुए मंत्र का व्युत्पत्यार्थ डॉ. नेमीचन्द शास्त्री ने तीन प्रकार से किया है—

प्रथम: दिवादि गण की ज्ञानार्थक मन् धातु से 'त्र' प्रत्यय लगाकर बनाये गये मंत्र शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार—मन्यते ज्ञायते आत्मदेशोऽन इति मंत्र:—अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा का निजानुभव जाना जाये, वह मंत्र है।

द्वितीय: तनादि गण की अवबोधार्थक मन् धातु से 'त्र' प्रत्यय लगाकर बनाये गये 'मंत्र' शब्द की व्युत्पत्ति के अनुसार—मन्यते विचार्यते आत्मदेशोऽन स मंत्र:—अर्थात् जिसके द्वारा आत्मा के स्वरूप पर विचार किया जाये, वह मंत्र है।

तृतीय: समानार्थक 'मन्' धातु से 'त्र' प्रत्यय लगाकर मंत्र शब्द बनता है। इसका व्युत्पत्यार्थ है—सत्क्रियन्ते परमपदे स्थिता: आत्मन: अनेन इति मंत्र:—अर्थात् जिसके द्वारा परम पद में स्थित पंच-परमेष्ठी-स्वरूप आत्माओं का सत्कार किया जाये, वह मंत्र है।[1]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्र की उपर्युक्त तीनों ही परिभाषाओं में आत्मा परमात्मा की ही मुख्यता है। मंत्र की उपर्युक्त तीनों व्युत्पत्तिपरक परिभाषाओं की कसौटी पर णमोकार मंत्र खरा उतरता है, क्योंकि प्रथम तो इस मंत्र द्वारा आत्मा का निजानुभव होता है या आत्मा का स्वरूप जाना जाता है, दूसरे पंच परमेष्ठी के स्वरूप के विचार के माध्यम से आत्मा के स्वरूप का प्रतिभास होता है और तीसरे, इस मंत्र द्वारा परम पद में स्थित पंच-परमेष्ठी का सत्कार किया जाता है। इस मंत्र में चेतना की पांच अवस्थाओं (अर्हत्, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और मुनि) को द्रव्य और भाव—इस तीसरे प्रकार से नमन करना श्रेष्ठ माना गया है।

पद मीमांसा—णमो

नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों के साथ 'णमो' शब्द जुड़ा हुआ है। 'णमो' शब्द की परिक्रमा एक विशिष्ट अर्थ को अभिव्यक्त करती है। 'णमो' शब्द में अमित अर्थ की गांभीर्यता है। इसकी मीमांसा जहां एक ओर भाषा शास्त्र, व्याकरण शास्त्र, धर्मशास्त्र, मंत्रशास्त्र, तंत्रशास्त्र की दृष्टि से रहस्यमय है, वहीं दूसरी ओर वैज्ञानिक दृष्टि से भी परिपूर्ण है।

भाषा की दृष्टि से नमो और णमो—इन दोनों में मात्र रूप भेद है, किन्तु विभिन्न दृष्टिकोणों से 'ण' का अधिक शक्ति सम्पन्न होना विज्ञानसिद्ध है। 'णमो' पाठ के उच्चारण में आत्मा की शक्ति अधिक लगती है। अत: उपयोग की स्थिरता अधिक होने से फल की प्राप्ति शीघ्र होती है। णमोकार मंत्र में जिस प्राण-वायु के संचार की जरूरत होती है, वह 'णमो' के घर्षण से ही उत्पन्न हो सकती है।

व्याकरण शास्त्रानुसार शब्द के पांच प्रकार हैं—

1. नाम शब्द—घोड़ा, हाथी आदि।
2. निपात शब्द—खलु, किम् आदि।
3. आख्यात शब्द—भवति, धावति आदि क्रिया शब्द।
4. उपसर्ग शब्द—प्र, परा, अभि आदि।
5. मिश्र शब्द—सम्राट, संयत आदि।

इन पांच प्रकार के शब्दों में नम: (णमो) निपात शब्द है। निपात शब्दों में न कोई विभक्ति लगती है और न हि प्रत्यय। ये किसी धातु से निष्पन्न नहीं, स्वत: सिद्ध रूप हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यह एक प्रकार का अव्यय है। 'णमो' का आशय है—नमन, समर्पण। इसमें अहं का विसर्जन होता है। यह शब्द सम्मान, श्रद्धा, भक्ति और आन्तरिक बहुमान का सूचक प्रतीक है।

धर्मशास्त्र की दृष्टि से 'णमो' विनय का बीज है। शास्त्रों में भी कहा है—

विणओ सासणे मूलं, विणीओ संजओ भवे।
विणयाओ विप्पमुकस्स, कओ धम्मो कओ तओ॥ [2]

उपरोक्त गाथा में विनय को जिन शासन का मूल कहा गया है। इसकी पृष्ठभूमि में निम्नोक्त गुण समाहित हैं—

1. आत्मशोधि—आत्मा का परिशोधन।
2. निर्द्वन्द्व—कलह आदि द्वन्द्वों की प्रस्तुति का अभाव।
3. ऋजुता—सरलता।
4. मृदुता—निश्छलता और निरभिमानता।
5. लाघव—अनासक्ति।
6. भक्ति—भक्ति।
7. प्रह्लादकरण—प्रसन्नता। [3]

विनय करने वाला अपने अभिमान का निरसन, गुरुजनों का बहुमान, तीर्थंकरों की आज्ञा का पालन और गुणों का अनुमोदन करता है। [4] वास्तव में धर्म का मूल विनय और परम मोक्ष है। इस प्रकार 'णमो' शब्द विभाव से स्वभाव दशा में मोड़ने वाला है। अत: इससे अभ्युदय (इहलोक समृद्धि और परलोक समृद्धि) व नि:श्रेयस (मोक्ष) दोनों की प्राप्ति होती है।

तंत्र शास्त्रानुसार 'णमो' शब्द शाब्दिक और पौष्टिक कर्म को सिद्ध करने वाला है। इसलिए 'णमो' शब्द से प्रयोजित सूत्र शांति और पुष्टि को देने वाला है। मंत्रशास्त्रीय दृष्टि से 'णमो' शोधन बीज है। यह शरीर, मन एवं आत्मा की शुद्धि करने में अत्यन्त उपयोगी है। यह आत्मा में इतना बल संगृहीत कर देता है कि फिर आवेग और कषाय आत्मा की परिधि में जाने का साहस भी नहीं कर सकते। अतीन्द्रिय चेतना के धनी आचार्यश्री महाप्रज्ञजी कहते हैं—'णमो' शब्द का उच्चारण करते हैं, तब क्रोध कैसे टिकेगा?

नमस्कार महामंत्र का प्रारंभ 'णमो' शब्द से ही हुआ है और इस मंत्र में 'णमो' पद का प्रयोग छ: बार हुआ है। हजारों की संख्या में मंत्र उपलब्ध हैं, पर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बहुत कम मंत्र ऐसे मिलेंगे जो 'णमो' शब्द (नमस्कार) से प्रारंभ होते हैं। मंत्र शास्त्र के अनुसार नमस्कार से आरंभ होने वाले मंत्र अत्यन्त शक्तिशाली होते हैं।

नमस्कार महामंत्र में 'ॐ' अन्तर्निहित है ही, पर केवल 'णमो' शब्द में भी 'ॐ' अन्तर्निहित है–

'णमो' में ण्+अ+म्+ओ–ये चार वर्ण हैं। यदि इन वर्णों को उल्टा किया जाये तो ओ+म्+अ+ण् ऐसा क्रम होगा। इस क्रम के प्रथम दो वर्णों के संयोजन से 'ॐ' शब्द की उत्पत्ति होती है।

संस्कृत शब्द 'मनः' पद के 'न' और 'म' अक्षरों का यदि विपर्यय किया जाए तो 'नमः' पद बनता है। इसका अर्थ यह है कि बहिर्मुख मन का अन्तर्मुखी बनना, अर्थात् बाह्य संसार की तरफ दौड़ता मन जब अन्तर्मुखी होगा तब 'णमो' पद प्रकट होगा।

पंच-परमेष्ठी में महाविद्युत का प्रवाह तो सतत् बह ही रहा है, 'णमो' रूपी बटन दबाने की अपेक्षा है। 'णमो' का बटन दबाने से आशीर्वाद रूप में निकलने वाली शक्तिशाली तरंगें हमारे भीतर को प्रकाशित करने एवं आन्तरिक क्षमताओं को उजागर करने में सहायक सिद्ध होती हैं। प्रश्न हो सकता है कि क्या सचमुच ऐसा संभव है? वर्तमान वैज्ञानिक युग में इस जिज्ञासा का समाधान आसानी से प्राप्त किया जा सकता है। सूक्ष्म अगोचर तरंगों का प्रभाव कम्प्यूटर, केलकुलेटर, रिमोट कंट्रोलर के भिन्न-भिन्न बटनों को दबाकर देख ही रहे हैं। जिस प्रकार 'इलेक्ट्रो-मेग्नेटिक' तरंगों की शक्ति से अंतरिक्ष में भेजे गये राकेट को पृथ्वी पर से नियंत्रित कर सकते हैं, उनकी यांत्रिक खराबी दूर कर सकते हैं, उसी प्रकार पंच-परमेष्ठी का महाविद्युत् रूप प्रवाह नमनकर्त्ता के लिए उपयोगी सिद्ध होता है।

अरहंतांण

भिन्न-भिन्न अर्थ प्रकट करने वाले 'अरहंत' शब्द के अनेक रूपान्तर होते हैं। यथा–अर्हत्, अरहंत, अरथांत, अरिहंत, अरूहंत आदि।

अर्हंत– 'अर्हपूजायाम इंद्रनिर्मितां अतिशयवति पूजां अर्हती अर्हन्'। अर्हंत वह पूज्य पुरुष है, जो स्वर्गलोक के इन्द्रों द्वारा पूजनीय है। अरहंत–'रहस्य अभावात् वा अरहंताः'। अ + रह अर्थात् जिनसे कोई रहस्य छिपा नहीं है। सर्वज्ञ होने के कारण जो समस्त पदार्थों को हथेली में रखे आंवले की भांति स्पष्ट रूप से जानते-देखते हैं। अरथांत–अरहंत पद का संस्कृत भाषा में 'अरथांत' रूप

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बनता है। रथ लोक में प्रसिद्ध है। यहां रथ शब्द समस्त प्रकार के परिग्रह का उपलक्षण है। अंत शब्द विनाश (मृत्यु) का वाचक है। इस प्रकार 'अरथांत' का अर्थ हुआ–परिग्रह और मृत्यु से रहित। अरिहंत–अरिहननात अरिहंतः अरीन् राग द्वेषादीन हंतीति अरिहंताः। 'अरि' का अर्थ शत्रु और हंत का अर्थ नष्ट करना–अर्थात् जिन्होंने राग-द्वेष रूपी शत्रुओं का नाश कर दिया, वे अरिहंत हैं। अरूहंत–अ+रू अर्थात् जो वापस पैदा न हो। 'रूह' धातु का अर्थ उगना या पैदा होना होता है। शास्त्रों में कहा है–

दग्धे बीजे यथाऽत्यन्तं, प्रादुर्भवति नांकुरः।
कर्मबीजे तथा दग्धे, न प्ररोहति भवांकुरः॥

जिस प्रकार बीज के खाक हो जाने पर अंकुर पैदा नहीं होता, वैसे ही कर्म बीज के समूल नष्ट हो जाने पर भव-भ्रमण (जन्म-मरण) का पौधा नहीं उगता। इसलिए जैन परम्परा में अवतारवाद की मान्यता नहीं है।

इस प्रकार से अनेक प्रकार की शब्द जन्य व्युत्पत्तियों से भी अरिहंत पद की लोकोत्तमता तथा सर्वश्रेष्ठता सिद्ध होती है। इसीलिए ऐसी पवित्र आत्मा को जैन दर्शन में वन्दनीय मानकर सर्वप्रथम स्थान दिया गया है। सिद्धों के स्वरूप का अनुभव अरिहंत ही करते हैं और वे ही संसार के भव्य प्राणियों को सिद्धों की पहचान कराते हैं, इसलिए सिद्धों से पूर्व उन्हें नमस्कार किया गया है।

सिद्धाणं

नमस्कार महामंत्र के दूसरे पद में सिद्ध भगवन्त को नमस्कार किया गया है। संस्कृत निरुक्त के अनुसार–सि-सित्तं–बंधे हुए कर्म रूपी ईंधन को द्ध–ध्मातं–भस्म कर दिया है। अर्थात् अष्ट कर्म रूपी ईंधन को जिन्होंने शुक्ल ध्यान रूपी जाज्वल्यमान अग्नि से भस्म कर दिया है, उन्हें सिद्ध कहते हैं। सिद्ध पद की व्याख्या विभिन्न अर्थों में भी हुई है।

सिद्ध शब्द 'षिधु' धातु से बना है ।'षिधु' का एक अर्थ है–गति करना। अर्थात् जो गमन कर चुके हैं, ऐसे स्थान को, जहां से फिर कभी लौट के नहीं आते, उन्हें सिद्ध कहते हैं।

'षिधु' का दूसरा अर्थ है–सिद्ध हो जाना। जिनका कोई भी कार्य शेष नहीं रहा है–सभी कार्य जिनके सिद्ध हो चुके हैं, उन्हें सिद्ध कहते हैं।

'षिधुञ्' का अर्थ शास्त्र या मंगल भी होता है। अर्थात् जो संसार को भलीभांति उपदेश देकर संसार के लिए मंगलरूप हो चुके हैं, उन्हें सिद्ध कहते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सिद्ध का अर्थ नित्य भी होता है। यहां नित्य का अर्थ यह है कि जहां गये हैं, वहां से लौट कर न आने वाले।

सिद्ध का एक अर्थ ख्यातिप्राप्त भी है। अर्थात् प्रसिद्ध को भी सिद्ध कहते हैं। जिनके गुण समूह ख्याति प्राप्त कर चुके हैं, जिनके गुण समूह भव्य जीवों में प्रसिद्ध हैं।

सिद्ध भगवन्त की उपरोक्त परिभाषाओं के सार का एक प्राचीन श्लोक में उल्लेख मिलता है—

ध्मातं सितं येन पुराणकम्मं,
यो वा गतो निर्वृत्ति सौधमूर्ध्नि।
ख्यातो अनुशासना परिनिष्ठार्थो,
यः सोऽस्तु सिद्धः कृतमंगलोमे॥

अर्थात् जिन्होंने प्राचीनकाल से बंधे हुए कर्मों को भस्म कर दिया है, जो मुक्ति रूपी महल में जा चुके हैं, जिनके गुणों को भव्य प्राणी भलीभांति जानते हैं, जिन्होंने धर्म का अनुशासन किया है, जिनके समस्त कार्य सिद्ध हो चुके हैं—वे सिद्ध भगवान् हमारा मंगल करने वाले हैं, हमारा कल्याण करें—ऐसे सिद्ध भगवान् को नमस्कार हो।

पंच-परमेष्ठी में सिद्धों का स्थान सर्वोपरि है। उनका स्मरण करने से सर्वोत्तम आत्म-शांति का अनुभव होता है। सिद्धत्व आत्मोन्नति एवं पवित्रता का सर्वोत्कृष्ट रूप है।

आयरियाणं

टीकाकार ने 'आ' का अर्थ मर्यादापूर्वक और चार्य का अर्थ सेवनीय/सेवा करने योग्य किया है। अर्थात् जो मर्यादापूर्वक सेवित हैं, उन्हें आचार्य कहते हैं। आचार्य शब्द का अर्थ दूसरे प्रकार से भी है—'आ'—मर्यादा के साथ। चार-विहार या आचार। अर्थात् पंचविधं आचारं चरति चारयन्तीति आचार्या—जो ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चरित्राचार, तपाचार, वीर्याचार—इन पांच आचारों में मर्यादा पूर्वक विहार करते हैं, वे आचार्य कहलाते हैं।

आचार्य शब्द का एक शब्दार्थ है—'आ'—कुछ-कुछ, अर्थात् थोड़े, चार-दूत। इस प्रकार आचार्य का अर्थ हुआ कुछ-कुछ दूत के समान। जैसे दूत अन्वेषण कार्य में कुशल होते हैं, वैसे ही हेय या उपादेय के अन्वेषण में जो तत्पर हैं, शिष्यों को उपदेश देने में जो कुशल हैं, उन्हें आचार्य कहते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्य पद के निर्वाचन में कुछ बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है—1. श्रुत संपदा, 2. बहुश्रुतता, 3. निर्मल आचार संपदा, 4. मंत्र-ज्ञान, 5. स्वमत और परमत दोनों की जानकारी, 6. अविचल धृति, 7. कुशलप्रवक्ता, 8. गणहित चिंता।

जिस प्रकार सिद्ध पद की गरिमा को अरहंत भगवान् प्रकाशित करते हैं, वैसे ही अरिहंतों की अनुपस्थिति में आचार्य उनके शासन का प्रतिनिधित्व करते हैं। इसलिए उन्हें प्रथम पद के प्रतिनिधि कहा गया है। ऐसे अनंत उपकारी आचार्य को प्रातः-सायंकाल दो बार अवश्य भावपूर्वक वंदन करना चाहिए। आचार्यश्री तुलसी ने आचार्य पंचक में कहा है—

प्रतिनिधि आप प्रथम पद का हो, आर न पार गुणा रो।
करुण पुकार सुनो सानुग्रह, 'तुलसी' पार उतारो॥

धरमाचारज! मुझ तारो,
मैं लीन्हों शरण तुम्हारो।

है और न कोई चारो,
धर्माचारज मुझ तारो॥

उवज्झायाणं

उपाध्याय शब्द 'उप' और 'अध्याय'—इन दो शब्दों से बना है। 'उप' का अर्थ समीप और 'अध्याय' का अर्थ स्वाध्याय है। अर्थात् जिसके समीप स्वाध्याय किया जाये, जो सूत्रार्थ पठन-पाठन का कार्य करते हैं—वे उपाध्याय कहलाते हैं। शास्त्रों में निम्न श्लोक से इस तथ्य की पुष्टि होती है—

बारसंगों जिणक्खाओ, सज्झाओ कहिओ बुहे।
तं उवइसंति जम्हा, उवज्झाया तेण वुच्चंति॥

जिनेन्द्र भगवान द्वारा उपदिष्ट बारह अंगों का स्वाध्याय, जिसको बुद्धिमान गणधरों ने बतलाया है, उसका जो उपदेश करते हैं, वे उपाध्याय कहलाते हैं। आचार्य कुन्दकुन्द के शब्दों में—

रयणतय संजुता जिणकहिय पयत्थ देसया सूरा।
णिक्कंरवभाव सहिया उवज्झाया एरिसा होति॥[5]

जो रत्नत्रय से संयुक्त है, जिन-कथित पदार्थों के सूरवीर उपदेशक हैं और निष्कांक्ष भाव रहित हैं—वे उपाध्याय हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जैन दर्शन में उपाध्याय को 16 प्रकार की उपमाओं से उपमित कर बहुश्रुत संज्ञा से संबोधित किया गया है। उपाध्याय अपनी ज्ञान-साधना के कारण परम निर्ग्रंथ कहलाते हैं। वे बड़े उपकारी होते हैं। अनेक लब्धियों के धारक होते हैं। उपाध्याय स्वयं मोक्षमार्ग में स्थित होते हैं तथा अन्य मुमुक्षु मुनियों को वैसा उपदेश देते हैं। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आचार्य द्वारा संपादित किये जाने वाले कुछ कार्यों को उपाध्याय सम्पन्न करते हैं। विशेषत: अध्ययन-अध्यापन जैसे कार्य उपाध्याय के अधीन होते हैं। इस विवक्षा से यह पद पूजनीय तथा श्रद्धास्पद है। आचार्यश्री तुलसी के शब्दों में–

श्रुत उपासना संघ शासना रो संबंध सदा रो,
उपाध्याय आचारज जोड़ी, अविचल ज्यूं ध्रुवतारो॥
पांचू अंग नमत प्रभु–चरणां, निश्चित ही निस्तारो।
तिण में 'तुलसी' बणै सहारो, थांरो एक इशारो॥

णमो लोए सव्व साहूणं

साधु कौन? बचपन में पाठ्य-पुस्तकों में एक श्लोक पढ़ा था–

शैले शैले न माणिक्यं, मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो न हि र्स्वत्र, चन्दनं न वने–वने॥

बहुत ही सत्य कहा गया है कि हर कोई साधु नहीं हो सकता। हर शैल माणिक्य से अभिमण्डित नहीं होता, हर वन में चंदन के वृक्ष नहीं मिलते। इसलिए साधुत्व की पहचान होना अत्यन्त अपेक्षित है।

टीकाकारों के अनुसार साधुत्व की परिभाषा–

साधयन्ति ज्ञानादिशक्तिभिर्मोक्षमिति साधव:–अर्थात् ज्ञानादि रूप शक्तियों के द्वारा जो मोक्ष की साधना करते हैं, वे साधु कहलाते हैं। इसी तथ्य की पुष्टि में कहा गया है–

निव्वाणसाहए जोए जम्हा साहेंति साहुणो।
समो य सव्वभूएसु, तम्हा ते भाव साहुणो॥

जो पुरुष निर्वाण के साधक ज्ञान-दर्शन आदि योगों को साधता है और सब प्राणियों पर समभाव रखता है, वही भाव साधु कहलाता है। अर्थात् जो मुनि पंच महाव्रत पालक, अठारह सहस्र गुण धारक तथा परोपकारक है, वे परमेष्ठी पद योग्य हैं। मुनित्व वेश में नहीं, किन्तु जीवन में व्याप्त निष्कषाय-भाव में है। णमो लोए सव्व साहूणं–पद की मीमांसा में यह प्रश्न होना स्वाभाविक है कि प्रथम

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चार पदों में न 'लोए' शब्द का प्रयोग हुआ और न 'सव्वं' शब्द का, फिर केवल एक अंतिम पद में ही यह क्यों हुआ?

लोए शब्द की मीमांसा में एक जिज्ञासा और हो सकती है कि साधु तो केवल अढ़ाई द्वीप (जंबुद्वीप, धातकी खण्ड, अर्द्धपुष्कर द्वीप) में ही होते हैं, तो फिर अढ़ाई द्वीप के साधु भी कहा जा सकता था, 'लोए' शब्द क्यों लगाया गया?

समाधान के रूप में कहा जा सकता है कि साधु अढ़ाई द्वीप रूप मनुष्य लोक में होते हैं पर जो मुनि देव शक्ति, केवली समुद्घात तथा लब्धि विशेष के द्वारा मनुष्य लोक के बाहर कहीं भी हैं, वे भी वंदनीय तथा अर्चनीय हैं। जैसे—

❋ मध्य लोक में तो साधुओं का विचरण है ही, अधोलोक में सलिलावती विजय, जो महाविदेह क्षेत्र का एक भाग है—वहां साधु सदाकाल होते हैं, यह बताने के लिए 'लोए' शब्द का प्रयोग हुआ है।

❋ कोई देव साधु का अपहरण कर उन्हें पंडकवन आदि उर्ध्वलोक में रख आते हैं, इस अपेक्षा से लोए शब्द का प्रयोग हुआ है।

❋ केवली समुद्घात करते हैं तब उनके आत्मप्रदेश 14 रज्जु लोक में फैल जाते हैं, अत: 'लोए' शब्द का प्रयोग हुआ है।

इस प्रकार लोए शब्द में उर्ध्वलोक, मर्त्यलोक और अधोलोक—तीनों का समावेश है, जो उपयुक्त ही है। अत: स्पष्ट है कि लोए शब्द का प्रयोग करने से सम्पूर्ण लोक के साधुओं का समावेश हो गया। किसी गच्छ या सम्प्रदाय-विशेष की संकुचितता के लिए अवकाश ही नहीं रहा है। साधु किसी भी गच्छ का हो, ऊपर बताये गुण जिसमें विद्यमान हैं, वह वंदनीय है।

'सव्व' शब्द की मीमांसा

सव्व का अर्थ है—सर्व अर्थात् सब। श्रीमज्जयाचार्य ने आराधना में लिखा है—

अनंत गुणों फेर कह्यो चारित्र में, पजवां हीण वृद्धि देखी।
संजम री मन शंका आणी, तो मिच्छामि दुक्कडं विशेखी रा।
मुनिश्वर आलोयणा इम कीजै॥[6]

एकम चवदश पूनम चंद सम, मुनि कह्या जति-धर्म-धारी।
त्यामें साधपणै री शंका राखी, तो मिच्छामि दुक्कडं उदारी रा।
मुनिश्वर आलोयणा इम कीजै॥[7]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

साधु में साधना के आधार पर अनेक अवांतर भेद हो जाते हैं। अरहंत, सिद्ध में जैसी समानता है, वैसी समानता साधुओं में नहीं है। यद्यपि साधुत्व की दृष्टि से सब साधु समान ही हैं तथापि कोई छेदोपस्थापनीय चारित्र वाला, कोई परिहार विशुद्धि चारित्र वाला, कोई सूक्ष्मसंपराय चारित्र वाला और कोई यथाख्यात चारित्र वाला होता है। साधु के साथ विशेषण लगाने से इन सबकी गणना हो जाती है। उपरोक्त चारित्र वाले सभी साधु वंदनीय हैं। इसलिए 'सव्वं' विशेषण लगाया गया है। इसी प्रकार छठे से चौदहवें गुणस्थान तक के सभी साधु, पुलाक से स्नातक निर्ग्रंथ तक तथा जिनकल्पी, स्थविरकल्पी, यथालंदक, एकलविहारी, कल्पातीत—इन सब साधुओं को नमस्कार करने के लिए 'सव्वं' विशेषण जोड़ा गया है।

'सव्वं' शब्द का संस्कृत रूप सर्व और सार्व बनता है। सार्व का अर्थ होता है—अरहंत, जो सार्व के साधु अर्थात् अरहंतों के साधु हैं, वे परमेष्ठी हैं। पूर्वोक्त चारों पदों में प्रकार-भेद नहीं होता क्योंकि सिद्ध और अरहंतों में साधना जनित कोई अन्तर नहीं है तथा आचार्य और उपाध्याय की उपयोगिता के आधार पर नियुक्तियां होती हैं। अत: उनमें 'सव्व' शब्द की अपेक्षा नहीं है। यह व्यवस्था मात्र संघ की सुव्यवस्था के लिए है। ग्रंथकारों ने यह भी लिखा है कि—'आत्यन्त पूर्वम्'— जो विशेष दो पद अंतिम पद में प्रयुक्त हुए हैं, उन्हें सभी पदों में अर्थत: समझ लेना चाहिए, क्योंकि जो तीर्थंकर, सिद्ध, आचार्य और उपाध्याय हो गये हैं—वे सब वंदनीय हैं। जो साधना सम्पन्न कर चुके हैं—वे भी और जो कर रहे हैं, वे भी।

वास्तविकता यह है कि पांचों पदों में एक अंतिम पद ही ऐसा है, जिसे मूल पद कहा जा सकता है। क्योंकि पर्याप्त साधना से पूर्व सिद्ध, अरहंत, आचार्य और उपाध्याय के रूप में चेतना का आरोहण नहीं होता। जिस प्रकार आचार्य और उपाध्याय का पद आरोपित किया जाता है, वैसे साधु का पद आरोपित नहीं होता।

नमस्कार महामंत्र के पांच पदों की मीमांसा करने के पश्चात् निष्कर्ष निकलता है कि इस महामंत्र में अद्‌भुत शक्ति विद्यमान है। यह अखण्ड शांति प्रदान करने वाला मंत्र है। इस महामंत्र के अत्यन्त महत्त्व का प्रमुख कारण है—इस महामंत्र की विशिष्ट शब्द-रचना और अर्थ-गांभीर्य।

प्रकृति

प्रकृति शब्द का अर्थ है—स्वभाव। नमस्कार महामंत्र की प्रकृति का विश्लेषण करते हुए आचार्यों ने एसोपंचणमुक्कारो.........—रूप चार चूलिकाओं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का उल्लेख किया है। उपरोक्त चूलिका के शब्दार्थ की परिक्रमा से नमस्कार महामंत्र की प्रकृति को दो रूपों में समझा जा सकता है। पहला—यह महामंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और दूसरा—यह महामंत्र सब विघ्न-बाधाओं को निरस्त करने वाला होने से सब मंगलों में श्रेष्ठ मंगल है।

क्या नमस्कार महामंत्र से सब पापों का क्षय संभव है? यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। यह तीर्थंकरों की वाणी है, इसलिए संदेह का कोई प्रश्न ही नहीं है, फिर भी आचार्य वादिभसिंह की निम्नोक्त गाथाएं इस महामंत्र के प्रति साधक को अवश्य ही श्रद्धानत करती हैं—

नवकार इक्कक्खरं पावं कडई सत्त सयराणं।
पन्नासं च पएणं सागर पणासया समग्गेणं॥

नमस्कार महामंत्र का एक अक्षर सात सागरोपम पाप का नाश करता है। उसका एक पद पचास सागरोपम पाप का नाश करता है। समग्र नमस्कार मंत्र पांच सौ सागरोपम के पापों का नाश करता है।

जो गुणइ लक्खमेगं पूएइ जिन नमुक्कारं।
तित्थयर नामगोअं सो बंधइ नत्थि संदहो॥

जो विधिपूर्वक नमस्कार महामंत्र का एक लाख जाप करता है, उसके तीर्थंकर गोत्र का बंध होता है, इसमें कोई संदेह नहीं।

जो गुणइ लक्खमेगं पएहि विहीए जिनणमुक्कारो।
सो तइए भवे सिज्झाइ अहवा सत्तट्ठमे जम्मे॥

जो व्यक्ति विधिपूर्वक नमस्कार महामंत्र का एक लाख जाप करता है, वह तीसरे भव में या सातवें-आठवें भव में सिद्ध गति को प्राप्त कर लेता है।

अट्ठवे अट्ठसया अट्ठसहस्सं व अट्ठकोडीओ।
जो गुणइ नमुक्कारं सो तइय भवे लहइ मोक्खं॥

जो व्यक्ति आठ करोड़, आठ लाख, आठ हजार, आठ सौ नमस्कार महामंत्र का भावपूर्वक जप करता है, वह तीसरे भव में मोक्ष को प्राप्त कर लेता है।

त्रिसुद्धया चिन्तयन्नस्य सतमष्टोत्तरं मुनिः।
भुञ्जानोऽपि लभेतेव चतुर्थ तपसः फलम्॥

मन, वचन और काया की निर्मलता से एक सौ आठ बार जप करने वाला मुनि भोजन करते हुए भी उपवास का फल प्राप्त कर लेता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

गुरुन् पंचक्रमाद ध्यायन मुद्रया परमेष्ठिनम्।
गूढ़ प्ररूढ़मचिरात् कर्मग्रंथि विमोचयेत्॥

परमेष्ठी मुद्रा द्वारा पांच गुरुओं का ध्यान करती हुई आत्मा गूढ़ और प्रगाढ़ कर्मग्रंथि को शीघ्र तोड़ देती है।

उपरोक्त गाथाओं पर अनुचिंतन करने से स्पष्ट होता है कि महामंत्र में कर्ममल के आवरणों का अपनयन करने की अनुपम और तीक्ष्ण क्षमता है। इस मंत्र में क्रमशः वीतरागता, अनंतता, समाधि सम्पन्नता, ज्ञान-सम्पन्नता तथा साधुता को वंदन किया जाता है। इसके पांचों ही साधक अहिंसा और सत्य के महान् साधक होते हैं। अतः इनके जप से आसुरी मनोवृत्तियां क्षीण होती हैं। जैन दर्शनानुसार विधिपूर्वक किया गया कोई भी अनुष्ठान या वंदन सात-आठ कर्मों को शिथिल करता है। अनुष्ठान में पूर्ण तल्लीनता की स्थिति में अवस्थित होने पर सब कर्मों का विनाश संभव है।

एक बार गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ने बाल मुनियों को संबोधित करते हुए कहा—'एसो पंचणमुक्कारो, सव्व पाव पणासणो'—अर्थात् यह नमस्कार महामंत्र सब पापों का नाश करने वाला है, क्या यह बात सत्य है? बाल मुनियों ने अपनी बुद्धि के अनुसार उत्तर देते हुए कहा—'केवल नमस्कार मंत्र से सब पापों का नाश नहीं होता।' गुरुदेव ने प्रतिप्रश्न किया—'क्यों नहीं होता?' गुरुदेव के इस प्रश्न का उत्तर बाल-मुनि नहीं दे पाए।

गुरुदेव ने बाल मुनियों के निमित्त से सभी साधु-साध्वियों को संबोध देते हुए कहा—'हमें शास्त्रीय वाक्यों में शंका नहीं करनी चाहिए। यह महामंत्र है। आगम में प्रतिपादित है, अतः इसमें कल्पना या अतिशयोक्ति जैसी कोई बात नहीं है। जप का सही फल प्राप्त करने के लिए शर्त एक ही है कि उसका सही प्रयोग हो। 'सब रोगों की एक दवा', 'सौ बीमार : एक अनार'—आदि जनश्रुतियां अर्थहीन नहीं हो सकतीं। एक ही दवा कई रोगों को मिटा सकती है, पर तभी, जब चिकित्सक को उसके प्रयोग की विधि ज्ञात हो। किसी बीमारी में दवा का प्रयोग कैसे और किस पथ्य के साथ किया जाए, यह ध्यान दिये बिना अच्छी औषधि भी यथेष्ट लाभ नहीं देती। वैसे ही किस प्रयोजन के लिए किस विधि से नमस्कार महामंत्र का प्रयोग हो, इस तथ्य की जानकारी के अभाव में जप-प्रयोग पर संदेह करना उचित नहीं होता।'

भारतीय दर्शन में अज्ञान को सबसे बड़ा पाप माना गया है। आध्यात्मिक मंत्र, शब्दशक्ति, भावों की तल्लीनता एवं परमेष्ठी के गुणों व आदर्शों की अनुप्रेक्षा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

साधक को अज्ञान व पाप से निश्चित ही मुक्ति दिला सकती है। नमस्कार महामंत्र जैसे पवित्र मंत्र से अगर कोई पुत्र मांगता है, सम्पत्ति मांगता है तो वह महान भूल करता है। महामंत्र की आशातना करता है। महामंत्र से केवल आत्मोन्नयन की मांग करनी चाहिए, क्योंकि मंत्र-जप की प्रथम उपलब्धि है—आत्मशक्ति का संचय, जिससे प्राप्त होता है—मनोबल, आत्मबल, विवेक तथा व्यवहार का कौशल। जब सिद्धि प्राप्ति का लक्ष्य सिद्ध हो जाता है, तब इसकी आराधना से इस लोक में सर्वत्र प्रशस्त अर्थ, काम, आरोग्य तथा अभिरति (आनंद-मंगल) की प्राप्ति होती है तथा परलोक में भी देव अथवा मनुष्य की उत्तम गति, सुकुल और बोधि की प्राप्ति सुलभ हो जाती है। इसी तथ्य की पुष्टि में श्री नमस्कार निर्युक्ति की गाथा द्रष्टव्य है—

इहलोए अत्थकामा आरूग्गसमिरई अ निप्पुक्ति।
सिद्धि अ सुग्गकुलपच्चायाइ य परलोए॥

नमस्कार महामंत्र की प्रकृति का दूसरा पहलू है—मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं। यहां सव्वेसिं शब्द में द्रव्य और भाव, दोनों प्रकार के मंगलों का समावेश हो जाता है। इस दृष्टि से नमस्कार महामंत्र को सब मंगलों में प्रधान मंगल कहा है। संसार में नारियल, दीप, जल, दूध, दधि, अक्षत, शंख, नंद्यावर्त आदि अनेक पदार्थों को मंगलकारी मानने का वैज्ञानिक कारण खोजा जाए तो प्रत्येक पदार्थ की दो विशेषताएं परिलक्षित होती हैं—रश्मिवत् और चयापचय धर्म। प्रत्येक पदार्थ से तदाकार रश्मियां निकल कर समूचे वायुमण्डल में फैल जाती हैं और उन रश्मियों से जगत् के प्राणी प्रभावित होते रहते हैं।

संसार में बहुत सारे पदार्थ ऐसे हैं, जिनकी श्रेष्ठ रश्मियां अच्छा प्रभाव डालती हैं, इसलिए उन पदार्थों को मंगल माना गया है। वर्तमान वैज्ञानिक युग में दूरदर्शन से बहुत दूरी का दृश्य देखा जा सकता है। व्यक्ति के चले जाने पर उसी स्थान में दो घंटे बाद उसका फोटो लिया जा सकता है। किस आधार पर? कारण स्पष्ट है—पूर्व-निश्रित रश्मियों के आधार पर। जैन आगमों में ऐसा उल्लेख मिलता है कि जहां पुरुष बैठा हो, वहां अंतर्मुहूर्त्त तक साध्वी को नहीं बैठना चाहिए और जहां स्त्री बैठी हो वहां साधु को अंतमुहूर्त्त तक नहीं बैठना चाहिए। इसके पीछे भी यही कारण प्रतीत होता है कि व्यक्ति के जाने के बाद कुछ समय तक वे परमाणु वहां रहते हैं। अत: उस स्थान पर आने वाला व्यक्ति उन परमाणुओं से प्रभावित हो सकता है।

यद्यपि द्रव्य को मंगल माना है, पर वास्तविक मंगल नहीं, क्योंकि वह मंगल हो भी सकता है और नहीं भी। पर भाव-मंगल वास्तविक मंगल है,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पारमार्थिक मंगल है। वह सबके लिए मंगल-स्वरूप ही है। इसलिए भाव-मंगल की उपादेयता असंदिग्ध है। दसवैकालिक सूत्र में भगवान् महावीर ने धर्म को सर्वोत्कृष्ट मंगल कहा है। धर्म का अर्थ है–आत्मा में रहना। आत्मा से बाहर जाना अधर्म है, अमंगल है। परमेष्ठी-मंत्र में किसी व्यक्ति विशेष की वंदना नहीं, भौतिक अभिसिद्धि की कामना नहीं। यह तो आत्मा के निकट जाने का मंत्र है। इसलिए कहा गया है–'अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहु मंगलं, केवली-पण्णत्तो धम्मो मंगलं'–ये भाव-मंगल परमेष्ठी मंत्र की आत्मा हैं। इनके स्मरण से साधक को मांगलिक जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है। उच्चारण से प्राणों का ऊर्ध्वीकरण होता है। ज्ञानियों के प्रति नम्रता होने से ज्ञान का विकास होता है। अहिंसा, संयम और तप का बल विकसित होता है। यह मंगलभावनाओं से भरा मंत्र जगत में मांगल्य की भावनाओं को वृद्धिंगत करता है। अत: यह वास्तविक, पारमार्थिक और लोकोत्तर मंगल है। पापी व्यक्ति भी इस महामंत्र का श्रद्धा, भक्ति तथा एकाग्रतापूर्वक स्मरण कर पवित्र हो जाता है।

स्वरूप

प्रत्येक मंत्र का अपना स्वरूप होता है। अक्षर-देह मंत्र का बाह्य स्वरूप है और अर्थ-देह उसका आंतरिक स्वरूप है। नमस्कार महामंत्र का बाह्य स्वरूप महामंत्र में अभिमंडित 9 पद, 8 संपदा और 68 अक्षरों में चूलिका सहित एक शक्ति पुंज अक्षर-विन्यास के रूप में प्रतिष्ठित है और आभ्यन्तर स्वरूप अर्हत् आदि पंच-परमेष्ठी के एक सौ आठ गुणों से अतिशय महिमामंडित है।

महामंत्र के स्वरूप की मीमांसा : विभिन्न दृष्टिकोण

मंत्र-शास्त्र की दृष्टि से नमस्कार महामंत्र सब पापों का नाश करने वाला है। यह बोधि, समाधि और सिद्धिदाता है। योगशास्त्र के अनुसार पदस्थ ध्यान के लिए इस मंत्र में परम पवित्र पदों का आलंबन है। आगम साहित्य में इसे सर्व श्रुतों के आभ्यन्तर विद्यमान कहा है तथा चूलिका सहित यह महाश्रुत स्कन्ध की उपमा को प्राप्त है। कर्मक्षय की दृष्टि से इस महामंत्र के एक-एक अक्षर के उच्चारण से अनंत-अनंत कर्मवर्गणाओं का नाश होता है। द्रव्यानुयोग के आधार पर महामंत्र के प्रारंभिक दो पद स्वयं आत्मा का ही शुद्ध स्वरूप हैं। वस्तुत: अपने स्वरूप में अवस्थित होना ही मोक्ष है। शेष तीन पद शुद्ध स्वरूप की साधक अवस्था के शुद्ध प्रतीक रूप हैं। चरणकरणानुयोग की दृष्टि से साधु और श्रावक की समाचारी के पालन में मंगल और विघ्न-निवारण के लिए इसका उच्चारण बार-बार आवश्यक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। गणितानुयोग के अनुसार चूलिका सहित नो पदों की संख्या दूसरी संख्याओं की अपेक्षा अखंडता और अभंगता का विशिष्ट स्थान रखती है। धर्म कथानुयोग की दृष्टि से अरिहंतादि पंच-परमेष्ठी का जीवन चरित्र अद्भुत कथाओं* का प्रतीक है। नमस्कार महामंत्र की आराधना करने वाले जीवों की कथाएं भी आश्चर्यकारक उन्नति को दर्शाने वाली हैं। ये सब कथाएं सात्विकादि रसों का पोषण करने वाली हैं। अनिष्ट निवारण की दृष्टि से यह मंत्र व्यक्ति के अशुभ कर्म के विपाकोदय को रोकता है। शुभ कर्म के विपाकोदय को अनुकूल बनाता है। महामंत्र के प्रभाव से सभी अनिष्ट इष्ट रूप में बदल जाते हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र में वीतरागता को नमस्कार किया गया है। अर्हत् हमारे आदर्श हैं। निर्वाण हमारी मंजिल है। इस सार्वभौम सच्चाई के साक्षात्कार में इस महामंत्र की उपादेयता निर्विवाद है। यह हमारी विनम्रता के वर्द्धापन का महत्तम प्रयोग है। जो व्यक्ति आत्मशुद्धि और वीतरागता के विकास के पवित्र उद्देश्य से महामंत्र की साधना करता है, उसके लिए यह 'सव्व पाव पणासणो एवं पढमं हवइ मंगलं' सिद्ध होता है।

सन्दर्भ—

1. मंगलमंत्र णमोकार : एक अनुचिंतन
2. उपदेश माला, 341
3. मूलाचार, 5/213
4. मूलाचार, 5/214
5. नियमसार, गाथा-74
6. आराधना प्रथम ढाल, गाथा-13
7. आराधना प्रथम ढाल, गाथा-14

---

* देखें परिशिष्ट 1

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. नमस्कार महामंत्र : एक सर्वे

नमस्कार महामंत्र चैतन्य जागरण और चित्त की निर्मलता को विकसित करने वाला अलौकिक मंत्र है। अध्यात्म विकास का यह मंत्र श्री, ह्री, धृ, धृति आदि मंगल भावनाओं से चित्त को भावित रखने की अपूर्व क्षमता रखता है। अलौकिकता की ओर अभिमुख यह मंत्र कल्पवृक्ष, चिंतामणि और कामधेनु के समान अभीष्ठ फल देने वाला है।

हिंदू धर्म में गायत्री मंत्र, बौद्ध धर्म में त्रिशरण मंत्र व जैन धर्म में नमस्कार महामंत्र विश्रुत है। चौदह पूर्वों के सार रूप इस मंत्र को जैन धर्म में महामंत्र माना गया है। महानिशीथ में इसे महाश्रुत स्कन्ध कहा है। जिनभद्रगणी क्षमाश्रमण ने इस महामंत्र को सर्वश्रुतान्तर्गत बतलाया है। यह दिगम्बर, श्वेताम्बर सभी परम्पराओं में समान रूप से मान्य है। यही इसकी प्राचीनता का हेतु है। यदि यह श्वेताम्बर दिगम्बर का अन्तर होने के बाद निर्मित होता तो संभव है, समग्र जैन समाज में इसे इतनी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं होती। किसी एक सम्प्रदाय में इसका महत्त्व होता, दूसरे में इतना महत्त्व नहीं होता, तो यह मंत्राधिराज के रूप में प्रतिष्ठित नहीं हो पाता। लगभग डेढ़ हजार वर्ष की अवधि में इस महामंत्र पर विपुल साहित्य रचा गया। इसके सहारे अनेक मंत्रों का विकास हुआ और इसकी स्तुति में अनेक काव्य रचे गये। यह जैनत्व का प्रतीक बना हुआ है। इस दृष्टि से हम नमस्कार महामंत्र की व्यापकता का मूल्यांकन कर सकते हैं। इसकी महिमा अचिन्त्य एवं अकथनीय है।

1. णमोक्कार की अनादिता

एक प्राचीन ग्रंथ में नमस्कार महामंत्र की महिमा की पराकाष्ठा बताते हुए कहा गया है—

जे केइ गया मुक्खं गच्छंति य के वि कम्ममलमुक्का।
ते सव्वेवि य जाणसु, जिणनवकारप्पभावेण॥[1]

आज तक जितने जीव मोक्ष गये हैं, जो कर्म-मल रहित बनकर मोक्ष में जाते हैं, वे सभी नवकार मंत्र के प्रभाव से गये हैं, ऐसा सभी जानें।

नमस्कार महामंत्र की रचना कब और किसने की इसका कोई स्पष्ट स्रोत उपलब्ध नहीं होता। यह अनादि काल से चला आ रहा है। उपरोक्त गाथा में कहा गया है कि सब जीव नवकार के प्रभाव से मोक्ष जाते हैं। जैन सिद्धान्तानुसार मोक्ष

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का विरहकाल उत्कृष्ट छ: माह का माना गया है। अत: इस संसार से निरन्तर जीवों की मुक्ति होती रहती है। यह काल अनादि है, जीव अनादि है, धर्म अनादि है तभी से वे सब जीव इस णमोक्कार को पढ़ते आ रहे हैं, अत: णमोक्कार भी अनादि है। यह मंत्र केवल लिखित अक्षर नहीं है, केवल वर्ण ही नहीं है, इसकी चैतन्य वीतराग अवस्था अर्हत् है, शुद्धावस्था सिद्धत्व है, आचरण अवस्था आचार्य है, ज्ञान अवस्था उपाध्याय है तथा साधनामय अवस्था साहूणं (साधु) है। ये पाँचों अवस्थाएं सदैव विद्यमान रहती हैं। जैन भूगोल के अनुसार महाविदेह क्षेत्र में बीस विहरमान (तीर्थंकर) शाश्वत रहते हैं। तीर्थंकर जहां होते हैं वहां नमस्कार महामंत्र का स्मरण चलता ही है। अत: मंत्र की त्रिकालवर्त्ती अवस्था के विषय में कोई संदेह नहीं किया जा सकता। एक प्राचीन गाथा के अनुसार—

एसो अणाई कालो, अणाई जीवो अणाई जिणधम्मो।
तइया वि ते पढ़ंता एयं चियं जिणनमुक्कारं।[2]

जहां तीर्थंकर नहीं होते वहां पर भी नमस्कार महामंत्र का जप चलता है। इसी तथ्य की पुष्टि कर रही है निम्नोक्त गाथा—

एरावएसु पंचसु पंचसु भरहेसु सुच्चिय पठंति।
जिणनवकारो पवरो सासय सिवसुक्खदायारो॥[3]

खारवेल के शिलालेख में ब्राह्मी लिपी (ई. सन् 152 वर्ष पूर्व) में केवल दो पद अंकित है—नमो अरहंताणं नमो सवसिद्धानं। शयम्भव सूरि का दसवैआलियं में प्राप्त निर्देष भी इसी ओर संकेत करता है। भगवान महावीर दीक्षित हुए तब उन्होंने सिद्धों को नमस्कार किया था।[4] शय्यम्भव सूरि चतुर्दश पूर्वधर हुए हैं और उनका अस्तित्वकाल ई.पू. 5-6 शताब्दी है। उन्होंने कायोत्सर्ग को नमस्कार मंत्र के द्वारा पूर्ण करने का निर्देष दिया है।[5] दसवैकालिक सूत्र की दोनों चूर्णियों ओर हरिभद्रीय वृत्ति में नमस्कार की व्याख्या 'णमो अरहंताणं' मंत्र के रूप में की है।[6] उत्तरज्झयणाणि के बीसवें अध्ययन के प्रारम्भ में 'सिद्धाणं नमो' किया है।संजयाण च भावओ—सिद्धों और साधुओं को नमस्कार किया गया है। श्रुत-केवली आचार्य भद्रबाहु के अनुसार नंदी और अनुयोग द्वार को जानकर तथा पंच मंगल को नमस्कार कर सूत्र (आगम) का प्रारम्भ किया जाता है।[7] फगुयश की पत्नि शिवयशा द्वारा जिन-पूजा हेतु निर्मित आयागपट्ट पर अंकित मथुरा के शिलालेख में 'नमो अरहंताणं' लिखा है। मथुरा के कई शिलालेखों में 'नमो अरहंताणं' लिखा हुआ है तथा पन्द्रह भग्न शिलालेखों में भी ''(सि) द्ध नमो अरहंताणं'' लिखा हुआ है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उपरोक्त सभी तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि नमस्कार महामंत्र की परिपाटी बहुत पुरानी है। आवश्यक के निर्युक्तिकार ने लिखा है–पंच-परमेष्ठियों को नमस्कार कर सामायिक लेनी चाहिए। यह पंच नमस्कार सामायिक का ही एक अंग है। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि नमस्कार महामंत्र उतना ही पुराना है जितना सामायिक सूत्र। सामायिक–आवस्सयं का प्रथम अध्याय है। नंदी सूत्र में महाविदेह क्षेत्र की अपेक्षा द्वादशांग को अनादि-अनंत बताया है। नमस्कार फलविंशति गाथा, 13 के अनुसार–

सट्ठिसयं विजयाणं पवराणं जत्थ सासओ कालो।
तत्थ वि जिण–नवकारो, इय एस पढ़िज्झइ निच्चं॥

अर्थात् पांच महाविदेह क्षेत्र में 160 विजय है जहां पर एक समान शाश्वत समय रहता है, वहां पर भी इस नवकार मंत्र का स्मरण/जप किया जाता है। अत: स्पष्ट है कि 'णमोक्कार-मंत्र' भी अनादि अनन्त है। संक्षेप में कहा जा सकता है अनन्त चौबीसी में अन्तर आया, आयेगा पर णमोक्कार में नहीं। प्रत्येक चौबीसी ने इसका स्मरण किया है। यह शाश्वत है। इससे णमोक्कार महामंत्र की अनादिता, श्रेष्ठता, उत्कृष्टता का महत्त्व स्वयं सिद्ध है। सचमुच यह कालजयी मंत्र है।

2. महामंत्र का वैशिष्ट्य

जिन मंत्राक्षरों से विभिन्न मंत्रों को जन्म दिया जाता है, वे मंत्र महामंत्र की योग्यता धारण करते हैं। नमस्कार महामंत्र में कुछ विशिष्ट बीजाक्षरों का योग बना है। जिससे अन्य मंत्र बनाये जा सकते हैं–अ, म, ह, र, स, द आदि। महामंत्र जिन्हें अपनी शक्ति बढ़ाने के लिए किसी बीज-मंत्र के योग की अपेक्षा नहीं होती। यद्यपि कुछ आचार्यों ने महामंत्र के साथ भी बीजमंत्रों को जोड़ा है। उनका विकास किया है। पर नमस्कार महामंत्र तो सिद्धमंत्र है, इसे बीजमंत्र की क्या अपेक्षा?

2. महामंत्र जिसका कोई व्यक्ति विशेष अधिष्ठाता नहीं होता। अन्य मंत्र सकाम भाव से जहां सिद्ध होते हैं, वहां नमस्कार महामंत्र केवल निष्काम-उपासक की ही कामनाएं सिद्ध करता है।

3. महामंत्र जिसे प्राप्त होती है–विराट शक्तियां, संकट निवारण, लक्ष्मी आह्वान, देवाकर्षण तथा कर्म निर्जरा।

4. यह कामनाओं को जागृत करने वाला नहीं, कामनाओं को समाप्त करने वाला महामंत्र है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. महामंत्र में मार्ग (सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान, सम्यक् चारित्र और और सम्यक् तप) का रहस्य अर्थात् हमारी अध्यात्म यात्रा का समूचा मार्ग छिपा हुआ है, इसलिए यह महामंत्र की गरिमा से अभिमंडित है।

6. किसी को हानि नहीं पहुँचाकर केवल लाभ का हेतु होने के कारण इस मंत्र को महामंत्र की वरीयता प्राप्त है।

7. यह महामंत्र साधक को पुद्गल सापेक्ष सुख से ऊपर उठाकर पुद्गल निरपेक्ष सुख के लिए प्रयत्नशील करता है, इस दृष्टि से यह महामंत्र के वैशिष्ट्य को प्राप्त है।

8. चौदह पूर्वधर श्रुतकेवली आचार्यश्री भद्रबाहु ने आवश्यक सूत्रों पर निर्युक्ति की रचना की है। उसमें नमस्कार माहात्म्य का प्रतिपादन करने वाला विस्तृत विभाग है, जो नमस्कार निर्युक्ति के नाम से जाना जाता है। इस निर्युक्ति पर भाष्य, चूर्णि, वृत्ति आदि अनेक व्याख्याओं की रचना हुई हैं।

श्रुत केवली आचार्य भद्रबाहु ने इस महामंत्र को 'महान अर्थवाला' बतलाते हुए इसकी अपार महिमा का उल्लेख किया है—

महार्थता चास्याल्पाक्षरत्वेऽपि द्वादशांगसंग्राहित्वात्। कथं पुनरेतदेवमित्याह-यो नमस्कारो 'मरणे' प्राणोपरमलक्षे 'उपाग्रे' समीपे भूते 'अभीक्ष्णम्' अनवरते क्रियते 'बहुशः' अनेकशः। ततो महत्यामापदि द्वादशाङ्ग मुक्त्वा तत्तस्थाने-नुस्मरणाद् महार्थः। इयमत्र भावना-मरण-काले द्वादशांगपरार्त-नाशक्तो तत्स्थाने तत्कार्यकारित्वात् सर्वैरपि महर्षिभिरेष स्मर्यते इति द्वादशांगसङ्ग्राहिता, तद भावाच्च महार्थ इति।''[8]

श्रुत ज्ञान के पारगामी और शब्द शक्ति के समग्र रहस्य को जानने वाले महापुरुष स्वयं ने ही जब नमस्कार महामंत्र को इतना बड़ा महत्व दिया है और मृत्यु आदि प्रसंग पर इसका स्मरण करने का विधान बताया है। इससे यह सिद्ध होता है कि नमस्कार महामंत्र के अक्षरों की संकलना ऐसी विशिष्ट प्रकार की है कि जिससे इसको महामंत्र का स्थान प्राप्त हुआ है।

9. कलिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र जैसे समर्थ विद्वान ने भी अपनी माता पाहनी, जिसने दीक्षा ली थी, की मृत्यु के समय यह संकल्प ग्रहण किया था कि मैं करोड़ बार नमस्कार महामंत्र का जप करूँगा। ऐसे महाज्ञानी पुरुष भी नमस्कार महामंत्र का आलंबन लेते हैं, आश्रय लेते हैं। इससे यह तथ्य पुष्ट होता है कि महामंत्र की अक्षर संकलना में कोई अचिन्त्य सामर्थ्य है कि आत्मा के साथ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अनादि काल से लगे अनन्त पापों के स्तरों को और काम-वासनाओं को यह मंत्र जड़ मूल से नष्ट कर देता है।

10. 'महानिशीथ' में महामंत्र का माहात्म्य इस प्रकार निर्दिष्ट है–''अणंत गमपज्जवत्थपसाहग–सव्वमहामंत पवरविज्ञाणं परम-बीज भूयं।'' यह महामंत्र अनन्त गम, पर्याय और अर्थ का प्रसाधक तथा सब महामंत्रों का और प्रवर विद्याओं का बीज स्वरूप है।

उपरोक्त सम्पूर्ण तथ्यों के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि नवकार मंत्र में महामंत्र का वैशिष्ट्य गर्भित है। निःसंदेह यह मंत्र नहीं महामंत्र है। यह महामंत्र ऋद्धि, सिद्धि, निधि और आत्मिक सुख की सन्निधि सुलभ कराता है।

3. पाठान्तर विमर्श

इस महामंत्र का बहुत प्रचलित पाठ जो प्रारम्भ में दिया गया है, वह है परन्तु प्राचीन ग्रंथों में इसके अनेक पदों, वाक्यों में पाठान्तर मिलते हैं। णमो, नमो। अरहंताणं, अरिहंताणं, अरूहंताणं। आयरियाणं, आइरियाणं। णमोलोए सव्व साहूणं, णमो सव्व साहूणं। होइ, हवइ।

णमो, नमो–प्राकृत भाषा में आदि में न का ण विकल्प से होता है। इसलिए णमो और नमो दो रूप मिलते हैं। श्वेताम्बर साहित्य में कहीं णमो के स्थान पर नमो मिलता है। इस भेद का कारण भी एक व्याकरणिक सूत्र है– ''महाराष्ट्रयां नकारस्य सर्वदा णकारो जायतेऽर्द्धमाग्ध्यां तु नकार णकारोद्वावपि।''

शौरसेनी में न का ण अनिवार्य आदेश है और मागधी में विकल्प से होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से णमो पाठ समीचीन है क्योंकि इस महामंत्र के उच्चारण में जिस प्राणवायु के संचार की अपेक्षा होती है, वह णमो के घर्षण से ही उत्पन्न हो सकती है। मंत्र शास्त्रीय दृष्टि से 'ण' मूर्धन्य वर्ण है। उसके उच्चारण से जो घर्षण होता है, मस्तिष्कीय प्राण विद्युत का जो संचार होता है, वह न के उच्चारण से नहीं होता। णमो की ध्वनि में अणिमा आदि आठ सिद्धियों का समावेश भी माना गया है।

अरहंताणं, अरिहंताणं–प्राकृत भाषा में 'अर्ह' धातु के दोनों रूप बनते है अरहइ, अरिहइ। आवश्यक सूत्र में अरहंत, अरिहंत के तीन अर्थ किये हैं–

1. पूजा की अर्हता होने के कारण अरहंत।[9]
2. अरि का हनन करने के कारण अरिहंत।
3. रज कर्म का हनन करने के कारण अरिहंत।[10]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वीरसेनाचार्य ने अरिहंत पद के चार अर्थ किये हैं—

1. अरि का हनन करने के कारण अरिहंत।

2. रज का हनन करने के कारण अरिहंत।

3. रहस्य के अभाव से अरिहंत।

4. अतिशय पूजा की अर्हता होने के कारण अरहंत।[11]

मंत्र शास्त्र के अनुसार अकार का वर्ण स्वर्णिम और स्वाद नमकीन होता है। इकार का वर्ण स्वर्णिम और स्वाद कषैला होता है। अकार पुल्लिंग और इकार नपुंसकलिंग है।

'अरूह' शब्द का प्रयोग आचार्य कुन्दकुन्द के साहित्य में मिलता है। उन्होंने 'अरुहंत' और 'अरहंत' का एक ही अर्थ में प्रयोग किया है। वे दक्षिण के थे इसलिए 'अरहंत' के अर्थ में 'अरुह' का प्रयोग दक्षिण के प्रभाव से प्रभावित है बोध पाहुड मे भी 'अरुह' शब्द का प्रयोग मिलता है।

आचार्य हेमचन्द्र ने उपलब्ध प्रयोगों के आधार पर 'अर्हत्' शब्द के तीन रूप सिद्ध किये हैं—अरुहो, अरहो, अरिहो, अरुहंतों, अरहंतों, अरिहंतों।[12]

डॉ. फिसेल ने अरहा, अरिहा, अरुहा और अरिहंत का विभिन्न भाषाओं की दृष्टि से अध्ययन प्रस्तुत किया है[13]—

अरहा, अरहंत—अर्द्धमागधी

अरिहा—शौरसेनी

अरुहा—जैन महाराष्ट्री

अलिहंताणं—मागधी

अभयदेव सूरि ने अरुहंताणं का अर्थ अपुनर्भव किया है, जैसे बीज के अत्यन्त दग्ध होने पर उससे अंकुर नहीं फूटता, वैसे ही कर्म बीज के अत्यन्त दग्ध हो जाने पर भव अंकुर नहीं फूटता।[14]

आयरियाणं, आइरियाणं—आगम साहित्य में यकार के स्थान पर इकार के प्रयोग मिलते हैं—वयगुत्त, वइगुत्त। वयर, वइर। इसी प्रकार आयरिय, आइरिय में रूप भेद हैं।

णमो आइरियाणं दिगम्बर परम्परा में प्रचलित है और णमो आयरियाणं श्वेताम्बर परम्परा में प्राप्त होता है। दिगम्बर साहित्य में शौरसैनी प्राकृत व्याकरण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का अधिक प्रयोग हुआ है और श्वेताम्बर साहित्य में मागधी व्याकरण का। इसी व्याकरण भेद के कारण इ और य का अन्तर है।

णमो लोए सव्व साहूणं, णमो सव्व साहूणं–अभयदेव सूरि के अनुसार भगवती सूत्र के मंगल-वाक्य के रूप में उपलब्ध नमस्कार मंत्र का पाँचवां पद 'णमो सव्व साहूणं' है। णमो लोए सव्व साहूणं का उन्होंने पाठान्तर के रूप में उल्लेख किया है–णमा लोए सव्व साहूणं ति क्वचित्पाठ:।[15]

इस पाठान्तर की व्याख्या में उन्होंने बताया है कि सर्व शब्द आंशिक सर्व के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। अत: परिपूर्ण सर्व का बोध कराने के लिए इस पाठान्तर में लोक शब्द का प्रयोग किया गया है।[16] 'लोक' और 'सर्व'–इन दानों शब्दों के होने पर यह प्रश्न होना स्वाभाविक ही है और अभयदेवसूरि ने इसी का समाधान किया है।

दशाश्रुतस्कन्ध के वृत्तिकार ब्रह्मऋषि ने भी णमो लोए सव्व साहूणं को पाठान्तर के रूप में व्याख्यायित किया है।

आवश्यक सूत्रों के प्रारम्भ में उपलब्ध 'णमो लोए सव्व साहूणं' को आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने मूल पाठ के रूप में स्वीकार करते हुए भगवती भाष्य में इसकी चर्चा व समीक्षा की है।

णमो लोए सव्व साहूणं को कहीं मूल पाठ और कहीं पाठान्तर भी माना गया है। नमस्कार महामंत्र में प्रचलित पाठ यही है।

होइ, हवइ–नमस्कार महामंत्र में अंतिम चार पदों को चूलिका के रूप में स्वीकार किया गया है। चूलिका अनुष्टुप् छन्द में आबद्ध होने के कारण छंद शास्त्र के नियमानुसार उसके प्रत्येक चरण में आठ-आठ अक्षर होने चाहिए। अंतिम पद मे 'होइ' बोलने से इस नियम का पालन होता है इसलिए अचल गच्छ की समाचारी में तथा कुछ स्थानकवासी एवं कुछ दिगम्बरो में 'होइ' बोला जाता है जबकि शेष 'हवइ' बोलने वालों का कहना है–आर्ष प्रयोग में कभी नौ अक्षर भी अपवाद के रूप में शास्त्रों में दिखाई देते हैं। उदाहरणार्थ दसवैकालिक सूत्र में प्रथम अध्ययन में 'भमरो आवियइ् रसं' यहाँ नौ अक्षर होते हैं किन्त आर्ष प्रयोग होने से कोई दोष रूप नहीं है।

इसलिए इस बारे में तत्त्व (सही) तो केवली भगवंत ही जानते हैं पर 'होइ' तथा 'हवइ' के अर्थ में व्याकरण की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं है।

चत्तारि मंगलं पाठ में भी कुछ पाठ भेद है, जो निम्न प्रकार है–'लोगुत्तमा' की जगह 'लोगोत्तमा' और पव्वज्ञामि की जगह 'पवज्ञामि' पाया जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यह पाठ भेद पाठकों की सामान्य जानकारी के लिए दिये गये हैं किन्तु इनसे पाठको को भ्रमित नहीं होना चाहिए। व्याकरण शास्त्र के नियमानुसार ऐसा होने मे कोई आपत्ति नहीं है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि नमस्कार महामंत्र की मौलिक उपादेयता में कोई मत भेद नहीं है। सचमुच यह मंत्र जैन एकता की प्रतिष्ठाभूमि रहा है। यह मंत्र हमें जीवनी शक्ति प्रदान करता है। हमारी चेतना को संस्कारित करता है तथा उन्मार्ग से हटाकर आत्मा को सन्मार्ग में स्थित करता है। आचार्य सिद्धसेन ने सर्व प्रथम नमस्कार महामंत्र पर 18,000 श्लोक प्रमाण बड़ी सुन्दर टीका लिखी। उसमें सबसे ऊपर नवकार मंत्र को संस्कृत में इस प्रकार लिखा—''अर्हन्त् सिद्धाचार्यो पाध्याय सर्व साधुभ्यो नमः।'' आचार्य सिद्धसेन जिन्हें ''सर्वज्ञ-पुत्र'' की उपमा से उपमित किया जाता था, उन्होंने भी नमस्कार महामंत्र को 'एहकामुष्मिक सौख्य कामधुक' कहा है अर्थात् इस महामंत्र को लौकिक और लोकोत्तर सुखों को देने वाली कामधेनु बताया है।'

पुराण कथा के अनुसार जब देव और दानवों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया तब जो सर्वोत्तम वस्तु प्राप्त हुई वह था 'अमृत-कलश'। इसी प्रकार संसार के समस्त ज्ञान-विज्ञान-विद्या और मंत्रों का मंथन करने के बाद जो सर्वोत्तम अमृत कलश मिला उसका नाम है—''पंच परमेष्ठी नमस्कार मंत्र''। इस मंत्र के आत्मगत होने के बाद सम्यक् दर्शन से परिलक्षित शम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा, आस्तिक्य आदि आत्म धर्म व्यवहार की भूमिका पर उतर आते हैं। 'नमस्कार-चिंतामणि' में कहा है—णमो अरहंताणं जप से उपशम गुण की, णमो सिद्धाणं जप से संवेग गुण की, णमो आयरियाणं जप से निर्वेद गुण की, णमो उवज्झायाणं जप से अनुकम्पा गुण की और णमो लोए सव्व साहूणं जप से आस्तिक्य गुण की प्राप्ति होती है हमारे ऋषियों ने कहा है शब्द की चोट से राग-द्वेष की ग्रंथियो को सर्वथा आहत किया जा सकता है। इसी आघात-प्रत्याघात की प्रक्रिया से साधक जीवन के अंतिम ध्येय-मोक्ष तक पहुँच सकता है।

4. अरहंत शब्द की प्राचीनता

अरहंत, अरिहंत और अरुहंत में अरहंत शब्द सर्वाधिक प्राचीन रहा है। आचारांग सूत्र में श्रमण भगवान महावीर के लिए प्रयुक्त विशेषणों में 'अरहं' [17] शब्द मिलता है। सूत्रकृतांग सूत्र में जिन धर्म हेतु 'धम्मं अरहंता भासिय' [18] शब्द का प्रयोग किया है। स्थानांग सूत्र में देवोद्योत, लोकोद्योत, लोकान्धकार आदि प्रसंगों में तीर्थंकर के विशेष कल्याण पर्वों के अतिशय वर्णन में अरहंत, [19] शब्द

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का ही प्रयोग हुआ है, समवायांग सूत्र में अरहंतों,[20] अरहा,[21] अरहो,[22] अरहओ[23] और अरहंता[24] शब्द का उपयोग हुआ है। भगवती सूत्र के मंगलाचरण में नमस्कार महामंत्र है, उसके प्रथम पद में 'णमो अरहंताणं' दिया गया है। ''नाय धम्म कहा'' (ज्ञाताधर्म कथा) में तीर्थंकरत्व प्राप्ति के उपायों का कथन करते हुए प्रथम उपाय में 'अरहंत सिद्ध' शब्द का प्रयोग हुआ है। राजप्रश्नीय सूत्र में महावीर स्तुति के प्रकरण में अरहंताणं शब्द का प्रयोग हुआ है। कल्पसूत्र में भगवान महावीर के विशद वर्णन के बाद पार्श्वनाथादि जिनेश्वरों के लिए 'अरहा' शब्द का प्रयोग दिया गया है।

आगम साहित्य के अलावा अनेक शिलालेखों में 'अरहंत' शब्द मिलता है। उदयगिरी, बेकुण्ठ गुफा, मौर्यकालीन प्राय: 165वें वर्षीय एक शिलालेख में 'अरहंत पसादनं' शब्द का प्रयोग किया है। प्रथम या द्वितीय ई.पू. (क्यूरर) पभोसा (इलाहाबाद के समीप) में सम्राट आसादसेन द्वारा अंकित शिलालेख में 'वशपीयानं अरह' शब्द का प्रयोग हुआ है। मथुरा के अनेकों शिलालेखों में अरहंत शब्द का प्रयोग हुआ है। मथुरा में सं. 299 के अंकित शिलालेख में अरिहंत स्तुति रूप एक सुन्दर श्लोक दिया है–

जयत्यर्हस्त्रिलोकेश: सर्वभूतहिते रत:।
रागाधरिहरोनन्तोनन्तज्ञानदृगीश्वर:॥

शक. 411 ई. 488 में उल्तेम (जिला कोल्हापुर) की संस्कृत पत्रावली में एक श्लोक उपलब्ध होता है जो निम्न प्रकार से है–

जयत्यनन्तसंसार पारावारैकसैतव:।
महावीरार्हत: पूताश्चरणाम्बुजरेणव:॥

आगमेत्तर साहित्य में भी अरहंत शब्द का प्रयोग मिलता है। इस प्रकार अरहंत शब्द का प्रयोग आगम एवं अन्य साहित्य में तथा शिलालेखों में प्रचुर रूप से प्रयुक्त हुआ है पर यह कब, कैसे और किस प्रकार विश्रुत हुआ इसका कोई अता-पता नहीं है।

5. अरहंत निष्पन्न अर्हं–मंत्र : एक रहस्य

अरहंत, णमो अरहंताणं तथा अर्हं आदि मंत्रों के ध्यान में तन्मय होने से अरहंत भगवन्तों के साथ तन्मयता सिद्ध होती है। अर्हं यह अरहंत का बीजमंत्र है, अरहंत से निष्पन्न मंत्र है, यह अर्हत् का बोध कराने वाला मंत्र है। ऋषिमंडल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्तोत्र, नमस्कार महामंत्र स्तोत्र, अरिहंत स्तोत्र आदि कई पुरातन स्तोत्र साहित्य में अर्हं मंत्र का विशद वर्णन एवं महत्व बतलाते हुए कहा गया है—''जो सर्व पूजनीय आत्माओं और अरिहंतों का प्रतिष्ठान (स्थान) है। जो परमेष्ठी-बीज, जिनराज-बीज, सिद्ध-बीज, ज्ञान-बीज त्रैलोक्य-बीज और जिनशासन के सारभूत सिद्ध-चक्र का आदि बीज है, वह अर्हं प्रणिधान-ध्यान का उत्तमोत्तम आलंबन है।''[25]

(1) परमेष्ठी-बीज

तत्त्व से अरिहंत परमेष्ठी स्वरूप हैं। उपचार से द्रव्य सिद्धत्व होने से वे सिद्ध हैं। उपदेशक होने से वे आचार्य हैं। शास्त्र के पाठक होने से वे उपाध्याय हैं। निर्विकल्प चित्त वाले होने से वे साधु हैं। इस प्रकार अर्हं यह परमेष्ठी-बीज है। इसलिए सिद्ध हेम व्याकरण (मंगलाचरण), ऋषिमंडल स्तोत्र (श्लोक 3) आदि कई जगह कहा है—जो परम पद में प्रतिष्ठित, परमज्ञान स्वरूप है, ऐसे अरिहंत परमात्मा का वाचक, अचल, अविनाशी, स्वरूप, सर्वत: सर्वत्र, सर्वकाल में प्रणिधान के योग्य है।

(2) जिन-राज-बीज

भूत, भविष्य और वर्तमान के सर्व जिनेश्वर जिसमें वाच्य रूप से प्रतिष्ठित है, वह अर्हं सर्व जिनों का बीज है, अत: इसे जिनराज बीज कहा गया है।

(3) सिद्ध-बीज

'अधिष्ठान शिव श्रिय:' अर्थात् अर्हं यह शिव-लक्ष्मी-सिद्धि मुक्ति का भी बीज है।अक्षर याने मोक्ष, उसका हेतु रूप होने से यह मोक्ष बीज कहलाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से—जिस प्रकार बीज को बोने से वह बीज यथासमय फल रूप प्रमाणित होता है उसी प्रकार अर्हं बीजमंत्र के ध्यान से सिद्धत्व रूप फल उपलब्ध होता है। भौतिक दृष्टि से अनेकों सुवर्ण सिद्धियों और महासिद्धियों का कारण रूप होने से भी यह सिद्ध-बीज कहलाता है।

(4) ज्ञान-बीज

अर्हं यह ब्रह्म स्वरूप होने से ज्ञान-बीज है। काल सहित अ,र,ह जिसमें प्रतिष्ठित है ऐसे अर्हं में अ से ह पर्यन्त के अक्षरों का समावेश हो जाता है अत: यह सम्यक् श्रुत-ज्ञान का बीज माना जाता है।

(5) त्रैलोक्य-बीज

अर्हं यह त्रैलोक्य बीज है। अर्हं में वर्णों की रचना इस प्रकार है—''अ,र,ह—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कला, बिंदु'' इसकी सर्व शास्त्रों और सर्व लोक में व्यापकता है, वह इस प्रकार है–अर्हं में अ से ह तक सिद्ध मात्रिका रही हुई हैं। इसका एक-एक अक्षर भी तत्व स्वरूप है, फिर भी ''अ, र, ह'' ये तीन तत्त्व (वर्ण) अत्यन्त विशिष्टता के धारक हैं।

'अ' की विशिष्टता

1. अ–अभय– अकार यह सर्वजीवों को अभय प्रदान करता है। सर्व जीवों के कण्ठ स्थान में आश्रित रहने वाला यह प्रथम तत्त्व है।

2. अ–अविनाशी– सर्व स्वरूप, सर्वगत, सर्वव्यापी, सनातन और सर्व जीवाश्रित है। अतः इसका चिन्तन पाप नाशक है।

3. अ–अपूर्व (जिससे पूर्व कोई वर्ण नहीं है)– सर्ववर्ण और सर्व स्वरों में प्रथम होने से ककारादि सर्व वर्णों में इसका प्रयोग होता है अतः सर्व प्रकार के मंत्रादि योगों में, सर्व विद्याधरों, सर्व पर्वत-वनों में शब्द रूप में व्याप्त है।

'र' वर्ण की विशिष्टता

प्रदीप्त अग्नि की तरह सर्वप्राणियों के मस्तक (ब्रह्मरंध्र) में रहे हुए 'र' वर्ण का विधि पूर्वक ध्यान ध्याता को त्रिवर्ग फल प्रदान करता है।

'ह' वर्ण की विशिष्टता

जो सदा सर्व प्राणियों के हृदय में रहता है। सब वर्णों के अन्त में रहता है तथा जो लौकिक शास्त्रों में महाप्राण के नाम से प्रतिष्ठित एवं पूजित है, उस 'ह' का विधि पूर्वक ध्यान साधक को सर्व कार्यों में सिद्धि प्रदान करता है।

(.) की विशिष्टता

जो हकार पर जल बिंदु की तरह वर्तुलाकार रहा हुआ है जो सर्व प्राणियों की नासिका के अग्रभाग पर और सर्व वर्णों के मस्तक पर स्थित होता है। जो योगी पुरुषों द्वारा ध्येय–चिन्तन करने योग्य है, वह बिंदु सर्वजीवों को मोक्ष प्रदान करता है। इस प्रकार महाप्रभावक तत्त्व रूप इसी से जिनागम अनुसार सम्यक् दर्शन और अन्य दर्शनों के अनुसार कुंडनिली योग, नाद योग, बिन्दुयोग और लय योग प्राप्त हो सकते हैं। अतः अर्हं मंत्र की ध्यान प्रक्रिया में प्रत्येक योगों का समावेश हो जाता है।

इस प्रकार विराट स्वरूप अरहंत और अर्हं की आराधना में अरहंत और अर्हं मंत्र रूप शब्दों की समायोजना भी विराटता को अपने भीतर समेटे हुए हैं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जिसका अपना विशिष्ट प्रभाव, विशिष्ट सामर्थ्य और विशिष्ट चमत्कार है। अमेरिका में एक मुस्लिम भाई सौ डॉलर में एक ताबिज बनाकर देता है, जिसका फल लोगों की मनोकामना पूर्ति बताया जाता है। लोगों की अच्छी भीड़ रहती है वहां पर। एक बार डॉक्टर कंवर जैन ने भी सौ डॉलर देकर एक ताबिज लिया। उसे बताया गया जब तुम्हारी मनोकामना पूर्ण हो जाये तब इसको पानी में बहा देना। कुछ समय पश्चात् जब उसकी मनोकामना पूर्ण हो गई, वह उस ताबिज को पानी में बहाने जा रहा था। मार्ग में चलते-चलते उसने सोचा ताबिज को खोलकर देखूं तो सही इसमें कौन-सा मंत्र है। ज्योंहि उसने ताबिज खोलकर देखा उसके आश्चर्य का पार नहीं रहा। उसमें लिखा हुआ था 'णमो अरहंताणं'। उसने सोचा यह तो अपने घर की चीज है और एक अजैन व्यक्ति इसका कितना फायदा उठा रहा है। उस दिन से उसकी इस महामंत्र के प्रति गहरी श्रद्धा हो गई।

निस्संदेह कहा जा सकता है कि अरहंत और अर्हं ये दोनों मंत्र साधक की मंजिल के सशक्त सोपान है। जिन पर आरोहण करता हुआ साधक मंजिल का वरण करने में सफल हो जाता है।

(6) उच्चारण शुद्धि के कुछ नियम

अपने शरीर एवं समस्त विश्व में पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और आकाश ये पंच महाभूत व्याप्त हैं। नमस्कार महामंत्र के शुद्ध उच्चारण से जो-जो आन्दोलन/तरंगें उत्पन्न होती हैं उनका पाँच महाभूतों पर अनुकूल प्रभाव होता है, और अशुद्ध उच्चारण से समस्त विश्व के वातावरण पर प्रतिकूल असर होता है। अत: उच्चारण शुद्धि के कुछ आवश्यक नियमों पर ध्यान देने की अपेक्षा है।

जहां-जहां जोड़ाक्षर आते हैं, वहां-वहां जोड़ाक्षरों पर भार न देकर जोड़ाक्षरों से पहले जो अक्षर होता है उसके ऊपर झटका लगाकर इस प्रकार बोलना चाहिए कि जिससे जोड़ाक्षरों में से पहला आधा व्यंजन उसके साथ खींच जावे। उदाहरणार्थ–णमो सिद्धाणं का उच्चारण करते समय 'द्धा' पर जोर न देते हुए 'सि' पर झटका लगाकर बोलने से 'द्धा' में से द भी खींच जाता है। अर्थात् सिद्--धाणं इस प्रकार बोलने से ही सही उच्चारण हो सकता है।

पाँचवें पद में सव्व शब्द में 'व्व' जोड़ाक्षर है इसलिए 'स' को झटके के साथ बोलना चाहिए। उसके स्थान पर साधारण रूप से बोला जाये तो सव अर्थात् शव-मुर्दा ऐसा अर्थ होने में लोक में रहे हुए मुर्दा साधुओं को नमस्कार हो ऐसा अनर्थकारी विचित्र अर्थ होगा इसलिए सव्व का उच्चारण शुद्ध होना चाहिए।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ह्रस्व अक्षर हो वहां छोटा उच्चारण करना चाहिए। जैसे चतुर्थ पद में 'उ' ह्रस्व है फिर भी कुछ लोग उसे लम्बाकर झटके के साथ उच्चारण करते हैं, वह गलत है।

दीर्घ अक्षर हो वहां थोड़ा लम्बा उच्चारण करना चाहिए। उदाहरणार्थ— पाँचवें पद में 'हू' दीर्घ है परन्तु कई लोग इसका ह्रस्व उच्चारण करते हैं, वह अशुद्ध गिना जाता है।

यह मंत्र केवल जैन परम्परा को मानने वालों के लिए ही श्रेयस्कर हो ऐसा नहीं है। यह सभी के लिए समान-रूप से लाभप्रद है। मंत्र जैन अजैन नहीं होता। मंत्र मंत्र है, उसके सामर्थ्य का उपयोग कोई भी करना चाहे, उसको निश्चित् सफलता मिलती है। दूध से कोई भी व्यक्ति मक्खन निकाल सकता है बशर्ते कि उसकी विधि का ज्ञान उसे हो। जाति, लिंग, भाषा आदि उसमें बाधक नहीं बनते। दूध में मक्खन की तरह नमस्कार महामंत्र सद्धर्म और सत्कर्म का सार है। जगत् की जो श्रेष्ठताएं है, उनमें वह श्रेष्ठतम है।

प्रसंग तेरापंथ के सप्तम आचार्य डालगणि के शासन काल का है। गुलाब खाँ नामक एक मुस्लिम भाई, जिसका जैन लोगों के साथ विशेष संपर्क था। कलकत्ता के करीब-करीब सभी तेरापंथ समाज की बड़ी गद्दियों में उसका जाना आना था। एक दिन काले नाग ने उसको काट खाया। चारों ओर पारिवारिक जनों में हलचल हो गई। मांत्रिक, तांत्रिक लोगों को बुलाए जाने की व्यवस्थाएं की जाने लगीं। नाग की भयंकरता से बचने की आशा लगभग समाप्त हो चुकी थी। यह सब जानते हुए गुलाब खाँ ने कहा ''आज तक जिस नमस्कार महामंत्र को मैंने श्रद्धा से जपा है, क्यों न मैं उसी मंत्र की शरण में चला जाऊँ?'' उसने पारिवारिक जनों से कहा—''किसी भी इलाज से पूर्व मुझे कुछ समय दिया जाये, मैं स्वयं अपनी चिकित्सा करूँगा।'' पारिवारिक जनों ने उसे बीस मिनट का समय दिया। गुलाब खाँ नमस्कार महामंत्र जपने बैठा। प्रत्येक आवृत्ति के बाद मोटे सूत पर एक सौ आठ गाँठ (मोती की भाँति) लगाकर एक ताँती तैयार करके अपने पैर पर बाँध ली। फिर पारिवारिक जनों से कहा ''अब मुझे इस ताँती के प्रभाव-दर्शन के लिए कुछ समय ओर दिया जाये।'' फिर बीस मिनट वह कायोत्सर्ग की मुद्रा में सो गया और नमस्कार महामंत्र का ध्यान (जप) किया। परिणामस्वरूप सारा शरीर निर्विष हो गया।

भावनाओं के उत्कर्ष एवं श्रद्धा का यह एक अनूठा उदाहरण है। सचमुच नमस्कार महामंत्र के जप से ऊर्जा शक्ति, संकल्प शक्ति और प्रतिरोधात्मक शक्ति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

बढ़ती है। इस महामंत्र की शक्तिशाली और मंगलकारी ध्वनि तरंगों में विष, कौढ़, कैंसर जैसे रोगों का शरीर से निष्कासन करने की महाशक्ति विद्यमान है।

निष्कर्ष

नय, निक्षेप एवं विभिन्न हेतुओं के द्वारा नमस्कार महामंत्र का वर्णन जैन आगमों में उपलब्ध है। जिन शासन के सारभूत इस मंत्र को भाव मंगल माना गया है। भाव मंगल के स्तुति मंगल, नमस्कार मंगल आदि अनेक प्रकार हैं। ज्ञान-मंगल, दर्शन मंगल, चारित्र मंगल एवं तप मंगल भी भाव मंगल के ही भेद हैं। इन अनेक विध भाव मंगलों में से भगवती आदि अनेक शास्त्रों के प्रारम्भ में पंच-परमेष्ठी को नमस्कार रूप भाव मंगल किया गया है। भाव मंगल के अन्तर्गत आये हुए दूसरे मंगलों की अपेक्षा पंच परमेष्ठी नमस्कार मंगल में प्रमुख दो विशेषताएं हैं—

प्रथम यह है कि यह नमस्कार महामंत्र (नमस्कार मंगल) लोक में उत्तम है।

दूसरी यह है कि देवराज इन्द्र भी इसकी शरण लेते हैं। इसका पुष्ट प्रमाण जैन आगम भगवती में मिलता है कि जब चमरेन्द्र (भवनवासी देवों का इन्द्र) वैमानिक देवों के स्वर्ग में गया तब वह जानता था कि मेरे में ऊपर जाने का सामर्थ्य नहीं है। अत: वह भगवान महावीर को वंदन कर, अरहंत भगवान की शरण लेकर गया था और वापस शरणार्थी बनकर भगवान महावीर की शरण में आया और सुरक्षित रह गया। जैन आगमों का वाचन भी नमस्कार महामंत्र की आराधना पूर्वक किया जाता है। गणधर जैसे महाज्ञानियों ने भी ग्रंथारम्भ के मंगलाचरण में 'णमो अरहंताणं' आदि पांच पदों का स्मरण किया है। निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि यह परम मंत्र है। मंगल का निलय है। जिन शासन का यह महामंत्र अनादि और अविवादी है। इसके स्मरण से समाधि रहती है। इसी तथ्य की पुष्टि में अध्यात्म मनीषी आचार्यश्री तुलसी की निम्नोक्त पंक्तियां हैं—

जिन मत में मंत्र अनादि,
है नमोक्कार अविवादी।
सुमरन स्यूं हुवै समाधि,
तुलसी नित शीष झुकाऊँ॥
परमेष्ठी पंचक ध्याऊं॥
सहु मुक्ति महल रा वासी,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पधराया और पधरासी
ज्योति में ज्योति मिलासी,
अस्तित्व अलग लग गाऊँ
परमेष्ठी पंचक ध्याऊँ॥

अनघड़ पत्थर की भव्य, दिव्य एवं आकर्षक प्रतिमा बनती है, छोटा सा बीज विशाल वट वृक्ष बन जाता है, टेढ़ी-मेढ़ी लकड़ी का मन-मोहक फर्नीचर बन जाता है, मिट्टी भी सुन्दर घड़ा बन जाती है, लोहा साँचे में ढ़लकर घंटी का यंत्र बन जाता है–इन सभी के निर्माण के पीछे एक ही तत्त्व काम कर रहा है वह है सहनशक्ति। कहने का तात्पर्य यह है कि जड़ पदार्थ को सुन्दर बनने के लिए कितना तपना-खपना पड़ता है और यातनाएं सहनी पड़ती हैं, इसी तरह आत्मा को परमात्मा बनने के लिए तो कितना सहना पड़ेगा, पर यह निश्चत है कि जो भव्य पंच परमेष्ठी पद पर प्रतिष्ठित है अथवा उन पर श्रद्धा करता है उनका ध्यान करता है और अपने सम्यक्त्व रत्न को सुरक्षित रखता है वह एक दिन लक्ष्य में सफल हो जाता है। कहा भी है–

सिद्धा जैसा जीव है, जीव सो ही सिद्ध होय।
कर्म मैल का आंतरा, बुझे विरला कोय॥

सन्दर्भ–

1. नमस्कार फल पंचविंशति–गाथा/17
2. नमस्कार फल पंचविंशति–गाथा/16
3. नमस्कार महामंत्र की प्रभावक कथाएं–पृ./23
4. आवश्यक चूर्णि–15/32
5. दसवैकालिक–5/1/93 णमोक्कारेण पारित्ता
6. (क) अगस्त्य चूर्णि (दसवैकालिक)–पृ./123
   (ख) जिनदास चूर्णि–पृ./189
   (ग) हरिभद्रीय वृत्ति–पृ.180
7. आवश्यक निर्युक्ति–गाथा/1026
8. आवश्यक निर्युक्ति–मलयागिरीयावृत्ति–पृ./511
9. आवश्यक निर्युक्ति–गाथा/921-922, भगवती भाष्य से उद्धत
10. आवश्यक निर्युक्ति–गाथा/921-922, भगवती भाष्य से उद्धत

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11. षट्खंडागम धवला पु.1., ख.1, भाग1, सूत्र1, पृ.42-44, भगवती भाष्य से उद्धत
12. हेम शब्दानुशासन–8/2/111, भगवती भाष्य से उद्धृत
13. पिशेल प्राकृत भाषाओं का व्याकरण–पारा/140.
14. भगवती वृत्ति–1/1
15. वही, 1/1
16. वही, 1/1
17. आचारंग श्रुत 2, अध्ययन/15
18. सूत्र कृतांग–अध्ययन 3, उ. 1, सूत्र 134, पत्र-116-स्टीक
19. स्थानांग–अध्ययन 3, उ. 1, सूत्र 134, पत्र-116-स्टीक
20. समवायांग–सम. 15, पत्र-62/1
21. समवायांग–सम. 35, पत्र-129, सम.-54-पत्र 147, सम. 63-पत्र 152/1, सम. 70-पत्र 163/1, सम. 71, पत्र 164
22. समवायांग–सम. 37-पत्र132, सम. 50-पत्र143, सम. 55 पत्र 148/1, सम. 56, पत्र 149, सम. 57 पत्र 151/1, सम. 66-पत्र 158, सम. 68 पत्र 161
23. समवायांग–सम. 68-पत्र 161, अध्ययन 8, पत्र 128-स्टीक मलयगिरि कृत वृत्ति सहित पत्र–39
24. समवायांग–सम. 68-पत्र 161, अध्ययन 8, पत्र 128-स्टीक मलयगिरि कृत वृत्ति सहित पत्र–39
25. अरिहंत

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. मंत्रद्रष्टा जयाचार्य और नमस्कार महामंत्र

जैन परम्परा में अनेक महान और प्रभावक आचार्य हुए हैं—आचार्य कुन्दकुन्द, आचार्य भद्रबाहु, आचार्य हरिभद्र, आचार्य उमास्वाति आदि ने अपने अप्रतिम ज्ञान, अनूठी प्रतिभा एवं युगप्रधान व्यक्तित्व से जैन धर्म और जैन संस्कृति को नई ऊँचाइयां दीं। प्रभावक आचार्यों की इस श्रृंखला में विक्रम संवत् 1817 में आचार्य भिक्षु ने एक नई धर्मक्रांति का सूत्रपात किया और तेरापंथ का उद्‌भव हुआ। तेरापंथ के ही चतुर्थ आचार्य श्री मज्जयाचार्य (आचार्यश्री जीतमलजी) उन्नीसवीं शताब्दी के प्रभास्वर आचार्यों की परम्परा में एक महान् आचार्य हुए। उन्होंने आचार्य भिक्षु की परम्परा को संवारा उसका संवर्धन किया और संघ को सुदृढ़ बनाया। उनके जीवन का साधना पक्ष अति सबल था। वे प्रतिदिन प्रायः 5000 गाथाओं का स्वाध्याय करते थे। उन्होंने जैन श्रुत की विलक्षण उपासना की एवं आगम परक ग्रंथों की रचना कर जैन ज्ञान-बोध को साहित्य संपदा से भरा।

उच्च कोटि के भाष्यकार

श्री मज्जयाचार्य उच्चकोटि के भाष्यकार थे। आचार्य भिक्षु की प्रत्येक रचना का उन्होंने भाष्य कर दिया। वे महान् अध्यात्म योगी, विश्रुत इतिहासज्ञ, विलक्षण साहित्य-स्रष्टा, सहज प्रतिभा-संपन्न कवि थे। उनकी कृतियों का सौष्ठव, गांभीर्य, संगीतमयता सभी मनोमुग्धकारी थे। इतिहास के संक्रांति काल में आप जैसे उद्‌भट विद्वान, कवि, लेखक व युगप्रधान आचार्य को पाकर जैन संस्कृति पुनः धन्य बनी थी। जैन समाज को जयाचार्य श्री जी की सबसे महत्त्वपूर्ण देन है— उनका विशाल राजस्थानी साहित्य। आगम टीकाकारों में राजस्थानी भाषा में जयाचार्य श्री पद्यबद्ध रचना करने वाले प्रथम टीकाकार थे। भगवती, पन्नवणा, ज्ञातासूत्र, उत्तराध्ययन, प्रथम श्रुत स्कन्ध आदि आगमों पर उन्होंने जोड़ (टीका) रची। वे एक दिन में तीनसौ पद्य बना लिया करते थे। यह उनकी मनीषा एवं प्रज्ञा की पारदर्शिता थी। उनके द्वारा विरचित आगम, भाष्य, तत्त्वदर्शन, आख्यान, जीवनियां, स्तुति काव्य, संस्मरण, मर्यादा, साधना, व्याकरण, उपदेश आदि विविध वर्णी रचनाओं का आकलन करें तो वे साढ़े तीन लाख (3,50,000 लाख) पद्य प्रमाण होते हैं, जो अपने आप में एक कीर्तिमान है।

राजस्थानी साहित्य के अधिकारी विद्वान प्रोफेसर नरोत्तमदास स्वामी ने यह घोषित किया था कि जयाचार्य रचित भगवती की जोड़ राजस्थानी का

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वृहद्‌तम ग्रंथ है। इसका ग्रंथमान 60906 पद्य प्रमाण है। दूसरी ओर शासन-गौरव मुनि बुद्धमलजी ने अपने शोध के आधार पर यह प्रमाणित किया कि उपदेश रत्न कथा-कोष भगवती की जोड़ से भी अधिक वृहद्‌तम ग्रंथ है। इसका ग्रंथमान 66566 पद्य प्रमाण है, यह महत्वपूर्ण बात है।[1]

तात्त्विक साहित्य के क्षेत्र में भ्रम-विध्वंसन, झीणीचर्चा, प्रश्नोत्तर-तत्त्वबोध जैसे अनेक पांडित्यपूर्ण ग्रंथ आज भी अपना वरेण्य स्थान रखते हैं।

मंत्रद्रष्टा—मंत्रस्रष्टा आचार्य

पुष्करावर्तक मेघ की भांति उनकी प्रज्ञा ने अन्तर्दृष्टि के प्रयोग किये। नि:संदेह वे एक मंत्रद्रष्टा और मंत्रस्रष्टा आचार्य थे। उन्होंने चौबीसी की उन्नीसवीं गीतिका के छठे पद्य में लिखा है—मानसिक, वाचिक और कायिक स्थिरता साधकर एकत्व की अनुभूति के साथ तीर्थंकरों की स्तुति, स्मृति या नाम मंत्र का जप करने से अनिष्ट/अमंगल नष्ट होते हैं। आंतरिक संताप/तनाव समाप्त होते हैं। वे 'भिक्षु' के नाम को मंत्राक्षर मानते थे। जिसमें विध्नहरण एवं मंगलकरण की अपूर्व सामर्थ्य है। जप का सामर्थ्य उनकी बड़ी चौबीसी 11/22 में निम्न प्रकार अभिव्यक्त हुआ है—

अहोनिश ध्याऊँ आपनै गुरुजी जेम गगन्न हो।
के तो जाणै केवली तूंहीज मुझ धन तन हो॥

विध्नहरण की गीतिका उनकी एक चामत्कारिक रचना मानी जाती है। उसके संबंध में स्वयं जयाचार्य श्री ने लिखा है—'यह विध्नहरण की गीतिका 'चन्द्र-प्रज्ञप्ति' की दूसरी गाथा जैसी है। यह अधिष्ठायक शक्ति से अधिष्ठित है। इसी प्रकार 'मुणिन्द-मोरा' 'भिक्षु म्हारै प्रकट्‌याजी भरत क्षेत्र में' आप द्वारा विरचित चामत्कारिक गीतिकाएं हैं। महामंत्र से निष्पन्न 'अ.सि.आ.उ.सा' मंत्र उनका सिद्धमंत्र था। इसकी पुष्टि जिन-शासन के बारे में उनके द्वारा विरचित दो गीतिकाओं के माध्यम से मिलती है। इन गीतिकाओं का प्राण-तत्त्व है—'अ.सि.आ.उ.सा.' मंत्र और शासन देवी। इन गीतों का पारायण करने से ऐसा प्रतीत होता है कि यह मंत्र उनका सिद्धमंत्र था। इस मंत्र के माध्यम से उन्हें शासन देवी का साक्षात्कार होता था। इस मंत्र की मंत्रसिद्धि की अभिव्यक्ति और साक्षात्कार के लिए दोनों गीतों की निम्न पंक्तियां पुष्ट प्रमाण है—

अ सि अ उ सा भक्त ते, इंद्रादिक हरसंत।
वचन शूर शासन सुरी, परतरव ही परखंत॥

(ढाल 1/24)[2]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शासन स्हाज करै निरवद सुरी, अ सि आ उ सा प्रणमै परखी॥
(ढाल 2/4)[3]

रूप अनुपम अधिक विराजै, रत्न तिलक हद छिव तन की॥
(ढाल 2/5)

कानां कुंडल हार हिये, नकवेसर मुख चन्द्रानन की॥
(ढाल 2/6)

रूड़ा बाहिरखा कडि कंदोरो, पेखत तप्त मिटे तन की॥
(ढाल 2/7)

शासन संत सत्यां स्यूं प्रीति, भक्त करै हद तन मन की॥
(ढाल 2/8)

पाछल भव तप तप्यो विकट वर, ऋद्धि-सिद्धि पायी अधिकी॥
(ढाल 2/9)

इसी तथ्य की पुष्टि जयाचार्य श्री की विघ्नहरण की गीतिका से भी होती है–

गुण ठाणे चोथे गुणी, समण सत्यां हितकारी हो।
अ. सि. आ. उ. सा. नै सदा, प्रणमै बारम्बारी हो॥
(विघ्नहरण गा./23)[4]

मुनि श्रमण सागर ने जयाचार्य के एक रहस्यमय मंत्र का उद्घाटन करते हुए लिखा है–जयाचार्य श्री के दैनिक कार्यों में उठते-उठते सबसे पहला प्रयोग इस प्रकार का होता, जो मुनि फोजीलाट के द्वारा श्रुत है–

ऊँ णमो अरहंताणं, बुद्धाणं बोहियाणं स्वाहा।

प्रातः काल कौआ बोलने से पहले नींद खुलते ही बिना किसी का मुँह देखे सात बार मंत्र-पाठ से हाथ अभिमंत्रित कर मुँह पर फेरें। जो स्वर चलता हो वह हाथ ऊपर रहें और आवर्त्त का घुमाव भी उस चालू नासिका स्वर की ओर हो। बिस्तर से बाहर धरती पर भी वह पांव पहले आए जिधर का स्वर चलता हो। यह एक सानुभूत सिद्ध विधि है। इससे विजय तथा आकर्षण शक्ति बढ़ती है। आभामंडल उदीप्त होता है। तैजस शरीर में सक्रियता आती है।[5]

दिव्य आत्माओं से सम्पर्क

जयाचार्यश्री के जीवन की अनेक घटनाएं ऐसी हैं, जिनसे प्रमाणित होता

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है कि उनका अनेक दिव्य आत्माओं से सम्पर्क था। एक स्वप्न विवरण के अन्त में वे लिखते हैं कि मैंने वही बात लिखी है जो ब्रह्मेन्द्र ने लिखाई है। जयाचार्यश्री ने स्वामी भीखणजी की स्तुति में लिखी अनेक गीतिकाओं में उन्हें ब्रह्मेन्द्र कहा है। संभव है स्वप्न के माध्यम से स्वामीजी से उनका संपर्क रहा हो। आचार्य श्री भारमल जी के लिए अच्युत बारहवें देवलोक के देव होने का तथा मुनि खेतसीजी के लिए सहस्रार अष्टम देवलोक में देव होने का उल्लेख भी जयाचार्यश्री की गीतिकाओ में उपलब्ध है। इनके साथ भी जयाचार्य के सम्पर्क की सम्भावना की जा सकती है। गीतिकाओं में किये गये नामोल्लेख के आधार का उन्होंने कहीं कोई स्पष्टीकरण नहीं किया है। संभव है, उनके अपने ही रहस्यमय सम्पर्क सूत्र आधार रहे हैं।

उक्त महापुरुषों के अतिरिक्त अनेक दिव्य आत्माओं से भी उनका सम्पर्क रहा है, ऐसा प्रतीत होता है। उन्होंने दवदन्ती, जयवन्ती तथा इन्द्राणी आदि देवियों का नामोल्लेख करते हुए कहा है—ये सम्यक्त्वी हैं, साधु-साध्वियों के लिए हितैषी हैं तथा समय-समय पर सहायता करने वाली हैं।[6]

जयाचार्य के साहित्य में महामंत्र का स्वरूप

जयाचार्यश्री के जीवन का हर पहलू दिव्यता एवं भव्यता से अनुप्राणित था। उनकी संत चेतना ने प्रकृति, पर्यावरण, परिस्थिति, परिवेश, परम्परा और प्राणी की निजी समस्याओं को प्रज्ञा की आँख से देखा, कारण तथा मीमांसा की। उनकी रचनाओं में इसीलिए स्व-संबोध और स्व-निरीक्षण का पक्ष अधिक उजागर हुआ है।

आराधना जयाचार्यश्री की अत्यन्त हृदयस्पर्शी और प्रबोधनकारी रचना है। सत्य तो यह है कि उनका समस्त काव्य आत्माराधना का ही काव्य है। प्रस्तुत कृति की रचना उन्होंने बीदासर में एक दिन में ही की थी, जिसमें दस द्वार हैं। प्रत्येक द्वार का एक-एक संगीतमय गीत है। इन दस द्वारों को आध्यात्मिक चिकित्सा पद्धति के दस सूत्र कहा जा सकता है।

कुछ सूत्र मानसिक चिकित्सा के लिए भी उपयोगी हैं। उपरोक्त दस द्वारों में पाँचवां चतुः शरण प्रतिपत्ति द्वार, नौंवां अनशन द्वार एवं दसवां पंच-परमेष्ठी नमस्कार द्वार—इन तीनों का संबंध नमस्कार महामंत्र की आराधना से जुड़ा है। पाँचवे चतु:शरण द्वार में अर्हत्, सिद्ध, केवलीभाषित धर्म की शरण स्वीकार करने का प्रयोजन और अर्थगांभीर्य बहुत ही सरस और रोचक शैली में प्रस्तुत करना उनके समर्पण और पावन विद्वत्ता का प्रतीक है। यथा—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दग्ध बीज जिम तरु तणा, अंकुर प्रकट न होय हो।
तिम स्वामी तिम स्वामी, कर्म बीज दाझवे॥
भव अंकुर प्रकट हुवै नहीं, तिण सूं अरुहंत कहियै सोय हो ॥
मुझ शरणो मुझ शरणो, थावो ते अरुहंत नौं।
शिव वरणो भव तरण शरण भगवंत नौ॥3॥

अंतरंग अरि जीपवै करी अरिहंत कहियै तास हो।
अ–रहंता अ–रहंता रैस छिपी नहीं॥
पूजण जोग त्रिण जगत नै, वारु अर्हत्–कहियै विमास हो।
मुझ शरणो मुझ शरणो, थावो ते अर्हत् नो॥4॥

नवम् अनशन द्वार में उन्होंने अनशन की विधि का उल्लेख करते हुए अनशन से पूर्व सर्वप्रथम सिद्ध भगवन्त को, तत्पश्चात् अरिहंत भगवान को और उसके बाद आचार्यों को नमस्कार करने का संकेत करते हुए लिखा है–

प्रथम णमोत्थुणं गुणै, सिद्ध भणी सुखकार।
द्वितीय णमोत्थुणं बली, अरिहंत नै धर प्यार॥3॥
धरमाचारज नै करै, निमल चित्त नमस्कार।
त्याग करै त्रिहुं आर ना, जावजीव लग सार॥4॥
धन धन धन धन महामुनि॥

दशम पंच-परमेष्ठी नमस्कार द्वार में जयाचार्यश्री द्वारा उल्लेखित पंक्ति– 'नमुक्कार परमेष्ठी पंच, जपतां जय जयकार'–उनकी अगाध श्रद्धा, समर्पण व विजय का प्रतीक है। इस द्वार में छिपे गूढ़ रहस्यों के प्रकटीकरण के साथ-साथ चमत्कारिक घटनाओं का भी उल्लेख मिलता है। जो निम्न प्रकार से निर्दिष्ट है–

1. सुरपद की प्राप्ति

मन की दुर्बलता से नाना प्रकार का पाप करने वाले व्यक्ति मृत्यु का अवसर आने पर भी नमस्कार महामंत्र के जप से पराक्रमी या अभय बन जाता है। जिसके कारण परभव में श्रेष्ठ संपत्ति मिलती है और मन वांछित सुख देने वाला फल मिलता है। यह जानकर नमस्कार महामंत्र का जप करें।[7]

जैन दर्शनानुसार प्राणी अपने कृत कर्मों के कारण चार गति एवं चौरासी लाख जीव योनि में परिभ्रमण करता है। जैन सिद्धान्तानुसार सामान्यत: अपनी आयु के तीसरे भाग में परभव के आयुष्य का बंध होता है। यदि तीसरे भाग में आयुष्य का बंध नहीं हुआ है तो उसके तीसरे भाग में–ऐसे तीसरे भाग करते रहें,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अन्यथा मृत्यु के अन्तमुर्हूर्त्त (दो समय से लेकर एक समय कम 48 मिनट तक का कालमान) पहले तो अवश्यमेव परभव के आयुष्य का बंध होता है। यदि पहले आयुष्य का बंध नहीं हुआ है तो मरणासन्न व्यक्ति महामंत्र के स्मरण से शुभगति के आयुष्य का बंध कर लेता है। इसी तथ्य की पुष्टि में जयाचार्यश्री की निम्न पंक्तियां प्रेरणास्रोत हैं—

पंच-परमेष्ठी प्रते समरी, तिको भील तणो भव दूर करी।
ओ तो पंचम कल्पे अवतारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥10/5

ते भील नी रत्नवती नारी, पंच परमेष्ठि तिमज हिये धारी।
आ पिण पंचम कल्पे अवतारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥10/6

नवकार मंत्र सेठ संभलायो, सुण जाप जप्यो तिण सुखदायो।
लह्यो म्हावत सुर नौ अवतारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥10/9

अर्थात् भील और भील की रत्नवती नारी पंच-परमेष्ठी के स्मरण से भील भव को छोड़कर पंचम स्वर्ग में देव बने। महावत अंतिम समय में अपने सेठ के द्वारा नमस्कार महामंत्र सुनकर स्वर्गलोक में देव बना। इस संबंध में धरणेन्द्र और पद्मावती का उदाहरण विश्रुत है। राजकुमार पारस ने कमठ तापस द्वारा यज्ञ मंडप में जल रहे नाग-नागिन के जोड़े को नमस्कार महामंत्र सुनाया। महामंत्र के प्रभाव से वे भगवान पार्श्व के अधिष्ठायक धरणेन्द्र, पद्मावती नाम के देव बने।

चूरू के चम्पालालजी बैद की घटना भी इस तथ्य को पुष्ट करती है। एक बार सामायिक में उन्होंने एक मरणासन्न चिड़िया को नमस्कार महामंत्र सुनाया, उसके प्रभाव से वह चिड़िया तिर्यञ्च योनि को छोड़कर देव बनी और देव रूप में चम्पालालजी के पास पहुँची। कृतज्ञता के साथ-साथ उन्हें वरदान माँगने को कहा। चम्पालालजी ने श्रीसीमंधर भगवान के दर्शनों की इच्छा व्यक्त की। देव ने उस इच्छा को पूर्ण किया। फिर वहां से आते वक्त देव ने चम्पालालजी की इच्छानुसार उन्हें सुजानगढ़ में गुरुदेवश्री तुलसी के दर्शन करवाये। तत्पश्चात् पुन: मूल शरीर में उन्हें स्थापित कर देव अदृश्य हो गया।

उपरोक्त घटना के पश्चात् चम्पालालजी ने सोचा कि मुझे कोई स्वप्न आया अथवा सचमुच में यह हकीकत है। उन्होंने निर्णय किया कि आचार्यश्री तुलसी ही इसका समाधान दे सकते हैं। वे उस समय कलकत्ता रहते थे। वहां से सुजानगढ़ गुरुदेवश्री तुलसी के दर्शन किये। दर्शन करते ही गुरुदेव ने पूछा— चम्पालालजी! तीन-चार दिन पहले दर्शन किये, इतने जल्दी वापस कैसे आ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

गये? चम्पालालजी ने कहा—गुरुदेव! मैं जिस जिज्ञासा को लेकर आया था उसका समाधान मुझे मिल गया। उसके बाद उन्होंने सम्पूर्ण घटनावृत गुरुदेव को कह सुनाया।

इस प्रकार अनेक ऐसे उदाहरण हैं। अंतिम समय में महामंत्र की आराधना से अनेक तिर्यञ्च, मनुष्यों ने सुरपद को प्राप्त किया, एकाभवतारी बने।

इसमें एक रहस्य को समझने की अपेक्षा है कि जयाचार्यश्री ने देव बनने के प्रलोभन से महामंत्र की आराधना का इंगित नहीं किया है। महामंत्र की आराधना शिवपथ की परम पवित्र भावना से करनी चाहिए। जब तक उस स्थिति की योग्यता अथवा प्राप्ति नहीं हो जाती है, तब तक व्यक्ति श्रेष्ठ कुल में व श्रेष्ठ योनियों में रहते हुए अपनी आत्माराधना करे और सुख पूर्वक जीवन चर्या को जीते हुए एक दिन अपने चरम लक्ष्य (मोक्ष) को प्राप्त कर ले।

2. आराधक पद की प्राप्ति

मरणांत समय आराधना करने को बत्तीसवाँ योगसंग्रह बताया है, जो साधना की दृष्टि से बहुत मूल्यवान है—'आराहणाय मरणंते, बत्तीस जोग संगहा।'[8] मृत्यु के आसन्न काल में आराधना की पद्धति प्रचलित हुई है। यही उसका मुख्य आधार है। जयाचार्यश्री ने इसे मरणांत आराधना बतलाया है—

मरणान्त आराधन इह रीतं, करै दश विद्य तन मन धर प्रीतं।
ते संसार समुद्र तीरै पारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/15

जैन साधना पद्धति में आराधना और आराधक, दो शब्द बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। इनका संबंध वर्तमान और आगामी, दोनों जन्मों के साथ संपृक्त है। जो मनुष्य वर्तमान जीवन में ज्ञान-दर्शन-चारित्र की सम्यक् आराधना करता है, वह आराधक होकर मरता है और अगले जीवन में पूर्व जीवन से अधिक विकास करता है। जयाचार्यश्री ने पंच-परमेष्ठी नमस्कार द्वार में इस तथ्य का सुन्दर निर्देश दिया है कि मरणासन्न व्यक्ति यदि मात्र नवकार के सहारे शुभ गति को प्राप्त कर लेता है तो उस व्यक्ति का क्या कहना, जो सम्यक्त्व और चारित्र गुण सहित महामंत्र की आराधना करता है।

ओ तो चरण अमोलक कर आयो, पद आराधक जे मुनि पायो।
करे सर्व दु:खा रो छुटकारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/14

जो मुनि अमोलक चरित्र हस्तगत कर आराधक पद पा लेता है, वह सब दु:खों से छुटकारा पा लेता है। ऐसा सोचकर नमस्कार महामंत्र का जप करना

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चाहिए। इस प्रकार जीवन की संध्या में की जाने वाली इस प्राकर की आराधना करने वाला संसार समुद्र का तीर पा लेता है।

महामंत्र के चमत्कार

लव और कुश ने जब सरयू नदी के किनारे बैठकर श्रीराम की महिमा का संगान किया तो सरयू का जल प्रवाह थम गया। शोभजी श्रावक ने जब जेल में 'भिक्षु' नाम का स्मरण किया तो आचार्य भिक्षु वहां सदेह उपस्थित हो गये, देखते ही देखते शोभजी की बेड़ियां टूट पड़ी। वे बंधन मुक्त हो गये। प्रस्तुत आराधना के रचियता श्रीमज्ज्याचार्य ने विशेष संकट की घड़ियों में तन्मय बनकर मुनि-गुण-वर्णन गीत (मुणिन्द मोरा) का संगान किया तो रहस्यमयी अंगारों की वर्षा रुक गई। मांत्रिक द्वारा कृत उपद्रव के कारण बेहोश हुए संतों में चेतना लौट आई। इस ऐतिहासिक घटना का उद्धरण सेवाभावी मुनिश्री चम्पालालजी ने एक गीत में इस प्रकार किया है—

धग धगता खीरा बरस्या बीदासर में,
होग्या सै बहोश सन्त बाकी जी ओ।
जयाचार्य तन्मय स्तवना सुणाई,
मुणिन्द मोरा ढाल आज साखी जी ओ॥

स्पष्ट है कि जीवन में श्रद्धा का बहुत बड़ा महत्त्व है। जहां श्रद्धा धनीभूत होती है, वहां परिणाम चमत्कार सा लगता है। वह चैतन्य जागृति की सूचना देती है और तादात्म्य भाव की समरसता में मन की भावना सफल हो जाती है। नमस्कार महामंत्र अपराजित मंत्र है। यह अचिन्त्य महिमा से मंडित है अनेक चमत्कारिक घटनाएं इस महामंत्र से अनुबंधित, संबंधित है। जयाचार्यश्री ने पंच-परमेष्ठी नमस्कार गीत में कुछ चामत्कारिक घटनाओं का भी उल्लेख किया है।

पन्नग पुष्प नी माल थई, नवकार प्रभावै कीर्ति लही।
सुख श्री मती उभय भवे सारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/7

सर्प पुष्पमाला बन गया। यह नमस्कार महामत्रं का प्रभाव था। उससे श्रीमति की कीर्ति बढ़ी। उसने दोनों भवों में सारभूत सूख पाया—यह जानकर नमस्कार महामंत्र का जप करें। घटना इस प्रकार है—

श्रीमति एक श्रेष्ठी की पुत्री थी। बचपन में ही उसे जैन साध्वियों का सान्निध्य मिला। वह उनसे प्रभावित हुई। साध्वियों के पास में उसने नमस्कार महामंत्र सीखा। नमस्कार महामंत्र के प्रति उसकी आस्था दिन-प्रतिदिन प्रगाढ़

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

होती गई। वह कोई भी काम करने से पूर्व इस महामंत्र का स्मरण करती, फिर काम में हाथ डालती। उसका विश्वास था कि ऐसा करने से वह हर काम में सफल हो जाती है।

श्रीमती वयस्क हुई। उसकी शादी कर दी गई। ससूराल में जाकर भी उसने नमस्कार महामंत्र के जप का क्रम-चालू रखा। वहां इस मंत्र को कोई नहीं जानता था। सास ने बहु को गुनगुनाते हुए सुना। उसके मन में संदेह उभर आया। उसने सोचा, यह कोई जादूगरनी है, इसलिए इसे समाप्त कर देना चाहिए।

सास ने एक घड़े में सांप रखा। उसका मुँह बंद कर दिया। बहु के हाथों में वह घड़ा थमाते हुए कहा–जाओ बहू, पनघट पर जाकर पानी ले आओ। श्रीमती ने नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया और घड़ा लेकर सीधी पनघट पर पहुँची। घड़ा खोला तो उसमें एक पुष्पमाला निकली। बहु ने उसे सास का प्रसाद मानकर गले में डाल लिया। पानी लेकर वह घर पर पहुँची तो सास के आश्चर्य का कोई पार नहीं रहा। क्योंकि वह तो उसकी मृत्यु का संवाद पाने के लिए आतुर हो रही थी। जब बहु के गले में पुष्पहार देखा तो उसे विश्वास हो गया कि यह निश्चित रूप से जादूगरनी है। वह मन ही मन श्रीमती से भय खाने लगी। आखिर सास जब नमस्कार महामंत्र के प्रभाव से अवगत हुई तब उसके मन का संशय दूर हो गया। मंत्र के चामत्कारिक प्रभाव से श्रीमती ने अपने पूरे परिवार को मंत्रमय बना लिया। इस प्रकार अगली गाथा में अन्य घटना प्रसंग का उल्लेख करते हुए लिखा है–

अग्नि ठंडी कीधी देवा, कियो कनक–सिंहासन ततखेवा।
ऊपर अमरकुंवर प्रति बैसारं, इम जाण जपो श्री जवकारं॥ 10/8

देवों ने अग्नि ठंडी कर तत्क्षण सोने का सिंहासन बनाया और अमरकुमार को उस पर बैठा दिया। यह जानकर नमस्कार महामंत्र का जप करें। घटनावृत इस प्रकार है–

राजगृह नगरी में राजा श्रेणिक एक राजप्रसाद बना रहा था। ज्योंहि वह पूर्ण होने जाता, त्योंहि ढह जाता। इस प्रकार कई बार प्रसाद के ढह जाने पर राजा ने कुछ ब्राह्मणों के पास समस्या रखी। उन्होंने सोच-विचार कर कहा–महाराज! इसके लिए बत्तीस लक्षणों वाले पुरुष का होम करना होगा। राजा ने उसी समय शहर में उद्घोषणा करवाई–जो व्यक्ति अपने बत्तीस लक्षणों से युक्त पुत्र का होम करने देगा, उसे उस व्यक्ति के बराबर सोना दिया जायेगा। शहर के सब लोगों ने यह घोषणा सुनी, पर कोई भी अपने पुत्र को देने के लिए तैयार नहीं हुआ।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भद्रा नाम की एक ब्राह्मणी ने, अपने पति के मना करने पर भी, इस प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। अपने लक्षण-संपन्न पुत्र को राजपुरुष के हाथों में सौंप दिया। रानी चेलना को जब यह ज्ञात हुआ तो उसने राजा को बहुत समझाया, पर राजा ने उसकी एक न सुनी। रानी ने होम करने वाले को भी धमकाया। उन्होंने राजा के भय से रानी की बात को महत्त्व नहीं दिया। दूसरा कोई उपाय न देखकर रानी उस बिलखते बालक के पास पहुँची और उसे आश्वस्त करते हुए बोली—अमरकुमार! लो मैं तुम्हें एक मंत्र बताती हूँ, उसका स्मरण करो।

रानी के ममता भरे शब्द सुनकर अमरकुमार के आँसू रुक गये। वह उत्सुक होकर बोला—माँ, जल्दी बताओ, वह मंत्र कौन-सा है। रानी ने उसे नमस्कार महामंत्र सुनाया, तो वह बोला—'माँ! यह तो मैं जानता हूँ। मैंने इसे साधुओं के पास सीखा है।' रानी बोली—अमरकुमार! अब चिन्ता की कोई बात नहीं, तुम शांत और स्थिर मन से इसका जाप करो।'

अमरकुमार को रानी के शब्दों से बड़ा सुख मिला। वह आँख मूँदकर नमस्कार महामंत्र का जप करने लगा। होम करने वाले आए। उन्होंने ज्योंहि अमरकुमार को अग्नि में ढकेलना चाहा, अग्नि ठंडी हो गई। वहां एक सिंहासन हो गया। अमरकुमार उस सिंहासन पर आरूढ़ हो गया और होम करने वाले मूर्छित होकर गिर पड़े।

ज्योंहि राजा को यह संवाद मिला, वह तत्काल दौड़ा-दौड़ा घटनास्थल पर पहुँचा। सारी स्थिति की जानकारी कर अमर कुमार को गले लगा लिया। राजा ने कुमार से राज्य करने का आग्रह किया पर कुमार बोला—मैं जिस महामंत्र के प्रभाव से बचा हूँ, उसी की शरण स्वीकार करूँगा। राज्य लेकर मुझे क्या करना? कुमार ने मुनि-जीवन स्वीकार किया और साधना में लीन हो गया।

तृतीय घटना के संदर्भ में जयाचार्यश्री ने ग्वाले के दृष्टांत का उल्लेख करते हुए लिखा है—

बाल बछड़ा चरावतो जिह वारं, नदी पूर आया गुण्यो नवकारं।
थइ तत्खिण सरिता दोय डारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/10

बालक जंगल में बछड़े चरा रहा था। वहां नदी का पूर आने पर उसने नमस्कार महामंत्र का सुमिरन किया। उससे नदी तत्काल दो धाराओं में विभक्त हो गई, यह जानकर नमस्कार महामंत्र का जाप करें। घटनावृत्त इस प्रकार है—

एक गोपाल बाल जंगल में बछड़े चराने ले जाता था। दिन-भर उन्हें चराकर शाम को वह शहर लौट आता था। एक दिन उसने जंगल में गुजरते हुए

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मुनि को देखा। वह उसके पास पहुँच कर बोला—मुनिजी! आप शहर के लोगों को तो उपदेश देते ही हैं, मुझे भी कोई रास्ता बता दें। मुनि ने बालक को प्रतिबोध देकर नमस्कार महामंत्र सीखा दिया।

बालक ने पूछा—'मुनिजी! इस महामंत्र से क्या होता है?' मुनि बोले—इस मंत्र की महिमा अचिंत्य है। इसके प्रभाव से हर कठिन काम सरल हो जाता है और दुःख दुविधाएं दूर हो जाती हैं। बालक पूरी निष्ठा के साथ मंत्र का जप करने लगा।

वर्षा का मौषम था। वह सदा की भाँति बछड़ों को जंगल में चरा रहा था। सहसा मूसलाधार पानी बरसा और बरसाती नदी पूरे वेग के साथ बहने लगी। पूरा दिन व्यतीत हो गया, पर नदी का पानी कम नहीं हुआ। बालक हताश होकर नदी के तट पर बैठ गया। सोचने लगा, वह अपने बछड़ों को लेकर शहर में कैसे पहुँचेगा? उसे यही एक चिंता सता रही थी। बछड़ों को अपने आस-पास बैठाकर वह नमस्कार महामंत्र का जप करने लगा। थोड़ी देर में ही वह जप में तन्मय हो गया। देखते ही देखते नदी दो भागों में बँट गई। बीच में ऐसा रास्ता बन गया जहां बिल्कुल पानी नहीं था। बच्चे की आँखें खुली। उसने अपना मार्ग प्रशस्त देख बछड़ों के साथ वहां से प्रस्थान किया और नमस्कार महामंत्र जपता हुआ सकुशल शहर पहुँच गया।

चतुर्थ घटना का उल्लेख जयाचार्यश्री की इस गीतिका में निम्न प्रकार से मुखर हुआ है—

सेठ समुद्र में डूबंतो, नवकार गुण्यों धर चित्त शंतो।
सुर जहाज उठाय म्हेली पारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/11

सेठ समुद्र में डूब रहा था। उस समय उसने शांत मन से नमस्कार महामंत्र जपा। उसी समय देवों ने जहाज को उठाकर पार पहुँचा दिया। यह जानकर नमस्कार महामंत्र का जप करें। घटनावृत्त इस प्रकार है—

एक श्रेष्ठी समुद्र यात्रा कर रहा था। जलपोत के समुद्र मध्य पहुँचते ही तूफान आ गया। जलपोत डगमगाने लगा। भीतर बैठे हुए व्यक्ति घबरा गये। एक व्यक्ति ने श्रेष्ठी को संबोधित कर कहा—'सेठजी! आप हर बार महामंत्र की महिमा बताते रहते हैं। यदि आपके मंत्र में शक्ति है तो उसका प्रभाव आज दिखाइये।'

तेज हवाएं चल रहीं थी। तूफान के थमने की कोई संभावनाएं नहीं थी। श्रेष्ठी ने ध्यान लगाया और नमस्कार महामंत्र का जप प्रारम्भ कर दिया। उसके

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मन में मंत्र के प्रभाव को लेकर कोई आशंका नहीं थी। वह निश्चिंत होकर जप करता रहा। कहा जाता है कि उस समय किसी देव का आसन प्रकंपित हुआ। वह अपना विमान छोड़कर आया। उफनते हुए समुद्र में जलपोत डगमगा रहा था। देव ने उसको अपने हाथों पर उठाया और उस पार पहुँचा दिया। जलपोत के यात्रियों ने प्रत्यक्षत: एक चमत्कार देखा। सब उसकी मुक्त कंठ से प्रशंसा करने लगे।

अंतिम पद्य में अपने आराध्य आचार्यश्री भिक्षु आदि पूर्वज आचार्यों के प्रति कृतज्ञता में उनकी विनम्रता का वैशिष्ट्य देखा जा सकता है—

भिक्षु भारीमाल गणि ऋषिरायो, सुद तास प्रसादे सुख पायो।
वारू जय जश संपति जयकारं, इम जाण जपो श्री नवकारं॥ 10/17

भिक्षु भारीमाल और ऋषिराय के प्रसाद से मैंने विशुद्ध सुख, यश, संपत्ति और जय जयकार प्राप्त किया।

उपरोक्त संदर्भों में आचार्य भिक्षु द्वारा विरचित ढाल[१] ''नवकार तणी महिमा सुणो'' जो भिक्षु ग्रन्थ रत्नाकर भाग 2 में है, प्रसंगत: यहाँ उद्धृत की जा रही है—

1. नवकार तणी महिमा सुणो, जग माँहे ए तंत सारोजी।
कर्म कटे संकट मिटे, पामै भव तण पारो जी॥

2. चोर धाड़ संकट टलै, सब जन मिती थायो जी।
डाकण साकण भूत नां, विधन सारा टल जायोजी॥

3. इण नवकार में गुण अति घणा, कहितां न आवै पारोजी।
एहनां गुण ओलख जपवो करै, ते बेगो जावे मुक्त मझारो जी॥

4. चवदै पूर्व रो ग्यान छै, त्यांमे सारा शिरे नवकारो जी।
त्यांमे गुण कह्या पांच पदा तणा, देव गुरु धर्म तणो अधिकारो जी॥

5. इण नवकार मंत्र नां जाप थी, तिरिया जीव अनेको जी।
हिवै नाम कहूं छै तेहना, सुणजो आण विवेकोजी॥

6. बाछड़ा बालक चरावतो, नदी आइ विकरालो जी।
तिण समर्‌यो नवकार नै, नदी फाट हुइ दोय डालोजी॥

7. श्रीमती बेटी सेठनी, सुन्दर रूप सुकुमालो जी।
तिण मुख जप्यो नवकार नै, सर्प थयो फूलां री मालो जी॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. राजा सूली दियो चोर नै, सेठ सीखायो नवकारोजी।
तिण जाप जप्यो नवकार नो, ते पाम्यो सुर अवतारोजी॥

9. सेठ डूबंतो समुद्र में, तिण समर्‌यो नवकारो जी।
तिण री जिहाज उठाय नें देवता, मेल दिधी पेले पारो जी॥

10. दलिद्री सेठ बेच्यों निज पुत्र नै, सोनइया बरोबर ताह्योजी।
नवकार गुण बेठो होम में, तो तुरत हुइ तिण री साह्यो जी॥

(तर्ज—जय जय जीवड़ा)

चौबीसी जयाचार्यश्री का भक्ति काव्य है। यदि ऐसा कहा जाये कि इसमें सम्पूर्ण जैन वाङ्मय का सार अंतर्निहित है तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इसमें जयाचार्यश्री ने 'णमो अरहंताणं' अर्थात् चौबीस तीर्थंकरों के संक्षिप्त जीवन-दर्शन के साथ-साथ अध्यात्म के गूढ़ रहस्य भर दिये हैं। इस रचना में जयाचार्यश्री ने सर्वप्रथम पंचपरमेष्ठी को ओंकार के रूप में नमस्कार किया है और उसका ऊँकार के साथ संबंध प्रदर्शित किया है—

ॐ नम: अरिहंत अतनु, आचारज उवज्झाय।
मुनि पंचपरमेष्ठी ए, ऊँकार रै मांय॥ चौ. दोह–1॥

प्रस्तुत कृति को जयाचार्य ने स्वयं ध्यान सुधारस के रूप में अंकित किया है—

जिन चौबीस तणा सुगुण, रचियै वचन रशाल।
ध्यान सुधा वर सार रस, जय जश करण विशाल॥चौ.दो. 17॥

नमस्कार महामंत्र ध्यान पद्धति

जयाचार्य के साहित्य का सिंहावलोकन करने पर ज्ञात होता है कि उनके जीवन में स्वाध्याय, ध्यान व जप की त्रिवेणी सतत् प्रवाहमान थी, जो जीवन के अंतिम क्षणों तक चली। उसके द्वारा प्रतिपादित छोटी और बड़ी चौबीसी के गहन अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि उनमें ध्यान का विकास युवाचार्य अवस्था में ही हो गया था। बड़ी चौबीसी की विषय-वस्तु, नाम-स्मरण और जाप-प्रधान है, जिसकी रचना उन्होंने मुनि अवस्था में की थी और छोटी चौबीसी की विषय-वस्तु में ध्यान की प्रधानता है, जिसमें भक्ति का स्वर मुख्य है। वे एक सधे हुए योगी थे। उनका एक ग्रंथ छोटा ध्यान के नाम से विश्रुत है, जिसमें नमस्कार महामंत्र के ध्यान की पद्धति वर्णित है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

छोटा ध्यान [10]

णमो अरहंतांण

1. आप बैठो तिहां थी मुख आगे जाणै श्री अरिहंत देव विराज्या छै। अरिहंत देव नो वरण सफेद छै—कुन्द नो फूल, समुद्र ना झाग, अनै कपूर रो ढिगलो, एहवा श्री तीर्थंकर देव विराज्या छै। ते घणा बरस घर में रही दिव्यता लेइ, थिर आसण करी, चंचल जोग रूंधी, घणो अत्यन्त निर्मल ध्यान ध्यायी, योग मुद्रा साधी, केवल ज्ञान-दर्शन पाया। ते स्फटिक सिंहासन पर विराजमान छै। मस्तक ऊपर तीन छत्र, बे पासे चामर, अशोक वृक्ष, भामंडल, धर्म चक्र करी शोभ रह्या छै। सुख आगै साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका इन्द्र-इन्द्राण्या, देवी-देवता, नर-नारियां री परिषद बैठी दै। भगवन्त नै देख-देख हरषे छै।

2. ते भगवंत अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र, अनंत बला ना धारणाहार छै। अनंता अनंता जीवा री गतागति, भवस्थिति, आयु-अनुबंध तथा प्रच्छन्न नै प्रकट सर्व कर्म जाणै छै। माहांरा पिण सुभासुभ जोग सर्व जाणै छै।

3. हे दयाल! हे गोपाल! हे कृपाल! हे माहण! हे महानिर्यामक! आप राग-द्वेष ना जीतणहार, काम, भोग, क्रोध रा मथणहार संसार रूपिया समुद्र में डूबता भवि प्राणी नै तारणी नावा समान, अत्यन्त पर उपकारी पुरुष, तीन लोक रा नाथ अनाथा रा नाथ आपरो शरणों आपरो आधार, आपरै चरणां में म्हारो मस्तक। आपणी वाणी मीठी खीर समुद्र नो पाणी तेहथी आपरी वाणी घणी मीठी, पैंतीस गुणै करी संयुक्त छै।

4. शब्द, रूप, गंध, रस, स्पर्श महा अनर्थ नां हेतु राग-द्वेष दुख ना दाता कह्या। ए शब्दादिक काम भोग अनंत आत्मिक सुख अनै पुद्ग्लिक सुख नां विघ्न नां पाडनहार कह्या। नरक निगोद मां दुख तेहना संजोग ना मिलावनहार कह्या। एहवी अरिहंत देव री वाणी। त्यां अरिहंता नै वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं पज्जुवासामि मत्थेण वंदामि।

हिन्दी अनुवाद—

णमो अरहंताणं

1. ध्याता जहां बैठे हों, वहां ऐसा अनुभव करें कि मेरे सामने अर्हत् भगवान् का रंग कुंद के फूल, समुद्र के फेन तथा कपूर के ढेर जैसा सफेद है। उन्होंने बहुत वर्षों तक घर में रहकर दीक्षा स्वीकार की। दीक्षित हो उन्होंने स्थिर आसन लगा योगों (मन-वचन और शरीर) की चंचलता रोक, अत्यन्त निर्मल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ध्यान कर योगमुद्रा साधकर केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन प्राप्त किया। वे स्फटिक सिंहासन पर विराजमान हैं। उनके मस्तक पर तीन छत्र और उभय पार्श्व में दो चामर हैं। वे अशोक वृक्ष, भामंडल और धर्मचक्र से सुशोभित हो रहे हैं। उनके सामने साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका, इन्द्र-इन्द्राणी, देव-देवी, पुरुष-स्त्री रूप परिषद् बैठी हुई है, जो भगवान के दर्शन कर अधिक हर्षित हो रही हैं।

2. अरिहंत भगवान अनंत ज्ञान, अनंत दर्शन, अनंत चारित्र और अनंत बल के धारक हैं। वे अनंत जीवों की गति, आगति, भवस्थिति, आयुष्य, अनुबंध तथा प्रच्छन्न और प्रकट प्रत्येक कार्य को जानते हैं। मेरे भी शुभ-अशुभ सब भावों को जानते हैं।

3. हे दयालु! हे गोपाल! हे कृपालु! हे महान्! हे महानिर्यामक! आप राग-द्वेष को जीतने वाले हैं। काम, क्रोध का मंथन करने वाले हैं। संसार समुद्र में डूबते हुए प्राणियों के लिए नौका के समान है। परोपकार करने में प्रवीण हैं। तीन लोक के स्वामी हैं और अनाथों के नाथ हैं। मेरे लिए आप ही शरण हैं। आप ही आधार हैं। मेरा सिर आपके चरणों में प्रणत है। आपकी वाणी क्षीर समुद्र के जल से भी अधिक मधुर है। आपकी वाणी पैंतीस गुणों से युक्त है।

4. आपने शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्श को महान अनर्थ का हेतु तथा राग-द्वेष को दु:खदायक कहा। इन शब्दादि विषयों और कामभोगों को आपने आत्मिक और पौद्गलिक, दोनों प्रकार के सुखों में विघ्न उपस्थित करने वाले तथा नरक-निगोद के दु:खों का संयोग मिलाने वाले बताये। ऐसी वाग्-संपदा से सम्पन्न श्री अरिहंत भगवान को मैं वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, उनका सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ, वे कल्याणकारी हैं, मंगलरूप हैं, धर्मदेव हैं और चिद्-स्वरूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करता हूँ और मस्तक झुकाकर उन्हें वंदन करता हूँ।

णमो सिद्धाणं

सिद्ध भगवान जन्म, जरा, मरण, रोग, शोक, दु:ख, दारिद्र, कर्म, मर्म रहित छै। आठ गुणा करी सहित छै। केवल ज्ञान, केवलदर्शन, अनंत आत्मिक सुख, खायक समकित, अटल अवगाहन, अमूर्तिपणो, अगुरुलघुपणो, अन्तराय रहित एहवा गुण करी सहित छै। कलकली भूत संसार, महादु:ख क्लेश जो सागर तेहथी छूटा। अनंत आत्मिक सुख में लयलीन एहवा सिद्ध जी नै वंदामि, नमंसामि, सक्कोरेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जवासामि, मत्थेण वंदामि।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हिन्दी अनुवाद –

णमो सिद्धाणं

सिद्ध भगवान जन्म, जरा, मृत्यु, रोग, शोक, दुःख, दारिद्रय, कर्म और मर्म रहित हैं। वे केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनंत आत्मिक सुख, क्षायिक सम्यक्त्व, अटल अवगाहन, अमूर्तित्व, अगुरुलघुत्व और निरंतराय–इन आठ गुणों से सम्पन्न हैं। वे इस अत्यन्त दुःख और संक्लेश के समुद्र कलकती भूत संसार से मुक्त हैं। अनंत आत्मसुखों में रमण करने वाले श्री सिद्ध भगवान को मैं वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, उनका सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ। वे कल्याणकारी हैं। मंगलरूप हैं। धर्मदेव हैं और चिद् स्वरूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करता हूँ और मस्तक झुकाकर उन्हें वंदन करता हूँ।

णमो आयरियाणं

नमस्कार थांवों आचार्यश्री जी नै। ते आचार्यजी पंच महाव्रत पालै, च्यार कषाय टालै, पंच इन्द्रिय वश करै, पंच आचार पालै, पंच समिति, तीन गुप्ति, नवबाड सहित ब्रह्मचर्य धारे एहवां गुण सहित आचार्यजी नै वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जवासामि मत्थेण वंदामि।

हिन्दी अनुवाद –

णमो आयरियाणं

आचार्यदेव पांच महाव्रतों को पालने वाले हैं। चार कषाय को टालने वाले हैं। पांच आचार का पालन करने वाले हैं। पांच समिति और तीन गुप्ति की साधना करने वाले हैं। नव बाड़ सहित ब्रह्मचर्य व्रत धारण करने वाले हैं। इन गुणों से युक्त श्री आचार्य देव को मैं वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ। वे कल्याणकारी हैं, मंगलरूप हैं, धर्मदेव हैं, चिद् स्वरूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करता हूँ और मस्तक झुकाकर उन्हें वंदन करता हूँ।

णमो उवज्झयणाणं

नमस्कार थांवों उपाध्यायजी नै। ते उपाध्यायजी इग्यारै अंग, बारै उपांग, चवदै पूख भणै-भणावै, सिद्धान्त रूपी रासडी करी मन रूपिया अश्व नै ठिकाणै आणै। एहवां उपाध्यायजी नै वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जवासामि मत्थेण वंदामि।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हिन्दी अनुवाद–

णमो उवज्झयणाणं

उपाध्यायजी ग्यारह अंग, बारह उपांग, चौदह पूर्व का अध्ययन-अध्यापन करवाते हैं। वे सिद्धान्त रूपी डोरी से मन रूपी अश्व को बांध स्थान पर लाते हैं। ऐसे उपाध्यायजी को मैं वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ। वे कल्याणकारी हैं, मंगल रूप हैं, धर्मदेव हैं और चिद्-स्वरूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करता हूँ और मस्तक झुकाकर उन्हें वंदन करता हूँ।

णमो लोए सव्व साहूणं

नमस्कार थावों सर्व साधुजी नै, ते साधुजी पंच महाव्रत पालै, चार कषाय टालै, पंच इन्द्रियां वश करै, भाव सच्चे, करण सच्चे, मन-वचन-काय समाहरणे, ज्ञान सम्पन्ने, दर्शन सम्पन्ने, चारित्र सम्पन्ने, वेदनी आया समो अहियासे, मरण आया समो अहियासे, क्षमावंत, वैराग्य वंत, धर्मशुक्ल ध्यान ध्यावै, तेजु, पद्म, शुक्ल लेश्या सहित। एहवां साधु पुरुषा नै वंदामि, नमंसामि, सक्कारेमि, सम्माणेमि, कल्लाणं, मंगलं, देवयं, चेइयं, पज्जुवासामि मत्थेण वंदामि।

हिन्दी अनुवाद–

णमो लोए सव्व साहूणं

साधु पांच महाव्रत का पालन करने वाले हैं। चार कषाय को छोड़ने वाले हैं और पांच इन्द्रियों को वश में करने वाले हैं। वे भाव सत्य, करण सत्य और योग सत्य हैं। वे मन, वचन और काया को समाहित कर रहने वाले हैं। वे ज्ञान, दर्शन और चारित्र से सम्पन्न हैं। वेदना और मृत्यु के उपस्थित होने पर वे समभाव से सहन करते हैं। वे क्षमासम्पन्न हैं। धर्मध्यान व शुक्लध्यान की साधना करने वाले हैं तथा तैजस, पद्म व शुक्ल ध्यान से सम्पन्न हैं। ऐसे साधु पुरुष को मैं वंदन करता हूँ, नमस्कार करता हूँ, सत्कार करता हूँ, सम्मान करता हूँ। वे कल्याणकारी हैं, मंगलरूप हैं, धर्मदेव हैं और सदचिद् रूप हैं। मैं उनकी पर्युपासना करता हूँ और मस्तक झुकाकर उन्हें वंदन करता हूँ।

बड़ा ध्यान

'छोटो ध्यान' की तरह 'बड़ो ध्यान' भी जयाचार्यश्री की एक कृति है, जिसमें जयाचार्यश्री ने ध्यान की कुछ पद्धतियों का निर्देश किया है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जैन साधना पद्धति का मूल तत्त्व है–'त्रिगुप्ति साधना'। इसका तात्पर्य है–आसन, मौन और एकाग्रता का अभ्यास। बड़ा ध्यान इसी से प्रारंभ होता है। मन की चंचलता कैसे मिटे? इस प्रश्न के समाधान में उन्होंने श्वास के प्रवेश और निर्गम पर 'सोऽहं' पर चित्त केन्द्रित करने का निर्देश दिया है। ध्यान का दूसरा प्रकार तीर्थंकर ध्यान बताया है। ध्यान का तीसरा प्रकार सिद्ध ध्यान और चौथा ध्यान है कर्म विपाक का चिंतन। ध्यान के पश्चात् अशौच अनुप्रेक्षा के अनुचिंतन की पद्धति बतलाई है। इस कृति में जयाचार्यश्री द्वारा निर्दिष्ट 'सिद्धां रै ध्यान रा प्रयोग' जिस रूप में उपलब्ध है, वह प्रयोग निम्न प्रकार से है–

सिद्धां रै ध्यान रो प्रयोग

ते सिद्ध भगवान जन्म, जरा, रोग, शोक, दुःख, दरिद्रय, कर्म, मर्म, रहित छै, आठ गुणां सहित छै। ते अनंत आत्मिक गुण में सदा लयलीन छै। कलकलीभूत संसार महाक्लेश नो सागर, ते थकी छूटा छै। ते सिद्ध भगवान नो ध्यान एकाग्रचित्त, मन थिर राखनै करणो।

एहवा सिद्ध समान म्हारो जीव छै। पिण ते जीव असुद्धपणे, कर्म सूं संसारावस्था में आपों भूल रह्यो छै। राग-द्वेष, कषाय, आश्रव, एं म्हारा नहीं। हूं एह स्यूं न्यारो छूं। अनंत ज्ञान-दर्शन-चारित्र-वीर्य वालो सुध-बुध अविनाशी छूं.......।

सुध चिदानंद म्हारो जीव छै। पिण कर्म थकी परवस्य वर्ते छै। ते माहे जे विषयादि कर्म नां स्वभाव तेह मे हूं। रक्त थावूं नहीं। एथी म्हारों निरमल चिदानंद स्वभाव न्यारो छै। इम निज स्वभाव पर स्वभाव भिन्न पणै चिंतवै। विषयादिक थी आत्मा न्यारो गिणै।

एहवो जीव छै तो पिण कर्म बसी दुखी छै। ते हेते कर्म नो विपाक चिंतवै, जियां ज्ञान गुण ज्ञानावरणीय कर्म दाब्यो छै। दर्शनावरणीय कर्म दर्शन गुण दाब्यो छै। इम आठ कर्म जीव नां आठ गुण दाब्या छै। एतले संसार में भमतो जीव नै जे सुख दुःख ते सर्व कर्म ना कीधा छै। तिहां सुख ऊपर तो राचवो नहीं, दुःख ऊपना दिलगीर होइवो नहीं।

हिन्दी अनुवाद–

सिद्धों के ध्यान का प्रयोग

सिद्ध भगवान जन्म, जरा, मरण, शोक, रोग, दुःख, दारिद्रय कर्म और मर्म से रहित है। अनंत ज्ञान आदि आठ गुणों से युक्त हैं और अंतहीन आत्मसुख

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

में निरन्तर लीन हैं। वे महाक्लेश के समुद्र कलकली भूत संसार से मुक्त हैं। चित्त को एकाग्र कर मन से उक्त स्वरूप सिद्ध भगवान का ध्यान करना।

ऐसे सिद्ध भगवान के स्वरूप जैसा ही मेरा स्वरूप है। किन्तु कर्म मल से अशुद्ध होने के कारण मैं संसारावस्था में अपना आपा भूल रहा हूँ। राग-द्वेष, कषाय और आश्रव मेरे अपने नहीं हैं। मैं इनसे भिन्न हूँ। मैं अनंत ज्ञान-दर्शन-चारित्र और वीर्य सम्पन्न शुद्ध, बुद्ध तथा अविनाशी हूँ।

मेरी आत्मा अजर, अमर, अनादि अनंत, अक्षय, अचल, अकल, अमल, अगम, अनमी, अरूपी, अकर्म, अबंधक, अनुदय, अनुदीरक, अयोगी, अभोगी, अरोगी, अवेदी, अछेदी, अकषायी, अलेशी, अशरीरी, अभाषी, अनाहारी, अव्याबाध, अगुरुलघु, अनिंद्रिय, अप्राणी, अयोनि, असंसारी, अमर, अपर, अपरंपर, अव्यापि, अनाश्रित, अकंप, अविरुद्ध, अनाश्रव, अलख, असंज्ञी, अनाकार, लोकालोक ज्ञापक और शुद्ध चिदानंदमय है। किन्तु अभी यह कर्मों के अधीन है। इसलिए जो विषय आदि कर्म पुद्गलों के स्वभाव हैं, उनमें मुझे आसक्त नहीं होना है। मेरा निर्मल चिदानंदमय स्वभाव इनसे भिन्न है। इस प्रकार ध्यान में आत्मा और पुद्गल के स्वभाव का भिन्न-भिन्न रूप से चिंतन करें। आत्मा को विषय आदि से भिन्न समझें।

जीव का स्वरूप सिद्ध जैसा है। फिर भी वह कर्मों के कारण दुःखी है। इसलिए कर्म के विषय का चिंतन करना चाहिए। जैसे ज्ञानावरणीय कर्म के कारण ज्ञान गुण दबा हुआ है। इस प्रकार जीव के आठ गुण आठ कर्मों के द्वारा दबे हुए हैं। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि संसारी प्राणी को जितने सुख-दुःख होते हैं, वे सब कर्मों के कारण हैं। ऐसे सुख में आसक्त नहीं होना और दुःख में व्यथित नहीं होना चाहिए।

बड़ा ध्यान कृति लघुकाय होने पर भी प्रतिपाद्य विषय की गुरुता की दृष्टि से सचमुच बड़ी है। यह कृति पढ़ने से ऐसा लगता है कि यह ग्रंथों के आधार पर की हुई रचना नहीं है, अपितु अभ्यास व अनुभव के आधार पर की हुई रचना है। लिखा है—'ध्यान निर्मल चढै जदै गुण घणां प्रकट थाय अनै घणां गुणगान करै तिवारे ध्यान निर्मल चढ़े तिवारे जेहवो रंग चिंतवे तेहवोइ दिसण लाग ज्यावै नै इम जाणै श्रीभगवन्त इज इम ठिकाणै विराज्या है।'[11]

स्पष्ट है कि जयाचार्यश्री ने इस ध्यान का अनुभव किया था और उसे एक लघुकाय ग्रंथ का रूप दिया। इसमें भेद-विज्ञान का बहुत सुन्दर वर्णन किया गया है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जयाचार्यश्री ने शीतलनाथ भगवान की स्तुति करते हुए कहा है–'उवा दिशा किण दिन आवसी तब होसूं तुझ सरीस।'

वस्तुतः महान आत्माओं की स्तुति, महान आत्माओं को किया गया नमन स्वयं व्यक्ति को महान बनाता है। इसलिए नहीं कि स्तुतिकार या नमनकर्त्ता महाज्ञानी है, या महाध्यानी है, किन्तु इसलिए कि गाया हुआ अथवा कहा हुआ सत्य उनकी अनुभूति में रचपच जाता है और तब स्तुति साकार हो जाती है। आचार्य विनोबा भावे से पूछा–'आपकी भक्ति का स्वरूप क्या है?' उन्होंने कहा–'मैं प्रभु का अतीत हूँ। प्रभु मेरे भविष्य हैं। मैं भगवान का वर्तमान में अनुभव करूँ–यही मेरी भक्ति है।'

जयाचार्यश्री भी 'वाही दशा किण दिन आवसी' से यह बताना चाहते हैं कि भविष्य में मैं भी प्रभु-तुल्य हो जाऊँगा। आचार्यश्री मघवागणि ने उनके जीवन-चरित्र में लिखा है कि जयाचार्यश्री योग-शास्त्र की युक्तियों को जानते थे–

जोग शास्त्र तणी कै युक्ति, अति उंडी समय रैस।
व्याख्यान हेतु दृष्टांत युक्ति अति, ज्ञायक सरवर गणेश॥[12]

अपनी प्रत्येक रचना के अंतिम दोहे में जयाचार्यश्री का साहित्यिक नाम 'जय जश' अंकित है, जो मंत्र रूप और जय-विजय का प्रतीक है। मंत्राक्षरों के रहस्यविज्ञाता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने 'मंत्र एक समाधान' (पृ. 81) में प्रभावशाली व्यक्तित्व के निर्माण में इस मंत्र का निम्न प्रकार से उल्लेख किया है–

प्रभावशाली व्यक्तित्व

1. मंत्र : जय जश कर जगदीश।
2. मंत्र संख्या : प्रतिदिन एक माला।
3. परिणाम : इससे व्यक्तित्व का विकास होता है और वह प्रभावशाली बनता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः ऐसा कहा जा सकता है कि श्री मज्जयाचार्य एक ऐसे महामना थे, जिनका नाम स्वयं में एक मंत्ररूप है। पंच परमेष्ठी के प्रति अगाध समर्पण जिनकी नस-नस में ऐसे प्रवाहित था, जैसे धमनियों में रक्त। सचमुच वे महान योगी थे। वे युगद्रष्टा, आत्मद्रष्टा, क्रांतद्रष्टा, सत्यद्रष्टा, मंत्र-द्रष्टा, मंत्र-स्रष्टा आचार्य थे। एक अबोला, अनकहा आकर्षण उनके व्यक्तित्व में था, जिनकी प्रज्ञा गंगोत्री का न माप है, न मापदण्ड।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ—

1. वीतराग वंदना, पृ. 44
2. आराधना, पृ. 142
3. आराधना, पृ. 143
4. अमृत कलश, पृ. 300
5. वीतराग वंदना, पृ. 51
6. तेरापंथ का इतिहास, पृ. 448
7. आराधना, पृ. 75
8. अंगसुत्ताणि, भाग-1, पृ. 875, 876, समवाओ 32/1
9. भिक्षु ग्रंथ रत्नाकर, भाग-2, ढ़ाल-35, पृ. 684
10. आराधना, पृ. 92 से 94
11. आराधना, पृ. 34
12. आचार्य चरितावली : खंड-2, पृ. 203, जय सुजश : ढाल-67, गाथा-31

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. शक्ति जागरण का अलौकिक मंत्र : नमस्कार महामंत्र

शक्ति/ऊर्जा ही वह तत्त्व है, जिस पर सम्पूर्ण जीव जगत् टिका हुआ है। विश्व में आज तक जितने भी महत्त्वपूर्ण काम हुए हैं, सब शक्ति के सदुपयोग से ही संभव हुए हैं। वीर्य, सामर्थ्य, ऊर्जा—ये सब शक्ति के ही पर्यायवाची हैं। शक्तिपुंज गुरुदेव श्री तुलसी की शक्तिशाली और मार्मिक पंक्तियां एक बहुत बड़े सत्य का दिग्दर्शन कराती हैं—

करे शक्ति का सही नियोजन।
सधे सभी अभिलषित प्रयोजन॥

शक्ति का आधार केवल शारीरिक स्थूलता मात्र ही नहीं है, उसका आधार है—तेजस्विता, विनम्रता, सहिष्णुता और संकल्प की दृढ़ता।

विश्वस्थित चार गति चौरासी लाख जीवयोनि में मनुष्य अपनी शक्ति का जितना सदुपयोग कर सकता है, अन्य गति के जीव नहीं। इसके कुछ कारण हैं—

1. हालांकि देवों में इतनी ताकत होती है कि वे मनुष्य की आँखों की भाषण (भृकुटी—Eyebrow) पर बत्तीस प्रकार के नृत्य दिखा सकते हैं और उनको बिल्कुल भी पीड़ा की अनुभूति नहीं होने देते। कई देव तो हजार रूप बनाकर पृथक्-पृथक् हजार भाषाएं बोल सकते हैं परन्तु वे भौतिक सुखों में इतने आसक्त रहते हैं कि वे अपनी शक्ति का उपयोग आध्यात्मिक उन्नयन हेतु नहीं करते।

दूसरी बात देवों के पास मनुष्य जैसा नाड़ी संस्थान व सुषुम्ना नहीं है, अत: वे संयम का जीवन नहीं जी सकते।

2. नारक जीव अति दारुण दु:खों के भार से दबे रहने के कारण शक्ति का दुरुपयोग करते हैं—विग्रह करने में।

3. तिर्यंच में कुछ प्राणी अत्यन्त शक्तिशाली होते हैं, जैसे—कैसरीसिंह, गंधहस्ति आदि। पर विवेक चेतना के अभाव मे ंवे अपनी कार्यक्षमता का सम्यक् नियोजन नहीं कर पाते।

मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जिसके पास सक्षम नाड़ी संस्थान है। विवेक चेतना है। वर्तमान युग की खोजें, आविष्कार, भौतिक सुख-सुविधाएं सब मानव शक्ति के ही चमत्कार हैं। मानव अनंत शक्तियों का स्रोत है। जिन-जिन शक्तियों को अभिव्यक्त होने का समय और साधन मिलता है, वही हमारे सामने प्रकट हो

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पाती हैं। शेष अनभिव्यक्त रूप में अपना काम करती रहती हैं। हमारी विकास-यात्रा के प्रमुख दो स्रोत हैं—

1. सुप्त शक्तियों का जागरण,
2. जागृत शक्तियों का संरक्षण।

नमस्कार महामंत्र विकास के उपर्युक्त दोनों स्रोतों का उत्तरदायी मंत्र है। अत: महामंत्र और शक्ति दोनों को पृथक्-पृथक् नहीं किया जा सकता। बीजाक्षरों का अपूर्व संयोग होने से इस महामंत्र में अपूर्व शक्ति है। मानव में निहित शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक शक्तियों का जागरण इससे संभव है। यह महामंत्र हमारी तैजस शक्ति को शक्तिशाली बनाकर उसकी कार्यक्षमता को वृद्धिंगत करता है। हमारे भाव मंडल तथा आभामंडल को विशुद्ध बनाता है। भावमंडल की विशुद्धता शक्ति को विकसित करती है और आभामंडल की विशुद्धता आने वाली बाधाओं को परास्त करती है। यही कारण है कि शक्तिशाली आभामंडल में बाहर का संक्रमण कम हो पाता है। अपेक्षा केवल इस बात की है कि इस शक्तिशाली मंत्र का प्रयोग केवल लौकिक उपलब्धियों को पाने हेतु न करें। इससे आध्यात्मिक ऊर्जा को जागृत करें, जिसका रचनात्मक पक्ष होगा साहसी, पराक्रमी, सूक्ष्म विचारक, स्थिरमति, प्रभावी, सहिष्णु, धैर्यवान, करुणाशील, सूझ-बूझ का धनी एवं एक असाधारण व्यक्तित्व का निर्माण।

तन शक्तियों का भंडार : एक वैज्ञानिक शोध

जैन आगमों में छप्पन लब्धियों/शक्तियों का विवरण उपलब्ध हैं, वे सभी हमारे भीतर विद्यमान हैं। चक्रवर्ती, बलदेव, वासुदेव अनेक लब्धियों से सम्पन्न होते हैं। ध्यान-विचार नामक ग्रंथ में अनेक शक्तियों की चर्चा है। वैष्णव और शाक्त मत में आठ महाशक्तियों और चौदह प्रज्ञप्ति आदि विधाओं का उल्लेख मिलता है, उनमें से कुछ देवी शक्तियां हैं और कुछ हमारे भीतर विद्यमान हैं। ओघ शक्ति के रूप में वे हमारे उपयोग में नहीं आती, समुचित शक्ति बनने पर ही हमारे काम आती हैं। ओघ शक्ति को समुचित शक्ति के रूप में अभिव्यक्त करना ही शक्ति जागरण की साधना है। शक्ति का सम्पूर्ण जागरण आत्मा से परमात्मा बनने की उपलब्धि है।

वर्तमान वैज्ञानिक युग ने इस बात को सिद्ध कर दिया है कि शक्ति का स्रोत एक है और उपयोग अनेक। शक्ति की वही धारा कहीं रोशनी करती है तो कहीं ध्वनि बनकर आती है। कभी टी.वी. में दृश्य बनकर दिखती है तो कभी फ्रिज में

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ठंड और हीटर में गर्मी के रूप में परिवर्तित हो जाती है। ठीक इसी प्रकार हमारे भीतर स्थित प्राण शक्ति से शरीर व आत्मा की विविध प्रवृत्तियां प्रकट होती हैं। एक वैज्ञानिक शोध से जैन आगमों में वर्णित मानव शक्तियों को ठोस आधार मिल सकता है—

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 450 फुट टन शक्ति तैयार करता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 4800 शब्द बोलता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 750 मांसपेशियों को उपयोग में लाता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 7000000 मस्तिष्क कोशिकाओं को व्यायाम देता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 1.5 कि.ग्रा. पानी पीता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 1.43 प्वाइण्ट पसीना निकालता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 85.6 डिग्री ताप छोड़ता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 438 घन फुट हवा श्वास में लेता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में 23040 बार श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया करता है।

प्रत्येक व्यक्ति 24 घंटों में ब्लड 168000000 मील यात्रा करता है।

प्रत्येक व्यक्ति का 24 घंटों में हृदय 1,03,689 बार घड़कता है।

मानव के भीतर स्थित कारखाने में इन शक्तियों से परे आध्यात्मिक शक्तियों का अखूट खजाना भरा है। जो जितना गहरे में जाता है, उसको उतना ही सार तत्त्व मिलता जाता है। जैसे खादान की गहरी खुदाई में बहुमूल्य हीरे-पन्ने प्राप्त होते हैं। समुद्र की गहराई में अमूल्य रत्न उपलब्ध होते हैं, वैसे ही चेतना की गहराई में अमूल्य तत्त्व, अभिसिद्धियां, अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान तथा केवलज्ञान की उपलब्धि होती है।

महामंत्र में शक्ति के पेरामीटर

नमस्कार महामंत्र में शक्ति जागरण के अनेक पेरामीटर हैं। अपेक्षा है अभीक्ष्णता, एकाग्रता और लयबद्धता के साथ श्रद्धापूर्वक महामंत्र की आराधना की जाये। महामंत्र की देह रचना में निहित शक्ति के पेरामीटरों को निम्न बिन्दुओं के माध्यम से समझा जा सकता है—

1. जिस मंत्र में णम् होता है, वह बहुत शक्तिशाली मंत्र बन जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. जिस मंत्र में ण और ण पर अनुस्वार होता है, वह बहुत शक्तिशाली मंत्र बन जाता है।
3. जिस मंत्र में अ और र होता है, वह बहुत शक्तिशाली मंत्र बन जाता है।
4. जिस मंत्र में सिद्ध शब्द होता है, वह बहुत शक्तिशाली मंत्र बन जाता है।
5. जिस मंत्र में हू और ण होता है, वह बहुत शक्तिशाली मंत्र बन जाता है।

सव्व साहूणं इसमें 'ण' और 'हू' है। अरहंताणं में 'अ' और 'र' है। अग्नि तत्त्व 'र' और आकाश तत्त्व 'ह'—ये सारे शक्ति के पेरामीटर मिलकर इस मंत्र को बहुत शक्तिशाली बना देते हैं।[1]

बीज की दृष्टि से अरिहंताणं में 'इ' और 'र' अग्नि बीज है। दोहरी आँच मिले तो निर्जरा होती है। णमो सिद्धाणं में द् और ध् है। 'ध'—धारणा शक्ति और 'द' देने की शक्ति है। इस मंत्रोच्चारण से विलक्षण शक्ति उत्पन्न होती है। जैसे-जैसे तप की गहराई बढ़ती है, शक्ति का अनुभव होने लगता है। यह शक्ति पर को पराजित करने की नहीं, स्व को अपराजित बनाने वाली शक्ति है।[2]

श्रद्धा इस मंत्र का मूल हार्द है। यह मंत्र प्रारंभ होता है णमो से। णमो अहंकार विसर्जन का प्रतीक है। अहंकार के विसर्जन से ही मंत्र प्रारंभ होता है। जो व्यक्ति नमन करता है, समर्पण करता है, वहां अहंकार के लिए कोई अवकाश नहीं रहता। वहां स्वत: शक्ति स्रोत खुलने की संभावनाएं बढ़ जाती हैं।

जिस प्रकार समुद्र से नि:सृत अमृत, मलयाचल से नि:सृत चंदन और दही से नि:सृत सारभूत मक्खन—शक्ति, शांति और शारीरिक पुष्टि को वृद्धिंगत करता है, उसी प्रकार आगम से नि:सृत सर्व श्रुतों का सारभूत नमस्कार महामंत्र शक्ति, शांति और शारीरिक पुष्टि करने वाला एक अलौकिक मंत्र है। इस महामंत्र के प्रथम पद पर प्रतिष्ठित अर्हतों की अपार शक्ति का विवरण जैन ग्रंथों में निम्न प्रकार से उपलब्ध है—

12 सुभटों का बल	1 वृषभ में
10 वृषभों का बल	1 अश्व में
22 अश्वों का बल	1 महिष में
15 महिष का बल	1 गज में
500 गजों का बल	1 सिंह में
2000 सिंहों का बल	1 अष्टपद में

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

10,00000 अष्टापदों का बल	1 बलदेव में
दो बलदेव का बल	1 वासुदेव में
दो वासुदेव का बल	1 चक्रवर्ती में
एक लाख चक्रवर्ती का बल	1 नागेन्द्र में
एक करोड़ नागेन्द्र का बल	1 इन्द्र में

ऐसे असंख्य इन्द्र जितनी शक्ति तीर्थंकर की एक कनिष्ठा अंगुली में होती है।

इस प्रकार विश्व की पांच महाशक्तियां इस महामंत्र के साथ जुड़ी हुई हैं, जो अनंत ज्ञान-दर्शन, त्याग, संयम, वैराग्य आदि आत्मिक एवं सात्विक गुणों से ओत-प्रोत हैं।

शक्ति जागरण का अलौकिक मंत्र

अनुभवी शास्त्रज्ञों का कहना है कि सत्तर कोटाकोटि सागरोपम मोहनीय कर्म में से जब एक कोटाकोटि सागरोपम कर्म शेष रहता है तब जीव इस नमस्कार महामंत्र को प्राप्त होता है। इस तथ्य की पुष्टि में निम्न पंक्तियां उद्धृत हैं—

सत्तर कोडाकोडी सायरमाणो, इयम्मि मोहणीए।
कोडाकोडीशेषे नवकारो, मुहञिओ होइ॥

महामंत्र में अष्ट कर्मों को क्षीण करने की अपार शक्ति है। अष्ट कर्मों में से एक कर्म है—अन्तराय कर्म, जिसके क्षय से अनंत शक्ति की प्राप्ति होती है। निर्जरा प्रकंपन की प्रक्रिया है। इसमें व्यक्ति अवांछनीय प्रकंपनों के प्रति वांछनीय प्रकंपन पैदा कर शक्तिशाली प्रकंपन पैदा कर देता है और पुराने संग्रह को समाप्त कर देता है। जिस प्रकार अनेक उत्तम औषधियों के अर्क के मिश्रण से बनी छोटी-सी पुड़िया में रोग नाश की अपार शक्ति होती है, उसी प्रकार समस्त शास्त्रों के रहस्य स्वरूप महामंत्र को विराट शक्ति के रूप में देखा जा सकता है। इस प्रसिद्ध श्लोक की ध्वनि भी यही है—

मंत्रसंसारं त्रिजगदनुपमं सर्वपापारि मंत्रम्।
संसारोच्छेद मंत्रं विषय विष हरं कार्य निर्मूल मंत्रम्॥
मंत्रसिद्धिप्रदानं शिव सुख जननं केवलज्ञान मंत्रम्।
मंत्र श्री जैन मंत्रं जप जप जपितं जन्म निर्वाण मंत्रम्॥[3]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चौदह पूर्व का साररूप नमस्कार महामंत्र त्रिभुवन में अनुपम है। सर्व पाप रूपी शत्रुओं को नष्ट करने में समर्थ है। भयंकर विष को उतारने वाला और भव-भव के कर्मों को निर्मूल करने में सक्षम है। ऋद्धि-सिद्धि और शिवसुख प्रदाता है। केवलज्ञान प्रकाशित करने वाला है इसलिए ज्ञानी महर्षि नमस्कार महामंत्र की महिमा सर्वाधिक बताते हैं। आचार्य महाप्रज्ञजी की ऋतम्भरा प्रज्ञा कहती है– नमस्कार महामंत्र ऐसा मंत्र है, जिसमें शब्दों का शक्तिशाली चयन हुआ है। कहा जा सकता है कि दुनिया में जितने मंत्र उपलब्ध हैं, उन मंत्रों से अधिक शक्तिशाली कहूँ तो आप स्वीकार करें या न करें पर किसी भी मंत्र से यह कम शक्तिशाली नहीं है, यह कहने में मुझे कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। केवल जैन परम्परा में ही नहीं, दूसरे विद्वान, दूसरे मंत्रविद् इस बात को स्वीकार करते हैं कि नमस्कार महामंत्र बहुत शक्तिशाली मंत्र है।[4] महामंत्र की आराधना से निम्न शक्तियां जागृत होती हैं, उनका विकास होता है–

1. प्रतिरोधक शक्ति का विकास।
2. संकल्प शक्ति का विकास।
3. तन की शक्ति का विकास।
4. मन की शक्ति का विकास।
5. भावनात्मक शक्ति का विकास।
6. आध्यात्मिक शक्ति का विकास।

1. प्रतिरोधक शक्ति का विकास

आलस्य, प्रमाद, अतिनिद्रा, ईर्ष्या, भय, पर-परिवाद जैसे निषेधात्मक भावों से प्रतिरोधात्मक शक्ति का क्षरण होता है। निषेधात्मक भाव न केवल मन को ही विक्षुब्ध करते हैं वरन् शरीर में विषयुक्त रसायनों का उत्पादन करके उसे विषाक्त भी बनाते हैं।

निषेधात्मक भावों के दुष्प्रभाव–

1. अंगों की कोशिकाएं शक्तिहीन होती हैं।
2. संतुलित रक्त संचार में बाधा आती है।
3. शरीर के अनेक अंगों में घातक विष पैदा होने लगता है।
4. नस-नाड़ियों में तनाव उत्पन्न होकर, उसमें टूटन पैदा होती है।
5. मन:स्थिति इतनी दूषित हो जाती है कि दृढ़ इच्छाशक्ति और उत्साहपूर्ण संकल्प टिकना कठिन हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. आशाएं आकांक्षाएं सफल नहीं हो पाती।

7. ऊँचे उद्देश्य शिथिल पड़ जाते हैं तथा मन का उल्लास (वीर्य) सर्वथा मंद हो जाता है।

आधुनिक विज्ञान के अनुसार प्रतिरोधक क्षमता के कम होने का कारण है शरीर में लाल अणुओं के साथ श्वेत अणुओं का कम हो जाना। हमारे शरीर में श्वेत अणुओं की कमी से प्राण शक्ति की तेजस्विता में कमी आ जाती है। रेजीस्टेंस पावर उसी प्राणशक्ति की धारा है जो हमारे शरीर के भीतर प्रवाहित होती है।

रंग विज्ञान के अनुसार शरीर में काले, नीले व हरे रंग की कमी से प्रतिरोधक शक्ति कम होने लगती है।

उपरोक्त सारे अभिमतों से इतनी निष्पत्ति तो निश्चित है कि मानव में प्रतिरोधक शक्ति घटती-बढ़ती रहती है। जागरूकता पूर्वक जो व्यक्ति स्वाध्याय, ध्यान, जप आदि में रत रहता है, प्रमाद नहीं करता और सद्-चिन्तन करता है, वह अपनी प्रतिरोधक क्षमता को विकसित कर सकता है। नमस्कार महामंत्र का जप, अपने इष्ट (आराध्य) का जप, तीर्थंकरों व आचार्यों का जप—ये सारे जप तारामंडलीय शरीर में बदलाव लाते हैं तथा प्रतिरोधक शक्ति को विकसित करते हैं। इस सन्दर्भ में महामंत्र को इस प्रकार समझा जा सकता है—

हम जो भी बोलते हैं, उसकी तरंगें बन जाती हैं। मंत्र की शक्ति का एक अर्थ होता है—शब्दों का वह चयन, जो शक्तिशाली प्रकंपन पैदा कर सके। वे पूरे वायुमंडल को, पूरे आकाश मण्डल को प्रकंपित कर सके। यह मंत्र शक्ति का एक अंग होता है।[5]

शब्द, अर्थ, उच्चारण और भावना—ये चार मंत्र-शक्ति के आयाम हैं। यदि महामंत्र के साथ जप करते समय ये चार बातें जुड़ती हैं तो उससे तैजस शरीर अर्थात् प्राण शक्ति की तेजस्विता वृद्धिंगत होती है, जो प्रतिरोधात्मक क्षमता के विकास की आधारशीला है।

प्रयोग

1. णमो उवज्झायाणं पद का आनंद केन्द्र पर हरे रंग के साथ ध्यान करने से शरीर और मन की परतों पर जमे हुए विजातीय तत्त्व और विषैले परमाणुओं का उत्सर्जन होता है। वे बाहर निकल आते हैं, जिससे प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है।[6]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

घास की तरह चमकता हुआ हरा रंग नाड़ी-तंत्र को बलशाली बनाता है तथा पीला रंग नाड़ी-तंत्र पर उत्साहवर्द्धक प्रभाव डालता है।

2. दोनों भृकुटियों के मध्य दर्शन-केन्द्र पर सूर्योदय के समय अरुण रंग में 'णमो सिद्धाणं' का जप तैजस शक्ति के संवर्धन अर्थात् प्रतिरोधक शक्ति के संवर्धन का महत्तम प्रयोग है।

3. 'णमो लोए सव्व साहूणं' का शक्ति-केन्द्र पर नीले रंग में जप।

उपर्युक्त प्रयोगों के द्वारा तैजस के परमाणु शक्तिशाली बनते हैं, प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है, जिसका परिणाम है—शांति व आनन्द का अनुभव तथा बहुत सारी समस्याओं के समाधान की क्षमता का विकास। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि तैजस के परमाणु जिस व्यक्ति के पास होते हैं अथवा जिस व्यक्ति की प्रतिरोधक क्षमता विकसित होती है, उस व्यक्ति के सामने वाला स्वयं हतप्रभ रह जाता है। नि:संदेह महामंत्र इस क्षमता को विकसित करता है।

2. संकल्प शक्ति का विकास

जैन वाङ्मय में कहा गया है—

एगे जिए जिया पंच,
पंच जिए जिया दस।
दसहा उ जिणित्ताणं
सव्व सत्तू जिणामहं॥

नमस्कार महामंत्र के सतत स्मरण से इन्द्रिय विषयों का आकर्षण और कषाय का प्रभाव मंद होने लगता है। नमस्कार चिंतामणि में कहा है—श्री अर्हत् भगवान की वाणी का स्मरण करने से अथवा नमो अरहंताणं का जप करने से शब्द नामक विषय को जीतने की शक्ति मिलती है। सिद्ध भगवान के शाश्वत रूप के ध्यान से अर्थात् णमो सिद्धाणं के जप से रूप नामक विषय पर विजय प्राप्त होती है। णमो आयरियाणं के जप से अर्थात् आचार्यों के पंचाचार की परिमल के प्रभाव से गंध नामक विषय को जीतने की क्षमता उजागर होने लगती है। णमो उवज्झायाणं के जप से अर्थात् ज्ञानामृत के रसास्वादन में रत उपाध्यायों की शक्ति से रस नामक विषयनिरस्त होता है। अध्यात्म साधना में तल्लीन मुनि के चरण स्पर्श अर्थात् 'णमो लोए सव्व साहूणं' पद्य के जप से स्पर्श नामक विषय को जीतने का सामर्थ्य प्रकट होता है। इस प्रकार पंच परमेष्ठी के जप से इन्द्रिय विषयों का

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आकर्षण क्रमशः कम होता चला जाता है। यह इन्द्रियों की विजय ही संकल्प शक्ति का ठोस आधार बनती है। संकल्प को प्राणवान बनाती है।

प्रयोग

1. दो कान, दो आंखें, नाक के दो छिद्र और एक मुँह–इन सात छिद्रों को सात अंगुलियों से ढ़ककर 'णमो अरहंताणं' का जप करें। इससे दिव्य नाद, दिव्य घंटारव, दिव्य संगीत, दिव्य रूप, दिव्य गंध, दिव्य रस का अनुभव होता है।[7]

2. पंच पदों को पांच इन्द्रियों से युक्त करना[8]–

1. णमो अरहंतांण–कानों से अर्हत् की ध्वनि को सुनने का अभ्यास। दिव्य श्रवण की शक्ति का विकास।
2. णमो सिद्धाणं–सिद्ध आत्मा सौन्दर्य से परिपूर्ण है। उन्हें आँखों का विषय बनायें। दर्शन शक्ति का विकास।
3. णमो आयरियाणं–आचार्य के पंचाचार से पवित्र देह से सुगंध फैलती है। नाक का विषय बनाये। दिव्य सुरभि का विकास।
4. णमो उवज्झायाणं–स्वाध्याय रस अमृत है। उपाध्याय उसके प्रतीक है। स्वादेन्द्रिय का विषय बनाये।
5. णमो लोए सव्व साहूणं–स्पर्श के प्रतीक। भाव स्पर्श का अनुभव करने से द्रव्य स्पर्श की लालसा टूट जाती है।

3. तन की शक्ति का विकास

प्राणी की प्राणशक्ति का मूल स्रोत है–तैजस शरीर और स्वास्थ्य का मूल स्रोत है–प्राण शक्ति का विकास। वह स्थूल शरीर, श्वास, इन्द्रिय, मन और वचन को संचालित करती है। शरीरशास्त्रीय दृष्टि से हमारे शरीर में मुख्य दो चीजें हैं–विद्युत और रसायन। ये दो ही हमारे सारे व्यक्तित्व का संचालन कर रहे हैं। विद्युत/प्राण शक्ति/वाइटल एनर्जी जब कम हो जाती है, व्यक्ति बीमार रहने लगता है।

मंत्र का संबंध हमारे स्थूल शरीर से प्रारंभ होता है और मंत्र की शक्ति पहुँचती है हमारे तैजस शरीर तक। तैजस शरीर को सक्रिय बनाना यह मंत्र का मुख्य कार्य होता है। जैन आचार्यों ने स्वास्थ्य के लिए दो मंत्रों का चुनाव किया– णमो लोए सव्व साहूणं और सव्व साहूणं–इन दोनों का स्थान है–शक्ति केन्द्र। हमारे शरीर में शक्ति के तीन विशेष केन्द्र माने गये हैं–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. रीढ़ की हड्डी का निचला हिस्सा।
2. नाभि का भाग।
3. कण्ठ का भाग।

णमो लोए सव्व साहूणं के स्थान का चुनाव भी वह केन्द्र किया गया है, जो शक्ति का सबसे बड़ा भण्डार है। हम भोजन करते हैं, उससे प्राण शक्ति का निर्माण होता है। लीवर, तिल्ली, पेन्क्रियाज, आमाशय, पक्वाशय, छोटी-बड़ी आँतें, नाभि-केन्द्र के आस-पास—यहाँ शक्ति का निर्माण होता है और उसका भण्डार होता है—रीढ़ की हड्डी के निचले सिरे में। यहाँ से इसका वितरण और उपयोग होता है।

णमो लोए सव्व साहूणं का शक्ति केन्द्र पर जप करने से शारीरिक शक्ति सुरक्षित और विकसित होती है। तन का संबंध आरोग्य के साथ जुड़ा हुआ है। आरोग्य अर्थात् शरीर, मन व भाव की प्रसन्नता। लोगस्स की पाटी में सिद्ध भगवान से आरोग्य की प्रार्थना की गई है। सिद्ध हमें आरोग्य नहीं देते, उनको हम आरोग्य का निमित्त बनाते हैं, आरोग्य उपलब्ध हो जाता है। आसींद के एक भाई ने आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के दर्शन किये। उसने बताया—मुम्बई स्थित अमुक भाई को कैंसर की व्याधि से पीड़ित होने पर मानसिक समाधि हेतु 'आरोग्ग बोहिलाभं समाहिवरमुत्तमं दिंतु' का जप एक साध्वीश्रीजी ने बताया। वह ठीक हो गया। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की दृष्टि में यह मंत्र शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक बीमारियों के लिए अचूक औषधि है।

सचमुच महामंत्र की मंगल ध्वनि में व्याधि शमन की अपूर्व क्षमता है। इसके जप से ग्रंथि तंत्र के स्राव प्रभावित होते हैं। उन स्रावों से नाड़ी तंत्र प्रभावित होता है। नाड़ी तंत्र समूचे शरीर पर प्रभाव डालता है परिणामत: शरीर और मन का स्वास्थ्य स्वत: अनुकूल और निरुज होने लगता है। शरीर और मन की स्वस्थता में तन की शक्ति पुष्ट होती है। इसलिए कहा गया है कि नमस्कार महामंत्र तन की शक्ति को सुरक्षित और पुष्ट बनाने का बहुत बड़ा आलंबन बनता है। बशर्ते की हमारी आस्था इतनी दृढ़ हो कि आराध्य में हमें संदेह या शंका रहे ही नहीं।

4. मन की शक्ति का विकास

धन रक्षा हेतु तिजोरी, तन रक्षा हेतु वस्त्र की उपयोगिता के समान मन की सुरक्षा के लिए नमस्कार महामंत्र का महत्त्व व उपयोग त्रिकाल सिद्ध है। मनोनुशासन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

के लिए नमस्कार महामंत्र अंकुश सदृश है। इस महामंत्र में गहरी एकाग्रता सधने से हमारे भीतर विद्यमान ज्ञान, शक्ति व आनन्द के स्रोत खुलने लगते हैं। इन स्रोतों के खुलने से चित्त की निर्मलता बढ़ती है। चित्त की निर्मलता में शरीर स्थित ऊर्जा-कणों का संतुलन व ऊर्ध्वारोहण होता है। जब ऊर्जा ऊपर के केन्द्रों में जाती है तो व्यक्ति महान बनता है। परोपकारी व सदाचारी बनता है। शक्ति-सम्पन्न और आचरण सम्पन्न बनता है। उसमें सहिष्णुता, विनम्रता, गंभीरता, ईमानदारी, सत्य-निष्ठा आदि गुणों का आविर्भाव होता है। ये गुण व्यक्ति के मनोबल का निर्माण करते हैं। जप से आत्मगुणों का उपवृहंण होता है। इसी प्रतिध्वनि को निम्न श्लोक में दर्शाया गया है—

मन: प्रहर्षणं शौच मौनं मंत्रार्थचिंतनम्।
अव्यग्रत्वमनिर्वेदो जपसम्पति हैतव:॥ [10]

इसमें जप के छ: हेतुओं का उल्लेख किया गया है—1. प्रसन्न मन, 2. पवित्रता, 3. मौन, 4. मंत्रार्थ चिंतन, 5. चित्त की एकाग्रता, 6. अरवेद (चिंता से दूर)।

प्रयोग—णमो आयरियाणं के साथ बैंगनी और पीले रंग का ध्यान विशुद्धि केन्द्र पर करने से मनोबल का आविर्भाव होता है। वाग्विभूति सम्पन्न आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का कहना है कि 'णमो आयरियाणं' में वे सारी शक्तियां हैं, जिससे मस्तिष्क का संतुलन, मस्तिष्क का विकास होता है।[11]

5. भावनात्मक शक्ति का विकास

शुद्ध भावधारा में तन्मय बनकर महामंत्र का जप करने से, उन ध्वनि तरंगों के प्रकंपनों के द्वारा अन्त:करण में ऊर्जा का विस्फोट होता है, जिसके प्रभाव से हमारी आध्यात्मिक शक्तियां जाग जाती हैं। आध्यात्मिक शक्तियों के जागृत होने पर शरीर के भिन्न-भिन्न चेतना-केन्द्र शक्तिशाली और ज्योतिर्मय होकर रोग, शोक, चिंता आदि भावनात्मक दोषों को नष्ट कर देते हैं।

शत्रुता के भावों से शरीर स्थित श्वेत कणों का संतुलन बिगड़ता है। श्वेत-कणों का असंतुलन रोग-प्रतिरोधक क्षमता को कम करता है। प्रतिरोधक क्षमता की न्यूनता से ईर्ष्या, क्रोध, घृणा आदि विकृतियां पनपती हैं। उपरोक्त भावनात्मक समस्याओं के समाधान का महत्त्वपूर्ण सेतु है—'णमो लोए सव्व साहूणं' पद। यह मंत्र पद जहां एक ओर स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने का मंत्र है, वहीं शत्रुता के भावों को कम करने में भी इस महामंत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. आध्यात्मिक शक्तियों का विकास

महान् सृजनशिल्पी आचार्यश्री तुलसी ने अध्यात्म पदावली में लिखा है—

जैसे जैसे जागता आध्यात्मिक चैतन्य।
वैसे वैसे देखता मानव मात्र अनन्य॥

जैसे-जैसे आध्यात्मिक चैतन्य का जागरण होता है, वैसे-वैसे मानव मन में एकत्व की अनुभूति प्रखर होती जाती है। एकत्व की अनुभूति में बाधक तत्त्व है—राग-द्वेष के प्रकंपन। आध्यात्मिक चेतना के जागरण में वे प्रकंपन कम हो जाते हैं और समत्व का विकास होने लगता है। समत्व की आँख से देखने वाला व्यक्ति मनुष्य मात्र में अपना दर्शन करता है।

अध्यात्म के आलोक में आन्तरिक सौन्दर्य निखरता है। इस आध्यात्मिक चेतना की जागृति के लिए तैजस शरीर को जागृत कर प्रभावित करना अनिवार्य हो जाता है। मंत्र भी अवचेतन मन तक पहुँचकर ही वीर्यवान व शक्तिशाली बनता है। सूर्य की किरणें वर्ण द्वारा जो प्रभाव दिखाती हैं, उससे अधिक प्रभाव महामंत्र की ध्वनि में अन्तर्निहित है। इस पवित्र मंत्र का एक-एक ध्वनि प्रकंपन भावना के प्रकंपनों के साथ मिलकर तैजस और कार्मण दोनों शरीरों को प्रभावित करता है। जिसकी निष्पत्तियां निम्न रूप में उपलब्ध होती हैं—

1. विकारों का बहिर्गमन,
2. भीतरी रसायनों में परिवर्तन,
3. कष्ट सहिष्णुता का विकास,
4. चित्त की निर्मलता,
5. रोग मुक्ति,
6. कषाय उपशांति,
7. आकांक्षा, मिथ्यादृष्टि, प्रमाद आदि संक्लेशों का निरसन।
8. आध्यात्मिक शक्तियों का जागरण—अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान, जाति स्मरणज्ञान, केवलज्ञान की प्राप्ति।

शक्ति जागरण अनुष्ठान[12] (युग प्रधान आचार्यश्री तुलसी द्वारा निर्दिष्ट)

विधि—

स्थान—एकान्त, स्वच्छ, साधना के अनुकूल।

आसन—खद्दर या ऊन का। काष्ट पट् का उपयोग भी विहित है।

वस्त्र—स्वच्छ सादे (सामायिक की वेशभूषा)।

दिशा—पूर्वाभिमुख या उत्तराभिमुख।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मुद्रा–पद्मासन, वज्रासन, सुखासन आदि।

प्रारंभ–ॐ अर्हम्, वंदे गुरुवरम्–इस घोष के साथ

संकल्प–

✼ मैं स्वस्थ, आत्मस्थ और सबल बनूँ।

✼ मुझ में आध्यात्मिक शक्ति का जागरण हो, आनन्द की अभिवृद्धि हो।

✼ सब स्वस्थ, आत्मस्थ और सबल बनें।

✼ सबमें आध्यात्मिक शक्ति का जागरण हो।

✼ आनन्द की अभिवृद्धि हो।

साधना–

✼ ब्रह्मचर्य का पालन।

✼ आवेश, आलोचना आदि वृत्तियों का निवारण।

✼ मैत्री, प्रमोद, मृदुता आदि का सलक्ष्य अभ्यास।

✼ कंद मूल का वर्जन।

✼ तले हुए तथा गरिष्ठ पदार्थों का वर्जन।

✼ इक्कीस द्रव्यों से अधिक का वर्जन।

क्रम–

✼ अनुष्ठान में नमस्कार महामंत्र का जप।

✼ जप की संख्या सवा लाख।

✼ दैनिक जप की संख्या समान रहे।

✼ माला सफेदसूत या रूद्राक्ष के अतिरिक्त न हो।

✼ जप के समय माला का स्पर्श जमीन से न हो।

✼ मेरु का लंघन न हो।

✼ हाथ के पेरवों पर भी जप किया जा सकता है।

निष्कर्ष

नमस्कार महामंत्र में 'नमः' इस बीजमंत्र के द्वारा हमारी अन्तस्थ कषाएं, क्रोधादि आवेग शांत होकर अन्तर्शुद्धि करते हैं। य र ल व स ह ण आदि अक्षरों की पुनरावृत्ति मंत्र की शक्ति को और अधिक विशिष्ट बनाती है। इसी कारण यह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्र शक्तिशाली बन जाता है। 'य' ध्यान साधक प्रिय वस्तु में सहायक शांतिदाता है। 'र' अग्निबीज कर्म साधक समस्त प्रधान बीजों का जनक है। 'व' सिद्धिदाता, रोगहर्त्ता, कष्ट स्तम्भक, भूतादि बाधा निवारक और बुद्धि बीज है। 'स' समस्त इच्छित फलदाता, पौष्टिक कर्मों में उपयोगी, आत्म-दर्शक आदि है। 'ह' आत्म साधना में अत्यन्त उपयोगी, शांति, पुष्टि, मंगलकारक है। 'ण' शक्ति स्फोटक तथा शांति सूचक है। इसी प्रकार अन्य अक्षर भी हमारी अन्त:चेतना के उद्‌बोधन में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसकी साधना या पुन:-पुन: जप के द्वारा मनुष्य सहज ही संकल्प-शक्ति, आत्म-शक्ति तथा अन्य अनेक शक्तियों का प्रकटीकरण कर लेता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आरोग्य, सौभाग्य आदि अनेक प्रकार के भौतिक व आध्यात्मिक लाभ देने वाला यह महामंत्र अक्षय शक्ति का स्रोत है। इस महामंत्र से अनुस्यूत भाव इतने सशक्त और समर्थ होते हैं कि स्त्व्य को पूर्णतया प्रभावित कर देते हैं। जिस प्रकार पारस लोहे को सोना बना देता है, उसी प्रकार नमस्कार महामंत्र का मंगल रूप पारस जिसके अन्त:करण का स्पर्श करता है, उसकी सुप्त शक्तियों को जागृत कर उसे पूर्ण मंगलरूप सिद्ध स्वरूप में स्थापित कर देता है।

सन्दर्भ–

1. एकला चलो रे, पृ. 259
2. बहुआयामी महामंत्र णमोक्कार, पृ. 26
3. नमस्कार म्हात्म्य
4. एकला चलो रे, पृ. 258
5. वही, पृ. 258
6. वही, पृ. 263
7. एसो पंच णमोक्कारो, पृ. 119
8. वही, पृ. 120
9. एकला चलो रे, पृ. 264
10. महामंत्र, पृ. 117
11. एकला चलो रे, पृ. 264
12. नमस्कार महामंत्र की प्रभावक कथाएं, पृ. 152.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. नमस्कार महामंत्र और जप

ध्येय के साथ एक रस होने की एक प्रक्रिया है—जप।

आत्म-विकास की एक साधना का नाम है—जप।

प्राण-शक्ति के विकास का एक प्रयोग है—जप।

शब्दों की चामत्कारिक संयोजना की पुनरावृत्ति है—जप।

'जप' शब्द में निहित दोनों अक्षर एक विशेष अर्थ का बोध देते हैं। ''जकारो जन्म विच्छेदक: पकारो पाप नाशक:'' अर्थात् 'ज' का तात्पर्य जन्म-मरण का विच्छेद और 'प' का अर्थ है—पाप का नाश। मंत्र के पुनरुच्चारण अथवा जप से एक प्रकार की विद्युत शक्ति पैदा होती है, जिसमें पाप कर्मों के निष्कासन की अद्‌भुत क्षमता विद्यमान है। शरीर, विद्या और आयु का क्रमश: विकास होता है, वैसे ही जप का भी क्रमश: विकास होता है। यह विकास साधक की साधना और तन्यमता पर निर्भर है। उच्चारण जप, मंद जप, मौन जप, मानसिक जप, सूक्ष्म जप—इन सब में विविध प्रकार के स्पन्दन होते हैं। इन्हीं स्पन्दनों के आधार पर ही विविध प्रकार की फलश्रुतियां परिलक्षित होती हैं। नमस्कार महामंत्र की साधना मुख्यत: तीन प्रकार से की जाती है—

1. जप साधना—कर्म निर्जरा और आत्मशुद्धि हेतु।
2. ध्यान साधना—आत्म शक्ति जगाने एवं आत्मानंद की प्राप्ति हेतु।
3. मंत्र साधना—मनोवांछित उचित कार्य की सिद्धि के लिए।

उपरोक्त तीनों साधनाओं में मुख्य रूप से तीन शक्तियां काम करती हैं—

1. मंत्र रूप शब्दों की शक्ति,
2. मनस्—संकल्प शक्ति।
3. भगवद्-शक्ति (पंच-परमेष्ठी की शक्ति)।

सामान्यत: जप के तीन प्रकार हैं—1. भाष्य, 2. उपांशु, 3. मानस।

ये तीनों प्रकार के जप उत्तरोत्तर श्रेष्ठ हैं। साधक के लिए पहली स्टेज पर भाष्य जप फिर उपांशु तत्पश्चात् मानस जप करना लाभदायी है।

1. भाष्य जप— ''यस्तु परै: स भाष्य:'' जिसे दूसरे सुन सके वह भाष्य है। अर्थात् होठ हिलाकर स्पष्ट उच्चारण रूप बैखरी वाणी से मंत्र का जप करना

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भाष्य जप की श्रेणी में है। यह जप मधुर स्वर से ध्वनि श्रवण पूर्वक बोलकर करना चाहिए। भाष्य जप से चित्त नीरव व शांत बनता है। वचन प्रधान होने के कारण इसे 'वाचिक-जप' भी कहा जाता है।

2. उपांशु जप—भाष्य जप सिद्ध होने के पश्चात् मध्यमा वाणी से जो जप किया जाता है, उसे उपांशु जप कहते हैं। ''उपांशुस्तु परैरश्रूयमाणोऽन्तर्जल्परूप:''। दूसरा न सुन सके ऐसा परन्तु अन्दर से रटन रूप हो वह जप उपांशु जप की कक्षा में आता है। इसमें होठ, जीभ आदि का व्यापार तो प्रारंभ रहता है परन्तु प्रकट आवाज नहीं होती। इस प्रकार के जप में वचन निवृत्ति एवं काया की प्रवृत्ति प्रधान रहती है।

3. मानस जप—उपांशु जप की सिद्धि के पश्चात् ''हृदय गता पश्यन्ति वाणी'' से जप करना मानस्-जप कहलाता है। ''मानसो मनोमात्र वृत्तिनिर्वृत: स्वसंवेध:'' मानस जप उसे कहा जाता है, जो मात्र मन की वृत्तियों द्वारा ही होता है। साधक स्वयं ही उसका अनुभव कर सकता है। इस जप में वचन व काया की निवृत्ति तथा मन की प्रवृत्ति चालू रहती है। जब यह जप सिद्ध हो जाता है, तब नाभि गता परावाणी से जप किया जाये, उसे अजपाजप कहते हैं।

दृढ़ अभ्यास होने से इस जप में चिन्तन बिना भी मन में निरन्तर अपने इष्ट मंत्र का रटन होता रहता है। इस जप में साधक को अनिर्वर्चनीय सुख की अनुभूति होने लगती है। इस अवस्था तक पहुँचने पर कवि हृदय की निम्नोक्त पंक्तियां साकार हो उठती हैं—

तू क्या समझेगा बुत साज़, ये पर्दे की बात है।
तराशा जिसको थी पहले से वो तस्वीर पत्थर में॥

नमस्कार महामंत्र के जप से विकार, विभाव या षट् रिपुओं (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, माया) को, किंवा चार घाती कर्मों को दूर कर परमात्म स्वरूप को निखारा जाता है अथवा आत्मा परमात्मा बन जाता है। परमात्मा या ईश्वर कोई अलग शक्ति नहीं। वह आत्मा का ही निखरा हुआ रूप है, जो हर आत्मा में विद्यमान है।

नमस्कार महामंत्र जप और महत्त्व

नमस्कार महामंत्र के एक-एक अक्षर अथवा एक-एक पद का जप भी अत्यधिक फलदायी है। जप में शब्द, अर्थ और मन—तीनों की शुद्धि अनिवार्य रूप से अपेक्षित है। ''अमृत प्लावन'' यह आचार्यश्री महाप्रज्ञजी द्वारा निर्दिष्ट एक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विशेष प्रयोग है। मंत्र वर्णों का न्यास करने के बाद चिंतन करें कि मस्तिष्क से चार अंगुल ऊपर के भाग में अमृत का स्राव हो रहा है। अमृत की उर्मियां शरीर के प्रत्येक अवयव को आप्लावित कर रही है। शरीर अमृतमय हो रहा है। विजातीय तत्त्व बाहर निकल रहे हैं। आनन्द का वातावरण बन रहा है। मंत्र के इष्ट का अवतरण हो रहा है। उसकी शक्ति शरीर में संक्रान्त हो रही है।

इसकी साधना के लिए चार बज़े से सूर्योदय तक का समय अधिक उपयुक्त है। इस समय जप साधना करने से गामा-एमिनो, ब्युटरिक एसिड, सेरोटोनीन, न्यूरोइन्टीबिटरी आदि शांति प्रदान करने वाले न्यूरोट्रांसमीटर निर्मित होते हैं, जो साधक को आनन्द से सराबोर कर देते हैं।

रामामंडी (पंजाब) की बहन कलावती की दीर्घ तपस्याओं के साथ-साथ ध्यान और जप के आँकड़े रोमांच पैदा करने वाले हैं। एक सौ एक दिनों की तपस्या में रात्री भर पूरी-पूरी रात खड़े-खड़े ध्यान करना हमारी समझ से परे की बात है, पर आँखों देखा सच है। नमस्कार महामंत्र तो उस बहिन का सिद्ध मंत्र था। तपस्या में प्राय: अहोरात्र महामंत्र का जप स्थिरतापूर्वक करना कलावती के लिए बहुत आसान था। एक बार दिल्ली में आचार्यश्री तुलसी और युवाचार्यश्री महाप्रज्ञजी के सान्निध्य में शिविर का आयोजन चल रहा था। विपश्यना के शिक्षक गोयंकाजी साधकों को प्रशिक्षण दे रहे थे। उनके पास में एक विदेशी यंत्र था, जिससे ध्यान की गहराई का पता लगाया जा सकता था। उस शिविर में 200 साधक थे। कलावती बहन भी थी। यंत्र से ध्यान की एकाग्रता का परीक्षण किया गया। कलावती बहिन का परीक्षण सधी हुई योगिनी के रूप में प्राप्त हुआ। यंत्र से देखने पर पता चला कि पूरा नमस्कार महामंत्र बहिन के मस्तक पर अंकित था। उसे साक्षात् पढ़कर सभी साधक विस्मित थे। प्रतिदिन चार घंटे का ध्यान तो उसके जीवन का अनिवार्य अंग था। बहिन ने एक साथ 72 घंटे का ध्यान कर सबको आश्चर्याभिभूत कर दिया।

नमस्कार महामंत्र आत्म-सिद्धि का मंत्र है। इस महामंत्र से निश्रित अनेकों मंत्रों की जप-विधियां आत्मसिद्धि की साधना हेतु उपलब्ध हैं—

1. बीस अक्षरी जप

''ॐ अरिहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय साहूणं नम:।''

नित्य त्रिसंध्या-स्वरूप चिंतनपूर्वक एक माला जपने से आत्मशुद्धि होती है। आत्मसिद्धि के लिए यह मंत्र मोक्ष की सीढ़ी के समान है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. सोलह अक्षरी जप (षोडशाक्षरी विद्या)

''ॐ अ सि आयरिय उवज्झाय साहूणं नमः''।[1]

रात्रि के प्रथम प्रहर में एक माला जपने से आत्म-जागरण होता है। मन-वचन व काय योग में दृढ़ता आती है। वाक्सिद्धि प्राप्त होती है। आनंद-केन्द्र पर इस मंत्र का जप अत्यन्त लाभकारी माना गया है।

3. पन्द्रह अक्षरी जप (पंचदशाक्षरी विद्या)

''ॐ अरिहंत सिद्ध सयोगी केवली स्वाहा।''[2]

''मुक्ति सौख्यप्रदा ध्यायेद्विद्यां पंचदशाक्षरम्'' मुक्ति का सुख प्रदान करने वाली पन्द्रह अक्षरों की विद्या का ध्यान करना चाहिए।

4. तेरह अक्षरी जप (त्रयोदशाक्षर विद्या)

''ॐ ह्राँ ह्रीँ ह्रूँ ह्रौँ ह्रः अ सि आ उ सा नमः।''

विद्या प्रवाद नामक पूर्वश्रुत से उद्धृत की हुई पंचवर्णात्मक पंच-तत्त्व-विद्या का अगर सतत् अभ्यास किया जाये तो वह समस्त भाव-क्लेश को दूर कर देती है। योग शास्त्र में इस विद्या का वर्णन करते हुए लिखा है—

पंचवर्णमयी पंचतत्त्वा विद्योद्धृता श्रुतात्।
अभ्यस्यमाना सततं भवक्लेशं निरस्यति॥[3]

5. आठ अक्षरी जप (अष्टाक्षरी विद्या)

''ॐ णमो अरिहंताणं''

यह अष्टाक्षरी विधा भाव शुद्धि तथा अभय की साधना के लिए जपी जाती है।

6. सात अक्षरी जप (सप्त वर्ण मंत्र)

''णमो अरहंताणं''

यदीच्छेद भगवदावाग्नेः समुच्छेदं क्षणादपि।
स्मरेत्तदाऽऽदि-मंत्रस्य वर्ण सप्तकमादिकम्॥[4]

जो संसार रूप दावानल को क्षणभर में शांत करना चाहता है, उसे आदि मंत्र के प्रारंभ के सात अक्षरों का अर्थात् णमो अरहंताणं का स्मरण करना चाहिए। इस सप्ताक्षरी मंत्र से अपूर्णता समाप्त होती है तथा अनंत की अनुभूति होती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. छः अक्षरी जप

''अरिहंत-सिद्ध''। ''अरिहंत सि सा''। ''ॐ नमः सिद्धेभ्यः''। ''नमोऽर्हत्सिद्धेभ्यः''।

उपरोक्त छः वर्णों का जप सुदृढ़ सुरक्षा कवच के साथ-साथ पवित्र वातावरण को निर्मित करता है।

8. पाँच अक्षरों का मंत्र

''अ सि आ उ सा''। ''णमो सिद्धाणं''। ''ॐ अर्हम् नमः''।

''पंच वर्ण समरेन्मंत्रं कर्म निर्घातकं तथा''।[5]

आठ कर्मों का नाश करने के लिए पंच-वर्ण, पांच अक्षर वाले मंत्र का जप करना चाहिए। ''ॐ अर्हम् नमः'' मंत्र के जप से लब्धि एवं दिव्य दर्शन का आनन्द मिलता है।

9. चार अक्षरों का मंत्र

''अरिहंत''। ''अ सि सा हू''।

एकाग्रता, प्रतिरोधक क्षमता, श्रुत ज्ञान के विकास में इन मंत्रों की अहं भूमिका है।

10. दो अक्षरों का मंत्र

''ॐ ह्रीं''। ''सिद्धा''। ''अ सि''।

उपरोक्त मंत्रों की एक माला प्रतिदिन जपने से मंगल-भावना का विकास होता है अर्थात् आस-पास का वातावरण मंगलमय बन जाता है।

11. एकाक्षरी मंत्र

''ॐ'' ''अ'' ''सि''

अ वर्ण का पांच सौ जप करने वाले को एक उपवास का फल होता है।

12. वर्ण–मालाञ्चित मंत्र

''ओं नमो अर्हते केवलिने परमयोगिने विस्फुदुरु–शुक्ल ध्यानाग्नि–निर्दग्ध कर्म–बीजाय प्राप्तानन्त–चतुष्टयाय सौम्याय शान्ताय मंगल–वरदाय अष्टादश–दोषरहिताय स्वाहा''।

वर्णमालाञ्चितं मंत्रं ध्यायेत् सर्वाभयप्रदम्॥[6]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सब प्रकार का अभय प्राप्त करने के लिए वर्णों की श्रेणी वाले मंत्र का जप (ध्यान) करना चाहिए।

12. सर्वज्ञाभ मंत्र

''ॐ ह्रीँ श्रीं अर्हं नमः''।

''सर्वज्ञाभं स्मरेन्मंत्रं सर्वज्ञान–प्रकाशकं''।[7]

सम्पूर्ण ज्ञान को प्रकाशित करने वाले सर्वज्ञाभ मंत्र का स्मरण करना चाहिए।

जप के पाँच प्रकार

शास्त्रों में जप के पाँच प्रकार बताते हुए कहा है–

शब्दाज्ञापान्मौनस्तस्मात् सार्थस्ततोऽपि चित्तस्थ।
श्रेयामिह यदिवाऽऽवात्म–धयेयैक्यं जाप स्र्वस्वम्॥

अर्थात् शब्द जाप की अपेक्षा मौन जप, मौन जप की अपेक्षा सार्थ जप, सार्थ जप की अपेक्षा चित्तस्थ जप और चित्तस्थ जप की अपेक्षा ध्येयैक्य जप अच्छा है, क्योंकि वह जप का सर्वस्व है।

1. शब्द जप (भाष्य जप)

2. मौन जप (उपांशु जप)

3. सार्थ जप–अर्थ सहित जप–अर्थ को ध्यान में रखकर जप करना।

अर्थ चिंतन की प्रक्रिया–

'णमो अरहंताणं' पद बोलते ही अपने मन में समवसरण में विराजमान चतुर्मुख से मालकोश राग में, बारह प्रकार की परिषद्–भवनपति, व्यन्तर, ज्योतिष, वैमानिक ये चार जाति के देव और देवियां, मनुष्य, मनुष्य स्त्री, तिर्यंच, तिर्यंचाणी के सामने मेघ ध्वनि सदृश गंभीर घोष से देशना देते हुए श्री अरिहंत भगवान का चित्र खड़ा हो जाए तो वह सार्थ जप कहलाता है।

केवल उच्चारण के द्वारा जो विद्युत तरंगें उत्पन्न होती है, उनसे प्राण शक्ति का कुछ विकास हो सकता है पर जप के समय अर्हत् की परिणति और परिणाम होना चाहिए वह नहीं हो पाता। इसलिए इस महामंत्र का अर्थ बराबर जान लेने का प्रयास करना अपेक्षित है। अत: अनेक दृष्टियों से अनेक स्थलों पर नमस्कार महामंत्र का अर्थ और भावार्थ समझाने का प्रयास किया है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

'णमो सिद्धाणं' पद बोलते ही लोक के अग्र भाग पर शुद्ध स्फटिक समान पैंतालीस लाख योजन की सिद्धशिला और उस पर विराजमान निरंजन, निराकार, वीतराग, सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, सर्वशक्तिमान ऐसे अनंत सिद्ध भगवंतों का साक्षात्कार होना चाहिए।

'णमो आयरियाणं' पद बोलते ही पंचाचार से विभूषित आचार्य का चित्र सामने खड़ा हो जाना चाहिए।

'णमो उवज्झायाणं' पद बोलते ही श्रुत के पारगामी उपाध्याय के स्वरूप का चिंतन साकार होना चाहिए।

'णमो लोए सव्व साहूणं' पद बोलते ही शांत, दांत, गंभीर, धीर, स्व-पर कल्याण की साधना करने वाले साधु का स्वरूप सामने रहना चाहिए।

'एसोपंचणमुक्कारो' इत्यादि चूलिका के पद बोलते ही चिन्तन होना चाहिए—पंच नमस्कार से मेरे पापों का नाश हो रहा है, मुझे उत्कृष्ट मंगल की प्राप्ति हो रही है।

इस प्रकार 'सार्थ-जप' से चित्त की चंचलता कम होकर एकाग्रता बढ़ेगी और आनन्द की भी अभिवृद्धि होगी।

4. चित्तस्थ जप (मानस् जप)

5. ध्येयैकत्व जप— ध्येयैकत्व अर्थात् आत्मा और परमात्मा की एकता। आत्मा ध्याता है। परमात्मा या परमेष्ठी ध्येय है। ध्याता और ध्येय के भेद को मिटाकर जब ध्याता ध्येय रूप परमेष्ठी के साथ एकमेक (तन्मय) बन जाता है तब वह जप सिद्ध हुआ कहा जाता है। जप का अंतिम रहस्य भी यही है, इसलिए इस जप को सर्वस्व कहा जाता है।

योग जनित प्रतिभा ज्ञान के बल से महापुरुषों ने स्तोत्र की अपेक्षा जप को कोटि गुणा लाभकारी बताया है। जप से आभ्यन्तर परिणामों की विशेष रूप से शुद्धि होती है। जप ध्यान की भूमिका भी मानी जाती है। ध्यान पर पुन: आरूढ़ होने के लिए भी जप का आलंबन बहुत उपयोगी होता है।

जप के तेरह प्रकार

नमस्कार महामंत्र की साधना में मुख्य वस्तु जाप है। जप से सिद्धि होती है। इसमें जरा भी संशय नहीं। यह शास्त्र वचन है। जैसा कि कहा गया है—''जपात्सिद्धि जपात्सिद्धि-र्न संशय:''। जप के विषय में विविध प्रकार की

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जानकारी अपेक्षित है, जिससे भिन्न-भिन्न प्रकृति वाले साधक अपनी-अपनी भूमिका के अनुसार जप का जो प्रकार ठीक लगे, उसे अपनाकर अपनी प्रगति कर सकता है। नमस्कार चिंतामणि में जप के तेरह प्रकारों का उल्लेख करते हुए कहा गया है–

रेचकपूरक: कुंभा: गुणत्रयं स्थिरकृति स्मृति हक्का।
नादोध्यानं ध्येयैकत्वं, तत्वं च जपभेदा:॥[8]

1. रेचक जप : श्वास छोड़ते समय जप करना।

2. पूरक जप : श्वास भरते समय जप करना।

3. कुंभक जप : श्वास रोकते हुए जप करना।

4. सात्विक जप : शांति कार्यों के लिए किया गया जप। कलिकाल सर्वज्ञ श्री हेमचन्द्र ने योगशास्त्र में लिखा है–ॐ अर्हम्, महामंत्र नवकार, चन्देसु निम्मलयरा जैसे पवित्र मंत्रों का जप भावों को निर्मल बनाकर सात्विक व्यक्तित्व का निर्माण करता है। तन-मन को स्वस्थ बनाता है।

5. राजसिक जप : राजसिक कार्यों के लिए किया गया जप।

6. तामसिक जप : तामसिक कार्यों के लिए किया गया जप।

नोट–राजसिक और तामसिक जप मुमुक्षुओं के लिए करणीय नहीं है।

7. स्थिरकृति जप–विघ्न बाधाओं के उपस्थित होने पर भी स्थिरता पूर्वक किया जाने वाला जप।

8. स्मृति जप : दृष्टि को भ्रू-मध्य स्थिर कर किया जाने वाला जप।

9. हक्का जप : श्वास के पूरक व रेचक के समय 'हकार' का विलक्षणता पूर्वक उच्चारण करते रहना हक्का जप कहलाता है।

10. नाद जप : जप करते समय मन में भ्रमर की तरह गुंजार की आवाज हो वह नाद जप कहलाता है।

11. ध्यान जप : मंत्र पदों का वर्णादिपूर्वक ध्यान करना।

12. ध्येयैकत्व जप : ध्याता और ध्येय की तन्यमता।

13. तत्त्व जप : पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश–इन पांच तत्त्वों के अनुसार जप करना।

जप के इन प्रकारों में ध्यान योग और स्वरोदय दोनों का समावेश हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शास्त्रोक्त मंत्रों के प्रकार

मंत्र साहित्य में मुख्यत: नौ प्रकार के मंत्रों का उल्लेख किया गया है, उनमें केवल अंतिम दो प्रकार के मंत्र ऐसे हैं, जो आत्मशांति और आत्मसिद्धि में सहायक हैं।

1. स्तंभन मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि प्रकंपनों से भूत-प्रेत जनित उपसर्ग और हिंसक जीव-जंतुओं के आक्रमण को रोका जाता है।

2. मोहन मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि प्रकंपनों के द्वारा किसी व्यक्ति को सम्मोहित (अपने अधीन) किया जाता है।

3. उच्चाटन मंत्र–जिन मंत्राक्षरों के तीव्र घर्षण से किसी को अशांत, पदच्युत और भांति-भांति की शारीरिक यातनाएं पहुँचाई जाती हैं।

4. वशीकरण मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि प्रकंपनों के द्वारा किसी को अपने वश में किया जाता है और अपने निकट बुलाकर स्वेच्छा से अपना कार्य सम्पन्न कराया जाता है।

5. जृंभन मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि प्रकंपनों के द्वारा भूत-प्रेत जैसी आसुरी शक्तियां भयभीत हो उठती हैं।

6. विद्वेषण मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि प्रकंपनों द्वारा परिवार, जाति-प्रांत तथाा राष्ट्रीय चेतना में विक्षोभ उत्पन्न कर दिया जाता है।

7. मारण मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनि के संघर्षण द्वारा दूरस्थ शत्रु को प्राणदण्ड रूप यातनाएं दी जाती हैं।

8. शांति मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनियों के द्वारा शारीरिक, मानसिक एवं दैविक बाधाओं का निवारण तथा अन्य आगन्तुक कष्टों को उपशांत किया जाता है।

9. पौष्टिक मंत्र–जिन मंत्र-ध्वनियों के द्वारा आत्मशांति, विद्या, लक्ष्मी एवं संतान जैसी भौतिक अभिसिद्धियां प्राप्त होती हैं।

मंत्र साधक का दृष्टिकोण अत्यन्त स्पष्ट और पवित्र होना चाहिए। साधक का दृष्टिकोण यदि आत्मलक्षी नहीं है तो वह मंत्र, मंत्र साधक को सब कुछ देकर भी आत्मशांति का वरदान नहीं दे सकता। जो स्वार्थ सिद्ध, परोपघात तथा वशीकरण, मरण, उच्चटन जैसी दूषित भावना से मंत्रों का जप प्रयोग करता है, वह निश्चित रूप से अपना पतन करता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र किसी का अनिष्ट नहीं करता। सबका हित साधक है। यह महामंत्र इतना शक्तिशाली और महाप्रभावी मंत्र है कि जो साधक श्रद्धा पूर्वक इस महामंत्र को जपता है, उसके समक्ष मंत्र, तंत्र, स्तंभन, वशीकरण, मारण, उच्चाटन आदि शक्तियां प्रभावहीन होकर निष्फल बन जाती हैं। इसके प्रभाव से जपकर्त्ता का अपराजेय पौरुष जागृत हो जाता है।

प्रसंग विक्रम संवत् 2035 का है। एक युवक अपनी दुकान पर बैठा था। तीन अन्य युवक भी उसके पास बैठे हुए थे। उन्होंने देखा कि एक छ: फीट लम्बा बाबा, जिसकी लाल बड़ी-बड़ी आँखें थी, उनकी दुकान की तरफ आ रहा था। जिसके हाथ में त्रिशूल, गले में रुद्राक्ष की मालाएं धारण की हुई थी। दूर से देखते ही डरावना चेहरा लग रहा था। बाबाजी दुकान के आगे आकर खड़े हो गये। बाबाजी ने मंत्र बोलना शुरू कर दिया। वह युवक घबरा गया। इधर-उधर दौड़ने की जगह थी नहीं। वह शांत भाव से नमस्कार महामंत्र जपने लगा। उस युवक के पास आसन्न तीनों व्यक्ति बीमार हो गये पर महामंत्र के प्रभाव से उस युवक पर कोई प्रतिक्रिया नहीं हुई।

बाबाजी उस युवक के सामने पाँच मिनट वशीकरण मंत्र के साथ अपलक देखते रहे। पर वह युवक मन ही मन दृढ़ निष्ठा के साथ इस महामंत्र को जपता रहा। फिर बाबा ने अपना मौन खोलते हुए कहा—बच्चा! कोई विद्या जानता है क्या? युवक साहस करके बोला—नहीं बाबाजी मैं कोई विद्या नहीं जानता। बाबाजी तत्काल बोले—तू झूठ बोलता है। अभी तू जो मंत्र बोल रहा है, उसके कारण मेरी वशीकरण विद्या निष्फल हो रही है। बाबा ने फिर प्रश्न किया—क्या तुम्हारी शादी हो गई? अब उस युवक में हिम्मत आ गई? वह बोला—बाबा! आप अपनी विद्या से बताएं कि मेरी शादी हुई या नहीं। बाबाजी बोले—नहीं, अभी तुम्हारी शादी नहीं हुई है। परन्तु पन्द्रह दिनों के भीतर तुम्हारी शादी हो जायेगी। इस वर्ष शादी की बात नहीं थी इसलिए युवक ने सोचा बाबाजी झूठ बोल रहे हैं।

बाबाजी ने उस युवक को सौ से एक सौ दस के बीच की संख्या को सोचने के लिए कहा। उसने एक सौ पांच की संख्या सोची। दूसरे ही क्षण बाबा ने कागज पर लिख दिया एक सौ पाँच। यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ। बाबा ने दुकान से जाते-जाते कहा—बेटा! तेरा मंत्र जोरदार है। मेरे इतने वर्ष की साधना चमत्कार नहीं दिखा सकी तुम्हारे मंत्र के महाप्रभाव के कारण। खैर मैं अभी जाता

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हूँ पर छ: महीने बाद वापस आऊँगा। वह बाबा वहां से चला गया पर आज तक वापस नहीं आया। बाबा के कथनानुसार पन्द्रह दिनों में उसकी शादी हो गई। इस घटना के दौरान युवक की श्रद्धा को बल मिला और वह महामंत्र का उपासक बन गया।

महामंत्र की साधना से होने वाली फलश्रुतियां

1. सामान्य फल

साधना के क्रम प्रमाण से साधना करने से शारीरिक रोग आदि उत्पन्न नहीं होते और उत्पन्न रोग आदि दोषों का नाश होता है।

2. मध्यम फल

महामंत्र की साधना का बल बढ़ने से जगत के प्राणियों के प्रति मैत्री भाव बढ़ता है। साधक का अन्त:करण और विचार पवित्र बनते हैं। वचन आदरणीय होता है। शुभ भावों की वृद्धि होती है।

3. उत्तम फल

महामंत्र की साधना की परिपक्वता के प्रभाव से अपूर्व आत्मिक आनन्द का अनुभव होता है। मन की प्रफुल्लता बढ़ती है। विनम्रता व संतोष वृत्ति का विकास होता है। काम, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष आदि क्लेशकारी भाव निर्बल होते हैं। धीरता, उदारता, गंभीरता आदि आत्मिक गुणों का विकास होता है।

4. उत्तमोत्तम फल

इस संसार में यदि कोई सर्वोत्तम फल है तो वह एक ही है—विश्व कल्याण की परमोच्च भावना। पंचपरमेष्ठी की साधना से इस श्रेष्ठ फल को प्राप्त किया जा सकता है। पंच-परमेष्ठी की साधना साधक को परमेष्ठी बनाती है। सर्वश्रेष्ठ जगत पूज्य बनाती है और क्रमश: नरेन्द्र, इन्द्र, अहमिन्द्र आदि पदों का स्पर्श कराती हुई सर्वकर्म मुक्त बनाकर पारलौकिक सर्वश्रेष्ठ फल—सिद्धिपद प्राप्त कराती है।

दैनिक चर्या : महामंत्र जप

श्रावक चर्या संबंधी ग्रंथों को पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि श्रावक का

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रत्येक दैनिक कार्य इस महामंत्र से प्रारंभ होना चाहिए। इन कार्यों की व्यापक सूची निम्न प्रकार से समझी जा सकती है—

1. शय्या त्यागने के तुरन्त बाद महामंत्र स्मृति—पांच बार।
2. स्नानादि आवश्यक क्रियाओं की सम्पन्नता के बाद एकान्त में पूर्ण माला जप।
3. सामायिक पाठ बोलने से पूर्व एवं पश्चात् नमस्कार महामंत्र जप—पांच बार।
4. प्रवचन, शास्त्राध्ययन तथा किसी भी प्रकार के स्वाध्याय के पूर्व महामंत्र का अनुष्ठान—पांच बार।
5. नमस्कार महामंत्र के उच्चारण से प्रतिक्रमण का प्रारंभ। प्रतिक्रमण के मध्य निर्विघ्न कार्य समाप्ति के लिए अनेकों बार महामंत्र का उच्चारण।
6. प्रत्येक प्रकार का धार्मिक अनुष्ठान तथा आत्मावलोकन की क्रियाओं के साथ महामंत्र का अनिवार्य योग।
7. महामंत्र मंत्रोच्चारण से अनशन का प्रत्याख्यान।
8. त्रिसंध्या में पांच-पांच बार महामंत्र का जप।
9. रात्री शय्या पर जाने के पश्चात् शयन से पूर्व पांच बार महामंत्र का जप।
10. कायोत्सर्ग की परिसमाप्ति पर महामंत्र का उच्चारण।
11. किसी भी प्रत्याख्यान की समाप्ति पर पांच बार नमस्कार महामंत्र का जप। जैसे—नवकारसी, प्रहर, उपवास आदि।
12. पौषध प्रारंभ करने से पूर्व तथा पौषध परिसम्पन्न करने के पश्चात् पांच बार नमस्कार महामंत्र का जप।
13. भोजन से पूर्व पांच बार नमस्कार महामंत्र का जप।
14. मुनि अपने स्थान से बाहर जाकर वापस आने का कायोत्सर्ग (चउविसत्थव) करता है, उसे नमस्कार महामंत्र द्वारा सम्पन्न किया जाता है।
15. मुनि के लिए सुबह प्रतिक्रमण से पूर्व, सायं प्रतिक्रमण के पश्चात्, सुबह प्रतिलेखन के पश्चात् एवं सायं प्रतिलेखन से पूर्व पांच-पांच बार नमस्कार महामंत्र जपने का विधान है।
16. आगम प्रवचन एवं आगम वाचन से पूर्व महामंत्र स्मरण।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विशेष प्रसंगों पर महामंत्र जप

जीवन का मार्ग कठिनाइयों भरा मार्ग है। इस मार्ग की निर्विघ्नता के लिए साधना पथ का राही कुछ ऐसे प्रभावक सूत्रों का आलंबन लेता है, जिसके सहारे वह अनेक कार्यों में सानंद सफलता वरण कर सकें। तत्त्वत: अपनी पवित्र, मंगलमय और सबल आस्था ही सफलता का मूल हेतु है।

जैन ग्रंथ 'आचार-दिनकर' के अनुसार प्रत्येक लौकिक आचार, सामाजिक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का शुभारंभ किसी एक पवित्र अनुष्ठान से होना चाहिए और उस अनुष्ठान का प्रारंभ नमस्कार महामंत्र और तीर्थंकर स्तुति पूर्वक होना चाहिए। यथा—

1. यात्रा, विदाई तथा स्वागत (प्रवेश) के समय महामंत्र जप—पांच बार।

2. जन्म, मृत्यु तथा विवाह से संबंधित सभी संस्कारों के समापन और शुभारंभ में महामंत्र जप किया जाना चाहिए।

3. स्कूल प्रवेश तथा अन्य शैक्षणिक कार्य का प्रारंभ महामंत्र जप से हो।

4. मकान प्रवेश, भवन-निर्माण, दुकान का मुहूर्त तथा इसी प्रकार के सभी कार्यों से पूर्व सविधि महामंत्र का जाप।

5. मानसिक चिंता, संकट, तीव्र कलह, कोर्ट कचहरी और वियोग जैसे प्रसंगों पर आत्मविश्वास बनाये रखने के लिए महामंत्र का अनुष्ठान पूर्वक जप करना आवश्यक है।

नोट—इन सभी कार्यों से पूर्व नमस्कार महामंत्र, मंगल-स्तोत्र तथा शांतिपाठ का जप—इन तीनों का एक साथ योग होना विशेष लाभप्रद माना गया है।

निष्कर्ष

अपनी श्रद्धा और आस्था का मूल मंत्र है—नमस्कार महामंत्र। हजारों-हजारों जैन श्रावक इस मंत्र को प्रतिदिन जपे बिना मुँह में पानी तक नहीं लेते। मंत्र-जप के अनेक उद्देश्य हो सकते हैं, उनमें एक है—लोकैषणा। रेशम का कीड़ा अपनी लार से जाल बुनता है और उसमें विनष्ट हो जाता है। लोकैषणा का जाल बनाने वाला जपकर्त्ता लोकैषणाओं में उलझकर विनष्ट हो जाता है। महामंत्र जप का सर्वोत्तम उद्देश्य होना चाहिए—भावशुद्धि, कषायमुक्ति। पद्म सम निर्लेप साधक जर (धन), जौरू (स्त्री), जमीन, जागिरी की जहरीली झाड़ियों में उलझता नहीं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। वह वीतराग बनने की प्रक्रिया के तहत् चित्त की निर्मलता, सूर्य-सी तेजस्विता, सागर सी गंभीरता और सिद्धि की पवित्र भावना करता है। मैत्री, प्रमोद, कारुण्य, मध्यस्थ भावना से स्वयं को भावित करता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि भाष्य, उपांशु और मानस् आदि जप के भिन्न-भिन्न परिणाम हैं। बाह्य परिणाम में भाष्य जप से उत्पन्न ध्वनि तरंगों से शरीर की व्याधियां समाप्त होती हैं। ग्रंथि प्रभाव के अनुसार भाष्य जप में पिच्युटरी ग्रंथि से नौ रस बिन्दुओं का स्राव होता है। उपांशु जप से बारह रस बिन्दुओं का तथा मानस् जप से सोलह रस बिन्दुओं का स्राव होता है।

आन्तरिक परिणाम के अनुसार भाष्य जप से यथाप्रवृत्तिकरण, उपांशु जप से अपूर्व करण और मानस् जप से अनिवृत्तिकरण, ग्रंथिभेद और अपूर्व आत्मदर्शन उपलब्ध होता है।

नि:संदेह नमस्कार महामंत्र में अचिन्त्य शक्ति छिपी हुई है। परन्तु उसका प्रकटीकरण तो उसके विधिपूर्वक जप से ही हो सकता है। इस महामंत्र का जप अत्यन्त ही श्रद्धापूर्वक होना चाहिए।

सन्दर्भ—

1. योगशास्त्र, अष्टम प्रकरण, गाथा-38, पृ. 239
2. वही, 8/43/241
3. वही, 8/41/240
4. वही, 8/45/242
5. वही, 8/46/242
6. वही, 8/46/242
7. वही, 8/43/241
8. नमस्कार चिंतामणि

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. नमस्कार महामंत्र और योग (1)

जीवन के विकास क्रम का प्रारंभ भोजन, वस्त्र, उपकरण, परिवार, सम्मान, शांति तथा समाधि की चाह से तथा पूर्णता समाधि, शांति, सम्मान की प्राप्ति से होती है। तन की स्फूर्ति भी मनोबल और चेतना की निर्मलता में ही निहित है। नमस्कार महामंत्र की आराधना व्यक्ति को तेजस्वी, सक्रिय तथा दीर्घ जीवन के साथ-साथ सूक्ष्म जीवन तत्त्व से तादात्म्य स्थापित कराके आत्मानुभूति का आभास कराती है। जिसका परिणाम है—पवित्रता, चिर यौवन, कार्यक्षमताओं का विस्तार, सुख, शांति और आनन्दपूर्ण मन:स्थिति की प्राप्ति।

दु:खों का मूल कारण है—अपवित्र विचार, अस्वस्थ मन और वैकारिक मन। ये मलिन विचार जहां एक ओर शरीर की तेजस्विता व कांति का क्षय करते हैं, वहीं दूसरी ओर व्यक्ति की भाषा और उसके आचरण, व्यवहार दोनों को भी विकृत बनाते हैं। नमस्कार महामंत्र का एकाग्रता पूर्वक जप करने से शरीर और मन दोनों इतने सबल और प्राणवान बन जाते हैं कि रोगाणु तथा अन्य दूषित विकार हमारी चेतना के पास आने का साहस ही नहीं कर सकते। इस पवित्र मंत्र की आराधना रोगी, भोगी व योगी सबके लिए परमावश्यक तथा उपयोगी है।

नमस्कार महामंत्र और योग दोनों का अन्योन्याश्रय संबंध है। दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। योग द्वारा इस महामंत्र की समुचित साधना की जा सकती है तो दूसरी तरफ नमस्कार महामंत्र की उत्कृष्ट साधना साधक को योगाभ्यासी बनाती है। इसी तथ्य को नमस्कार महामंत्र के केवल 'णमो' पद से ही समझा जा सकता है, जो विशिष्ट रहस्यार्थों को लिए हुए हैं।

इस महामंत्र में णमो पद छ: बार प्रयुक्त हुआ है। पांच बार पांच पदों के साथ और एक बार 'एसोपंचणमुक्कारो' पद में। इन छओं पदों में णमो शब्द का विशिष्ट-विशिष्ट अर्थ प्रतिभाषित होता है।

प्रथम 'णमो अरहंताणं' में 'णमो' पद का प्रयोग 'विशुद्ध मन का नियोजन' इस रूप में हुआ है। इसका अर्थ है—जप करने वाला साधक अपने विशुद्ध मन को मंत्र में लगाता है। इसके द्वारा साधक को अचिन्त्य शक्ति प्राप्त होती है।

दूसरे 'णमो सिद्धाणं' में 'णमो' पद का रहस्यार्थ है—मन का शुद्ध प्रणिधान अथवा मन की एकाग्रता। इस एकाग्रता से ही साधक को सिद्धि की प्राप्ति होती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तीसरे 'णमो आयरियाणं' में प्रयुक्त 'णमो' पद से विषय-कषायों से निवृत्ति होती है। आत्मानुशासन बढ़ता है। आचार-विचारों की शुद्धि होती है।

चौथे 'णमो उवज्झायाणं' में प्रयुक्त 'णमो' पद मनोनिग्रह का सूचक है। यह सांसारिक विषयों में दौड़ते हुए मन की गति को अवरुद्ध करता है। मन को प्रपंच और अन्य विषयों से हटाकर आत्मिक ज्ञान-विज्ञान की ओर उन्मुख करता है।

पांचवे 'णमो लोए सव्व साहूणं' में प्रयुक्त 'णमो' पद पूर्ण रूप से समर्पण भाव का द्योतक है। जब ज्ञान-विज्ञान में मन की प्रवृत्ति रम जाती है, तो वह शांत और स्थिर हो जाती है। उसमें संकल्प-विकल्प नहीं उठते, सब विकार उपशांत हो जाते हैं।

छठा 'एसो पंचणमुकारो' में प्रयुक्त 'णमो' पद श्रद्धा, बहुमान तथा प्रमोद भावना की अभिव्यक्ति करता है। उपशांत चित्त वाले साधक की श्रद्धा भक्ति सुदृढ़ हो जाती है। वह अपने आराध्य देव, गुरु के प्रति पूर्ण समर्पित हो जाता है। उनका बहुमान करता है। उनके गुणों के प्रति उसके हृदय में प्रमोद भावना मुखर हो उठती है।

इस प्रकार नमस्कार महामंत्र और योग का संबंध नितांत विज्ञेय है। जैसे कमल के विकास में सूर्य निमित्त कारण होता है, वैसे ही आत्मा के विकास में अरिहंत, सिद्ध आदि पांच पद निमित्त बनते हैं। उनके स्मरण से विचार पवित्र होते हैं, असत् संकल्प नष्ट होते हैं, सत् संकल्प बलशाली बनते हैं, साहस और शक्ति का संचार होता है, हृदय में एक प्रकार की प्रसन्नता और प्रफुल्लता हिलोरें लेती हैं। हमें अपने आत्म-स्वरूप का अहसास होता है और तब हमारे पूर्वबद्ध कर्म इस प्रकार छिन्न-भिन्न होने लगते हैं, जैसे—नागपाश में बंधे हनुमान ने अपने बंधनों को छिन्न-भिन्न कर डाला था। उसे यह भान हो गया कि मैं अतुल बली हूँ, इन बंधनों को तोड़ सकता हूँ। नमस्कार महामंत्र के स्मरण से आत्मा में भी इसी प्रकार का स्वात्म बोध जागृत होता है।

योग : शब्द मीमांसा

योग शब्द की मीमांसा अनेक अर्थों में विमर्शनीय है। गणितीय दृष्टि से योग का अर्थ जोड़ (+) है। भारतीय साहित्य में योग शब्द का प्रयोग संबंध, नियति, साधना आदि अनेक अर्थों में प्रयुक्त होता है। योग शब्द का सामान्य या साधारण अर्थ आसन (योगासन) से भी लिया जाता है। जैनदर्शन में योग को परिभाषित

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

करते हुए कहा गया है—''काय वाङ्मनोव्यापारो योग:'' अर्थात् मन, वचन व काया की प्रवृत्ति ही योग कहलाती है। वह शुभ और अशुभ दोनों प्रकार की होने से इसे शुभ योग और अशुभ योग की संज्ञा दी जाती है। पातंजल दर्शनानुसार योग चित्त-वृत्ति का निरोध तथा एकाग्रता ही है। जैन आगमों में प्रयुक्त 'योगवहन' शब्द भावना-योग, संवर ध्यान योग, निर्जरा योग के रूप में प्रचलित है। जैन साधना पद्धति में इन तीनों योगों की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। ''झाणकोढोवगए'' ध्यान कोष्ठ में चले जाने का अर्थ है—चित्त कोष्ठ का निर्माण कर देना।

आत्मा का उत्कर्ष साधना एवं विकास-योग (उत्कृष्ट ध्यान) के सामर्थ्य पर अवलंबित है। योग बल से केवल-ज्ञान की प्राप्ति होती है। पूर्ण अहिंसा शक्ति या शील की प्राप्ति द्वारा संचित कर्म मल दूर कर निर्वाण प्राप्त किया जाता है। साधारण ऋद्धियां सिद्धियां तो उत्कृष्ट ध्यान करने वालों के चरणों में लौटती हैं। योग साधना करने वालों को शरीर, मन पर अधिकार प्राप्त हो जाता है। महाप्राण व संवर ध्यान की प्रक्रिया आनापान को सूक्ष्म करने की प्रक्रिया है। इस प्रक्रिया को करने वाला श्वास प्रक्रिया को इतनी सूक्ष्मता से कर लेता है कि इसका सूक्ष्म अनुभव करने वाला अन्तमुहूर्त्त में चौदह पूर्वों (विशाल ज्ञान राशि) का स्मरण कर सकता है।

आचार्यश्री तुलसी ने व्यवहार बोध में सात प्रकार के ध्रुव योगों का उल्लेख करते हुए लिखा है—

प्रतिक्रमण प्रतिलेखन अर्हत् वंदना,
योगासन स्वाध्याय ध्यान अभिवंदना।
अथवा कायोत्सर्ग नियत जप योग हो,
ये सातों ध्रुवयोग अमल उपयोग हो॥

यहां ध्रुवयोग का अर्थ निश्चित रूप से करणीय अनुष्ठान के रूप में प्रयुक्त हुआ है। ये ध्रुवयोग आध्यात्मिक आभामंडल का निर्माण कर सद्-संस्कारों का विकास करते हैं। ये ध्रुवयोग एक ओर हृदय परिवर्तन के वाहक, चिर-चैतन्य शक्ति के आवाहक हैं, वहीं दूसरी ओर समता, न्याय, शांतिसंवर्धक, प्रेम, एकता और जागृति के सर्जक भी हैं। कर्त्तव्यों के परिपालन का स्वर भी इनसे मुखर होता है।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि योग साधना की अनेक शाखाएं हैं, जैसे—हठयोग, राजयोग, ध्यान-योग, मंत्रयोग, अनशन-योग, श्वासदर्शन योग, लय योग, प्रतिमा योग, व्युत्सर्ग योग आदि। साधना के साथ योग शब्द का

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रयोग चित्तवृत्ति के निरोध और एकाग्रता के रूप में प्रयुक्त होता है। जैन आगमों में चित्तवृत्ति का निरोध करने के लिए योग का वर्णन किया गया है। मनीषियों का कथन है कि चित्तवृत्तियों का निरोध कर लेने पर व्यक्ति को शांति प्राप्त हो सकती है। इस दृष्टि से नमस्कार महामंत्र और योग का परस्पर जो अन्योन्याश्रय संबंध है, उसको पृथक् नहीं किया जा सकता, क्योंकि एकाग्रता के बिना मंत्र का उच्चारण सारहीन हो जाता है। संत कबीर की पंक्तियों में इस सत्य को खोजा जा सकता है–

माला तो कर में फिरे, जीभ फिरे मुख मांय।
मनवा तो दश दिशि फिरे, यह तो सुमरिन नांय॥

वर्तमान वैज्ञानिक युग में इलेक्ट्रोड और विद्युत तरंगों के द्वारा रसायनों का संतुलन किया जा रहा है, पर योग-योगासन, ध्यान, प्राणायाम, कायोत्सर्ग, दीर्घकालिक मौन व मंत्र-जप से वे रसायन स्वत: संतुलित रहते हैं। इनके विधिवत् सतत् अभ्यास से चित्त पर जमे कुसंस्कार, वैमनस्य, वासनाएं, प्रमाद, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि का मल दूर हो जाता है। चित्त शुद्धि के अभाव में परमात्मा का अवतरण भी असंभव है। अत: योग अन्दर की शांति, स्थिरता और आनन्द का उपक्रम है। योग जोड़ता है साधारण से असाधारण को, खण्ड से अखण्ड को, चित्त से चेतना को और चेतना से सुपर चेतना को।

जप योग को शक्तिशाली बनाने की प्रक्रिया

इस पवित्र मंत्र की आराधना से मानव की चेतना शक्तिशाली बनती है। चेतना के शक्तिशाली बनने से पवित्र विचारों का विकास, ऊर्जा में अभिवृद्धि, आभामंडल की पवित्रता और तैजस शरीर की सक्रियता बढ़ती है। तैजस शरीर की जितनी सक्रियता बढ़ती है, उतनी ही अधिक मात्रा में वह शक्ति उत्पन्न करता है और व्यक्ति शक्तिशाली बन जाता है। नमस्कार महामंत्र की जपाकार तरंगें तैजस शरीर को शक्तिशाली बनाती हैं पर अपेक्षा है इस जप को मनोमय भूमिका में पहुँचाया जाये। इस प्रक्रिया को हृदय जप, रहस्य जप और गूढ़ जप भी कहा जाता है। जब वह मानसिक उच्चारण बन जाता है तब उसे आगे प्राण स्तर पर प्राणमय बनाया जाये। वहां पहुँचने पर उसमें असीम शक्ति पैदा होती है। अत: यह स्पष्ट है कि विचारों का सर्जन जहां व्यक्तित्व का निर्माण करता है, वहां विचारों का विसर्जन अस्तित्व का निर्माण करता है। नमस्कार महामंत्र की साधना विचारों के पार सर्जन की स्थिति तैयार करके साधक को आत्म-दर्शन का साक्षात्कार कराती है और शरीर को शक्ति प्रदान करती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विद्युत शरीर के शक्तिशाली बने बिना साहसी और तेजस्वी व्यक्तित्व की कल्पना व्यर्थ है। इस वैज्ञानिक युग में हम देख ही रहे हैं कि जब तक बिजली का करंट तारों में पूर्ण रूप से प्रवाहित नहीं होता है तब तक बल्ब नहीं जल सकता और जलेगा तो भी प्रकाश मंद होगा। ठीक इसी प्रकार साहस के लिए जितनी ऊर्जा चाहिए, उतनी ऊर्जा के अभाव में मंद प्रकाश की तरह साहस और तैजस भी स्वल्प मात्रा में प्रकट हो पाता है। महामंत्र की आराधना से विद्युत शरीर शक्तिशाली बनता है। शक्तिशाली विद्युत शरीर साहस और तैजस योग्य ऊर्जा का उत्पादन एवं ऊर्ध्वारोहण करने में समर्थ है।

जप को शक्तिशाली और पूर्ण प्रभावी बनाने के लिए चार बिन्दु मुख्य रूप से मननीय है—रंग, शब्द, उच्चारण और मन का योग।

रंग

णमो अरहंताणं का जप करते समय हमारे मस्तिष्क में श्वेत रंग का चिंतन, ध्यान होगा तो उससे अधिक लाभ होगा। इसी प्रकार पांचों पदों को अपने-अपने रंगों के ध्यान से जपा जाये। केवल वर्ण (रंग) ही नहीं प्रत्येक अक्षर के साथ वर्ण, गंध, रस, स्पर्श और संस्थान—ये पांच बातें संयुक्त होती हैं। मातृका विवेक में अकार के संबंध में कहा है—''अकार सर्व देवों वाला है, रक्त वर्ण वाला है, सबको वश में करने वाला है।'' स्पर्श संज्ञा वाले 'क' से 'य' पर्यन्त अक्षर विद्रुम के समान वर्ण वाले हैं। 'य' से 'क्ष' तक पीत वर्ण वाले हैं किन्तु एक 'क्ष' अरुण वर्ण का है।

कुछ लोगों का ऐसा मत है कि सभी वर्ण शुक्ल वर्ण वाले होते हैं। प्रत्येक वर्ण का एक-एक मंत्र माना गया है। इसलिए इनका अलग-अलग ऋषि, छंद, देवता आदि होने का उल्लेख 'शारदा तिलक तंत्र पदार्थादर्श टीका' में है। तंत्र में कहा है—'न विद्या मातृका परा' मातृका से परे और कोई विद्या नहीं है। महादेवी के रूप में उसकी वंदना की गई है, मंत्रों की माता के समान परमेश्वरी माना गया है। जैन साहित्य में भी मातृकाओं के ध्यान की चर्चा उपलब्ध है। आचार्य शुभचन्द्र ने ज्ञानार्णव में कहा है—

ध्यायेदनादि सिद्धान्त प्रसिद्धां वर्णमातृकाम्।
नि:शेष शब्द विन्यास जन्मभूमिं जगन्नुताम्॥

अनादि सिद्धान्त में प्रसिद्ध मात्रिका—स्वर और व्यंजन का चिंतन करें, क्योंकि यह वर्ण मातृका सम्पूर्ण शब्द विन्यास की जन्मभूमि और विश्ववंदनीय

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। मातृका का ध्यान करने वाला पुरुष नाभिमंडल पर स्थित सोलह कमल के दल में प्रत्येक दल पर क्रम से फिरती हुई स्वर लहरी का अर्थात् अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः इन स्वरों का चिंतन करें। तत्पश्चात् ध्यानी अपने स्थान पर कर्णिका सहित चौबीस पत्रों के कमल का चिंतन करके उसकी कर्णिका तथा पत्रों में क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म—इन पच्चीस अक्षरों का ध्यान करें। तत्पश्चात् आठ पत्रों से विभूषित मुख कमल के प्रत्येक पत्र पर भ्रमण करते हुए य र ल व श ष स ह—इन आठ वर्णों का ध्यान करें।[1]

मातृका ध्यान के फल का वर्णन करते हुए कहा गया है—इस प्रकार प्रसिद्ध वर्ण मातृका का निरन्तर ध्यान करता हुआ योगी भ्रम-रहित होकर श्रुत ज्ञान रूपी समुद्र के पार को प्राप्त हो जाता है। इस प्रकार का ध्यान करने वाला मुनि श्रुत केवली हो सकता है।[2]

ध्यान करने वाला पुरुष कमल के पत्र और कर्णिका के मध्य में अनादि संसिद्ध (पूर्वोक्त 49) अक्षरों का ध्यान करता हुआ कितने ही काल में नष्टादि वस्तु संबंधी ज्ञान को प्राप्त करता है। इस वर्ण मातृका के जाप से योगी क्षय रोग, अग्नि मंदता, कुष्ट, उदर रोग, कास तथा श्वास आदि रोगों पर विजय प्राप्त करता है और वचन सिद्धि तथा महान पुरुषों से पूजा तथा परलोक में उत्तम पुरुषों से प्राप्त की हुई श्रेष्ठ गति को प्राप्त होता है।[3]

वैसे तो सभी वर्ण, बीजाक्षर मंत्र हैं, शक्ति सम्पन्न हैं और प्रयोक्ता को अपनी शक्ति का परिचय देते हैं किन्तु जब वे मंत्र रूप में शब्दों के विशेष वर्ण विन्यास के द्वारा गुंथित हो जाते हैं तब उनकी शक्ति सहस्रगुणित हो जाती है। तंत्र में शक्ति को मंत्र कहा गया है। नमस्कार महामंत्र का वर्ण-विन्यास अपने आप में शक्ति और चमत्कार रूप है। उसका जप रंगों के साथ महामंत्र के स्वल्पाक्षरों की अपरिमित शक्ति को प्रस्फुटित करता है।

शब्द, उच्चारण तथा मन का योग

प्रत्येक शब्द अपनी ध्वनि के प्रकंपन पैदा करता है और उन प्रकंपनों से बाह्य जगत् प्रभावित होता है। रूस और अमेरिका इन दोनों ही देशों ने हजारों मील दूर सागर में निमग्न पनडुब्बी में बैठे व्यक्ति को एवं उपग्रह में जाते व्यक्तियों को टेलीपैथी से विचारों का संदेश भेजने में पर्याप्त सफलता प्राप्त की है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

फ्रांस की महिला वैज्ञानिक फिलनांग ने शब्द विज्ञान पर अद्‌भुत परीक्षण किया और वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि शब्दों के साथ भावों का गहन संबंध है। हृदय शब्द का प्रतिबिम्ब होता है। फिलनांग ने अपने लिए एक वीणा तैयार की और नीचे की ओर तारों के साथ एक चॉक का टुकड़ा बांध दिया। चॉक को एक बोर्ड पर लगा दिया। वीणा को बजाने से चॉक हिलने लगा और बोर्ड पर कुछ अस्पष्ट रेखाएं खींच गईं। उसने अनुभव किया कि जिस तरह गाना गाया जाता है और साज़ बजता है, उसी तरह की आकृतियां बोर्ड पर बन जाती हैं।

एक बार उसने रोमन कैथोलिक मत के अनुयायी को अपना धार्मिक गीत गाने का निमंत्रण दिया। उसके गाने से बोर्ड पर एक स्त्री की गोद में बालक का चित्र उभर आया। वह स्त्री मरियम और बालक ईसा था। गीत में प्रभु ईसा की स्तुति की गई थी। फिलनांग को इस पर भी संतोष नहीं हुआ। उसने वहां पढ़ रहे भारतीय विद्यार्थी को बुलाया और संस्कृत मंत्रों के उच्चारण की प्रार्थना की। विद्यार्थी ने काल भैरवाष्टक के स्तोत्र का संगान किया। उससे एक भयंकर मूर्ति और कुत्ते की रेखाएं अंकित हो गईं। इससे वह इस निष्कर्ष पर पहुँची कि शब्दों का भावों के साथ अन्योन्याश्रय संबंध होता है। यही कारण है कि मंत्रोच्चारण से हृदय और मस्तिष्क विशेष रूप से प्रभावित होते हैं। उनके जप से मानसिक और आध्यात्मिक शक्तियों का उद्‌भव होने लगता है।

आकृति ध्यान

एक साधक ने आचार्यश्री महाप्रज्ञजी से जिज्ञासा की कि नमस्कार महामंत्र का ध्यान ज्ञान-केन्द्र में श्वेत वर्ण के साथ किया जाये तो कैसी आकृति होगी? ''संभव है समाधान'' में इस जिज्ञासा का सुन्दर समाधान प्रस्तुत करते हुए आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने कहा–ज्ञान-केन्द्र में पुरुष की आकृति का ध्यान करना चाहिए। मस्तिष्क में स्फटिकमय निर्मल और स्वच्छ पुरुषाकार की कल्पना की जाए। कल्पना इतनी प्रबल हो कि वह सफेद मूर्ति साक्षात् दिखने लगे। वर्ण के साथ उस पुरुषाकृति की कल्पना को पुष्ट करना चैतन्य जागरण की प्रक्रिया है। आँख से देखना एक बात है और कल्पना का चित्र बनाकर मानसिक आँख से देखना दूसरी बात है। कल्पना का चित्र बनाना, उसको संकल्प से पुष्ट करना और उसे यथार्थ के धरातल तक ले जाना, इस सूत्र को हम याद रखें–कल्पना, संकल्प और यथार्थ।[4]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्रों की आकृतियों का विश्लेषण करते हुए आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने कहा—पुद्गल के चार गुण हैं—वर्ण, गंध, रस, स्पर्श। उसी प्रकार उसका एक लक्षण है—संस्थान। आकार रचना का भी बहुत बड़ा महत्त्व होता है। उसमें आकर्षण की क्षमता पैदा हो जाती है। इसी आधार पर मंत्रों का विकास हुआ। मंत्रों के संस्थान कहें या यंत्र—दोनों एक ही बात है। मंत्र और यंत्र दोनों की विचित्र शक्तियां हैं। भयंकर पीलिया रोग जो दवाइयों से नहीं मिटता वह यंत्र से मिट जाता है। प्रश्न उपस्थित हो सकता है कि यंत्र तो केवल रेखाओं का ढांचा मात्र है। उनसे क्या हो सकता है? रेखाओं में इतनी बड़ी ताकत कहां से आ जाती है। वर्तमान में यह प्रश्न अनुत्तरित नहीं रहा है।

वैज्ञानिकों ने जब मिश्र में पिरामिडों की खोज की तो विचित्र तथ्य सामने आये। ऐसी बातें सामने आईं कि आप उसकी कल्पना तक नहीं कर सकते। आज पाश्चात्य देशों में उनका बहुत प्रचलन हो रहा है। दूध, दही, फल रखने के लिए पिरामिडों के बर्तन काम में लिये जाते हैं। चिकित्सालय भी पिरामिडों के आकार में बने हैं, जिनके परिणाम बहुत अच्छे आये हैं। मन की एकाग्रता के लिए ये पिरामिड बहुत उपयोगी सिद्ध हुए हैं। पिरामिडों में रखा हुआ पानी औषधि के रूप में काम आ रहा है। उससे अनेकों रोगों का शमन होता है। सौर परिवार से जो विकिरण आते हैं, उनको ग्रहण करने में ये पिरामिड उपयोगी हैं। पिरामिडों में रखे शवों में सड़न पैदा नहीं होती। यह उनके आकृति संस्थान की विशेषता है। रेखाओं के विन्यास से शक्ति पैदा होती है। यंत्र इसका प्रमाण है।

इन पिरामिडों की व्याख्या ने मंत्रों की प्राचीन व्याख्या को पुनः प्रासंगिक कर दिया है। आकृतियों में कितनी शक्ति होती है, यह आज रहस्य नहीं रहा। प्रत्येक पुद्गल पुद्गल को आकर्षित करता है। परमाणु परमाणु को आकर्षित करता है। अमुक रचना अमुक प्रकार के परमाणुओं का आकर्षण नहीं करती। विभिन्न प्रकार के आकार विभिन्न प्रकार के परमाणुओं को ग्रहण करते हैं। इस सिद्धान्त के आधार पर मंत्रों के विभिन्न न्यासों का विकास हुआ प्रतीत होता है।

नमस्कार महामंत्र के साथ विभिन्न मंत्रों तथा यंत्रों का विकास हुआ। नमस्कार महामंत्र की व्याख्या जिस प्रकार विभिन्न मंत्रों के साथ की जाती है, वैसे ही विभिन्न यंत्रों के साथ भी की जाती है।[5]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विश्लेषण के निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार गणित

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

में रेखा, बीज और अंक—ये तीन प्रकार हो जाते हैं, उसी प्रकार मंत्र बीज गणित का, तंत्र अंक गणित का और यंत्र रेखा गणित का साम्य सिद्ध करता है।

इस प्रकार मंत्र—रंग, शब्द, उच्चारण और मन का योग मिलने पर अपनी असीम शक्ति के प्रभाव से जपकर्त्ता को प्रभावित करता है अर्थात् इस विधि से जप को शक्तिशाली बनाया जा सकता है। कहा भी है—

जप के लिए अन्तर की भक्ति चाहिए,
तप के लिए तन की शक्ति चाहिए।
योग चित्त की एकाग्रता ही है,
ध्यान के लिए मन की विरक्ति चाहिए॥

सन्दर्भ—

1. ज्ञानार्णव, 38/3, 4, 5
2. ज्ञानार्णव, 38/6
3. ज्ञानार्णव, 38/6
4. संभव है समाधान, पृ. 56
5. संभव है समाधान, पृ. 55

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. नमस्कार महामंत्र और योग (2)

योगोपासना में नाद की उपासना को मुख्य माना गया है। श्वास-प्रश्वास को हंस रूपी प्राण का ही व्यापार माना है। सोऽहं की साधना भी नाद की ही उपासना है। नाद में 'न' का और 'द' अग्नि का सूचक है। और 'आ' संधि का निर्देश करता है। यह नाद सहस्रार से मूलाधार तक व्याप्त है।

प्राण सप्तक विज्ञान में प्राण की जिन सात अवस्थाओं का वर्णन किया गया है, उनमें नाद भी एक है—तैजस, वायु, श्वास, नाद, श्रुति, स्वर और वर्ण। इसी से वर्ण की उत्पत्ति होती है। नाद ही स्वर और वर्ण बन जाता है। तंत्र शास्त्र में नाद, बिन्दु और कला का विकास कमल के रूप में हुआ है, जो शिव और शक्ति का संयोजन है। उसी को उसकी सृष्टि प्रक्रिया माना गया है। नाद और बिन्दु इस सृष्टि प्रक्रिया के मूल तत्त्व हैं। बिन्दु का अर्थ है—इच्छा शक्ति, बीज का अर्थ है—ज्ञान शक्ति और नाद का अर्थ है—क्रियाशक्ति। बीज शक्ति को मोक्षरूपिणी माना गया है। भाषा-विज्ञान के क्षेत्र में नाद का विषय ध्वनि-विज्ञान के क्षेत्र में आ जाता है।

व्यक्ति आत्मिक और आध्यात्मिक शक्ति से भरा हुआ है, जो विभावों के कारण सुप्त बनी रहती है। योग साधना से इस सुप्त शक्ति को जागृत किया जाता है, जिसे कुंडलिनी कहा जाता है। इसी को विभु की संज्ञा भी दी गई है। बैखरी, मध्यमा, पश्यन्ति और परा का उद्गम भी इसी से माना है।

प्राणाचार्य पुस्तक में लिखा है—सारे शब्द और अक्षर, जो नाद ध्वनि मात्र प्रतीत होते हैं, वे एक नाद के मूर्त्त रूप हैं। वह नाद जिसे वक्ता के बिना कोई नहीं सुन सकता। स्थान और प्रयत्न के बिना उच्चरित ध्वनि आहत नाद है। आहत नाद का स्रोत तो अनाहत नाद ही है, जिसे मूल ध्वनि या आत्मनाद कह सकते हैं। धारणा, ध्यान, समाधि का साधन अनाहत नाद है, जिसे सारे रोग दूर हो जाते हैं।

जप विधियां

नमस्कार महामंत्र जैसे शक्तिशाली मंत्र की सम्यक् आराधना के लिए मन, वचन और काय योग को साधना जरूरी है। इन तीनों योगों को साधने हेतु आचार्यों ने मंत्राराधना की कतिपय विधियों का उल्लेख किया है, जिनमें क्रमश: प्रवेश करते हुए योग शक्ति को प्रखर और सूक्ष्म बनाया जा सकता है। महामंत्र की जप विधियां

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संक्षेप में निम्न हैं—

1. माला जप विधि,
2. करमाला अथवा हस्तांगुलि जप विधि,
3. मानसिक जप विधि,
4. मस्तिष्कीय अथवा पटनावर्त्त जप विधि,
5. हृदयकमल जप विधि,
6. अनानुपूर्वी जप विधि।

ये छहों विधियां उत्तरोत्तर महानिर्जरा का कारण है।

1. माला जप विधि

यह सबसे सरल और सीधी विधि है। माला में 108 मणके होते हैं। एक-एक मणके पर एक-एक बार सम्पूर्ण नमस्कार महामंत्र बोला जाता है।

2. कर माला जप विधि

कर माला जप विधि में हाथ की अंगुलियों पर जप किया जाता है। यह जप आवर्त्त विधि से किया जाता है। यह जप विधि माला जप विधि से श्रेष्ठ मानी गई है। इसमें चित्त की एकाग्रता अधिक होती है।

कर माला आवर्त्त विधि— दाहिने हाथ की कनिष्ठा अंगुली के नीचे के पोरवे से जपना प्रारंभ किया जाता है। तत्पश्चात् इसी अंगुली के दूसरे और तीसरे पोरवे पर, फिर चौथा अनामिका के ऊपर का, पांचवां मध्यमा के ऊपर का, छठा तर्जनी के ऊपर का, सातवां तर्जनी के मध्य का, आठवां तर्जनी के नीचे का, नौवां मध्यमा के नीचे का, दसवां अनामिका के नीचे का, ग्यारहवां अनामिका के मध्य का और बारहवां मध्यमा के मध्य का—इस प्रकार बारह पोरवों पर जप किया जाता है। ये बारह जप हुए। इसी प्रकार नौ बार जप करने से एक माला अथवा 108 जप हो जाते हैं। यह साधारण आवर्त्त कहलाता है। इसमें महामंत्र की एक माला का जप नौ आवर्त्तों में होता है। साधारण आवर्त्त के अतिरिक्त शंखावर्त्त, नवपदावर्त्त, ह्रीं आवर्त्त, नंदावर्त्त और ॐ आवर्त्त भी होते हैं।

3. मानसिक जप विधि

मानसिक जप विधि में दंत, ओष्ठ, तालु आदि का हलन-चलन नहीं होता। ये पूर्ण रूप से स्थिर रहते हैं। कण्ठ में अवस्थित ध्वनि-नाड़ियों के प्रयोग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

से जप किया जाता है, इसे उपांशु जप भी कहते हैं। इस जप की विशेषता यह है कि सम्पूर्ण मस्तिष्क, मुख, शिरोभाग में महामंत्र के अक्षरों की स्वर-लहरियां तरंगित हो उठती हैं। साधक को ऐसा अनुभव होता है जैसे रोम छिद्रों से स्वर निकलकर अनंत आकाश में गुंजरित हो रहे हैं और उनकी प्रतिध्वनि लौटकर साधक के कानों में होती हुई हृदय में समा रही है।

इस जप-विधि में एकाग्रता के साथ-साथ ओज, हर्षोल्लास तथा आनंद की प्राप्ति भी साधक को होती है। इस विधि से जप करने का फल साधारण विधि की अपेक्षा अधिक होता है।

4. मस्तिष्कीय जप विधि

मस्तिष्कीय जप विधि को साधारण भाषा में पटनावर्त्त विधि भी कहते हैं। इस विधि में नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों को शरीर अथवा मुख के विभिन्न भागों में स्थापित करके जप किया जाता है। इस जप की दो विधियां हैं।

प्रथम विधि

नमस्कार महामंत्र का प्रथम पद—णमो अरहंतांण ब्रह्मरंध्र में, द्वितीय पद—णमो सिद्धाणं ललाट में, तृतीय पद णमो आयरियाणं चक्षु में, चतुर्थ पद—णमो उवज्झायाणं श्रवण (कान) में, पंचम पद—णमो लोए सव्व साहूणं मुख में स्थापित करके ध्यान करते हुए जप किया जाता है।

द्वितीय विधि

प्रथम पद ब्रह्मरन्ध्र में, दूसरा पद ललाट में, तीसरा पद कण्ठ में, चौथा पद हृदय में, पांचवां पद नाभि कमल में स्थापित करके पंच-परमेष्ठी महामंत्र का जप किया जाता है।

5. हृदय कमल जप विधि

इस विधि में साधक अपने हृदय में आठ पंखुड़ी के एक श्वेत कमल की कल्पना करें। प्रत्येक पंखुड़ी पर पीले रंग के बारह-बारह बिन्दुओं की कल्पना करें तथा मध्य के गोलाकार वृत्त में बारह बिन्दुओं की कल्पना करें। इस प्रकार कुल बिन्दुओं की संख्या एक सौ आठ होती हैं। प्रत्येक बिन्दु पर एक-एक बार मंत्र का जप करता हुआ एक सौ आठ बार मंत्र जप करें।

हृदय-कमल जप विधि का दूसरा तरीका यह है कि साधक हृदय में आठ पंखुड़ियों का एक कमल बनाये। बीच की कर्णिका पर प्रथम पद ''णमो अरहंताणं''

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्थापित करें। उत्तर की ओर (ऊपर) दूसरा पद, पूर्व की ओर तीसरा पद, दक्षिण की पंखुड़ी पर चौथा पद, पश्चिम की पंखुड़ियां जो विदिशाओं में होती हैं, उन पर क्रमश: ''एसो पंचणमुक्कारो, सव्व पावपणासणो, मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवई मंगलं'', इन चार पदों को स्थापित करके सम्पूर्ण नौ पदों का एक सौ आठ बार जप करें।

किन्हीं-किन्हीं आचार्यों के मत से इन अंतिम चार चूलिका पदों के स्थान पर 'णमो नाणस्स, णमो दंसणस्स, णमो चरित्तस्स तथा णमो तवस्स' की स्थापना का निर्देश किया गया है।

इस विधि को नवपद जप विधि भी कहा जाता है। हृदय-कमल जप विधि तथा पटनावर्त्त जप विधि से कर्मों की अनंत गुणी निर्जरा होती है।

6. अनानुपूर्वी जप विधि

नमस्कार महामंत्र के आनुपूर्वी और अनानुपूर्वी अंगों का विस्तार करना प्रस्तार कहलाता है। दूसरे शब्दों में लोम-विलोम क्रम से आनुपूर्वी की संख्या निकालना प्रस्तार है। इस प्रस्तार में नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों का विरलन किया जाता है। इसकी विधि यह है—

नमस्कार महामंत्र के पांच पद है। इन पांचों पदों की क्रम संख्या को परस्पर गुणन करने से जो राशि प्राप्त होती है, वह अनानुपूर्वी कहलाती है। यथा—

$$1 \times 2 \times 3 \times 4 \times 5 = 120$$

इस प्रकार एक अनुपूर्वी में नमस्कार महामंत्र के पांचों पद 120 बार पढ़े जाते हैं। इस विधि की विशेषता यह है कि इसमें नमस्कार महामंत्र के पांचों पद क्रम से नहीं पढ़े जाते। इसी कारण इसे अनानुपूर्वी (अनुक्रम-रहित) कहते हैं। पदों के क्रम में व्यतिक्रम होता है। व्यतिक्रम होने से जप रटन मात्र न रहकर उपयोग-पूर्वक किया जाता हैं इस अपेक्षा से इस जप को महान निर्जरा का कारण माना गया है। चंचल मन की स्थिरता में यह जप अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होता है।

इन उपरोक्त जप विधियों के अतिरिक्त अन्य भी जप विधियां हैं—जैसे नमस्कार महामंत्र के पांचों पदों की पद संख्या को सर्वतोभद्र यंत्र बनाकर जप करना आदि। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बात यही है कि जप उपयोग-पूर्वक करना चाहिए। मन, वचन, काया की शुद्धि और एकाग्रता पूर्वक करना चाहिए। सूरिमंत्र कल्प संदोह के अनुसार जप-विधि—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. चन्द्र नाड़ी द्वारा रेचन, भावना—राग रूप लाल रंग की वायु का रेचन हो रहा है।
2. सूर्य नाड़ी द्वारा रेचन, भावना—द्वेष रूप काले रंग की वायु का रेचन हो रहा है।
3. राग-द्वेष से मुक्त होकर चन्द्र नाड़ी द्वारा पूरक, भावना—शतोगुण रूप श्वेत वायु नाभि में सम्यक् स्थापित हो रहा है।
4. होठ बंद।
5. दांत ऊपर-नीचे अस्पृष्ट।
6. नासाग्र पर दृष्टि।
7. अन्तर्जल्प रूप या अनाहत नाद रूप स्मरण करना।

देवेन्द्र सूरि ने 'कथा-रत्नकोष' में मंत्र स्मरण की विधि का निर्देश निम्न प्रकार से किया है—

1. आंखें निस्पन्द नासाग्र पर दृष्टि।
2. केवल कुंभक।
3. इन्द्रिय प्रत्याहार।
4. अनाहत नाद में लग्न स्मरण करना।
5. प्रत्येक अक्षर को चन्द्रकला से युक्त कर उसमें से झरते अमृत प्रवाह का चिंतन करना।
6. उस अमृत प्रवाह से तीनों लोकों का दु:ख दावानल शांत हो गया है।
7. मंत्राक्षरों का लाखों सूर्यों से भी तेजस्वी चिंतन।
8. मंत्र के प्रभाव से विघ्नकारक भूतादिगण दूर हो गये हैं, चिंतन करें।

मंत्र शास्त्र में तीन प्रकार के करण का उल्लेख है, जो जप की सफलता में सहयोगी है। दिव्यकरण उसमें महत्त्वपूर्ण है। तीन करण—1. कुंभकरण, 2. दिव्यकरण, 3. उर्ध्व रेचन करण।

साधक योग व्यापार और करण से युक्त न हो तो मंत्रोच्चारण का कोई मूल्य नहीं है। करण में रेचन आदि करणों का समावेश होता है।

पूरक पर कुंभक करना। मूल बंधन करना। मूल बंध से समस्त द्वारों का निरोध हो जाता है, उसके बाद ऐसा सोचना कि सुषुम्ना नाड़ी ऊपर बहती है। कुंभक द्वारा अवरुद्ध जो नाड़ियां और ग्रंथियां अधोमुखी थी, वे उर्ध्वमुखी होकर विकसित होने लगती हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कुंभक के बाद दिव्यकरण करना—

1. दिव्य—जिह्वा को तालु में लगाएं, किन्तु एकदम संयोजित न करें—जीभ और तालु के मध्य कुछ अन्तर रहे।

2. मुँह को थोड़ा-सा खुला रखें, होठ दोनों एकदम न सटें।

3. दांत परस्पर मिले हुए न हों।

4. दृष्टि को आँखों में जो ''कीकी'' है, उस पर स्थिर करें।

5. शरीर स्थिर रहे।

पूरक, कुंभक व उध्र्व रेचन द्वारा धीरे-धीरे मंत्रोच्चारण करना। इस उच्चारण के साथ-साथ कुंभित प्राण का धीरे-धीरे रेचन करना।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी जप के लिए निम्नलिखित आवश्यक बातों पर बल देते हैं—जप के साथ चार बातें जुड़ी हुई हैं—पद, रंग, स्थान और श्वास की स्थिति। जैसे—

पद—णमो अरहंताणं

स्थान—सहस्रार चक्र

रंग—श्वेत

श्वास की स्थिति—कुंभक। अंतर कुंभक।

इस प्रकार महामंत्र पांचों पदों के रंग व स्थान अलग-अलग होंगे पर श्वास की स्थिति पांचों में समान है। इस प्रकार प्रत्येक पद के साथ—पद, वर्ण, स्थान और श्वास की स्थिति—ये चारों बातें जुड़ी हुई हैं। इसके साथ हमारे मन का पूरा योग होना चाहिए। मन का योग होने से पांच बातें हो गईं। पांचों का विधिवत् योग होने से जप शक्तिशाली होता है। एक की भी कमी परिणाम में न्यूनता ला देती है।[1]

ध्वनि योग (नाद योग)

वर्तमान युग की भीषणतम समस्याओं में से एक है—तेज ध्वनि। वायुयान की आवाज, यातायात की खड़खड़ाहट, वाहनों का शोर, सैकड़ों ऐसे निमित्त हैं, जिससे भीतरी नाद, ध्वनि दबी जा रही है। घर में पंखा, रेड़ियो, फ्रिज, बर्तनों का घर्षण, टेलीफोन की घंटियां, तेज वार्तालाप, बचों का कोलाहल तथा मानसिक बड़बड़ाहट इस तेज ध्वनि के विकास का कारण बनती है। समाज, सत्संग-भवनों तथा क्लबों में कहीं भी जाएं कोलाहल के बिना कोई स्थान नहीं। नोबेल पुरस्कार विजेता डॉक्टर रोबर्ट ने साठ साल पूर्व यह भविष्यवाणी की थी, ''एक दिन ऐसा आयेगा जब मानव का सुख, शांति और स्वास्थ्य के लिए सबसे बड़ा घातक शत्रु होगा—कोलाहल।''

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिस्थितियों को आमूल-चूल बदलना हमारे हाथ की बात नहीं किन्तु स्वयं के लिए सुरक्षा प्रबंध करना संभव है—वह है कुछ समय के लिए एकांत में बैठना, अपने भीतर उतरना। भीतर उतरने के लिए एक सहारा चाहिए। मंत्र-ध्वनि वह सहारा है, भीतर उतरने के लिए सीढ़ी है, क्योंकि ध्वनि हमारे चारों ओर व्याप्त है। भीतर जाएं तो ध्वनि बाहर आयें तो ध्वनि। पूरा ब्रह्माण्ड ध्वनि से निनादित है। अत: मंत्र ध्वनि की नाव पर बैठकर मंजिल तक पहुँचना संभव ही नहीं, बहुत आसान भी है क्योंकि इस ध्वनि के सहारे ध्वनि के पार भी पहुंचा जा सकता है। जहां कोई भी ध्वनि नहीं है, सब कुछ शांत है। वास्तव में शब्द से बड़ी शक्ति अशब्द में होती है।

किसी ध्यानासन में बैठकर 'ॐ', 'अर्हम्' तथा 'सोऽहं' जैसे मंत्र का जप प्रारंभ करें। श्वास की गति शांत, मन एकाग्र, आँखें कोमलता से मुंदी हुई, अपने चारों ओर गहन शांति का अनुभव करते हुए लंबा, गहरा श्वास भरें। शक्ति केन्द्र से 'ओ' की ध्वनि को उठाते हुए सुषुम्ना में प्राण के प्रकंपनों का अनुभव करते हुए आनंद-केन्द्र तक ले जायें। फिर 'म' का गूंजन करते हुए उसी मार्ग से ज्ञान-केन्द्र सहस्रार-चक्र तक आएं। ध्वनि की मात्रा क्रमश: मंद होती जाये। ध्वनि जितनी सूक्ष्म होगी उतनी ही उसकी बेधकता बढ़ती जायेगी। यही बेधकता चेतना पर जमीं मलिन परतों को हटाने तथा काटने का काम करती है।

ध्वनि योग के लाभ[2]

1. नाड़ी तंत्र प्रभावित होता है।
2. सुषम्ना पर आने वाले प्रभाव से व्यक्तित्व में रूपान्तरण प्रारंभ होता है।
3. अन्तर्यात्रा की संभावनाएं बढ़ती हैं।
4. कुंडलिनी जाग उठती है।

निष्कर्ष

इस सनातन सत्य को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता कि अक्षर अव्यय है। अर्थात् इसका कभी व्यय नहीं होता। कहा गया है कि ''सब नदियों के जल को इकट्ठा कर लो, उन नदियों के जितने बालुकण है, उन्हें इकट्ठा कर लो, दुनियां में जितने समुद्र हैं, उन्हें भी इकट्ठा कर लो, उससे भी अनंत गुना होता है—एक अक्षर का अर्थ। जैसे 'अ' के अनन्त पर्याय है, तो अर्थ भी अनंत ही होंगे। ईशावास्योपनिषद् का निम्नोक्त श्लोक इसका साक्ष्य है—

ॐ पूर्णमद: पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुच्यते।
पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्वमेवावशिष्यते॥[3]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जो पूर्ण है, जिससे उत्पन्न हुआ है, वह भी पूर्ण है। पूर्ण से पूर्ण निकालने पर भी वह पूर्ण कम नहीं होता, प्रत्युत्त जितना है, उतना ही रहता है।

नमस्कार महामंत्र का अर्थ अनंत है। इस महामंत्र का पूर्ण अर्थ पूर्ण पुरुष (वीतराग पुरुष) ही जान सकते हैं, अपूर्ण पुरुष नहीं। नमस्कार महामंत्र और योग–इस संक्षिप्त विश्लेषण के पश्चात् निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि उच्चार्यमान मंत्र मंत्र नहीं है। मंत्र में विद्यमान अनंत एवं अपराजेय आध्यात्मिक शक्ति, परमेष्ठी शक्ति एवं देव शक्ति मंत्र है। महामंत्र मंत्रयोग बनने से विशिष्ट प्रकार की ऊर्जा समुत्पन्न होती है। मंत्र-योग बनने पर मंत्र-जप के समय इष्ट की सन्निधि का अनुभव होने लगता है। नींद में भी जप होने लगता है। शरीर प्रकाशमय दृश्यमान होने लगता है। शरीर में हल्केपन की अनुभूति होने लगती है, जिसकी फलश्रुति होगी–

- प्राण शुद्धि।
- चित्त शुद्धि।
- सत्व शुद्धि।
- इन्द्रिय निग्रह।
- अनादिकालीन मूर्च्छा का विलय।
- पारदर्शी दृष्टि का उद्भव।
- गुप्त शक्तियों का प्रकाशन।
- प्राप्त शक्तियों का संवर्धन।
- क्षीण शक्तियों का पुनर्जागरण।
- दु:ख में से सुख, सुख में से शांति और शांति में से आनंद प्राप्त करने की योग्यता का विकास।
- सभी प्रकार के अभ्यदुयों की प्राप्ति।
- आत्मा की सत्, चिद् और आनंद में अवस्थिति।
- विकारजन्य अशांति का विलय।

सन्दर्भ–

1. मन के जीते जीत, पृ. 225
2. अमृत योग, पृ. 22
3. भक्तामर अन्तस्तल में, पृ. 93 से उद्धृत

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

९. ध्यान की पराकाष्ठा : महामंत्र जप

देव, दानव व मानव-कृत प्रत्येक उपद्रव में सुरक्षा देने वाला अमोघ मंत्र है—नमस्कार महामंत्र। ऐसा महिमामय और माहात्म्यपूर्ण मंत्र स्वयं तप है, मंत्र जप—स्वाध्याय का एक प्रकार है और वह ध्यान भी है। अचिन्त्य शक्ति-सम्पन्न इस महामंत्र के प्रति भक्ति, श्रद्धा व दृढ़ आस्था ही वह सशक्त मार्ग है, जो पतित से पतित का उत्थान कर देती है। बुरे से बुरे को भी श्रेष्ठ बना देती है। महामंत्र का ध्यान एक श्रेष्ठ प्रकार का योग है। चैतन्य और आनन्द की चरम सीमा तक पहुँचाने वाला प्रयोग है। योग से जो सिद्धियां प्राप्त होती हैं, वे सब महामंत्र के ध्यान से संभव है। जप करते-करते साधक जैसे-जैसे जप की पराकाष्ठा तक पहुँचता है, वह जप ध्यान की योग्यता को प्राप्त हो जाता है। इस अवस्था में पहुँचने पर अविद्या व अपवित्रता के विलय के साथ-साथ आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है।

ध्यान की पूर्व भूमिका जप

जैन आचार्यों ने साधना के दो आयाम प्रस्तुत किये हैं—

1. **बहिरंग तपोयोग—**अनशन, ऊनोदरी, भिक्षाचरी (अभिग्रह-प्रतिज्ञाएं), रस परित्याग, कायक्लेश, प्रतिसंलीनता।

2. **अंतरंग तपोयोग—**प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, ध्यान, व्युत्सर्ग।

पातंजल योगदर्शन ने अपना साधना मार्ग अष्टांग-योग बतलाया। उसका प्रारंभ होता है यम से। इसमें भी दो वर्ग उपलब्ध हैं—

पहला वर्ग है—यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार।

दूसरा वर्ग है—धारणा, ध्यान, समाधि।

इसमें धारणा, ध्यान व समाधि को अंतरंग योग कहा है। यद्यपि पातंजलि ने बहिरंग योग का प्रयोग नहीं किया है किन्तु ''त्रयमन्तरंगे'' इस प्रयोग से बहिरंग शब्द स्वत: निर्णित हो जाता है अत: तीन योग अंतरंग और शेष पांच योग बहिरंग हैं।

पातंजल और जैन दोनों ही साधना पद्धतियों ने यह स्वीकार किया है कि जप अपनी पराकाष्ठा पर पहुँचकर ही ध्यान की भूमिका में प्रवेश करता है। इस सन्दर्भ में शुभचन्द्राचार्य ने कहा है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यमादिषु कृताभ्यासो नि:संगो निर्ममो मुनि:।
रागादिक्लेशनिर्मुक्तं करोति स्ववशं मन:॥

एक एव मनोरोध: सर्वाभ्युदयसाधक:।
यमेवालंब्य संप्राप्ता योगिनस्तत्त्वनिश्चयम्॥

मन: शुद्धैयव शुद्धि: स्याद्देहिनां नात्र संशय:।
वृथा तद्व्यतिरेकेण कायस्यैव कदर्थनम्॥ [1]

अर्थात् जिसने यमादि का अभ्यास किया है, परिग्रह और ममता से रहित है, ऐसा मुनि ही अपने मन को रागादि से निर्मुक्त तथा वश करने में समर्थ होता है। नि:संदेह मन की शुद्धि से ही जीवों की शुद्धि होती है। मन की शुद्धि के बिना शरीर को क्षीण करना व्यर्थ है। मन की शुद्धि से इस प्रकार का ध्यान होता है, जिससे कर्म जाल कट जाता है। एक मन का निरोध ही समस्त अभ्युदयों को प्राप्त करने वाला है। मन के स्थिर हुए बिना आत्म स्वरूप में लीन होना कठिन है। अतएव योगांगों का प्रयोग मन को स्थिर करने के लिए अवश्य करना चाहिए। यह एक ऐसा साधन है, जिसमें मन स्थिर करने में सबसे अधिक सहायता मिलती है।

पातंजल साधना पद्धति के अनुसार जप का अनुष्ठान यम नियमपूर्वक होना चाहिए, जिससे यम, नियम सिद्ध होते हैं। नियत जप पूरा करने के लिए लम्बे समय तक एक आसन पर बैठना पड़ता है, उससे आसन की सिद्धि होती है। आसन की सिद्धि से नाड़ियों की शुद्धि, आरोग्य की वृद्धि एवं तन में स्फूर्ति रहती है। अंगों की स्थिरता, स्वस्थता तथा लाघव आता है। एक स्थिर और सुखद आसन मानसिक संतुलन उत्पन्न करता है तथा मन के भटकाव को दूर करता है। आसन शरीर, मन एवं आत्मा की पूर्व संतुलित साम्यावस्था है। ''यत्र मन: तत्र मरुत:'' इस सूत्र के अनुसार जप के साथ प्राणायाम भी हो जाता है। प्राणायाम से न केवल आंतरिक अंगों की दुर्बलता दूर होती है बल्कि इनमें शक्ति एवं सम्पन्नता बढ़ती है। प्राणायाम की सिद्धि से श्वास एवं प्राण में एकत्व हो जाता है, इन्द्रियों में भी एकत्व आ जाता है तथा भावात्मक उत्तेजनाओं पर नियंत्रण होकर मन में शांति का वास हो जाता है।

मंत्र सिद्धि में एकाग्रता व तन्यमता की अपेक्षा रहती है, उससे इन्द्रियों का संयम बढ़ता है। अत: प्रत्याहार का भी अभ्यास हो जाता है। जप के समय अपनी वृत्तियों का प्रवाह एक दिशा में बहता है। अत: धारणा भी विकसित हो जाती है। धारणा (एकाग्रता) से व्यक्ति के पास उच्चतम बौद्धिक क्षमता होती है, जिसके द्वारा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वह अपनी समस्त शक्तियों का उपयोग लक्ष्य प्राप्ति हेतु करता है। इस प्रकार जप के अनुष्ठान में यम, नियम आदि पूर्व अंग सिद्ध होते हैं, जिससे ध्यान की योग्यता बढ़ती है और वह समाधि तक पहुँचता है।

धारणा के स्थान पर ध्येय विषयक ज्ञान की एकाग्रता का नाम ध्यान है। जब ध्यान में ध्याता तथा ध्यान क्रिया का लोप होकर केवल ध्येय मात्र रह जाये तो वह ध्यान है। गीता में कहा गया है–''बाहरी विषय-भोगों आदि को बाहर ही छोड़कर दृष्टि को दोनों भोहों के बीच में स्थिर करके नासिका में विचरने वाले प्राण एवं अपान की गति को एक समान रखकर इन्द्रिय, मन और बुद्धि को वश में करके इच्छा, भय तथा क्रोध से रहित हो जो व्यक्ति ध्यान करता है, वह सर्वदा मुक्त ही है।''

समाधि ध्यान की चरम सीमा है। जब ध्यान परिपक्व होता है, तब चित्त से ध्येय का द्वैत और तत्संबंधी वृत्ति का भान चला जाता है। ध्यान में जब ध्येय की वृत्ति का प्रवाह समाप्त हो जाता है तब समाधि प्राप्त होती है। गीता में ऐसे व्यक्ति को 'स्थितप्रज्ञ' की संज्ञा दी गई है।

इस प्रकार जप के अनुष्ठान में यम, नियम आदि पूर्व अंग सिद्ध होते हैं, जिससे ध्यान की योग्यता में वृद्धि होती है और वह समाधि तक पहुँचती है। जिन मंत्र द्रष्टाओं ने मंत्र-सिद्धि के भक्ति, शुद्धि, आसन, धारणा, मुद्रा आदि सोलह अंग माने हैं, वहां भी चौदहवां स्थान जप का, पन्द्रहवां स्थान ध्यान का और सोलहवां स्थान समाधि का माना है।

जैन साधना पद्धति में भी निर्जरा के बारह भेदों में स्वाध्याय (जप) के बाद ग्यारहवां नम्बर ध्यान का बताया है। अत: जप के बाद ध्यान का क्रम आता है यह निश्चित है। ध्यान के चार भेदों की चर्चा जो ध्यान साहित्य में उपलब्ध है, जैन साहित्य में भी वह प्रयुक्त है।

ध्यान के चार रूप : महामंत्र स्वरूप

1. पिण्डस्थ ध्यान, 2. पदस्थ ध्यान,
3. रूपस्थ ध्यान, 4. रूपातीत ध्यान।

1. पिण्डस्थ ध्यान–शरीर स्थित आत्मा का चिंतन करना।

2. पदस्थ ध्यान–मंत्रों पदों के द्वारा अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु तथा आत्मा के स्वरूप का चिंतन करना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. रूपस्थ ध्यान— अरिहंत भगवान के स्वरूप का चिंतन करना कि भगवान समवसरण में द्वादश सभाओं के मध्य में ध्यानस्थ विराजमान है। अथवा ध्यानस्थ प्रभु मुद्रा का ध्यान करना।

4. रूपातीत ध्यान— सिद्धों के गुणों का विचार करना कि सिद्ध अमूर्तिक, चैतन्य, पुरुषाकार, कृतकृत्य, परमशांत, निष्कलंक, अष्टकर्म रहित, सम्यक्त्वादि आठ गुण सहित, निर्लिप्त, निर्विकार एवं लोकाग्र में विराजमान है। इसके बाद अपने-आपको सिद्ध स्वरूप समझकर लीन हो जाना रूपातीत ध्यान है।

इसमें पदस्थ ध्यान अक्षरात्मक तथा शब्दात्मक है। मंत्र इसी का रूप है। अक्षरों से निर्मित जो पद अथवा शब्द है, उसके द्वारा अशब्द में पहुँचना, वाक् से अवाक् का अनुभव करना, वाणी से अवाणी की यात्रा करना यही पदस्थ ध्यान है। ब्रह्म-आत्मा वाणी का विषय नहीं है, उसे 'अवाचां गोचरः' कहा है। शब्दों की वहां पहुँच नहीं है। शब्द बहुत स्थूल है। वे बाह्य जगत् की परिक्रमा करते रहते हैं। चेतना की अनुभूति में वाणी मौन हो जाती है, शब्द गिर जाते हैं किन्तु इस सत्य को भी नहीं नकारा जा सकता कि अशब्द की यात्रा में उनका बहुत बड़ा सहयोग रहता है। अशब्द में जाने का माध्यम शब्द बनता है। ऋषियों ने जितने भी छोटे-बड़े मंत्रों की संरचना की है, उनके प्रति यदि हमारी सही समझ जग जाये तो मंत्र हमें उस परम सत्य तक ले जा सकते हैं।

पदस्थ ध्यान पदों-मंत्रों व बीजाक्षरों के आलम्बन से किया जाता है। पिण्डस्थ ध्यान जैसे देहावलंबी है, वैसे पदस्थ ध्यान शब्दावलंबी है। पिण्डस्थ ध्यान में देहवर्ती चैतन्य-केन्द्र, देह की अनुप्रेक्षा तथा देह और आत्मा की पृथकता—ये मुख्य ध्येय बनते हैं। पदस्थ ध्यान में भी शब्द की सूक्ष्म शक्ति उसके स्थूल और सूक्ष्म उच्चारण की प्रक्रिया और शब्दवर्ती अर्थ के साथ तन्मयता—ये मुख्य ध्येय होते हैं। इस ध्यान के आधार पर ध्यान मंत्रों का पर्याप्त विकास हुआ है।

जप भी शब्दावलंबी होता है और पदस्थ ध्यान भी शब्दावलंबी होता है। ये दोनों किसी रेखा पर भिन्न होते हैं और किसी रेखा पर अभिन्न हो जाते हैं। जप का अर्थ है—शब्द की अर्थात्मा में तन्मय हो जाना। पदस्थ ध्यान में भी यही तन्मयता अपेक्षित है।

इस प्रकार पंच-परमेष्ठी के वाचक पैंतीस अक्षरों का, सोलह अक्षरों का, पांच, चार, दो, एक अक्षर का ध्यान किया जाता है। ये सब पदस्थ ध्यान के अन्तर्गत हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

योग के विशिष्ट साधक हेमचन्द्र आचार्य ने पदस्थ ध्यान का वर्णन करते हुए लिखा है[2]–

तथा पुष्यतमं मंत्रं, जगत् त्रितयपावनम्।
योगी पंच-परमेष्ठि-नमस्कारं विचिन्त्येत्॥ 1॥

तीनों जगत् को पवित्र करने वाले और अत्यन्त पवित्र ऐसे पंच-परमेष्ठी-नमस्कार मंत्र की योगियों को विशेष चिंतवना करनी चाहिए।

अष्टपत्रे सिताम्भोजे, कर्णिकायां कृत स्थितिम्।
आधं सप्ताक्षरं मंत्रं, पवित्रं चिन्तयेत् तत:॥ 2॥

सिद्धादिकचतुष्कं च, दिक्पत्रेषु यथाक्रमम्।
चूलापाद चतुष्कं च, विदिक् पत्रेषु चिन्तयेत्॥ 3॥

प्रथम पद 'णमो अरहंताणं' को कर्णिका में स्थापित करें। तत्पश्चात् चार पदों को चार दिशावर्ती-दलों पर स्थापित करें तथा 'एसो...........'। इन चार पदों को चार विदिशा वाले दलों पर स्थापित करें।

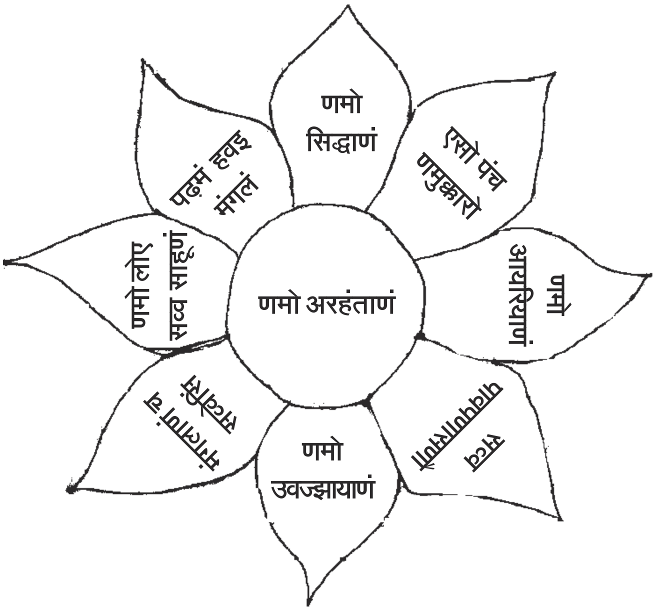

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आकृति व रंग की जानकारी के अभाव में पिण्डस्थ व पदस्थ ध्यान नहीं हो सकते। इसलिए सुन्दर व घुमावदार अक्षरों की कल्पना और पंच-परमेष्ठी के वर्णानुसार उनका ध्यान करना चाहिए।

अभ्यास काल में जब अक्षर बराबर, स्पष्ट व स्थिर दिखाई दे, उनके रंग न बदले तब अपना मन स्थिर हुआ समझना चाहिए। जब अक्षरों पर मन स्थिर हो जाता है तब अक्षरों में से प्रकाश की रेखाएं फूटती हैं और अन्त में अद्भुत ज्योतिर्मय बन जाती है।

ध्यान के प्रारंभ में अरिहंत और मैं, सिद्ध और मैं, आचार्य और मैं, उपाध्याय और मैं, साधु और मैं ऐसा द्वैत भाव होता है। परन्तु ध्यान में प्रगति होने के बाद यह द्वैत भाव समाप्त हो जाता है। मेरी आत्मा ही अरिहंत है, मेरी आत्मा ही सिद्ध है, मेरी आत्मा ही आचार्य है, मेरी आत्मा ही उपाध्याय है, मेरी आत्मा ही साधु है, ऐसा अद्वैत भाव उत्पन्न होकर आत्म-साक्षात्कार की भूमिका पर जीवन के समग्र रहस्यों को जानने की दिशा का उद्घाटन होता है।

चारों प्रकार के ध्यान की विधियां

इन चारों प्रकार के ध्यान को 'ॐ', 'अ सि आ उ सा', 'अर्हं', 'सोऽहं' के साथ करने की निम्नोक्त विधियां प्राप्त हैं[3]—

ध्यान के चार प्रकार—पिण्डस्थ, पदस्थ, रूपस्थ, रूपातीत।

1. इन चारों पर ॐ का ध्यान—

1. लोक के स्वरूप का चिंतन, पाताल के मध्य नरकादि का चिंतवन, मध्य लोक के द्वीप, क्षेत्र, पर्वतादि का चिंतवन, उर्ध्वलोक में स्वर्गादि का चिंतवन करना पिण्डस्थ ध्यान है।

2. अपने हृदय के मध्य कमल स्थापित कर उसमें कर्णिका की स्थापना करें। कर्णिका के मध्य में ओंकार स्थापित कर उन कर्णिकाओं में स्वर व्यंजन स्थापित करके ध्यान करना पदस्थ ध्यान है।

इसकी दूसरी विधि इस प्रकार है—अ सि आ उ सा के मंत्र में भी ओम् रहा हुआ है, अत:—

नाभि कमल में—अ मस्तक कमल में—सि

मुख कमल में—आ हृदय कमल में—उ

कण्ठ कमल में—सा, अक्षर का ध्यान करना पदस्थ ध्यान है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. समवशरणादिक विभूति रहित सिंहासन पर अन्तरक्ष विराजमान घातियां कर्म रहित अनंत चतुष्ट्य संयुक्त अरहंत भगवान के स्वरूप का चिंतन करना स्वरूप ध्यान है।

4. सब कर्मों से रहित, पौद्‌गलिक, मूर्तिक, शरीर से रहित अनंत गुणों के भण्डार ऐसे भगवान सिद्ध परमात्मा का जो ध्यान करता है, वह रूपातीत ध्यान है।

प्रयोजन— सब प्रकार का आनंद मंगल रहता है।

2. अर्हं का ध्यान—प्रथम विधि

जहां हृदय है, वहां मन के संकल्प से ही पांच पंखुड़ी का कमल बनाना चाहिए। पहली पंखुड़ी सफेद रंग की, दूसरी लाल रंग की, तीसरी पीले रंग की, चौथी हरे रंग की और पांचवीं नीले रंग की। कमल के बीच में अर्हं का ध्यान करें और ऊपर लिखी पंखुड़ियों पर क्रमश: णमो अरहंताणं आदि पांच पदों का मन से ही जप करें। शेष प्रक्रिया ऊपरवत्।

प्रयोजन— आध्यात्मिक बल का विकास।

मात्र नौ बार जपने से ही यह अपना प्रभाव दिखाता है।

दूसरी विधि

जिसके सब ओर निर्मल सुनहरी किरणें निकलती हों, ऐसे सुवर्ण कमल के बीच श्वेतवर्ण में अरहंत का ध्यान करना चाहिए। उक्त कमल को सर्वप्रथम ऊँचे आकाश में चमकता हुआ विचार करें। बाद में क्रमश: मुख में प्रवेश करता हुआ, भृकुटि में भ्रमण करता हुआ अन्त में भाल मण्डल में स्थिर होता हुआ सोचें।

प्रयोजन— सब प्रकार का रोग, संकट दूर होता है, सर्वत्र मंगल भावना का विकास होता है।

3. सोऽहं का ध्यान

'सो' का अर्थ 'वह' यानि अर्हत् देव और अहं का अर्थ 'मैं' है। इसका अर्थ होता है कि—मैं अर्हत् देव हूँ। इस मंत्र का जप श्वास के साथ करना चाहिए। अन्दर की ओर श्वास आए तब 'सो' बोलना और जब बाहर की ओर श्वास जाए तब ऽहं कहना चाहिए। यह मंत्र निश्चय दृष्टि का है। इस प्रकार 'सोऽहं' मंत्र से अर्हत्, सिद्ध आदि स्वरूप का ध्यान करना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

महायोगी आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने 'एसोपंचणमोक्कारो' में नमस्कार महामंत्र के ध्यान की विभिन्न पद्धतियों का उल्लेख किया है, उनमें जो इन चार प्रकार के ध्यान की अलग-अलग पद्धतियां हैं, उनके निम्न प्रकार हैं—

नमस्कार महामंत्र : अभ्यास की पद्धतियां[4]

1. णमो अरहंताणं

ज्ञान-केन्द्र में मन का केन्द्रीकरण और श्वेत वर्ण।

पहला चरण—

अक्षर ध्यान। आकाश में श्वास द्वारा श्वेत वर्ण वाला 'ण' लिखें। उसे साक्षात् देखने का अभ्यास करें। इसी प्रकार मो, अ, र, हं, ता, णं—एक-एक वर्ण को लिखें और उसे साक्षात् करने का अभ्यास करें।

दूसरा चरण—

पदस्थ ध्यान—णमो अरहंताणं—इस पूरे पद का ध्यान करें। आकाश में श्वास के द्वारा लिखे हुए इस पूरे पद को साक्षात् देखने का अभ्यास करें।

तीसरा चरण—

पद के अर्थ का ध्यान। णमो अरहंताणं—इस सप्ताक्षरी मंत्र का अर्थ है—अर्हत् को नमस्कार। अनंत-ज्ञान, अनंत-दर्शन, अनंत-आनन्द और अनंत-शक्ति से सम्पन्न आत्मा का नाम अर्हत् है। ज्ञान-केन्द्र में स्फटिक जैसी निर्मल और श्वेत पुरुषाकृति के रूप में अर्हत् का ध्यान करें। पहले उस आकृति की कल्पना करें फिर उसके साक्षात्कार का अभ्यास करें।

चौथा चरण—

अपने अर्हत् स्वरूप का ध्यान। अपने शरीर के कण-कण में अर्हत् (स्फटिक जैसी निर्मल और श्वेत पुरुषाकृति) के साक्षात्कार का अभ्यास करें और अनन्त चतुष्टयी के विकास का अनुभव करें।

नोट—पहले चरण में जो अक्षर के विषय में कहा है—वे अक्षर चमकते रंग वाले हों तथा वे कम से कम दो-तीन फुट के हों। उनमें प्रकाश की किरणें फूट रही हों, वे ज्योतिर्मयी हों। प्रत्येक अक्षर पर कम से कम एक मिनट का ध्यान करें। तीन या छः मास में अक्षर का साक्षात्कार हो जाता है। किसी-किसी साधक को पहले भी हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इस विधि से पाँचों पदों को चार चरण में करें। णमो सिद्धाणं की अभ्यास प्रक्रिया में दर्शन-केन्द्र में मन का केन्द्रीकरण और बाल सूर्य जैसा अरुण रंग। णमो आयरियाणं में विशुद्धि-केन्द्र में मन का केन्द्रीकरण और दीपशिखा जैसा पीत-वर्ण। णमो उवज्झायाणं में आनंद-केन्द्र में मन का केन्द्रीकरण और निरभ्र आकाश जैसा नील-वर्ण। णमो लोए सव्व साहूणं में शक्ति-केन्द्र पर मन का केन्द्रीकरण और कस्तूरी जैसे श्याम वर्ण का प्रयोग हो। प्रथम, द्वितीय चरण पूर्ववत् करें तथा तीसरे और चौथे चरण में अपने-अपने स्वरूप का अर्थ-चिंतन और ध्यान करें। अपने-अपने पद के वर्ण में ध्यान करें।

इस साधना का प्रयोजन

(1)
1. णमो अरहंताणं—आवरण, मूर्च्छा और अन्तराय को क्षीण उपशांत करने के लिए।
2. णमो सिद्धाणं—शाश्वत आनन्द की अनुभूति के लिए।
3. णमो आयरियाणं—बौद्धिक चेतना की सक्रियता के लिए।
4. णमो उवज्झायाणं—मानसिक समस्या के समाधान के लिए।
5. णमो लोए सव्व साहूणं—काम वासना को क्षीण, उपशांत करने के लिए।

(2)

णमो अरहंताणं	–	ज्ञान केन्द्र में।
णमो सिद्धाणं	–	ललाट में।
णमो आयरियाणं	–	दाएं कान में।
णमो उवज्झायाणं	–	ग्रीवा और सिर के संधि भाग में।
णमो लोए सव्व साहूणं	–	बाएं कान के पीछे।

इसका पद्मावर्त्त जप अर्थात् पद्म के आवर्त्तन की तरह जप करें।

फल—कर्म-क्षय, मन:स्थैर्य।

(3) वीतराग पुरुष की पुरुषाकृति पर नौ पदों का ध्यान—

बाएं पैर के अंगूठे पर	णमो अरहंताणं
दाएं पैर के अंगूठे पर	णमो सिद्धाणं
बाएं घुटने पर	णमो आयरियाणं
दाएं घुटने पर	णमो उवज्झायाणं
बाएं हाथ पर	णमो लोए सव्व साहूणं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दायें हाथ पर	एसो पंचणमुक्कारो
बाएं कंधे पर	सव्व पाव पणासणो
दायें कंधे पर	मंगलाणं च सव्वेसिं
शिखा पर	पढमं हवइ मंगलं
ललाट पर	णमो अरहंताणं
कण्ठ पर	णमो सिद्धाणं
वक्षस्थल पर	णमो आयरियाणं
नाभि पर	णमो उवज्झायाणं
अंजलि में	णमो लोए सव्व साहूणं
दायें पैर के अंगूठे पर	एसो पंचणमुक्कारो
बायें पैर के अंगूठे पर	सव्व पाव पणासणो
दायें घुटने पर	मंगलाणं च सव्वेसिं
बायें घुटने पर	पढमं हवइ मंगलं
दायें हाथ पर	णमो अरहंताणं
बायें हाथ पर	णमो सिद्धाणं
बायें कंधे पर	णमो आयरियाणं
दायें कंधे पर	णमो उवज्झायाणं
शिखा पर	णमो लोए सव्व साहूणं
ललाट पर	एसो पंचणमुक्कारो
कण्ठ पर	सव्व पाव पणासणो
वक्षस्थल पर	मंगलाणं च सव्वेसिं
नाभि पर	पढमं हवइ मंगलं

(4) अष्टदल वाले कमल की कल्पना कर कर्णिका में प्रथम पद (णमो अरहंताणं) तथा शेष आठ दलों में आठ पद यथास्थान रखकर नवकार मंत्र का जप करना चाहिए।

पुरुषाकार की कल्पना कर बायें पैर के अंगूठे पर एक कमल की कल्पना करनी चाहिए, जिसमें नौ पद यथास्थान उल्लिखित है। दूसरा कमल दाएं पैर के अंगूठे पर स्थापित करना चाहिए। इस प्रकार हृदय तक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

12 स्थान होते हैं। बारह कमलों की स्थापना होती है। नौ बार जप करने से 108 बार नवकार मंत्र का जप अर्थात् एक माला सम्पन्न होती है।

(5) शरीर में मुख्य स्थान है–हृदय। इससे चौदह रज्जु वाले लोक से संबंध स्थापित किया जा सकता है। हृदय कमल आठ पंखुड़ियों वाला है। वे पंखुड़ियां औंधी हैं। इसलिए बुद्धि की गति नीचे की ओर है। नवकार मंत्र के पदों को हृदय कमल पर स्थापित कर जप करने से वे उर्ध्वमुखी हो जाती हैं।

जप में रंगों का भी महत्त्व होता है। श्वेत रंग आत्मा को उज्वल बनाता है, मोक्ष पद को प्राप्त करता है।

(6) ॐ णमो अरहंताणं (ध्यान प्रक्रिया)

मुख में चन्द्रमण्डल के आकार वाले अष्टदल कमल की कल्पना करें। प्रत्येक दल पर एक-एक अक्षर का न्यास करें–

ॐ ण मो अ र हं ता णं

स्वर्ण गौरीं स्वरोद्भूतां, केशराली ततः स्मरेत्।
कर्णिकां च सुधाबीजं, व्रजन्तु भुवि भुषितम्॥

इस प्रकार और भी अनेक प्रयोग–जो नमस्कार महामंत्र की ध्यान प्रक्रिया के साथ जुड़े हुए हैं, उनका आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने 'एसोपंचणमोक्कारो' के परिशिष्ट में उल्लेख किया है। ये सारे प्रयोग अभ्यास से ही सफल होते हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र में शुद्धात्मा का वर्णन है और उनके ध्यान से निर्विकल्प समाधि की प्राप्ति होती है। अतः ध्यान का दृढ़ अभ्यास हो जाने पर साधक को यह अनुभव करना आवश्यक है– मैं परमात्मा हूँ, सर्वज्ञ हूँ, मैं ही साध्य हूँ, मैं ही सिद्ध हूँ, सर्वज्ञाता और सर्वदर्शी भी मैं ही हूँ। मैं सत्, चिद, आनन्द रूप हूँ, अज हूँ, निरंजन हूँ। इस प्रकार चिंतन करता हुआ साधक जब सब संकल्प-विकल्पों से विमुक्त हो अपने आप में विलीन हो जाता है, तब उसे निर्विकल्प ध्यान की या परम समाधि की प्राप्ति होती है।

इस भूमिका तक पहुँचने के लिए पहले नवकरवाली आदि का आलम्बन लिया जाता है, फिर शंखावर्त्त, नंद्यावर्त्त का आलम्बन तत्पश्चात् हृदय कमल में

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र के अक्षरों की धारणा (पिण्डस्थ ध्यान) का आलम्बन लिया जाता है। इस प्रकार सालंबन साधना करते-करते जप रूपातीत ध्यान की अवस्था तक पहुँचता है। इस सम्पूर्ण प्रक्रिया को चार आरोह में भी किया जा सकता है—

प्रथम आरोह	पिण्डस्थ ध्यान
द्वितीय आरोह	पदस्थ ध्यान
तृतीय आरोह	रूपस्थ ध्यान
चतुर्थ आरोह	रूपातीत ध्यान

इस समूचे क्रम को 80 मिनट में सम्पन्न किया जा सकता है। प्रारम्भ में एक-एक भूमिका का ही अभ्यास करना चाहिए। सब भूमिकाओं का स्थिर अभ्यास हो जाने पर सबका एक साथ प्रयोग किया जा सकता है।

इस प्रकार साधक महामंत्र की स्वरूपावस्था में लयलीन हो जाता है। जैसे प्रकृति का सिद्धान्त है—ग्रेवीटेशन/गुरुत्वाकर्षण और ग्रेस यानि प्रसाद। ऊपर से नीचे गिरने वाली वस्तु को पृथ्वी अपनी ओर खींच लेती है क्योंकि उसमें आकर्षण शक्ति है, गुरुत्वाकर्षण है।

कुछ वस्तुएं जब वे बिल्कुल हल्की हो जाती हैं, भार रहित हो जाती हैं, तो उस भारहीनता की स्थिति में ऊपर का ग्रेस उसे अपनी ओर खींच लेता है। इसलिए कहा जाता है कि सिद्ध आत्माएं मल रहित (निर्मल) होने के कारण अत्यल्प समय में लोकान्त में अवस्थित हो जाती है। उनका आवागमन सदा सर्वदा के लिए समाप्त हो जाता है। उन्हें नीचे से ऊपर लोकान्त तक पहुँचने में काल का सबसे छोटा हिस्सा-मात्र एक समय ही लगता है, क्योंकि वहां ग्रेस कार्यरत होता है।

इस प्रकार शुद्ध स्वरूप आत्माओं को नमस्कार करने से, उनके स्वरूप का चिंतन और ध्यान करने से चित्त हल्का बनता है। प्राणी की उर्ध्वारोहण की यात्रा प्रारम्भ हो जाती है। इस प्रकार महामंत्र का आध्यात्मिक वर्चस्व अखण्ड है।

सन्दर्भ—

1. ज्ञानार्णव, प्र. 22, श्लोक 3, 12, 14.
2. योगशास्त्र-प्रकाश-8, श्लोक 1 से 3.
3. नमस्कार चिंतामणि.
4. एसोपंचणमोक्कारो, पृ. 114 से 122.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

10. महामंत्र और प्राणायाम

नमस्कार महामंत्र एक महान् श्रुत-स्कन्ध है। यह एक विलक्षण महामंत्र है। इसकी प्रभावकता की पराकाष्ठा को आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की निम्नोक्त पंक्तियों से परखा जा सकता है। ''नमस्कार महामंत्र के अक्षर पैंतीस ही हैं, किन्तु उन अक्षरों की व्याख्या में पैंतीस हजार श्लोक लिखे जा सकते हैं।'' विकार, वासना का क्षय, पापों से मुक्ति, आत्मशांति, दिव्य चेतना, अखण्ड आनन्द, स्वास्थ्य, भौतिक-सुख व सफलता इस महामंत्र साधना की सहज फलाश्रुतियां हैं। यदि कोई भी व्यक्ति जब भी उसे अवसर मिले अथवा प्रत्येक श्वास के साथ निरन्तर इस महामंत्र की भावधारा में डूबा रहता है तो उसका समीपवर्ती निजी आभामंडल पापरहित व प्रकाशमान होने लगता है। उस व्यक्ति के लिए पाप करना असंभव हो जायेगा और बाहर का वातावरण उसके अन्तर जागरण में सहायक बनेगा।

मंत्र के लयबद्ध जप व एकाग्र ध्यान से श्वासोच्छ्वास गहरा व व्यवस्थित बन जाता है, जिससे सहज प्राणायाम सधता है। और शरीर के प्रत्येक अवयव को प्राणवायु विशेष मात्रा में प्राप्त होती है। जप के समय श्वासोच्छ्वास की संख्या कम और गति नियमित हो जाती है। अत: इस समय प्राणवायु का खर्च तथा कार्बन-डाई-ऑक्साइड का उत्पादन कम हो जाता है। फलस्वरूप पाचन-प्रणाली की कार्यक्षमता में सुधार होता है और साधक शारीरिक स्वास्थ्य और मानसिक समाधि प्राप्त करता हुआ साधना पथ पर आगे बढ़ जाता है।

श्वास-प्रश्वास की दीर्घता व ह्स्वता पर ध्यान किया जाता है। इसी को हम प्राणायाम कहते हैं। शास्त्रों में प्राणशक्ति को 'हंस' की संज्ञा दी गई है। स्वाभाविक नि:श्वास को ही अजपामंत्र कहा जाता है। साधना के शलाका पुरुष, अध्यात्म के महान साधक गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ने श्रावक संबोध में लिखा है—''जप णमोक्कार का प्रतिदिन प्राणायामी'' नमस्कार महामंत्र का जप प्रतिदिन प्राणायाम पूर्वक किया जाना चाहिए। प्रात:काल उठते ही इस महामंत्र को प्राणायाम के साथ करने की सामान्य विधि निम्न प्रकार से है—

श्वास भरते हुए महामंत्र का मानसिक उच्चारण करें, फिर श्वास छोड़ें, फिर श्वास भरते हुए महामंत्र का मानसिक उच्चारण, फिर श्वास छोड़ें। प्रारंभिक अभ्यास में इसको तीन आवृत्तियों में किया जा सकता है। श्वास भरते हुए णमो अरहंताणं, नि:श्वास के साथ णमो सिद्धाणं, दूसरे श्वास में णमो आयरियाणं, नि:श्वास में णमो उवज्झायाणं, तीसरे श्वास में णमो लोए और नि:श्वास में सव्व

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

साहूणं—इस क्रम की लयबद्धता के साथ प्राणायाम का प्रयोग करने से मानसिक एकाग्रता प्रसन्नता एवं शांति के साथ-साथ अध्यात्म विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। चित्त-समाधि, चित्त की निर्मलता के साथ-साथ रक्त व स्नायु मंडल का शोधन होता है तथा स्नायुमंडल सशक्त भी होता है। मस्तिष्कीय स्नायुमंडल की तेजस्विता के साथ-साथ देह में स्फूर्ति, लचक व कांति की वृद्धि होती है।

जैन ग्रंथों में उल्लिखित है—''इस महामंत्र का जो प्राणवायु के साथ ब्रह्ममुहूर्त्त में जप करता है, उसके सारे मनोरथ सिद्ध होते हैं, पाप का नाश होता है।'' जप साधक के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह प्राण तथा तत्सम अन्य सूक्ष्म जीवनी शक्तियों पर संयम करना सीखें। निःसंदेह योग शक्ति जागरण का विज्ञान है, प्राणायाम उन सूक्ष्म शक्तियों के उत्थान का एक सरल तरीका है। योग के ग्रंथों में बहुत सुन्दर निरूपण मिलता है—''स्थूलात सूक्ष्मं समालंबे''। स्थूल से सूक्ष्म का आलंबन लो। प्राणायाम को स्थूल शरीर से सूक्ष्म शरीर में जाने का प्रवेशद्वार कहा जा सकता है। इस प्रकार प्राणायाम और नमस्कार महामंत्र का घनिष्ट संबंध है।

मनोनुशासन की महत्त्वूपर्ण प्रक्रिया—प्राणायाम

शैव मतानुसार योग के पांच प्रकार हैं—

1. मंत्र योग, 2. स्पर्श योग, 3. भाव योग,
4. अभाव योग, 5. महा योग।

मंत्र योग वह है, जिसमें कुछ मंत्रों की निरन्तर आवृत्ति द्वारा मानसिक स्थिति स्थिर हो जाती है। जब मंत्र योग को प्राणायाम से संपृक्त कर लेते हैं तब वह स्पर्श योग कहलाता है। जब यह अवस्था आगे विकसित होती है तब मंत्रों के उच्चारण की आवश्यकता नहीं रहती तब वह भाव योग और जब साधक इसकी उन्नत अवस्था में पहुँच जाता है, तब अभाव योग कहलाता है। तत्पश्चात् शिव का साक्षात्कार महा योग कहलाता है।

महर्षि पातंजल के अनुसार श्वास-प्रश्वास की गति का नियमन ही प्राणायाम है। जब श्वास-प्रश्वास अनुशासित होकर निग्रह की स्थिति में पहुँचता है, तब प्राणायाम में पूरक, रेचक व कुंभक तीन क्रियाएं होती हैं।

पूरक—श्वास को अन्दर ले जाना।

रेचक—श्वास को बाहर छोड़ना।

कुंभक—श्वास को रोकना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कुंभक के दो प्रकार हैं—1. आभ्यन्तर कुंभक, 2. बाह्य कुंभक।

1. आभ्यन्तर कुंभक—श्वास को भीतर ले जाकर रोकना।

2. बाह्य कुंभक—श्वास को बाहर निकालकर रोकना।

प्राणायाम की तीनों स्थितियों में प्राण का समान रूप से नियमन प्राणायाम कहलाता है। श्वास-प्रश्वास व कुंभक को सैकिण्डों में इस प्रकार मापा जा सकता है—

श्वास—दो सैकिण्ड

नि:श्वास—चार सैकिण्ड

कुंभक—आठ सैकिण्ड।

इसका तात्पर्य हुआ पूरक से रेचक में दुगुना समय और रेचक से कुंभक में दुगुना समय लगता है।

गणना द्वारा भी पूरक, रेचक व कुंभक को मापा जा सकता है—पूरक में ॐ ॐ का दो बार मानसिक उच्चारण, रेचक में चार बार और कुंभक में आठ बार—इस प्रकार मानसिक जप द्वारा भी श्वास को नियमित और अनुशासित किया जा सकता है।

प्राणायाम के साथ ओंकार का लयबद्ध जप करने से मुख की कांति, स्वर-माधुर्य और मन की शांति का विकास होता है। मंत्र के साथ प्राणायाम का प्रयोग प्राण को निर्मल करता है, ऊर्जा शक्ति को उर्ध्वगामी करता है। एकाग्रता बढ़ने से साधक सहज ही समस्त कार्यों में सफलता का वरण करने लगता है। इससे मंत्र-तंत्र तथा अन्य सिद्धियां शीघ्र फलित होने लगती हैं।

प्राणायाम का क्रमिक विकास

प्रारंभ में प्राणायाम के दो अंगों—पूरक और रेचक का ही अभ्यास करना चाहिए। मंत्र-जप में यही क्रम रहे। प्राणायाम के विषय में सोमदेव सूरि ने लिखा है—

मंदं मंदं क्षिपेत् वायुं, मंदं मंदं विनिक्षिपेत्।
न क्वचिद् वार्यते, वायुर्न च शीघ्रं प्रमुच्यते॥ [1]

प्राणवायु को धीमे-धीमे लेना चाहिए और धीमे-धीमे छोड़ना चाहिए। वायु को न रोका जाये, न शीघ्रता से छोड़ा जाये। प्रारंभ में दीर्घश्वास का अभ्यास, फिर पूरक और रेचक का अभ्यास और फिर कुंभक का अभ्यास—यह प्राणायाम का विकास क्रम है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कुंभक जितना शक्तिशाली है, उतना ही भयंकर है। कुंभक की विशेष साधना किसी अनुभवी साधक की देख-रेख में उचित रहती है। उसमें खाने, चलने एवं बोलने की चर्या में पर्याप्त परिवर्तन करना पड़ता है।

प्राणायाम के व्यावहारिक लाभ

- पूरक से शारीरिक पुष्टि होती है।
- रेचक से उदर की व्याधियां क्षीण होती हैं।
- कुंभक से आंतरिक शक्तियां जागृत होती हैं।
- चन्द्र स्वर से गर्मी शांत होती है।
- सूर्य स्वर से गर्मी बढ़ती है। वायु तथा कफ जन्य प्रकोप शांत होते हैं।
- जो स्वर चल रहा है, उसे रोककर विपरीत स्वर चलाने से तात्कालिक उपद्रव शांत होते हैं।
- दूषित प्राणवायु से जीवन की हानि होती है और शुद्ध प्राणवायु से जीवनी शक्ति का विकास होता है।

उपरोक्त विवेचन से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्राणायाम केवल श्वास, नि:श्वास की प्रक्रिया का नाम ही नहीं है, यह श्वास संयम और मन को अनुशासित करने की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है। श्वास और मन का गहरा संबंध है। प्राणायाम स्नायु संस्थान को सक्रिय बनाकर ध्यान के योग्य शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं की भूमिका तैयार करता है तथा चित्त को अन्तर्मुखी बनने में सहयोग करता है।

नमस्कार महामंत्र का जप किसी न किसी प्राणायाम के साथ अवश्य करना चाहिए, क्योंकि श्वास संयम से एकाग्रता का विकास होता है। एकाग्रता की स्थिति में किया जाने वाला मंत्र-जप साधक को गहराई में ले जाता है। समुद्र की गहराई में पैठने वाले को जो अमूल्य रत्न हस्तगत हो सकते हैं, वे सतह पर तैरने वाले को कैसे मिलेंगे ? मन की शक्ति प्रचण्ड है। वह एकाग्र होने पर जीवन्त जागृत रहती है, बिखराव व चंचलता में नष्ट हो जाती है। यदि जप, ध्यान व प्राणायाम द्वारा उसको एक केन्द्र पर इकट्ठा कर लिया जाता है तो उसका प्रभाव, परिणाम चामत्कारिक होता है।

सूर्य की किरणों को यदि आतिशी शीशे के माध्यम से इकट्ठा कर लिया जाता है तो आग जलने लगेगी। बिखरी बारूद को जला देने से थोड़ी-सी चमक भर उत्पन्न होती है पर यदि उसी बारूद को नली में भरकर एक दिशा में नियोजित

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

किया जाये तो वह निशान बेधती हुई पार निकल जाती है। भाप ऐसे ही उड़ती रहती है किन्तु उसकी थोड़ी मात्रा भी एक केन्द्र पर लगा दी जाये तो उससे रेलगाड़ी के ईंधन हजारों टन माल लेकर द्रुतगति से दौड़ने लगते हैं। मन की शक्ति बारूद, भाप, धूप आदि से सबसे प्रचण्ड है। नमस्कार महामंत्र को प्राणायाम पूर्वक करने से उस प्रचण्ड मन को आसानी पूर्वक एकाग्र करके अध्यात्म के गूढ़ रहस्य, जो अपने भीतर की गहराई में हैं, से साक्षात्कार किया जा सकता है।

सोमदेव सूरि के अनुसार, ''पवन प्रयोग निपुण: सम्यक् सिद्धो भवेदशेषज्ञ:'' अर्थात् जो व्यक्ति पवन के प्रयोग में निपुण है, वह सिद्ध और सर्वज्ञ जैसा हो जाता है। ज्ञानार्णव में आचार्य शुभचन्द्र ने प्राणायाम की महत्ता को उजागर करते हुए लिखा है–

जन्मशतजनितमुग्रं प्राणायामाद्विलीयते पापम्।
नाड़ीयुगलस्यान्ते यतेर्जिताक्षस्य वीरस्य॥[2]

पवनों के साधन रूप प्राणायाम से इन्द्रियों की विजय करने वाले साधकों के सैंकड़ों जन्म के संचित किये गये तीव्र पाप दो घड़ी के भीतर लय हो जाते हैं।

वायु जप की प्रक्रिया में महामंत्र का योगदान

आचार्यश्री तुलसी ने मनोनुशासनम् ग्रंथ में प्रधानत: पांच प्रकार की शरीरगत वायु का उल्लेख करते हुए लिखा है–प्राणायाम-समानोदान-व्याना: पंच वायव:।[3]

वायु के पांच प्रकार हैं– 1. प्राण, 2. अपान, 3. समान, 4. उदान, 5. व्यान।

1. प्राण– नासाग्र-हृदय-नाभि-पादांगुष्ठान्तगोचरो नील वर्ण: प्राण:। नासिका के अग्रभाग, हृदय, नाभि और पैरों के अंगूठे तक व्याप्त रहने वाला वायु प्राण कहलाता है। इसका वर्ण नीला होता है।

2. अपान– पृष्ट पृष्टान्त पार्ष्णिम: श्याम वर्ण: अपान:। पीठ, पीठ के अन्त्य-भाग और पार्श्वियों (एड़ियों) में परिव्याप्त वायु अपान कहलाता है। इसका वर्ण श्याम होता है।

3. समान– सर्वसंधि-हृदय-नाभिग: श्वेत वर्ण: समान:। सारे संधि भागों, हृदय तथा नाभि में विचरने वाला वायु समान कहलाता है। इसका वर्ण श्वेत होता है।

4. उदान– हृदय-कण्ठ-तालु-शिरोन्तरगो रक्तवर्ण: उदान:। हृदय-कण्ठ-तालु और सिर में विचरने वाला वायु उदान कहलाता है। इसका वर्ण रक्त होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. व्यान— सर्वत्वग्वृत्तिको मेघ धनुष तुल्य वर्णो व्यान:। त्वग् मात्र में विचरने वाला वायु व्यान कहलाता है। इसका वर्ण इन्द्रधनुषी होता है।

इन पांचों वायुओं के जो अपने-अपने विचरण स्थान हैं, वहां संकल्प पूर्वक पूरक, रेचक और कुंभक करने से इन पर विजय प्राप्त होती है। इसी ग्रंथ में आचार्यश्री तुलसी ने पांचों वायुओं के ध्यान-बीज का उल्लेख किया है—''यैं पैं वैं रौं लौं तद्ध्यानबीजानि''।[4]

पांच वायुओं के ध्यानबीज, रंग व तत्त्वों की तालिका—

वायु	**ध्यान बीज**	**तत्त्व**	**रंग**
प्राण	यैं	वायु	नीला
अपान	पैं	पृथ्वी	श्याम
समान	वैं	जल	श्वेत
उदान	रौं	अग्नि	रक्त
व्यान	लौं	आकाश	इन्द्रधनुषी

जब हम इन पाँचों वायु के वर्ण बीजाक्षर और तत्त्वों की तुलना नमस्कार महामंत्र से करते हैं तो महामंत्र में सबका समावेश हो जाता है और यह भी आसानी पूर्वक समझा जा सकता है कि वायु जय की प्रक्रिया में महामंत्र का महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है। यथा—

महामंत्र के वर्ण	**तत्त्व**	**रंग**
णमो	आकाश	श्वेत
अ	वायु	श्वेत
र	अग्नि	श्वेत
हं	आकाश	श्वेत
ता	वायु	श्वेत
णं	आकाश	श्वेत
णमो	आकाश	अरुण
सि	जल	अरुण
द्धा	पृथ्वी-जल	अरुण
णं	आकाश	अरुण
णमो	आकाश	पीला

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आ	वायु	पीला
य	वायु	पीला
रि	आकाश	पीला
या	वायु	पीला
णं	आकाश	पीला
णमो	आकाश	हरा
उ	पृथ्वी	हरा
व	जल	हरा
ज्झा	जल-पृथ्वी	हरा
या	वायु	हरा
णं	आकाश	हरा
णमो	आकाश	नीला
लो	पृथ्वी	नीला
ए	वायु	नीला
स	जल	नीला
व्व	जल	नीला
सा	जल	नीला
हू	आकाश	नीला
णं	आकाश	नीला

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने नमस्कार महामंत्र की अचिन्त्य शक्ति का विश्लेषण करते हुए लिखा है—''महामंत्र की आराधना अनेक रूपों में की जाती है। जब प्राण को सक्रिय और निर्मल बनाना होता है, तब इस महामंत्र की साधना प्राण के पांच बीजों के साथ की जाती है। निम्नोक्त प्रक्रिया से पांचों वायुओं पर महामंत्र के जप द्वारा विजयश्री का वरण किया जा सकता है[5]—

1. प्राण वायु विजय

प्राण वायु का मुख्य स्थान है—नासाग्र। उसे अपने वश में करने के लिए 'यैं' बीजाक्षर के साथ नासाग्र पर महामंत्र का जप किया जाता है।

प्रथम आवृत्ति— पूरक—यैं णमो अरहंताणं
रेचक—यैं णमो सिद्धाणं

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

द्वितीय आवृत्ति	पूरक—यैं णमो आयरियाणं रेचक—यैं णमो उवज्झायाणं
तृतीय आवृत्ति	पूरक—यैं णमो लोए रेचक—सव्व साहूणं।

नासाग्र के द्वारा प्राण का गम, निर्गम होता है। लंबे समय तक इस मंत्र के साथ प्राण वायु के गम और निर्गम पर ध्यान करने से वह साधक के अधीन हो जाती है। फिर साधक उसको शरीर के जिस भाग में ले जाना चाहे या स्थापित करना चाहे, मन की गति के साथ वह वहीं पर चली जाती है, या स्थापित हो जाती है।

प्राण वायु को जीतने से जठराग्नि प्रबल होती है, शरीर में हल्कापन आ जाता है।

2. अपान वायु विजय

अपान वायु का मुख्य स्थान है—गुदा। यैं बीजाक्षर के साथ शक्ति-केन्द्र पर उपरोक्त विधि से महामंत्र का जप करने से अपान वायु पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

3. समान वायु विजय

समान वायु का मुख्य स्थान है—नाभि। 'वैं' बीजाक्षर के साथ तैजस-केन्द्र (नाभि) पर महामंत्र का जप करने से समान वायु पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

अपान व समान वायु-विजय की फलश्रुतियां[6]—

1. व्रण संरोहण—घाव मिलना।
2. अस्थि संधान—हड्डी जुड़ जाना।
3. जठराग्नि की प्रबलता।
4. मल और मूत्र की अल्पता।
5. व्याधि विजय।

4. उदान वायु विजय

उदान वायु का मुख्य स्थान है—औष्ठ। औष्ठ पर 'रौं' बीजाक्षर के साथ उपरोक्त विधि से महामंत्र का जप करने से उदान वायु पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

'ॐ अर्हम्' मंत्र के उच्चारण में नाद का प्रभाव भी उदान वायु औष्ठ पर पड़ता है। इसकी साधना करते समय दोनों दंत पंक्तियां अलग-अलग और दोनों औष्ठ मिले हुए रहने चाहिए।

इस अवस्था में औष्ठ पर ध्यान केन्द्रित रहें। दीर्घश्वास के साथ संकल्प करें, श्वास उदान प्राण को जागृत कर रहा है। इस प्रयोग से भी उदान-प्राण पर विजय प्राप्त होती है।

यह एक उपाय है लघिमा सिद्धि को पाने का। जो व्यक्ति अपने आपको हल्का अनुभव करना चाहता है, उसे उदान-प्राण पर विजय प्राप्त करनी अनिवार्य है।

मौन करने वाला भी उदान प्राण पर विजय प्राप्त करता है। उदान वायु पर विजय प्राप्त करने पर कीचड़, कांटे आदि बाधक नहीं बनते। लघुता प्राप्त होने से फंसना, चुभना आदि नहीं होते।

5. व्यान वायु विजय

व्यान वायु का स्थान पूरा शरीर है। 'लौं' बीजाक्षर के साथ उपरोक्त विधि से महामंत्र का जप और पैर के अंगूठे से लेकर सिर तक करने से व्यान वायु पर विजय प्राप्त होती है।

तप और पीड़ा का अभाव तथा निरोगता—ये व्यान वायु विजय के फल हैं।

पांचों प्राणों (वायुओं) पर विजय प्राप्त होने से लघिमा सिद्धि की प्राप्ति होती है। लघिमा शक्ति के विकास से व्यक्ति लोह किलों पर आसानी से चल सकता है। पानी पर चल सकता है।

दृढ़ आस्था युक्त प्रतिदिन लम्बे समय तक संकल्प पूर्वक पूरक, रेचक व कुंभक करने से कर्म-पुद्गलों का विलय होने से सहज ही ये शक्तियां प्राप्त होती हैं। मन के अनुशासित होने पर अतीन्द्रिय ज्ञान की प्राप्ति होती है। मनोनुशासन का चरम फल अतीन्द्रिय ज्ञान की उपलब्धि या स्वभाव की उपलब्धि है।[7]

प्रत्येक वायु स्वाभाविक ढंग से अपना-अपना काम करती है किन्तु ध्यान व जप के द्वारा उनमें विशेषता लाई जा सकती है। उनकी शक्ति का संवर्धन किया जा सकता है। इस कार्य के सम्पादन में प्राणायाम का महत्त्वपूर्ण स्थान है। रेचक के द्वारा उसके दूषित तत्त्वों को बाहर फेंक दिया जाता है, पूरक के द्वारा उनकी शक्ति को पुष्ट किया जाता है। कुंभक द्वारा उनकी कार्यक्षमता को जागृत किया जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शरीरस्थ चैतन्य-केन्द्रों की अनुभूति, अभिव्यक्ति प्राण द्वारा ही होती है। प्राण सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है। जैन परम्परा में प्राणों के विभाग को निम्नोक्त रूप में विभक्त किया गया है।

शरीर और चेतना का सेतु–प्राण

1. श्रोत्रेन्द्रिय प्राण	6. मनोबल प्राण
2. चक्षुरिन्द्रिय प्राण	7. वचनबल प्राण
3. घ्राणेन्द्रिय प्राण	8. कायबल प्राण
4. रसनेन्द्रिय प्राण	9. श्वासोच्छ्वास प्राण
5. स्पर्शनेन्द्रिय प्राण	10. आयुष्य प्राण।

पांचों इन्द्रियों को सक्रिय करने वाले प्रथम पांच प्राण हैं। मन, वचन और काया को सक्रिय रखने वाले मनबल, वचनबल और कायबल प्राण हैं। श्वासोच्छ्वास प्राण रक्त शोधन की क्रिया के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर को सक्रिय रखता है। आयुष्य प्राण जीवन की अवधि के अस्तित्व का आधार है।

शरीर तक चैतन्य की धारा को प्रवाहित करने वाले ये प्राण नाना विधाओं से अपना कार्य करते हैं। श्रवण-इन्द्रिय के समस्त क्रियाकलापों को श्रोत्रेन्द्रिय प्राण नियंत्रित करता है। इन्द्रिय के दो प्रकार हैं–

1. द्रव्येन्द्रिय, 2. भावेन्द्रिय।

द्रव्येन्द्रिय भौतिक है। इसका बाह्य आकार और रचना शरीर में स्पष्ट है। द्रव्येन्द्रिय भावेन्द्रिय की सूचनाओं को ग्रहण करती हैं। वह बाहर से आने वाले संकेतों को भाव जगत् तक पहुँचाती है। इस प्रकार बाहर और अन्तर जगत् का संबंध बना हुआ है।

श्रोत्रेन्द्रिय की तरह चक्षुरिन्द्रिय आदि अपना कार्य करती हैं।

मन मनोवर्गणा के स्कन्धों को शरीर से ग्रहण कर चिंतन, मनन, स्मृति व कल्पना द्वारा अपना कार्य करता है। वचन भी इसी तरह भाषा-वर्गणा के स्कन्धों को ग्रहण कर विचार, संकेत, स्वर और भाषा के द्वारा अपना कार्य करता है। काय-बल प्राण और शरीर के विभिन्न अंग-प्रत्यंगों के लिए शक्ति उत्पादन कर वितरण करता है।

जैन दर्शनानुसार ये दस प्राण और आयुर्वेद तथा हठयोगानुसार प्राण, अपान आदि पांचों प्राणों का परस्पर एक्य भाव है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निष्कर्ष

शरीर स्थित सप्त साधुओं में सातवीं धातु है—शुक्र, वीर्य। कहा गया है—'मरणं बिन्दु पातेन, जीवनं बिन्दु धारणात्'—बिन्दु के पात से मरण होता है और बिन्दु धारण से जीवन प्राप्त होता है। बिन्दु क्या है? मस्तिष्क में जो प्राण ऊर्जा है, यह जो ग्रे मैटर है, यह जो धूसर हिस्सा है, यही है बिन्दु, यही है वीर्य। 'सहस्रारोरपि बिन्दुः'—सहस्रार के ऊपर बिन्दु की अवस्थिति है। उस बिन्दु के साथ जब शक्ति का मिलन होता है, तब आत्म-रति पैदा होती है।

जब प्राण की ऊर्जा का प्रवाह निम्नगामी होता है तब जैनदर्शन के अनुसार मनुष्य पहले, दूसरे व तीसरे गुणस्थान में ही रहता है। जब चौथा गुणस्थान आता है तब विवेक की प्रज्ञा जागती है और ऊर्जा नाभि के आस-पास आती है। फिर क्रमशः आरोहण होता है। साधक ऊपर उठता है। वह सुषुम्ना के मार्ग से मस्तिष्क के केन्द्र तक पहुँचता है और धीरे-धीरे आगे बढ़ता हुआ केवलज्ञान प्राप्त कर लेता है, आत्मा का साक्षात्कार हो जाता है। इस क्रम में सुषुम्ना से चलना और सहस्रार तक पहुँचना—यात्रा छोटी लग सकती है पर बहुत कठिन व अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है यह यात्रा। इस यात्रा में केवल आरोहण ही आरोहण है।

आरोहण के इस क्रम में प्राणायाम सहित नमस्कार महामंत्र का जप नियमित दीर्घकाल तक करने से शक्ति के अक्षय भण्डार को सुरक्षित रखा जा सकता है। कार्यक्षमता को विकसित कर अनेक योग्यताएं हासिल की जा सकती हैं। जीवन को तेजस्वी, ओजस्वी, वर्चस्वी, मनस्वी और यशस्वी बनाया जा सकता है।

सन्दर्भ—

1. यशस्तिलक—39; 616—उपासक ध्यान
2. ज्ञानार्णव, प्र. 29, श्लोक-102
3. मनोनुशासनम्, प्रकरण-5, सूत्र-1, पृ. 102
4. वही, पृ. 5, सूत्र-18, पृ. 105
5. शक्ति की साधना, पृ. 78
6. मनोनुशासनम्, पृ. 132
7. वही, पृ. 134.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11. नाड़ी शोधन प्राणायाम : महामंत्र विधियां

जप और ध्यान की प्रारंभिक अवस्था में नाड़ी शोधन का अभ्यास आवश्यक है। इस प्राणायाम से शरीर की शुद्धि और मन की स्थिरता बराबर बनी रहती है। प्रातः, सायं और मध्याह्न नौ-नौ आवृत्ति करने से तीन माह में नाड़ी-शोधन हो जाता है, ऐसा अनुभवियों का कथन है।

इस प्राणायाम के प्रथम चरण में केवल रेचक से पूरक और पूरक से रेचक—ये दो ही आवृत्ति की जाती हैं, इस क्रम से स्वर दाएं-बाएं अवश्य बदलना चाहिए।

प्रथम विधि [1] —

सर्वप्रथम चन्द्र स्वर से श्वास का रेचन करें।

पद	स्वर	श्वास-प्रश्वास
णमो अरहंताणं	चन्द्र स्वर से	श्वास लेते समय
णमो सिद्धाणं	सूर्य स्वर से	श्वास छोड़ते समय
णमो आयरियाणं	सूर्य स्वर से	श्वास लेते समय
णमो उवज्झायाणं	चन्द्र स्वर से	श्वास छोड़ते समय
णमो लाए	चन्द्र स्वर से	श्वास लेते समय
सव्व साहूणं	सूर्य स्वर से	श्वास छोड़ते समय

प्रारंभ इस क्रम से करें, फिर चालू क्रम में जैसे श्वास-प्रश्वास चल रहा हो, क्रम को महामंत्र के जप के साथ प्रारंभ रखें। इस विधि से माला फेरने से हमारा मन शीघ्र शांत और एकाग्र होने लगता है। इस प्रकार एक आवृत्ति में तीन उच्छ्वास होते हैं। पूरी माला में 324 श्वास-प्रश्वास का परावर्त्तन होता है।

दूसरी विधि [2] —

दिगम्बर साहित्य में नौ बार महामंत्र को जपने पर बल दिया गया है। वहां भी इसी पूर्वोक्त विधि का उल्लेख प्राप्त होता है। अन्तर केवल इतना-सा है कि श्वास लेते समय कुछ नहीं बोलकर श्वास छोड़ते समय प्रथम दो पंक्तियां बोली जाएं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

क्रम इस प्रकार बनता है–

पद		**श्वास–प्रश्वास**
णमो अरहंताणं		
णमो सिद्धाणं	–	श्वास छोड़ते समय
णमो आयरियाणं		
णमो उवज्झायाणं	–	श्वास छोड़ते समय
णमो लोए		
सव्व साहूणं	–	श्वास छोड़ते समय

दूसरा क्रम यह भी प्राप्त होता है–

श्वास भरते समय प्रथम दो पद बोले जाते हैं।

श्वास रोककर तीसरा, चौथा पद बोला जाता है।

श्वास छोड़ते समय पांचवां पद बोला जाता है।

इस प्रकार कम से कम नौ बार नमस्कार महामंत्र का प्रतिदिन प्रात:-सायं प्रतिक्रमण तथा प्रत्येक धार्मिक क्रिया के पूर्व जप करने का विधान है।

तीसरी विधि[3] –

कुम्भक में – रूके हुए श्वास में मन की जैसी स्थिरता बनती है, वैसी सामान्यत: रेचक और पूरक में नहीं बनती। अत: नमस्कार महामंत्र जप के लिए एक ऐसी पद्धति सुझाई गई है, जिससे मानसिक अस्थिरता की समस्या धीरे-धीरे समाहित हो जाती है।

किसी एक स्थिर आसन में बैठकर प्राणायाम करें। आसन का चुनाव ध्यानासनों में से हो। इसके बाद तुरन्त धीरे-धीरे एक लम्बी एवं गहरी श्वास भरकर उसे हृदय में धारण करें। इस प्रकार पांच बार श्वास का पूरक करें और हृदय-कमल (गुरुस्थान आनन्द-केन्द्र) में महामंत्र की धारणा करें।

चतुर्थ विधि[4] –

1. रेचक जप – निकलते श्वास के साथ नमस्कार महामंत्र के पूरक पद का धीरे-धीरे मन ही मन उच्चारण करना। अनुलोम-विलोम विधि से।

2. पूरक जप – ग्रहण करते समय श्वास के साथ सम्पूर्ण महामंत्र का स्थिरता-पूर्वक उच्चारण करना। अनुलोम-विलोम विधि से।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. कुंभक जप— रुके हुए श्वास में पूर्ण पद का स्मरण करना। अनुलोम-विलोम विधि से।

नाड़ी शोधन प्राणायाम के साथ उपरोक्त विधियों से महामंत्र का जप करने से अल्फा तरंगों का निर्माण होता है। ये अल्फा तरंगें हमारे मन को शांत, शक्तिशाली एवं प्राणवान बनाती हैं। जिसकी फलश्रुतियां निम्नलिखित रूपों में प्रस्फुटित होती हैं—

1. अपने स्वरूप की पहचान,
2. शक्तिशाली प्रज्ञा का जागरण,
3. मोह कर्म का विलय,
4. अहिंसक चेतना का जागरण।

1. अपने स्वरूप की पहचान

श्वास संयम के साथ महामंत्र की दीर्घकालिक साधना से प्राण व चैतन्य का स्पष्ट अनुभव होने लगता है, ''तब मैं कौन हूँ'', ''कोऽहं'' यह उलझा हुआ प्रश्न ''सोऽहं'' में परिवर्तित होकर समाधान बन जाता है। अर्हत् वाणी में आचार्यश्री तुलसी ने इसी तथ्य को बहुत सुन्दर प्रस्तुत किया है—

कोऽहं! अरे! कहाँ से आया?
और कहाँ जाऊँगा?
नहीं ज्ञान यह सबको होता
कैसी स्थिति पाऊँगा?
स्वयं स्वयं की जाति स्मृति से
अथवा ज्ञानी के मुख से सुन
ज्ञात हुआ संसरणशील मैं
सुख का दु:ख का वरणशील मैं
दिग दिगन्त संचरणशील मैं
मैं उपपात मरण धर्मा हूँ, कृत कर्मा हूँ
मैं अतीत में था, अब हूँ
भविष्य में बना रहूँगा
सोऽहं सोऽहं का संगानी
वही प्रत्यभिज्ञा अभिधानी
आयारों की अर्हत् वाणी।[5]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. शक्तिशाली प्रज्ञा का जागरण

मस्तिष्क विज्ञानी कहते हैं—हमारे मस्तिष्क में जितनी शक्ति है, उसका बहुत कम उपयोग होता है। साधारण आदमी पांच प्रतिशत शक्ति का उपयोग करता है, बुद्धिमान व्यक्ति सात प्रतिशत और महान् व्यक्ति आठ से दस प्रतिशत उपयोग करते हैं। महान् बनने के लिए चेतना की परिक्रमा नाभि से ऊपर के केन्द्रों में होनी आवश्यक है। दीर्घश्वास के साथ महामंत्र का जप, समवर्ती श्वास के साथ महामंत्र का जप हमारी चेतना को ऊर्ध्वगामी बनाकर ऊपर के केन्द्रों को विकसित करता है। परिणामत: अनुपम आनन्द, निर्मल चेतना व शक्तिशाली प्रज्ञा का जागरण होता है। प्रज्ञा के जागरण से ग्रंथियों का विघटन और सत्य की उपलब्धि होती है। दीर्घकालिक अभ्यास से लघु मस्तिष्क, बायां गोलार्द्ध, दायां गोलार्द्ध, अवचेतन मन आदि जिनका बहुत भाग सोया हुआ है, वे जागते हैं, जिससे चिन्तन के नये-नये द्वार खुलते रहते हैं। श्वास जितना शांत व प्रलम्ब होता है, उतने ही विचार गंभीर और निर्मल होते हैं।

प्राणायाम पूर्वक महामंत्र का जप करने से चित्त वर्तमान में आता है, दिमाग की कुशलता बढ़ती है, अन्तर्दृष्टि का जागरण होता है, तटस्थता तथा जागरूकता का विकास होता है।

अतीन्द्रिय चेतना के धनी आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने चेतना के उर्ध्वारोहण की विकास यात्रा के विषय में अपने अनुभवों को निम्न प्रकार से नियोजित किया है—

जब चेतना नाभि-कमल से ऊपर उठकर हृदय-कमल की पंखुड़ियों पर जाती है तब समता की वृत्ति जागती है, ज्ञान का विकास होता है और अच्छी प्रवृत्तियां उभरती हैं।

जब चेतना (आत्म-परिणाम) दर्शन-केन्द्र पर पहुँचती है तब चौदह पूर्वों को ग्रहण करने की क्षमता का विकास होता है।

जब आत्म-परिणाम ज्ञान-केन्द्र पर पहुँचते हैं, तब केवलज्ञान की क्षमता जागृत होती है।

3. मोह कर्म का विलय

श्वास का वृत्तियों के साथ गहरा संबंध है। हिंसा, झूठ, चौरी, संभोग, पदार्थ पर आसक्ति, क्रोध, अहंकार, माया, लोभ, प्रियता, अप्रियता, कलह, डींग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हाकना, चुगली, कुरूचि, षड्यंत्र और गलत दृष्टिकोण–ये अठारह तरह की वृत्तियां हैं, जिनके तीव्र रहने से श्वास भी तीव्र गति से चलता है। इनके उपशांत होने पर श्वास भी उपशांत हो जाता है।

जैन दर्शनानुसार मोह कर्म का उदय और उपशम होने से इन वृत्तियों का उदय और उपशम होता है। जिस प्रकार मंत्र से देव वश में रहता है, वैसे ही श्वास संयम और महामंत्र रूपी मंत्र से पाप रूपी देव वश में रहता है। मोह कर्म के उदय से व्यक्ति गल्तियां करता है और अपनी गलती को स्वीकार नहीं करता। मोहकर्म के क्षयोपशम से गलती को ऋजुता से स्वीकार कर लेता है। महामंत्र जप से आवेश, आवेग, वासना, भय सबको नियंत्रित किया जा सकता है और श्वास संयम के द्वारा भी ये वृत्तियां नियंत्रित रहती हैं। श्वास संयम और महामंत्र जप– दोनों के मणिकाञ्चन योग से मोहकर्म का क्षयोपशम व क्षयीकरण सुलभ हो जाता है।

4. अहिंसक चेतना का जागरण

सब जीवों का जीवन श्वास से ही चलता है। जिस व्यक्ति अथवा प्राणी का श्वास धीमा और लम्बा है, वह शांत स्वभावी होता है। जिसका श्वास उत्तेजक अथवा छोटा होता है, उसका स्वभाव चंचल और क्रूर होता है। अशांत पशुओं की श्वास संख्या और शांत पशुओं की श्वास संख्या का तुलनात्मक अध्ययन इस तथ्य की पुष्टि करता है।

अशांत पशुओं की श्वास संख्या–

पशु	श्वास संख्या
सिंह	प्रति मिनट 30 से 40 श्वास
बाघ	प्रति मिनट 25 से 35 श्वास
कुत्ता	प्रति मिनट 25 से 30 श्वास

शांत पशुओं की श्वास संख्या–

पशु	श्वास संख्या
गाय	प्रति मिनट 12 से 16 श्वास
कछुआ	प्रति मिनट 3 से 4 श्वास

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मनुष्य की श्वास संख्या प्रति मिनट 15 से 17 है। प्राणायाम पूर्वक महामंत्र जप की आराधना से श्वास की संख्या/गति को 15-17 से हटाकर 8, 6 या 3 प्रति मिनट करके अहिंसक चेतना का जागरण किया जा सकता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि मंत्रों के द्वारा जैविक रासायनिक परिवर्तन भी संभव है। प्रत्येक शब्द के उच्चारण में अपना एक विशेष प्रभाव होता है। एक ही मंत्र के व्यक्ति, क्षेत्र, काल आदि के भेद से विभिन्न परिणाम हो जाते हैं। भगवान महावीर ने शब्द की शक्ति को बहुत पहले ही पहचान लिया था। उन्होंने हजारों वर्ष पूर्व ध्वनि तरंगों के बारे में बहुत कुछ कह दिया।

नमस्कार महामंत्र की साधना का समग्र दृष्टिकोण है—आत्मा का जागरण। किन्तु साधक को यह देखना है कि इस जागरण में क्रोध, लोभ, भय, काम-वासना, निराशा, चिंता आदि कौनसे दोष विघ्न बन रहे हैं अर्थात् अधिक सता रहे हैं उन्हें मिटाने के लिए एक विशेष प्रकार की साधना अपेक्षित है। विशेष प्रकार के ध्वनि तरंग और प्रकंपन आवश्यक है, क्योंकि इस मंत्र का परिमार्जन हमारे विचारों के परिमार्जन में ही है। चैतन्य केन्द्रों पर महामंत्र का जप और नाड़ी शोधन प्राणायाम के साथ महामंत्र का जप एक विशेष प्रकार के ध्वनि प्रकंपन को पैदा करता है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने अपने जीवन के प्रलम्ब कालखण्ड में अनेक मंत्रों के प्रयोग किये हैं।

कुछ मंत्र-प्रयोग जो महामंत्र अथवा महामंत्र से निष्पन्न मंत्रों से संबंधित हैं, उनकी संक्षिप्त-सी चर्चा यहाँ प्रस्तुत कर रही हूं—

विक्रम संवत् 2006 में आचार्यश्री तुलसी का चातुर्मास जयपुर था, उस समय आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने ''ह्रां ह्रीँ ह्रुँ ह्रैं ह्रौं ह्रः'' मंत्र की साधना की।

विक्रम संवत् 2007 हांसी चातुर्मास में 'ॐ' का प्लुत उच्चारण के साथ दीर्घकालिक प्रयोग किया। इसी चातुर्मास में नमस्कार महामंत्र के पांच पदों का चैतन्य केन्द्रों पर रंगों के साथ प्रयोग किया। ''अ सि आ उ सा'' इस मंत्र का भी अलग-अलग अवयवों पर सफलता के लिए प्रयोग किया।

विक्रम संवत् 2016 में ज्ञानार्णव ग्रंथ का अध्ययन चल रहा था। उसमें वर्णमाला का मंत्र रूप में प्रयोग निर्दिष्ट था। उस समय नाभि, हृदय-चक्र और मुख पर वर्णमाला का साक्षात्कार किया। तब से अब तक यह प्रयोग चल रहा है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र के साथ रंगों व चैतन्य-केन्द्रों का संयोजन चित्त की एकाग्रता और निर्मलता के संवर्धन का पुष्ट हेतु है और उसके साथ दीर्घश्वास अथवा प्राणायाम के प्रयोग उसको और अधिक प्रभावशाली और सफल बनाते हैं।

सन्दर्भ–

1. नमस्कार महामंत्र साधना के आलोक में, पृ. 82
2. वही, पृ. 82
3. वही, पृ. 83
4. वही, पृ. 83
5. आत्मा के आस-पास, पृ. 17.

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

12. चैतन्य–केन्द्रों की सक्रियता का सेतु : नमस्कार महामंत्र

गुरु गोविन्द साहब के कुछ शिष्य एक बार उनके पास आकर बोले– गुरुदेव! प्रतिदिन जप करते हैं पर मन की चंचलता समाप्त नहीं हो रही है, क्या कारण है इसका? गुरुजी ने कहा–आज तुम सब जाओ। तुम्हारे इस प्रश्न का उत्तर मैं बाद में दूँगा। शिष्य चले गये। कुछ समय बीतने के बाद गुरुजी ने शिष्यों को आमंत्रित कर आदेश दिया। तुम सब मदिरा से भरा हुआ एक घड़ा लाओ और उससे गण्डूष कर घड़े को खाली कर दो। शिष्यों ने वैसा ही किया। घड़ा खाली होने के बाद वे पुन: गुरु गोविन्दसाहब के पास पहुँचे। गुरुजी ने पूछा–घड़े की सारी मदिरा समाप्त कर दी? उन्होंने स्वीकृति सूचक उत्तर दिया। गुरु ने दूसरा प्रश्न किया–तुममें से किसी पर मदिरा का नशा नहीं चढ़ा। वे सब एक साथ बोले–गुरुदेव! नशा कैसे चढ़ता। हमने उसे गले से नीचे उतारी ही नहीं। गुरुजी ने मुस्कुराते हुए कहा–अब तो तुम लोगों को अपने प्रश्न का समाधान मिल गया।

शिष्यों ने विस्फारित नेत्रों से गुरु की ओर देखा तो उन्होने इस प्रयोग का रहस्योद्घाटन करते हुए कहा–गले से नीचे उतरे बिना मदिरा का प्रभाव नहीं होता तब भगवद् नाम का भी असर कैसे होगा? तुम लोग जप करते हो पर ऊपर-ऊपर से। जब तक हृदय से जाप नहीं करोगे, उसमें डूब नहीं जाओगे, तल्लीन नहीं हो जाओगे तब तक रूपान्तरण नहीं हो सकता। शिष्यों को अपनी जिज्ञासा का समाधान मिल गया।

घटना के निष्कर्ष में कहा जा सकता है कि चैतन्य केन्द्रों का रहस्य समझे बिना शब्द को प्राण तक नहीं ले जाया जा सकता। चैतन्य केन्द्र और चैतन्य केन्द्रों पर होने वाले सूक्ष्म ध्वनि के स्पन्दनों को पकड़े बिना मंत्र की शब्दावली को आगे नहीं बढ़ाया जा सकता। इसलिए चैतन्य केन्द्रों की जानकारी करना आवश्यक है।

चेतना व शक्ति की अभिव्यक्ति के स्रोत

चैतन्य केन्द्र हमारी चेतना और शक्ति की अभिव्यक्ति के स्रोत हैं। जिस प्रकार लकड़ी में आकृति, अनघड़ पत्थर में मूरत और आत्मा में परमात्मा छिपा हुआ है, उसी प्रकार हमारे शरीर के भीतर शक्ति के केन्द्र छिपे हुए हैं। भगवती सूत्र में उल्लेख आता है, ''सव्वेणं सव्वे'' हमारी चेतना के असंख्य प्रदेश हैं, वे सब चैतन्य केन्द्र हैं। किन्तु कुछ स्थान ऐसे हैं, जहां चैतन्य दूसरे स्थानों की

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अपेक्षा सघन होता है। उन्हें चैतन्य केन्द्रों की संज्ञा से अभिहित किया गया है। उन्हें जागृत करने की दो पद्धतियां हैं—

1. विशुद्ध लेश्या की भावधारा द्वारा चैतन्य केन्द्र अपने आप जागृत हो जाते हैं।
2. चैतन्य केन्द्रों पर अवधान नियोजित करने पर वे जागृत हो जाते हैं।

चैतन्य केन्द्रों पर अवधान नियोजित करने के लिए प्रेक्षा, अनुप्रेक्षा अथवा जप का आलंबन श्रेष्ठ है। चैतन्य केन्द्र सब अवयवों में सक्रियता पैदा करने वाले हैं, ये इन्द्रियों को भी संचालित करते हैं, मन को भी संचालित करते हैं। चैतन्य केन्द्रों पर ऊर्जा का बाहुल्य होने से जब हम उन केन्द्रों पर केन्द्रित होकर नमस्कार महामंत्र का जप अथवा ध्यान करते हैं तब उन-उन स्थानों के केन्द्रों की ऊर्जा सक्रिय होने लगती है।

नाभि, हृदय और मस्तिष्क—शरीर के ये तीन महत्त्वपूर्ण हिस्से हैं। नाभि धरातल है, पृथ्वी तल है, हृदय वायुमण्डल है और मस्तिष्क आकाशीय-क्षेत्र है, मुक्ति का धाम है। नाभि शरीर का तल है, हृदय प्राणों का तल है, मस्तिष्क ज्ञान-विज्ञान और आनन्द का तल है। देह से विदेह भाव में स्थित होना सिद्ध क्षेत्र में विहार है। नमस्कार महामंत्र का जप एकाग्रतापूर्वक एक-एक केन्द्र पर क्रमशः विधिपूर्वक करने से निश्चित ही आध्यात्मिक स्वस्थता, आध्यात्मिक शांति और आध्यात्मिक ज्ञान की प्राप्ति होती है।

सबसे पहले मन को शान्ति-केन्द्र पर केन्द्रित करना होता है, वहां होने वाले प्रारंभिक स्पन्दनों को पकड़ना होता है। उसके पश्चात् सुषुम्ना मार्ग से, त्रस नाड़ी से शब्दावली को ऊपर ले जाया जाता है जब वह शब्दावली दर्शन-केन्द्र पर पहुँचती है तब वह मन की शब्दावली बन जाती है। फिर णमो अरहंताणं का पाठ नहीं होता, णमो अरहंताणं का साक्षात् होता है। जब यह यात्रा ज्ञान केन्द्र तक पहुँचती है, तो स्वयं अर्हत् का साक्षात् हो जाता है। अर्हत् पद की रश्मियां समूचे शरीर में फैल जाती हैं। वहां पहुंच कर मंत्र वीर्यवान, शक्तिशाली बन जाता है।

पूर्व प्रकरणों से यह भलीभांति जाना जा सकता है कि आवर्त्तन के दो प्रकार हैं—1. शब्द आवर्त्तन, 2. ऊर्जा आवर्त्तन।

शब्द से अक्षर, अक्षर से भाषा, भाषा भाव से जुड़कर वाणी और वाणी जब परावाणी बनकर महापुरुषों की चेतना का स्पर्श करती है, तब मंत्र रूप बन जाती है। मंत्र के पुनरावर्त्तन से घर्षण और घर्षण से ऊर्जा उत्पन्न होती है। ऊर्जा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जब आरोह-अवरोह करती है तब आवर्त्तन बनते हैं। आवर्त्तन में उत्पन्न आस्था शब्दों की यात्रा बनकर जब हमारे शरीरस्थ चैतन्य केन्द्रों पर, नाभि-कमल, हृदय-कमल पर घर्षण करती है तब वे केन्द्र जागृत हो जाते हैं। चैतन्य केन्द्रों की सक्रियता से विशिष्ट अर्हताएं जागृत होने लगती हैं, यथा–

- स्व स्वरूप का बोध
- ज्ञाता-द्रष्टा भाव का विकास
- प्रज्ञा और चैतन्य का जागरण
- चैतन्य-केन्द्रों की निर्मलता (चित्त शुद्धि)
- नाड़ी ग्रंथितंत्र का संतुलन
- अन्तःकरण का परिवर्तन
- वृत्ति परिष्कार
- अभय की साधना का विकास
- आनन्द-केन्द्र का जागरण (दुःख-सुख में समभाव)
- शक्ति का जागरण (शक्ति संस्थान की सक्रियता)
- कर्म-तंत्र तथा भाव-तंत्र का शोधन
- पदार्थ प्रतिबद्धता से मुक्ति
- विवेक चेतना का जागरण
- अतीन्द्रिय क्षमता का विकास।

नमस्कार महामंत्र में तन्मयता आने से ऊर्जान्वित साधक की पिच्यूटरी ग्रंथि (दर्शन-केन्द्र) से A.C.T.H. नामक हार्मोन निकलना प्रारंभ होता है। परिणामतः उसकी प्राण ऊर्जा में अल्फा तरंगें आंदोलित हो जाती हैं और वह समस्त मानसिक पीड़ाओं से मुक्त हो जाता है, स्वयं आनन्द से भर जाता है, प्रसन्न हो जाता है। इससे बड़ी तात्कालिक उपलब्धि और क्या हो सकती है?

शक्ति के अभिधान

प्राण मानवीय शक्ति का महत्त्वपूर्ण स्रोत है। उससे अनेक शक्ति धाराएं निकलती हैं। उनका विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग होता है। विभिन्न भाषाओं, विभिन्न धर्मों व विभिन्न संस्कृतियों में ऊर्जा के नाम की भिन्नता अवश्य है पर शक्ति और साधना के रूप में किसी न किसी रूप में इसे स्वीकारा है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आधुनिक विज्ञान ने जिन्हें ''ऊर्जा'' नाम से पुकारा, चीनी भाषा में उसे ''ची'' कहा जाता है। संस्कृत भाषा में प्राण और हिपोक्रेट्स ने इसे ''प्रकृति की उपचार शक्ति'' कहा है। रूसी अन्वेषणकर्त्ताओं ने इसे ''बायोप्लाजमिक-एनर्जी'' और सूफियों ने ''बरकत'' कहा है। इसे ''ओडिक-फॉर्स'', ''आर्गोन'' या ''बायोप्लाज्मा'' भी कहते हैं। विभिन्न संस्कृतियों के अलग-अलग नाम उपलब्ध हैं। ईसाइयों का ''होलीघोष्ट'', मिश्रवासियों का ''का'', ग्रीक संस्कृति में ''न्यूमा'', पाली भाषा में ''अहंकार'' तथा ''पांचवी-शक्ति'' से भी इसी शक्ति की ओर संकेत मिलता है। जैन दर्शन में इसे तैजस-शक्ति ''तैजस-शरीर'' के नाम से पहचाना जाता है।

जप, ध्यान, आसन, प्राणायाम, व्रत आदि से चैतन्य-केन्द्रों को प्रभावित करके इसी शक्ति का उध्वारोहण किया जाता है। शक्ति का उध्वारोहण होने से व्यक्ति के जीवन के लक्ष्य और प्रेरणाएं पशु स्तर से ऊपर उठकर सम्यक् ज्ञान-दर्शन से प्रभावित होती हैं। सम्यक् ज्ञान-दर्शन से प्रभावित व्यक्ति अपने लक्ष्य की ओर कदम बढ़ाता है तब उसका चरित्र भी तदनुरूप हो जाता है। उसकी संकल्प शक्ति दृढ़ हो जाती है।

चैतन्य केन्द्र और शक्ति संवर्धन

योग की भाषा में 'चक्र', प्रेक्षाध्यान में चैतन्य-केन्द्र, आयुर्वेदानुसार 'मर्म-स्थान' शरीर शास्त्र की भाषा में 'ग्लैण्ड्स' और जापान में जूडो पद्धति में 'क्यूसोस' कहलाने वाले इन सबके स्थल और आकार समान हैं। इसमें विशेष अन्तर नहीं है। प्राय: इन सबकी धारणा समान है। एक्यूपंक्चर और एक्यूप्रेशर पद्धति ने ''सात सौ केन्द्र'' खोज लिए हैं। चेतना के ये सारे केन्द्र हमारे शरीर में हैं। हठ-योग के आचार्यों ने 'सात चक्रों' का, सुश्रुत संहिता में 'एक सौ सत्तावन मर्मस्थानों' का, प्रेक्षाध्यान में 'तेरह चैतन्य केन्द्रों' का निर्देश दिया गया है। मानव शरीर में कुल सात सौ बड़ी ग्रंथियां भी होती हैं, जिनसे शरीर के उपयोग के लिए हार्मोन्स बनते हैं।

मर्मस्थान, एक्यूप्रेशर के प्वॉइण्ट्स, अन्त:स्रावी ग्रंथियां—ये सब चैतन्य-केन्द्र से संबद्ध और प्रभावित हैं। विशाल भूखण्ड में साधकों ने अलग-अलग स्थानों की खोजें की हैं। चीन, जापान आदि देश के साधकों ने भी इन स्थानों की खोज की है। सुफी मतवालों ने भी इस दिशा में प्रयास किया है। उन्होंने नये चैतन्य केन्द्रों के बारे में बताया—दाईं-बाईं काँख के पास, पसलियों के ऊपर काँख के पास भी चैतन्य केन्द्र हैं। कुलपाक की प्रतिमा में दो कंधों पर दो चैतन्य

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

केन्द्र दिखाये गए हैं। इन्दौर से एक व्यक्ति आया। शक्ति-केन्द्र की चर्चा के दौरान उसने आचार्यश्री महाप्रज्ञजी से कहा—आपने तेरह चैतन्य केन्द्र माने हैं। प्रत्युत्तर में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने कहा—जैन आगमों में वर्णित आहारक लब्धि का प्रयोग करते समय मुनि अपने कंधे से पुतला निकालता है। हमारे दोनों कंधों में भी दो शक्ति-केन्द्र हैं। दोनों हाथों के मणिबंध के ऊपर और दोनों पसलियों के छोर पर दो-दो शक्ति-केन्द्र हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर चैतन्य केन्द्रों की संख्या उन्नीस हो सकती है।[1]

एक्यूप्रेशर करने वाले बताते हैं कि जिस व्यक्ति को चिर युवा रहना है, उसे मणिबंध के ऊपर हमेशा प्रेशर देना चाहिए। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने अपने ध्यान की गहराई और अनुभव के आधार पर बताया कि दोनों हाथों के मणिबंध के ऊपर, शक्ति-केन्द्र की तरह दोनों घुटनों पर प्राण-शक्ति का संग्रह है। ये भी दो शक्ति-केन्द्र हैं। कुलपाकजी की प्रतिमा में अंगूठे पर सफेद-सफेद चिह्न दिखाए हैं। प्रेक्षाध्यान में कायोत्सर्ग करते समय सबसे पहले पैर के दाएं अंगूठे पर ध्यान केन्द्रित करने का निर्देश दिया जाता है। अंगूठे का स्थान प्राण-शक्ति का स्थान है।

जापानी साधकों ने सात सौ मर्म स्थानों की खोज की है। उनके आधार पर चिकित्सा व ध्यान के प्रयोग चलते हैं। जैन आगमों में वर्णित देशावधिज्ञान चक्र सिद्धान्त का मौलिक आधार है। चैतन्य केन्द्र सुषुम्ना नाड़ी से जुड़े रहते हैं, जो रीढ़ की हड्डी के साथ रहती है। ये वायुमण्डल से प्राण-शक्ति प्राप्त करते रहते हैं।

शरीरस्थ अधोभाग के चैतन्य केन्द्र भावनाओं एवं आवश्यकताओं से तथा उर्ध्वभाग स्थित चैतन्य केन्द्र व्यक्ति के मानसिक एवं आध्यात्मिक विचारों से संपृक्त रहते हैं। इन केन्द्रों का संतुलन अत्यन्त अपेक्षित है। इन केन्द्रों के ऊर्जा प्रवाह में कोई अवरोध या अधिक ऊर्जा का होना असंतुलन की स्थिति पैदा करता है। यह असंतुलन हमारी शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक तथा आध्यात्मिक स्थितियों पर विपरीत प्रभाव डालता है। ऐसा असंतुलन उत्पन्न करने में नकारात्मक विचारों के कारण हमारी अन्तःस्रावी ग्रंथियों में असंतुलन पैदा हो जाता है और उसका प्रभाव सभी चैतन्य केन्द्रों पर पड़ने लगता है। चैतन्य केन्द्र-प्रेक्षा, सकारात्मक सोच एवं महामंत्र की साधना के द्वारा इन केन्द्रों का संतुलन या जागरण किया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चैतन्य केन्द्र और नमस्कार महामंत्र

मानव शरीर के मेरुदण्ड में नीचे के मणके अर्थात् शक्ति-केन्द्र (मूलाधार चक्र) से लेकर ज्ञान-केन्द्र (ब्रह्मरंध्र में सहस्रारचक्र) तक अलग-अलग स्थान पर सात सूक्ष्म चक्र अथवा तेरह चैतन्य केन्द्र स्थित हैं। उसमें सबसे नीचे के मूलाधार-चक्र के पास कुण्डलिनी नाम की दिव्य शक्ति अनादि काल से सुप्त अवस्था में पड़ी है। साढ़े तीन सर्प के आंटों (मोड़ों) की तरह उसकी सूक्ष्म आकृति है। जब ध्यान, जप, भक्ति, स्वाध्याय आदि द्वारा वह जागृत होकर उर्ध्वमुखी बन क्रमशः चक्रों, केन्द्रों का भेदन करती-करती ब्रह्मरन्ध्र में आए सहस्रार चक्र (ज्ञान-केन्द्र) में प्रवेश करती है, तब साधक को समाधि दशा में आत्म-साक्षात्कार हो सकता है। कुण्डलिनी शक्ति सरलता से उर्ध्वगमन कर सके उसके लिए बीच में आने वाले चक्रों का, चैतन्य केन्द्रों का शुद्धिकरण अनिवार्य है। उसकी शुद्धि के लिए उन-उन केन्द्रों में नमस्कार महामंत्र का जप भी बहुत सहायक बनता है। नीचे लिखे जा रहे चार्ट के अनुसार नमस्कार-महामंत्र का जप अपने-अपने चैतन्य केन्द्रों पर भी किया जाता है तथा प्रत्येक चैतन्य केन्द्र पर सम्पूर्ण महामंत्र का जप भी किया जाता है। मंत्र-जप केन्द्रों पर एक सौ आठ बार अर्थ सहित करने से अत्यन्त लाभकारी होता है।

जैन आचार्यों की शोध के अनुसार शरीर का जो अवयव करण (विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र) बनता है, उसमें केवल चक्र और कमल दो ही आकार नहीं बनते, श्रीवत्स, स्वस्तिक, नंद्यावर्त्त, शंख, कलश आदि अनेक शुभ आकार बनते हैं। श्रीवत्स आदि शुभ संस्थान वाले चैतन्य केन्द्र मनुष्य और पशु के नाभि के ऊपर के भाग में होते हैं। सम्यक्त्व उपलब्ध होने पर नीचे के अशुभ संस्थान मिट जाते हैं, ऊपर के शुभ संस्थान निर्मित हो जाते हैं। इसी प्रकार सम्यक्त्व से पुनः मिथ्यात्व अवस्था प्राप्त होने पर ऊपर के शुभ संस्थान मिट जाते हैं और नीचे के अशुभ संस्थान निर्मित हो जाते हैं।[2]

ऐसा भी कहा जा सकता है कि जब तक चैतन्य केन्द्र जागृत नहीं होते तब तक वे गिरगिट जैसे भद्दे आकार के होते हैं। जब वे जागृत हो जाते हैं, आंतरिक शुद्धि होती है, तब ये सारे पवित्र और सुन्दर आकार वाले हो जाते हैं।

मानव शरीर में चक्र, चैतन्य केन्द्र, ग्रंथितंत्र के स्थान कहां-कहां हैं, इन सबको चार्ट के माध्यम से आसानी पूर्वक समझा जा सकता है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चैतन्य केन्द्र	चक्र	किस ग्रंथि से संबंध	स्थान
1. ज्ञानकेन्द्र	सहस्रार-चक्र	वृहन्मस्तिष्क (कार्टेक्स)	ब्रह्मरंध्र में (चोटी रखने के स्थान पर)
2. शांतिकेन्द्र		हाइपोथेलेमस	मस्तिष्क का अग्रभाग
3. ज्योतिकेन्द्र		पीनियल	ललाट के मध्य में
4. दर्शनकेन्द्र	आज्ञाचक्र	पिच्यूटरी (पियूषग्रंथि)	भृकुटियों के मध्य (तिलक के स्थान पर)
5. अप्रमाद-केन्द्र		श्रोत्रेन्द्रिय	कानों के भीतर
6. चाक्षुषकेन्द्र		चक्षुरिन्द्रिय	आँखों के भीतर
7. प्राणकेन्द्र		घ्राणेन्द्रिय	नासाग्र
8. ब्रह्मकेन्द्र		रसनेन्द्रिय	जिह्वाग्र
9. विशुद्धिकेन्द्र	विशुद्धि-चक्र	थाइराइड, पेराथाइराइड	गले में कण्ठमणि के स्थान पर
10. आनन्द-केन्द्र	अनाहत-चक्र	थाइमस	हृदय के पास, बिल्कुल बीच में
11. तैजस-केन्द्र	मणिपूर-चक्र	एड्रिनल,पेन्क्रियाज (आइलैण्ड्स् ऑफ लैंगर हैन्स)	नाभि
12. स्वास्थ्य-केन्द्र	स्वाधिष्ठान-चक्र	गोनाड्स (कामग्रंथि)	पेडू (नाभि से चार अंगुल नीचे)
13. शक्तिकेन्द्र-	मूलाधार चक्र	गोनाड्स (कामग्रंथि)	पृष्ठ रज्जू के नीचे के छोर पर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चक्रों में नवकार जप

महामंत्र	**चक्र**
णमो अरहंताणं	आज्ञा-चक्र
णमो सिद्धाणं	सहस्रार-चक्र
णमो आयरियाणं	विशुद्धि-चक्र
णमो उवज्झायाणं	अनाहत-चक्र
णमो लोए सव्व साहूणं	मणिपूर-चक्र
एसो पंचणमुक्कारो	स्वाधिष्ठान-चक्र
सव्वपावपणासणो	स्वाधिष्ठान-चक्र
मंगलाणं च सव्वेसिं	मूलाधार-चक्र
पढमं हवइ मंगलं	मूलाधार-चक्र

नोट–

- ✻ जब मूलाधार-चक्र सोया रहता है तो उत्तेजना बढ़ती है।
- ✻ जब स्वाधिष्ठान-चक्र सोया रहता है तो कामुकता बढ़ती है।
- ✻ जब मणिपुर-चक्र सोया रहता है तो ईर्ष्या, घृणा, क्रूरता के भाव पैदा होते हैं।
- ✻ लाल रंग का ध्यान करने से मूलाधार और आज्ञाचक्र जागृत होते हैं।
- ✻ पीले रंग का ध्यान करने से अनाहत-चक्र, श्वेत रंग का ध्यान करने से विशुद्धि चक्र, मणिपुर-चक्र और सहस्रार-चक्र जागृत होते हैं।

चैतन्य केन्द्रों के साथ महामंत्र की कुछ विधियां

1.

महामंत्र	**चैतन्य–केन्द्र**
णमो अरहंताणं	ज्ञान-केन्द्र
णमो सिद्धाणं	दर्शन-केन्द्र
णमो आयरियाणं	विशुद्धि-केन्द्र
णमो उवज्झायाणं	आनन्द-केन्द्र
णमो लोए सव्व साहूणं	तैजस-केन्द्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शरीर को स्थिर कर अपने-अपने केन्द्रों पर अपने-अपने पद का पांच-पांच मिनट मानसिक जप नियमित करने से उन-उन केन्द्रों की ऊर्जा विशेष सक्रिय होने लगती है।

2. नाभि कमल जागरण (मणिपुर शुद्धि) तैजस–केन्द्र शुद्धि[3] –

1. किसी एक आरामदायक आसन में स्थिरता।
2. मेरुदण्ड सीधा, आँखें बंद, शरीर शिथिल।
3. नाभिकेन्द्र में हो रहे श्वास-प्रश्वास के प्रकंपनों को पांच मिनट तक सजगता से देखना।
4. इसके बाद नमस्कार महामंत्र का मानसिक जप।
5. जप संख्या को याद रखने के लिए या तो कोई छोटी 21 मनके की माला तैयार कर ले या समय की सीमा बांध ले।

हृदय कमल जागरण : आनंद–केन्द्र शुद्धि

1. किसी एक स्थिर आसन में बैठें।
2. आंखें बंद, शरीर शिथिल, मेरुदण्ड सीधा।
3. हृदय केन्द्र पर हो रहे श्वास के प्रकंपनों का अनुभव तथा पांच मिनट तक पूरे शरीर में प्रकंपनों का अनुभव।
4. इसके बाद हृदय पर 15 बार नमस्कार महामंत्र का जप करें।

कण्ठकूप में धारणा : विशुद्धि केन्द्र शुद्धि

1. किसी एक आसन में बैठकर शरीर को ढीला छोड़ दें।
2. नाभि से उठते हुए श्वास को कण्ठ तक ले जाएं और फिर कण्ठ से नाभि की ओर जाते हुए देखें। इस प्रकार मन की स्थिरता बहुत जल्दी बनती है।
3. अब गले से श्वास-प्रश्वास प्रक्रिया होने दें।
4. इस बार विशुद्धि-केन्द्र से ऊपर श्वास गति की धारणा करें और उसी प्रकार वापस नीचे (कण्ठ तक) ले जाएं। इस आरोह-अवरोह क्रिया के बीच मंत्र जप चलता रहे।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भृकुटि पर जप : दर्शन–केन्द्र विशुद्धि

1. पूर्वोक्त सभी विधियों को दोहराते हुए भृकुटी मार्ग से हो रही प्राण-प्रकंपन प्रक्रियाओं को सजगता से देखें।

2. इस स्थान पर पांच मिनट तक अपने मन (दृष्टि) को एकाग्र करें। फिर इसके बाद ध्यान को पीछे की ओर (मेरुदण्ड में स्थित चोटी बांधने का स्थान) मोड़ लें। वह चेतना का सबसे अधिक सक्रिय भाग है। इस पर पांच मिनट रूकें। दोनों में से जिस स्थान पर ध्यान ज्यादा टिकता हो, उसी पर एकाग्र होकर जप प्रारम्भ कर दें। पच्चीस आवृत्ति के बाद मन को मस्तक भाग (तालु स्थान) पर एकाग्र करें।

मस्तक पर धारणा : ज्ञान–केन्द्र

1. जिस आसन में माला प्रारंभ करते समय बैठें, उसी में स्थिरता पूर्वक रहें।
2. ध्यान तालु स्थान (मस्तक का अग्रिम भाग) पर रहें।
3. पांच मिनट तक केन्द्र पर हो रहे स्पन्दनों का अनुभव करें।
4. इसके बाद उसी केन्द्र पर महामंत्र का मानसिक ध्यान (पच्चीस आवृत्ति) करें।

इस प्रकार अन्त में दीर्घश्वास के साथ महामंत्र का नौ बार जप करने से एक विधि सम्पन्न होती है।

3. मुखमण्डल : महामंत्र जप[4] —

णमो अरहंताणं	बाएं कान पर
णमो सिद्धाणं	बाएं नेत्र पर
णमो आयरियाणं	दाएं नेत्र पर
णमो उवज्झायाणं	दाएं कान पर
णमो लोए सव्व साहूणं	मुख (ओष्ठ पुट)

इस विधि से मंत्र जप करने वाला इन्द्रिय शक्ति की क्षीणता से होने वाले खतरों से स्वयं को बचाता है। इससे इन्द्रिय ज्ञान की सामान्य सीमा से आगे बढ़ने का द्वार खुलता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. महामंत्र जप : दिव्य अनुभूति[5] –

एकान्त पवित्र स्थान। स्वच्छ आसन पर प्रतिदिन आधा से एक घंटा ध्यान करें। आनन्द-केन्द्र पर सुनहले अक्षरों में मंत्र लिखें। उसका उच्चारण करें और कुछ समय बाद उसे एकाग्रता से देखें। दृष्टि उस पर स्थिर रहे। ध्यान लक्ष्य पर बना रहे।

एक मास के सघन प्रयोग के बाद अक्षर के स्थान पर दिव्य अनुभूति होगी।

5. ब्रह्मचर्य विकास : ''ॐ अर्हं'' जप चैतन्य केन्द्र पर[6] –

1. सुषुम्ना में श्वास या प्राणधारा का अनुभव करें। शक्ति केन्द्र की प्राणधारा ऊपर जाए तब 'अ' का और नीचे आए तब 'र्हं' का ध्यान करें।
2. स्थिर और शांत होकर बैठ जाएं। फिर नासिका के अग्र भाग पर 'ॐ' का ध्यान करें। चित्त को भृकुटि के मध्य में (आज्ञा चक्र पर) स्थापित करें। यह ध्यान का सहज सरल उपाय है। इससे आंतरिक ज्ञान का विकास होता है। अन्तर्मन जागृत होता है।[7]
3. दर्शन केन्द्र पर ॐ ह्रीं क्ष्वीं का साक्षात्कार करें।

6. कथनी–करनी की एकता : ॐ जप[8] –

1. कायोत्सर्ग। जीभ को तालु में लगाएं। ध्यान नासाग्र अथवा भ्रूमध्य केन्द्रित करें। 'मूलबंध' और 'ॐ' का मानसिक जप करें। श्वास रेचन करें और श्वास का पूरक कर उसे नासाग्र पर स्थापित करें। इस प्रकार के अभ्यास से वाणी और मन की एकता सिद्ध होगी।
2. 'अ' का उच्चारण करते समय स्वास्थ्य केन्द्र पर लाल वर्ण का चिंतन करें। 'उ' का उच्चारण करते समय आनन्द-केन्द्र पर नील वर्ण का चिंतन करें। 'म' का उच्चारण करते समय दर्शन-केन्द्र पर श्वेत वर्ण का चिंतन करें।

प्रारम्भ में पांच मिनट, प्रति सप्ताह दो-दो मिनट बढ़ाते-बढ़ाते पन्द्रह मिनट तक 'ॐ' का जप करें।[9]

इस प्रयोग से सुप्त मन, अन्तर्मन जागृत होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7. चैतन्य केन्द्र : अर्हं न्यास[10] –

प्रत्येक चैतन्य-केन्द्र पर इष्ट मंत्र 'अर्हम्' आदि का तीन-तीन बार जप करें। उसके साथ तादात्म्य का अनुभव करें। यह क्रम शक्ति-केन्द्र से ज्ञान-केन्द्र तक रहे। पुन: ज्ञान-केन्द्र से शक्ति-केन्द्र तक। यह एक आवृत्ति है। ऐसी तीन आवृत्तियां अवश्य करें। जैसे-जैसे अभ्यास परिपक्व हो, वैसे-वैसे आवृत्ति बढ़ाएं।

न्यास का अभ्यास इष्ट मंत्र की सिद्धि के लिए बहुत आवश्यक है।

8. मंत्र : एक समाधान में अपने-अपने चैतन्य केन्द्रों पर अपने-अपने पद का दीर्घश्वास और वर्ण के साथ पांच मिनट से तीन मिनट तक मानसिक जप करने का उल्लेख है, जिसकी मुख्य फलश्रुतियां निम्न प्रकार से हैं—

णमो अरहंताणं	मानसिक शांति
णमो सिद्धाणं	संकल्प शक्ति का विकास, अन्तर्दृष्टि का जागरण
णमो आयरियाणं	स्मृति विकास, चयापचय का संतुलन
णमो उवज्झायाणं	आनन्द प्राप्ति, ज्ञान विकास
णमो लोए सव्वसाहूणं	आरोग्य और उपशम का विकास।

मंत्र के आरोहण की भूमिका में आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की निम्नोक्त पंक्तियां बहुत सारगर्भित व प्रायोगिक हैं—

''जो व्यक्ति मंत्र का मानसिक अभ्यास करना चाहे, वे अपने आँखों की कीकी को थोड़ा ऊपर उठाएं, भृकुटी को भी ऊपर उठाएं और मन की पूरी शक्ति को ज्योति-केन्द्र, तिलक के स्थान पर केन्द्रित करें और इसी स्थान में मंत्र जप चले। उच्चारण नहीं, केवल मंत्र का दर्शन, मंत्र का साक्षात्कार, मंत्र का प्रत्यक्षीकरण। इस स्थिति में मंत्र की आराधना से वह सब कुछ उपलब्ध होता है, जो उसका विधान है। मंत्र उस भूमिका तक पहुँचकर ही कृतकृत्य होता है। यह उसके आरोहण की भूमिका है।''

यहाँ पहुँचकर साधक की श्रद्धा सद्भावना की सरसधारा में हिलौरे लेने लगती है। उस जप साधना की रसधारा में उसके अर्हं आदि समग्र कषाय घुलने लग जाते हैं। साधक भक्ति की पावन रसधारा में सरसाने लग जाता है। ऐसी ही स्थिति में आकर संत तुलसी दास ने अपनी जप साधना की कसौटी पर हृदय खोलकर रख दिया और कहा—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पायो नाम चारु चिंतामणि, चित्त कंचन ही कैसे हों।
नाम रूप शुचि रुचिर कसौटी, उर करत न खसै हों॥

व्यक्ति के अन्दर जब श्रद्धा जगी, विनम्रता का जागरण हुआ बस उसका सारा कल्मष दूर हो गया। अशुभ वृत्तियां विनष्ट हो गई। इसलिए जीवन-यज्ञ में जप-यज्ञ की विराटता का, सार्वभौमता का महत्त्व स्वीकारा गया है। गीता में श्रीकृष्ण ने स्पष्ट कहा है–''यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि'' श्रीकृष्ण ने भी श्रेष्ठ वस्तुओं की गिनती करते हुए समस्त यज्ञों में 'जपयज्ञ' को श्रेष्ठ बतलाया है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि चैतन्य-केन्द्र स्थूल रूप से दो विभागों में विभक्त हैं–

1. ज्ञान या विवेक के केन्द्र,
2. वृत्तियों या वासना के केन्द्र।

हमारे शरीर में ज्ञान के केन्द्र ऊपर और वासना के केन्द्र नीचे हैं। जब हमारी प्राणधारा या चित्त की गति नीचे के केन्द्रों की तरफ होती है तब वासना-केन्द्र सक्रिय और ज्ञान-केन्द्र दुर्बल होते हैं। जब हमारी प्राणधारा या चित्त की गति ऊपर के केन्द्रों की तरफ होती है तब ज्ञान-केन्द्र सक्रिय और वासना-केन्द्र दुर्बल होते हैं।

नमस्कार महामंत्र का जप चैतन्य-केन्द्रों पर करने से प्राण का उर्ध्वारोहण होता है। अतः आन्तरिक शक्तियों को, सुप्त शक्तियों को जागृत रखने के लिए चैतन्य-केन्द्रों पर महामंत्र के जप की कुछ विधियों का उल्लेख किया है, उनमें से किसी एक-दो विधि का भी निरन्तर अभ्यास किया जाये तो वह आत्म-जागरण की दिशा का महत्त्वपूर्ण प्रयोग सिद्ध होगा। आचार्यश्री तुलसी द्वारा विरचित गीतिका की निम्नोक्त प्रेरक पंक्तियां भीतर सोई प्रभुता को जगाने के लिए सर्च-लाइट कही जा सकती है–

भावभीनी वंदना, भगवान चरणों में चढाएं।
शुद्ध ज्योतिर्मय, निरामय रूप अपने आप पाएं॥

बिन्दु भी हम सिंधु भी हैं, भक्त भी भगवान भी हैं।
छिन्न कर सब ग्रंथियों को सुप्त चेतन को जगाएं॥
भावभीनी वंदना भगवान चरणों में चढ़ाएं॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ—

1. साधना और सिद्धि, पृ. 156
2. मनन और मूल्यांकन, पृ. 84, 85, षट्खण्डागम, पृ. 13, 298
3. नमस्कार महामंत्र साधना के आलोक में, पृ. 185, 186
4. वही, पृ. 87
5. भीतर की ओर, पृ. 325
6. वही, पृ. 335
7. मनोनुशासनम्, पृ. 166
8. भीतर की ओर, पृ. 342
9. वही, पृ. 317
10. वही, पृ. 304

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

13. वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में नमस्कार महामंत्र की अर्थवत्ता

विज्ञान एक प्रकार का तार्किक तथा व्यवस्थित ज्ञान है, जिससे धर्म की अनेक मान्यताओं एवं प्रत्ययों को वैज्ञानिक दृष्टि के द्वारा नई अर्थवत्ता ही प्राप्त नहीं होती है, पर उन धार्मिक विश्वासों और प्रतीकों को आधुनिक सन्दर्भ भी प्राप्त होता है। डॉक्टर राधाकृष्णन् के अनुसार, ''विज्ञान के निष्कर्षों और धर्म के सिद्धान्तों में अवश्य ही कोई भेद नहीं है। दोनों ही सत्य का अन्वेषण कर रहे हैं। यद्यपि दोनों के वहां पहुँचने के मार्ग भिन्न हैं। ईश्वर सत्य है। सत्य की खोज ईश्वर की ही खोज है। मनुष्य ने मशीन बनाई है, अत: वह मशीन से बड़ा है। उसने परमाणु का विस्तार किया है, अत: वह परमाणु से बड़ा है। इस प्रकार विज्ञान पदार्थ की श्रेष्ठता प्रकट नहीं कर रहा अपितु आत्मा की श्रेष्ठता को प्रकट कर रहा है।'' इसी वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में नमस्कार महामंत्र की अर्थवत्ता इसलिए बढ़ जाती है कि यह महामंत्र आत्मा की श्रेष्ठता को प्रकट करने वाला मंत्र है।

दिव्यता और ऊर्जा का संयोग

वैज्ञानिक चमत्कार विद्युत पर आधारित है। डॉक्टर राधाकृष्णन् के अनुसार, ''हम दिव्यता और ऊर्जा का संयोग करें। उस दिव्यत्व को पागलपन में और ऊर्जा को बर्बरता में रूपान्तरित नहीं करें तो श्री (सौभाग्य), विजय, कल्याण और नीति भी वहीं रहेगी।'' यह एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है कि दिव्यता और ऊर्जा का संयोग कैसे हो?

दिव्यता और ऊर्जा का संयोग केवल निरीक्षण, परीक्षण और मस्तिष्क के द्वारा नहीं होता, यह संयोग होता है—अभ्यास और श्रद्धा के बल पर, शक्ति और भक्ति के बल पर, आत्मा और ज्ञान के बल पर। मेघ की गर्जना होने पर मयूर बोले बिना कैसे रह सकता है? पवन के चलने पर ध्वज हिले बिना नहीं रह सकता। केतकी और केवड़ा के फूलों पर भौंरे को गुंजार करने से क्या कभी रोका जा सकता है? आम में मंजरी आने से उस पर जो मतवालापन सवार हो जाता है, उस मतवालेपन में क्या कोयल चुप रह सकती है? वैसे ही जिसके हृदय में श्रद्धा-भक्ति हो, वही व्यक्ति शक्ति को जान सकता है।

श्रद्धापूर्वक नमस्कार महामंत्र की जपाकार तरंगों के द्वारा हमारी प्राणधारा, ऊर्जा भीतर की तैजस ऊर्जा तक पहुँच जाती है। ऊर्जा के वहां तक पहुँचने पर ही मंत्र का जागरण होता है। मंत्र जागरण का तात्पर्य है—भीतर की तैजस शक्ति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

से ऊर्जा को जोड़ देना। गांधारी की तैजस-शक्ति के प्रभाव के कारण उसके देखने मात्र से ही दुर्योधन के शरीर का निर्वस्त्र भाग वज्रमय (अभेद्य) बन गया। स्वच्छ कांच पर प्रतिबिम्ब पड़े बिना नहीं रह सकता, वैसे ही शुद्ध भावना पूर्वक नमस्कार महामंत्र का जप करने से निर्मल हृदय पर परमात्मा का (दिव्यता) प्रतिबिम्ब पड़े बिना नहीं रह सकता। अर्थात् अर्हत्, सिद्ध आदि पदों की अर्हता विकसित होने लगती है।

यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि भावधारा के अनुरूप मानसिक चिंतन, शारीरिक मुद्राएं, इंगित तथा अंग संचालन होता है। क्रोध की मुद्रा में रहने वाले व्यक्ति में क्रोध के अवतरण की संभावना बढ़ जाती है और क्षमा की मुद्रा में रहने वाले व्यक्ति के लिए क्षमा की चेतना में जाना सहज हो जाता है। इस भूमिका में नमस्कार महामंत्र के जप व ध्यान की उपयोगिता बहुत बढ़ जाती है क्योंकि आध्यात्मिक मंत्र होने से महामंत्र का जप स्वाध्याय भी है, तप भी है और ध्यान भी है। महामंत्र की अचिंत्य शक्ति से आध्यात्मिक जागरण किया जा सकता है। अध्यात्म के द्वार खोले जा सकते हैं तथा अनेक शक्तियों का जागरण हो सकता है।

वैज्ञानिक युग में जिस प्रकार यंत्रों द्वारा विद्युत तरंगों का प्रसारण और ग्रहण होता है, रेडियो, टेलीग्राम, टेलीफोन, टेली-पींटर, टेलीविजन आदि उस विद्युत को मानव के लिए उपयोगी और लाभप्रद साधन बना देते हैं। इसी प्रकार विचार-विद्युत तरंगों का भी एक विशेष प्रक्रिया से प्रसारण और ग्रहण होता है। इस प्रक्रिया को आज के पेरासाइकोलॉजिस्ट ''टेलीपैथी'' के नाम से पुकारते हैं। ''टेलीपैथी'' अर्थात् विचार-सम्प्रेषण। प्राचीन समय में जैन साधु इस प्रक्रिया से एक-दूसरे तक संवाद पहुंचाते थे।

भारतीय संस्कृति में ध्वनि की क्षमता का सूक्ष्म और शक्तिशाली रूप मंत्र रहा है। मंत्र-योग के नाम से मंत्र स्वयं में एक सम्पूर्ण योग के रूप में प्रतिष्ठित है। प्राचीन ऋषि-मुनियों ने अपनी दीर्घकालिक साधना, अभ्यास और अनुभव द्वारा ध्वनि की क्षमता का विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक उपयोग किया है, जिसका प्रमुख उद्देश्य सुरक्षा, चिकित्सा, क्षमता का विकास और इच्छित ध्येय की प्राप्ति रहा है। इसे ऋषि-मुनियों की वैज्ञानिक खोज कहा जा सकता है। ये सत्य आधुनिक विज्ञान के उद्भव से बहुत पूर्व ऋषियों ने आध्यात्मिक साधना द्वारा ही ज्ञात किये थे। वैदिक, केथोलीक (ईसाई), सूफी, जैन, बौद्ध सबने मंत्र-जप को वरीयता दी है। सबने मंत्रों की उपादेयता और अनिवार्यता को स्वीकारा है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

महामंत्र में प्रयुक्त 'ण' का अपरिहार्य महत्त्व

नमस्कार महामंत्र की जपाकार तरंगें आत्मा में अमोघ-शक्ति का संचार करती है। इस महामंत्र में प्रयुक्त एक मात्र 'ण' की विशिष्टता ही आश्चर्यचकित परिणाम ला सकती है। 'ण' का अपना अपरिहार्य महत्त्व है। कुछ तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि 'ण' का विशिष्ट महत्व क्यों?

- ण शक्ति सूचक होने से समत्त्व भाव देने वाला है।
- ण पृथ्वी-तत्त्व-संज्ञक होने से स्थिरता, अडोलता, गाम्भीर्य, सहनशीलता आदि का परिचायक है।
- शास्त्रों में ण शब्द का स्वरूप व्योम (आकाश) बताया है। आकाश में व्यापकता, विशालता, अवगाहना देने की क्षमता व शब्दों की तरंगों को प्रभावित करने की योग्यता है, व्योम हमें ऊपर की ओर ले जाता है। अर्थात् उर्ध्वरित्ता बनाता है।
- विज्ञान के अनुसार ण का प्रयोग अल्फा तरंगों के निर्माण में सहायक होता है। ण के उच्चारण से गले में जीभ द्वारा खिंचाव होता है, जिससे थाइराइड और पेराथाइराइड ग्रंथियां संतुलित व शक्तिशाली बनती हैं। हकलाना, गूंगापन, हिचकी चलना—ये थाइराइड के असंतुलित होने से होते हैं। जीभ के खिंचाव से थाइमस का स्राव संतुलित होता है। हमारे शरीर में वात-रोग, जोड़ों के रोग और वायु प्रकोप का संबंध थाइमस-ग्रंथि से है।
- योग शास्त्रानुसार मानव शरीर का कोई अंग ऋण-विद्युत की प्रधानता लिये हुए और कोई अंग धन विद्युत की प्रधानता लिये हुए हैं। हमारे शरीर में जीभ ऋण और मस्तिष्क धन-विद्युत की प्रधानता का केन्द्र है। ण के उच्चारण से आंशिक खेचरी मुद्रा लगती है, जीभ द्वारा तालु का घर्षण होता है। तालु मस्तिष्क की निचली परत है। वहां पर जीभ द्वारा घर्षण होने से दोनों तरंगों का संयम होता है, जो आज्ञा-चक्र को प्रभावित करती है, जागृत करती है। यह चन्द्रमा का स्थान भी है। कहते हैं उसका मुख नीचे की ओर रहता है, वह अमृत-वर्षा किया करता है। जब आज्ञा-चक्र जागृत होता है, इस वर्षा से देह की नाड़ियां भर जाती हैं और प्रभावशाली आभामंडल का निर्माण होता है। आज्ञा-चक्र जागने से व्यक्ति दृढ़ संकल्पी तथा इन्द्रियों पर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नियंत्रण करने वाला, इन्द्रिय-विजेता बनता है। जब आज्ञाचक्र शक्तिशाली बन जाता है तब अवधिज्ञान, मन:पर्यवज्ञान और केवलज्ञान की भूमिका बनती है।

✻ णमो के उच्चारण से जो ध्वनि उत्पन्न होती है, वह स्वरमय होने से तथा 'न' से वृहद् होने से मंत्र आराधक के शरीर की हृदयतंत्री को अधिक समय तक तरंगित करती है।[1]

✻ नमस्कार महामंत्र के प्रत्येक पद में प्रारम्भ में एवं अन्त में 'ण' वर्ण आया है। प्रत्येक पद के प्रारंभ का 'ण' बिना अनुस्वार का है और अन्त का 'ण' अनुस्वार सहित है। संगीत शास्त्र एवं शरीर विज्ञान के अनुसार प्रारंभ का 'ण' ध्वनि को गति देता है और अन्त का णं ध्वनि को विराम देता है। भाषा विज्ञान के अनुसार भी प्रारंभ के ण की ध्वनियां गतिमान होती हुई शरीर के रोम-रोम को झंकृत कर देती है और अन्त के ण वर्ण उक्त ध्वनियों को धीरे-धीरे विराम देते हैं। इस प्रकार ण का उच्चारण चित्त को स्थिरता प्रदान करता है।[2]

✻ ण की ध्वनि न से अधिक प्रभावी और वजनदार है। इस कारण वह शरीर के समस्त स्नायु तंत्रों को तरंगित करती हुई चिन्तनधारा को गति प्रदान करती है। संगीत कला की दृष्टि से ण का प्रभाव न की तुलना में अधिक प्रभावी है।[3]

नमस्कार महामंत्र में अनुस्वार सहित और अनुस्वार रहित कुल दस ण है। एक माला में 1080 बार ण का उच्चारण हो जाता है। चूलिका सहित एक बार नमस्कार महामंत्र के उच्चारण में चौदह बार ण का उच्चारण होता है। एक माला में 1512 बार ण का उच्चारण होता है। इस प्रकार जीभ का तालु से लयबद्ध घर्षण होने से मस्तिष्क की पिनियल, पिच्युटरी, हाइपोथेलेमस प्रभावित होकर संतुलित हो जाती है तथा हार्मोन्स का स्राव करने लग जाती है। साथ ही मस्तिष्क का रेटीकूलर फारमेशन (तंत्रिका का जाल) प्रभावित होता है। रेटीकूलर फारमेशन उन न्यूरॉन का बना है, जहां क्रोध, भय, लालसा आदि भाव उत्पन्न होते हैं और यह उनका नियंत्रण भी करता है। दोनों कार्य साथ-साथ चलते हैं। जब हाइपोथेलेमस का नियंत्रण मानव के आवेगों पर होता है, तब उससे पिनियल, पिच्युटरी प्रभावित होती है। इनके स्राव एड्रीनल को प्रभावित करते हैं परिणामत: हिंसात्मक उत्तेजनाएं कम होती हैं, क्योंकि भावों के अनुसार स्राव, स्राव के अनुसार व्यवहार, व्यवहार के अनुसार व्यक्ति का आचरण बनता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यदि नमस्कार महामंत्र का उच्चारण लयबद्ध श्वास के साथ एकाग्रता से किया जाता है तो उपरोक्त लाभ तो होते ही हैं। इस प्रकार शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक लाभ के साथ-साथ बीमारियों को रोकने की अवरोधक शक्ति बढ़ती है। व्याधियां दूर होती हैं तथा अतीन्द्रिय चेतना को शक्तिशाली बनाया जा सकता है, क्योंकि एकाग्रता को मंत्र साधना का प्राण तत्त्व कहा जा सकता है और जप्य मंत्र को श्वास के साथ जोड़ने पर उसकी गुणात्मकता बढ़ जाती है।

महामंत्र की वैज्ञानिकता

नमस्कार महामंत्र से तात्पर्य उस चैतसिक ऊर्जा से है जो हमारे आभामंडल को प्रभावित करती हुई कर्म निर्जरा का निमित्त बनती है। नमस्कार महामंत्र से तात्पर्य उस चैतसिक ऊर्जा से है, जो धरती के गुरुत्वाकर्षण के साथ प्रकपंनों को आकर्षित एवं प्रभावित कर सकती है। नमस्कार महामंत्र से तात्पर्य उस चैतसिक ऊर्जा से है जो व्यक्ति को प्राणवान बनाती है। योग के आचार्यों ने मंत्र व ध्यान साधना से प्राण की शक्ति को सूक्ष्म बनाकर शरीर के बारे में सूक्ष्म खोजें की हैं। उन्होंने शरीर को इतनी गहराई के साथ पढ़ा कि उन्होंने जिन रहस्यों का उद्घाटन किया आज भी शरीर शास्त्र के माध्यम से वे उद्घाटित नहीं हो पा रहे हैं। यद्यपि वर्तमान के डॉक्टर वैज्ञानिक उपकरणों के द्वारा विलक्षण चिकित्साएं कर रहे हैं। एक एक्सरे के एक फोटो के साथ विभिन्न नस-नाड़ियों एवं शिराओं के 250 फोटो लेने में वर्तमान विज्ञान समर्थ है पर मस्तिष्क के रहस्यों के हजारवें भाग को भी अभी तक नहीं जान सके, फिर भी उपलब्ध वैज्ञानिक खोजों के आधार पर नमस्कार महामंत्र की अर्थवत्ता तथा इस मंत्र के गूढ़ रहस्यों की उपयोगिता बढ़ जाती है, क्योंकि जब तक वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में महामंत्र को समझने का प्रयास नहीं करेंगे तब तक उसकी विराटता और भव्यता के दर्शन भी नहीं हो सकेंगे। कुछ तथ्यों के आधार पर निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि महामंत्र कितना वैज्ञानिक है?

✲ ओकल्ट साइंस के वैज्ञानिकों ने यह तथ्य प्रकट किया है कि आदमी जब तक अपने शरीर के विशिष्ट केन्द्रों को चुम्बकीय क्षेत्र नहीं बना लेता, इलेक्ट्रोमेग्नेटिक-फील्ड नहीं बना लेता तब तक उसमें पारदर्शन की क्षमता नहीं जग सकती। नमस्कार महामंत्र के साथ चैतन्य केन्द्रों और चक्रों के जागरण की सारी समायोजना का मूल उद्देश्य है—शरीर को विद्युत चुम्बकीय क्षेत्र बना लेना।

✲ जीवन और ऊर्जा का घनिष्ट संबंध है। प्राण ऊर्जा जितनी शक्तिशाली होती है, जीवन उतना ही तेजस्वी और शक्तिशाली बनता है। प्राण-शक्ति जैसे-

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जैसे सूक्ष्म होती चली जाती है, वैसे-वैसे व्यक्ति की क्षमता और कार्यशक्ति भी बढ़ती चली जाती है। नमस्कार महामंत्र की सविधि साधना उस शक्ति को सूक्ष्म करने की साधना है। वैज्ञानिक उपकरणों की गति व कार्यक्षमता भी विद्युत शक्ति के आधार पर ही निर्भर है।

✻ विज्ञान के अनुसार मानव जो भी शब्द उच्चारण करता है, वह पूरे विश्व में वायुमण्डल में तैर जाता है। उदाहरणार्थ–रेडियो में किसी भी स्टेशन पर जो गीत की पंक्ति या भाषण का अंश बोला जाता है, वह उसी समय पूरे वायुमण्डल में फैल जाता है और सात समंदर पार किसी भी देश का स्रोता भी यदि चाहे तो अपने रेडियो के माध्यम से उस गीत की पंक्ति या भाषण को सुन सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि रेडियो में सुई उस फ्रिक्वेन्सी पर लगाने की जानकारी हो।

जैनदर्शन के अनुसार पुद्गल की सूक्ष्म वर्गणाएं पूरे लोक में व्याप्त हैं, उसमें एक वर्गणा का नाम है–तैजस वर्गणा। प्रवृत्ति, प्रकाश, ध्वनि–ये सब तैजस वर्गणा के रूप हैं। जैनदर्शन के इस तैजस वर्गणा के मत की पुष्टि वैज्ञानिक सन्दर्भ में भी उपयुक्त है। मंत्रोच्चारण से भी एक विशिष्ट ध्वनि प्रकंपन बनता है, जो तुरन्त ईथर में मिलकर पूरे विश्व के वायुमण्डल में व्याप्त हो जाता है। उदाहरणार्थ–सूर्योदय के समय सूर्य के अभिमुख हो ''सिद्धा-मंत्र'' का एक श्वास में उच्च स्वर के साथ पुन: पुन: मंत्र जप किया जाता है। इस उच्चारण की विधि से एक विशेष प्रकार का ध्वनि प्रकंपन बनता है और वे प्रकंपन ईथर के माध्यम से कुछ क्षणों में सूर्य तक पहुँचकर लौट आते हैं। लौटते समय उन प्रकंपनों में सूर्य की सूक्ष्म शक्ति, तेजस्विता एवं प्राणवत्ता विद्यमान रहती है। जो पुन: साधक के शरीर से टकराकर उसमें उन गुणों का प्रभुत्व बढ़ा देती है।

✻ मंदिरों के शिखर गोल होते हैं, उनके पीछे भी वैज्ञानिक तथ्य है, जिसका सीधा संबंध मंत्र विज्ञान से है। तथ्य यह है कि हम जिस मंत्र का प्रयोग करें मंदिर का वह वर्तुल हमारे मंत्र को प्रतिध्वनित करे और हमारे शरीर से बिखरने वाली ऊर्जा को तरंगित व प्रभावित करे।

जैन साहित्य में उल्लेख मिलता है कि एक अवस्थित नामक घंटा एक स्थान पर बजता है। उसकी ध्वनि से प्रकंपित होकर दूर-दूर हजारों-लाखों घंटे बज उठते हैं। असंख्य योजन तक यह घटना घटित होती है। लोगों ने इस उल्लेख को कपोल कल्पना बताया किन्तु जब विज्ञान ने ध्वनि तरंगों को द्रुत-गामिता के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया तब यह सत्य भी प्रमाणित हो गया। अत: आज ध्वनि-विज्ञान महानतम उपलब्धि माना जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इसी परिप्रेक्ष्य में नमस्कार महामंत्र की वृत्ताकर तरंगों को समझा जा सकता है। जैसे तालाब में पत्थर फैंकने पर उसमें तरंगें उठती हैं, वे वृत्ताकार होकर एक के बाद एक लगातार वृत्त बनाकर तट तक पहुँच जाती हैं। नमस्कार महामंत्र में भी णमो अरहंताणं से लगातार वृत्त पैदा होकर णमो लोए सव्व साहूणं तक पहुँचते हैं। यदि नमस्कार महामंत्र की सविधि निष्ठापूर्वक उपासना की जाए तो ऐसा होना संभव है। इस प्रकार महामंत्र की तरंगों से ऊर्जा का निर्माण होता है।

❋ वर्तमान युग में रंगों का एक अलग से विज्ञान विकसित हो चुका है। अंक विज्ञान, ज्योतिष शास्त्र, हस्तरेखा विज्ञान, स्वास्थ्य विज्ञान सब क्षेत्रों में रंगों की रहस्यपूर्ण प्रतिध्वनियां हैं। नमस्कार महामंत्र और रंग-विज्ञान का जो गहरा तथा व्यापक संबंध है, उसे जानना-समझना इसलिए आवश्यक है कि हम उससे अधिक लाभान्वित हो सकते हैं। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में रंग हमें प्रभावित तो करते ही हैं। पंच परमेष्ठियों में अरिहंत का रंग श्वेत, सिद्ध का लाल, आचार्य का पीला, उपाध्याय का हरा और साधु का नीला (श्याम) है। ये रंग क्रमशः ज्ञान, दर्शन, विशुद्धि, आनन्द और शक्ति के केन्द्र माने गये हैं। इन्हें स्फटिक, बाल सूर्य, दीप शिखा, नभ और कस्तूरी की उपमाओं द्वारा समझाया गया है। ये उपमाएं क्रमशः पारदर्शन, पवित्रता, तेजोमयता, उर्ध्वगामिता, व्यापकता और एकाग्रता की प्रतीक है। अरिहंत वर्ण की कमी से अस्वास्थ्य बढ़ता है, सिद्ध वर्ण की कमी से प्रमाद बढ़ता है, आचार्य वर्ण की कमी से ज्ञान तंतु कमजोर पड़ते हैं, उपाध्याय वर्ण की कमी से क्रोध बढ़ता है, साधु वर्ण की कमी से प्रतिरोधक शक्ति क्षीण होती है। इस तरह इन सबमें एक विशिष्ट संतुलन की आवश्यकता है। नमस्कार महामंत्र इस संतुलन का जीवन्त प्रतीक है। रंगों और नमस्कार महामंत्र का जो घनिष्ट संबंध है, उसे आचार्यों ने वैज्ञानिक आधार पर संयोजित किया है। उसका शोधन किया है, पता लगाया है तथा ध्यान/समाधि से विशिष्ट पद में निहित रंग का अनुसंधान किया है, जो मौलिक होने के साथ प्रेरक है।

❋ डॉक्टर फिस्टलोव ने ध्वनि प्रकंपनों से शरीरस्थ परमाणुओं में कम्पन पैदा कर शारीरिक रोगों को दूर करने में सफलता प्राप्त की है। वर्तमान युग में सूक्ष्म ध्वनि से ऑपरेशन भी हो रहे हैं। रोग निवारण के परिप्रेक्ष्य में नमस्कार महामंत्र के शक्तिशाली प्रकम्पन शरीरस्थ अवयवों, मांसपेशियों और स्नायु मण्डल को शक्तिशाली बनाने के लिए वरदान सिद्ध हैं। इतिहास साक्षी है कि नमस्कार महामंत्र के प्रभाव के समक्ष कैंसर, कोढ़ (कुष्ट) जैसी जानलेवा बीमारियां भी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पराजित हो गईं। बेड़ियों के बंधन टूट गये, भयंकर उपद्रव शांत हो गये आदि। इस प्रकार नमस्कार महामंत्र के ध्वनि-प्रकंपनों से कर्म निर्जरा के साथ-साथ आधि भौतिक, व्याधि दैहिक और आध्यात्मिक—तीनों प्रकार के विघ्नों का उपशम होता है।

नमस्कार महामंत्र की तहों में हमें चमत्कारों से हटकर वैज्ञानिकताओं का अनुसंधान करना चाहिए। निष्काम भाव से इस मंत्र की आराधना करनी चाहिए। सारा विज्ञान विधि पर खड़ा है। वैज्ञानिक तर्क, न्याय और विधि के बिना निष्कर्ष नहीं देते। मशीनें भी बिना विधि से नहीं चलती। हर जगह विधि महत्त्वपूर्ण है। मंत्र भी विधिवत् होता है तो जल्दी सफल होता है। उसकी सफलता साधक और साध्य पर निर्भर है। ध्यान के अस्थिर होने पर भी मंत्र असफल हो जाता है। मंत्र तभी सफल होता है जब श्रद्धा, इच्छा और दृढ़ संकल्प—ये तीनों ही यथावत् कार्य करते हों। मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त है कि मनुष्य के अवचेतन में बहुत सारी आध्यात्मिक शक्तियां भरी रहती हैं। इन्हीं शक्तियों को मंत्रों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है। मंत्र की ध्वनियों के घर्षण द्वारा आध्यात्मिक शक्ति को उत्तेजित किया जाता है। इस क्षेत्र में केवल विचार शक्ति ही काम नहीं करती, इसकी सहायता के लिए उत्कृष्ट इच्छा शक्ति के द्वारा ध्वनि संचालन भी आवश्यक है। मंत्र शक्ति के प्रयोग की सफलता के लिए मुख्य रूप से तीन आयामों की अपेक्षा है, जो निम्नलिखित है—1. संकल्प—दृढ़ निश्चय, 2. ध्वनि तरंग, 3. भावना।

1. संकल्प—दृढ़ निश्चय[4]—

आकार रचना के दो हेतु हैं—स्वभाव और प्रयत्न। सार्वभौम नियम के अनुसार प्रतिक्षण परिणमन हो रहा है। उसके आधार पर आकाश मण्डल में सूक्ष्म आकृतियां निर्मित हो रही हैं। वैज्ञानिक कहते हैं—सूक्ष्म ध्वनि प्रकंपन आकाश में संग्रहीत हो जाते हैं। मनुष्य प्रयत्न के द्वारा परिणमन अथवा परिवर्तन करता है।

1. परिवर्तन का पहला चरण है—कल्पना।
2. परिवर्तन का दूसरा चरण है—निश्चय।
3. परिवर्तन का तीसरा चरण है—संकल्पानुरूप प्रवृत्ति।

2. ध्वनि तरंग—

ध्वनि में इतनी ताकत है कि आजकल विदेशों में पोप संगीत बंद होने लग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

गया है। इससे व्यक्ति के कान के परदे प्रभावित हो रहे हैं। संसार का सबसे प्रदूषित संगीत है ''नाइन्थ सिंफोनी''। उस पर निषेधाज्ञा लग गई है। यह सारा तरंगों का प्रभाव है। एक शब्द के उच्चारण से थीटा तरंगें उत्पन्न होती हैं, एक शब्द के उच्चारण से अल्फा तरंगें उत्पन्न होती हैं और एक शब्द के उच्चारण से बीटा तरंगें उत्पन्न होती हैं। इन तरंगों के आधार पर ही मंत्रों की कसौटी होती है। 'ॐ' के उच्चारण से अल्फा तरंगें उत्पन्न होती हैं और मस्तिष्क रिलेक्स हो जाता है, शिथिल हो जाता है। जैसे-जैसे मस्तिष्क की शिथिलता बढ़ती है, अल्फा तरंगें पैदा होती जाती हैं। शिथिलन के लिए यह बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है।

''जितने भी बीजमंत्र हैं, उनसे भिन्न-भिन्न तरंगें उत्पन्न होती हैं। वे तरंगें मस्तिष्क को प्रभावित करती हैं। बीजाक्षर अ सि आ उ सा, अर्हं, ॐ, ह्रीं, श्रीं, क्लीं से उत्पन्न तरंगें ग्रंथि संस्थान को प्रभावित करती हैं। अन्तःस्रावी ग्रंथियों के स्राव को संतुलित करती हैं। 'हं' के उच्चारण से भी ग्रंथियों का स्राव संतुलित होता है।[5] आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने एक जगह लिखा है कि ''रं'' का एक हजार बार जप करने से ऐसी तापमान तरंगें उत्पन्न होती हैं कि शरीर में गर्मी आ जाती है, सिर चकराने लगता है। सर्दी में मुँह से सी-सी शब्द निकलता है। यह उष्णता का प्रतीक है। एक विदेशी ने ला-ला.... लम्बे समय तक इन शब्दों के प्रयोग से गठिया रोग को ठीक कर लिया। यह है ध्वनिगत विशेषता।

मंत्र शास्त्रीय दृष्टि से जिस मंत्र में अ, र, ह होता है उसमें बहुत शक्ति होती है। केवल ध्वनि शास्त्र के परिप्रेक्ष्य में भी यदि नमस्कार महामंत्र का अनुशीलन करें तो इसके अचिंत्य प्रभाव को समझा जा सकता है।

नमस्कार महामंत्र बीजाक्षरों की दृष्टि से विलक्षण है, अद्‌भुत है, अलौकिक है, सम्पूर्ण/परिपूर्ण है, सार्वभौमिक है। इस महामंत्र में विशिष्ट अर्थ रहस्य गर्भित है। वर्णों का संयोजन इस प्रकार हुआ है कि उसमें व्योम के माध्यम से ऊपर उठना/उठाना सन्निहित हुआ है। इस महामंत्र में कुल 68 वर्ण हैं, जिसमें 30 व्योम बीज, 8 जल बीज, 11 भूमि बीज, 6 अग्नि बीज एवं 20 वायु बीज हैं। यदि व्योम और वायु को जोड़ें तो महामंत्र में इन दोनों के 50 बीज होंगे। व्योम और वायु का घनिष्ट संबंध है। गगन में वायु की व्याप्ति है। केवल णमो अरहंताणं के बीजों की व्याख्या करें तो भी वह इतनी गहन और प्रभावक है, जिसकी हमें कल्पना ही नहीं है। ध्वनि शास्त्र के माध्यम से इस रहस्य को समझा जा सकता है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

णमो अरहंताणं के वर्ण	**बीज**
ण्	व्योम
अ	वायु
म्	नभ
ओ	भूमि
अ	वायु
र्	अग्नि
अ	वायु
ह्	व्योम (व्याप्ति)
अं	व्योम
त्	वायु (श्वास)
आ	वायु (मरुत्)
ण्	व्योम
अं	व्योम

विश्लेषण—णमो में संयोजित जो चार वर्ण हैं, उनमें ण् और म्—ये दोनों व्योम बीज हैं। व्योम आच्छादन, विशालता और उर्ध्वगामिता का प्रतीक है। व्योम को हंस भी कहते हैं। हंस का अर्थ है—आनन्द, परमानंद। साधना के क्षेत्र में इसे परमहंस भी कहा जाता है। परमहंस अर्थात् एक ऐसा व्यक्तित्व, जिसने अपनी आत्मिक शक्तियों को पूर्णतः जागृत कर लिया है।

'अ' वायु बीज है। वायु जितनी हल्की होगी उतनी ऊपर जायेगी। यह एक शाश्वत सिद्धान्त है कि जो वस्तु जितनी हल्की होती है, उतनी ही ऊपर जाती है, जैसे—वाष्प, गैस, धुआं आदि। इसी प्रकार जीव कर्म वर्गणाओं से भारी होने के कारण संसार में परिभ्रमण करता है और कर्मों की निर्जरा होते ही कर्म वर्गणाओं से मुक्त (हल्का) हो ऊपर यानि लोकाग्र में पहुँच जाता है। वायु वाहन का काम भी करती है। वायु का काम है—श्वासोच्छ्वास। वायु को प्राण कहते हैं। श्वास से इसका सीधा संबंध है, जो पूरक, रेचक, कुंभक की प्रक्रिया से व्यक्ति को योग से जोड़ता है। इस प्रकार 'अ' का अर्थ हुआ—समाधि। 'अ' अर्थात् श्वास, श्वास अर्थात् प्राण, प्राण अर्थात् समाधि। 'अ' ध्वनि का संधान भी करता है। 'ओ' भूमि बीज है जो उर्वरता और आधार का काम करता है। 'णमो'

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का ओ आध्यात्मिक उर्वरता को वृद्धिंगत करता है। 'मो' में ओ और म के एक गुप्त रहस्य को व्याकरण के नियम से भी समझा जा सकता है। 'ओ' का उच्चारण स्थान होठ और कण्ठ है। यह शब्द 'अ' और 'उ' के संयोग से बना है। 'ओ' के उच्चारण में हमारा पूरा कण्ठ काम करता है। 'म्' का स्थान नासिका है। 'णमो' का सम्यक् उच्चारण नासिका और कण्ठ का मार्ग खोलता है।[6]

अरहंताणं में संयोजित तीन वर्ण वायु बीज, तीन वर्ण व्योम बीज और र अग्नि बीज है। अग्नि शब्द की व्युत्पत्ति के आधार पर अग्नि में इण्, अज और णीञ् तीन धातुओं का योग है, जिनके अर्थ क्रमशः गति, दाह, ग्रहण है। अग्नि के ये तीन काम हैं। अग्नि का एक काम है—गति। आग जलाने पर उसकी ज्वाला ऊपर की ओर जायेगी। यह गति है। पेट्रोल गाड़ी में पड़ा है, उस ऊर्जा को गति में बदलना होता है। पेट्रोल से गाड़ी चलेगी नहीं लेकिन उस पेट्रोल को मेकेनाइज्ड प्रोसेस से रूपान्तरित कर उस तरल को अग्नि में बदलने से गाड़ी चलने लगेगी। डीजल है, आग है। इस प्रकार अग्नि गत्यर्थक है। अग्नि में हाथ डालने से हाथ जल जाता है, यह अग्नि का दाह गुण है। अग्नि में घी जितना भी डालो वह सारा ग्रहण कर लेगी। यही अग्नि का व्यक्तित्व है, कुछ भी उसमें डाल दें वह सब स्वीकार कर लेगी। इस प्रकार वह अग्नि बीज निर्जरा का प्रतीक है। संवर भी है, लेकिन निर्जरा का तो निश्चित रूप से है ही।

महामंत्र के प्रत्येक पद में शक्तिशाली बीजों का संयोजन एक विशिष्ट प्रकार की तरंगों को पैदा करता है। हमारी चेतना भी तरंगातीत है। महामंत्र जप अथवा ध्यान द्वारा उस तरंगातीत चेतना का अनुभव किया जा सकता है। आज का वैज्ञानिक गुरुत्वाकर्षण की सीमा को पार कर अन्तरिक्ष यात्रा करने में पूर्ण सफल हुआ है। जब कोई व्यक्ति वैज्ञानिक पद्धति के आधार पर अन्तरिक्ष यात्रा कर सकता है तो ध्यान व जप द्वारा तरंगातीत चेतना का अनुभव क्यों नहीं कर सकता? ऐसा संभव है, यह किया जा सकता है, अपेक्षा है मन की आँखें खुले। कहा भी है—

जब तन की आँखें खुलती हैं, तो जहान मिलता है।
जब मन की आँखें खुलती हैं, तो भगवान् मिलता है॥

एक बार वैज्ञानिकों ने साउण्ड प्रूफ मकान बनाया। उसमें बाहर की आवाज भीतर प्रवेश नहीं कर सकती थी और अन्दर की आवाज बाहर नहीं जा सकती थी। कुछ वैज्ञानिक प्रयोग के लिए उस मकान के भीतर बैठे। मकान के भीतर मशीन की सी आवाजें आने लगी। उन्हें आश्चर्य हुआ कि ये आवाजें कहाँ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

से आ रही हैं ? शब्द निरोधक मकान में बाहर से आवाजें कैसे आ रही हैं ? सोचने पर ज्ञात हुआ कि बाहर से कुछ भी नहीं आ रहा है। शरीर के भीतर जो एक विशाल फैक्ट्री चल रही है। रक्त चल रहा है, धमनियां कार्यरत हैं, सारा नाड़ी तंत्र सक्रिय है—ये सारी उनकी आवाजें हैं। जप, ध्यान अथवा कायोत्सर्ग की गहराई में इन रहस्यों का अनुभव होता है और साधक शब्द से अशब्द अर्थात् इनसे भी आगे अनेक परतों को पार कर आत्मा तक पहुँचता है।

भावना

भावना हमारी सूक्ष्म भाषा है। वह प्रसरणशील है इसलिए एक-दूसरे को प्रभावित करती है। भावना ध्येय के साथ तादात्म्य स्थापित करने, तन्मय होने का प्रयोग है। हमारी संवित्ति चिंतन और सुझाव से भावित होती है। जैसा चिंतन और सुझाव होता है, संवेदन उसी रूप में बदल जाते हैं। भावना के द्वारा असत्य सत्य बन जाता है।[7] अमृत के संवेदन से विष अमृत बन जाता है।[8] मैत्री के संवेदन से शत्रु मित्र बन जाता है।[9] मधुर कटु बन जाता है।[10] कटु मधुर बन जाता है।[11] जैसे हरड़ में स्वभाव से ही विरेचन करने की शक्ति होती है, वैसे ही भावना से य, र, ल, व आदि वर्णों में चिंतन के अनुरूप शक्ति पैदा हो जाती है।[12] वर्तमान विज्ञान के अनुसार हर कोशिका के केन्द्रक में माइण्ड होता है, न्यूट्रियस में मेमोरी होती है, हमारे भाव को वह अंकित किये रखती हैं। भावों का संचयन होते-होते वह शरीर पर अभिव्यक्त होने लगता है। किसी के गले में दर्द हुआ, बार-बार मन में आता है, कहीं कैंसर न हो जाये, वही हुआ। ओर तो क्या, हमारा बुरा भाव जिस वस्तु और व्यक्ति के प्रति होता है, उसका अनिष्ट भी अपने अनिष्ट चिंतन के साथ-साथ होने लगता है। यद्यपि वस्तु का आभामंडल तुरन्त प्रभावित होता है, जबकि व्यक्ति का दुर्बल आभामण्डल ही प्रभावित होता है, सबल नहीं। नमस्कार महामंत्र के द्वारा सबल और सक्षम आभामण्डल का निर्माण किया जा सकता है।

पुरुषोत्तम के लड़के की वधु को कभी अच्छी साड़ियां पहनने की सास ने सुविधा नहीं दी। घर के सभी लोग अच्छे कीमती वस्त्र धारण करते। केवल वही एक अभागिन बचती। रोज-रोज मन से निकलने वाली आहों का चमत्कार हुआ। सामने टंगी दो साड़ियों में छेद हो गया। सास ने बहु को डांटा-डपटा। तूने ही ऐसा किया है। उस बैचारी को कौन सुनता ? वह और अधिक नजरों से गिरा दी गई।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वह स्वयं नहीं जानती थी कि उसके कारण ऐसा हो रहा है। आखिर साइकोलॉजी विशेषज्ञ द्वारा बताया गया कि यह न तो किसी भूत-प्रेत के द्वारा हो रहा है और न ही बहु के द्वारा जान-बूझकर। सत्य यह है कि इसकी दु:ख भरी आहों के द्वारा यह सब हो रहा है। यदि इस प्रकार ध्यान नहीं दिया गया तो ये घातक तरंगे आपके शरीर पर भी अपना प्रभाव दिखा सकती हैं, छेद कर सकती हैं।

ठीक इसी प्रकार संकल्प शक्ति, शब्द शक्ति, उच्चारण शक्ति और भावना शक्ति से महामंत्र किसी सबल चेतना के साथ संयुक्त होकर अपनी विद्युत ऊर्जाएं तेजी से विकीर्णित करता है। इन्हीं विकीर्ण ऊर्जाओं की क्षमताओं के अनुसार साधक क्षणिक और स्थाई दोनों प्रकार के लाभ को प्राप्त करता है।

क्षणिक लाभ – धन, सत्ता, स्वास्थ्य, सुयश, स्वर्ग।

स्थाई लाभ – विविध प्रकार की भौतिक अभिसिद्धियों की प्राप्ति, आत्म शुद्धि तथा आत्मशांति की प्राप्ति।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वाणी की एक शक्ति है – भावना। दूसरी शक्ति है – उच्चारण। शुद्ध और स्पष्ट उच्चारण के अभाव में भला कोई मंत्र कैसे सफल हो सकता है? यह वैज्ञानिक दृष्टि है। मंत्र शास्त्रीय खोजों में तीन बातें निर्णीत हैं – भावना, उच्चारण, उच्चारण द्वारा उत्पन्न वाणी की शक्ति। उच्चारण के साथ एक तरंग पैदा होती है इसलिए कहा गया है – ''प्रलम्बनादाभ्यासाद् वाक् शुद्धि:''। प्रलम्ब नाद से वाक् शुद्धि होती है। नाद के अनुपात में ऊर्जा निर्मित होती है और मन के साथ उसका संबंध स्थापित होता है।

बहुत सारे लोग जप करते हैं, जैन लोग वर्षों से नमस्कार महामंत्र का जप कर रहे हैं परन्तु जब तक मंत्र शब्द के उच्चारण का रहस्य हाथ में नहीं आता तब तक मंत्र अर्थवान नहीं होता, शक्तिशाली नहीं बनता। एक शब्द उच्चारण भेद से पचासों परिणाम ला सकता है। ''ॐ'', ''अर्हम्'' के अनेक प्रकार के उच्चारण हैं। महामंत्र जप की भी अनेकों विधियां हैं। मंत्रोच्चारण के समय मंत्राक्षरों को कम भी न बोलें, अधिक भी न बोलें, एक-दूसरे से मिलाकर न बोलें, जहां विराम लेना हो वहां विराम लें। एक पद को दूसरे पद में न मिलाएं। शब्दों के योग का ध्यान रखें। घोष का पूरा विचार रखें। उचित शब्द उचित विराम न लेने के कारण कभी-कभी अर्थ का अनर्थ भी हो जाता है। सारे अर्थ का परिवर्तन हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जब उच्चारण के सारे दोष मिट जाते हैं, तब वाणी शुद्ध होती है। शब्दानुशासन का कथन है—''जो शब्द का शुद्ध उच्चारण करता है, वह स्वर्ग में चला जाता है, शब्द उसके लिए कामधेनु बन जाता है।''

इस वैज्ञानिक पद्धति से नमस्कार महामंत्र का जप करने से हमारी ऊर्जा इतनी प्रबल बन जाती है, आभामंडल इतना शक्तिशाली बन जाता है और लेश्या का कवच इतना सूक्ष्म बन जाता है कि आने वाले बुरे विचारों के परमाणु हमें प्रभावित नहीं कर पाते। नमस्कार महामंत्र की सूक्ष्म ध्वनि तरंगों से जब सुषुम्ना का द्वार खुलता है तो आध्यात्मिक जागृति की नई किरण फूट पड़ती है। परिणामस्वरूप हमारी प्रतिभा और प्रज्ञा का जागरण होता है और धीरे-धीरे एक दिन आत्मा में उच्च कोटि का वीतराग भाव विकसित होता है।

सन्दर्भ—

1, 2, 3. जैन विश्वभारती लाडनूँ से प्रकाशित ''तुलसी प्रज्ञा'', पत्रिका (अक्टूबर+दिसम्बर, 1993)

4. मंत्र : एक समाधान—प्रस्तुति, पृ. 6

5. मैं कुछ होना चाहता हूँ, पृ. 65

6. बहुआयामी महामंत्र णमोक्कार, पृ. 33

7, 8. योग वाशिष्ट, 3/56/30, 31 (मंत्र एक समाधान से उद्धृत)

9. योग वाशिष्ट, 3/60/17 (मंत्र एक समाधान से उद्धृत)

10. योग वाशिष्ट, 3/60/27 (मंत्र एक समाधान से उद्धृत)

11. योग वाशिष्ट, 3/60/28 (मंत्र एक समाधान से उद्धृत)

12. मंत्र : एक समाधान—प्रस्तुति, पृ. 8

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

14. मनोविज्ञान और नमस्कार महामंत्र

नमस्कार महामंत्र अचिन्त्य शक्ति से सम्पन्न मंत्र है। यह जैन विद्या का महामंत्र है। इस महामंत्र का प्रत्येक पद जपकर्त्ता के रोम-रोम को झंकृत करता हुआ उसे मानसिक एवं भावनात्मक पोषण देता है। अर्हत्, सिद्ध आदि पंच-परमेष्ठी के प्रति वंदना या श्रद्धा की अभिव्यक्ति आन्तरिक शक्तियों को जागृत करती है। मंगलमय आत्माओं के स्मरण से मन पवित्र होता है, पुरातन वृत्तियों में शोधन होता है, जिससे व्यक्ति के जीवन में सदाचार का अवतरण होता है। नि:संदेह आराध्य के प्रति की गई भक्ति में बहुत बड़ा आत्म-संबल होता है, वह जादू का सा काम करती है।

आत्मबल और श्रद्धा बल से हनुमान का नागपाश, आचार्य मानतुंग की बेड़ियां टूट गईं। ऐसा क्यों हुआ? अध्यात्म की भाषा में सोचने से समाधान मिला—जिसने समर्पण कर दिया, उसने दिव्य शक्ति के साथ जो भेद था, उसे तोड़ दिया, उसके साथ तादात्म्य स्थापित कर लिया अर्थात् जब अभेद प्रणिधान हो जाता है तब शक्ति अपने आप जाग जाती है। अमेरिकन डॉक्टर हो आई रस्क ने बताया कि रोगी तब तक स्वास्थ्य लाभ नहीं कर सकता, जब तक वह अपने आराध्य में विश्वास नहीं करता। आस्तिकता ही सब रोगों को दूर करने वाली है। जब रोगी को चारों ओर से निराशा घेर लेती है, उस समय आराध्य के प्रति की गई प्रार्थना प्रकाश का काम करती है। प्रार्थना का फल अचिन्त्य है। दृढ़ आत्म-विश्वास और आराध्य के प्रति की गई प्रार्थना सभी प्रकार के मंगलों को देती है। हृदय के कोने से सशक्त भावों में निकलती हुई अन्तर ध्वनि बड़े से बड़ा कार्य सिद्ध करने में सफल होती है।[1] मनोविज्ञान के अनुसार इन सबकी पृष्ठभूमि में प्रेरक तत्त्व है—संवेग। हमारे शरीर में अनेक तत्त्व हैं, जो बल को बढ़ाने वाले हैं। संवेगों की प्रबलता की स्थिति में हमारे शरीर के आन्तरिक अवयव बल बढ़ाने लग जाते हैं। एड्रीनल ग्रंथि उस समय इतना स्राव करती है कि आदमी में अनचाही, अनजानी ताकत आ जाती है। परिणामस्वरूप वह बड़े से बड़ा काम करने में समर्थ बन जाता है। संवेगों से शरीर की पूरी कार्य प्रणाली बदल जाती है। व्यक्ति अति उत्साह से भरकर ऐसे-ऐसे कार्य कर गुजरता है, जिसकी उसने कभी कल्पना तक नहीं की थी। कार्य सम्पन्न हो जाने के बाद स्वयं आश्चर्यचकित रह जाते हैं कि यह काम कैसे हो गया?

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संवेगावस्था में कुछ समय के लिए व्यक्ति के मानस से बुद्धि का नियंत्रण हट जाता है, ऐसी अवस्था में वह जो कुछ करता है, उसके अच्छे परिणाम भी हो सकते हैं और दुष्परिणाम भी। इस प्रकार कुछ संवेग मानव को उच्च स्तरीय प्रतिष्ठा पर प्रतिष्ठित करते हैं तो कुछ संवेग पशु के स्तर तक भी ले जाते हैं। भर्तृहरि ने तो पशु और मनुष्य की भेद-रेखा मौलिक मनोवृत्तियों पर अंकुश के आधार पर ही स्थापित की है।

आहारनिद्राभय मैथुनञ्च, सामान्यमेतत् पशुभिः नराणाम्।
धमा ही तेषामधिको विशेषः, धर्मेण हीना पशुभिः समाना॥

जैन आगमों में वर्णित दस संज्ञा और मनोविज्ञान की मनोवृत्तियों का तुलनात्मक अध्ययन मनोविज्ञान के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण आयाम उद्घाटित कर सकता है।

महामंत्र का मन पर प्रभाव

मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह विचारणीय प्रश्न है कि नमस्कार महामंत्र का मन पर क्या प्रभाव पड़ता है? आध्यात्मिक शक्ति का विकास किस प्रकार होता है? जिससे इस महामंत्र को समस्त कार्यों में सिद्धि देने वाला कहा गया है। मनोविज्ञान मानता है कि मानव मन की दृश्य क्रियाएं उसके चेतन मन में और अदृश्य क्रियाएं अचेतन मन में होती हैं। मन की इन दोनों क्रियाओं को मनोवृत्ति कहा जाता है। प्रत्येक मनोवृत्ति के तीन पहलू हैं— 1. ज्ञानात्मक, 2. वेदनात्मक, 3. क्रियात्मक।

मनोवृत्ति के ये तीनों पहलू एक-दूसरे से पृथक् नहीं किये जा सकते हैं। मनुष्य को जो कुछ ज्ञान होता है, उसके साथ-साथ वेदना और क्रियात्मक भाव की भी अनुभूति होती है।

ज्ञानात्मक मनोवृत्ति के संवेदन, प्रत्यक्षीकरण, स्मरण, कल्पना और विचार—ये पाँच भेद हैं।

संवेदनात्मक मनोवृत्ति के संवेग, उमंग, स्थायी भाव और भावना-ग्रंथि— ये चार भेद हैं।

क्रियात्मक मनोवृत्ति के सहज-क्रिया, मूल-वृत्ति, आदत, इच्छित क्रिया और चरित्र—ये पाँच भेद किये गये हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र के जप से ज्ञानात्मक मनोवृत्ति उत्तेजित होती है, जिससे उससे अभिन्न रूप में सम्बद्ध रहने वाली उमंग वेदनात्मक अनुभूति और चरित्र नामक क्रियात्मक अनुभूति को उत्तेजना मिलती है। अभिप्राय यह है कि मानव मस्तिष्क में ज्ञानवाही या क्रियावाही—ये दो प्रकार की नाड़ियां होती हैं। इन दोनों नाड़ियों का आपस में संबंध है, परन्तु इन दोनों के केन्द्रक पृथक् हैं। ज्ञानवाही नाड़ियां और मस्तिष्क के ज्ञानकेन्द्र मानव के ज्ञान-विकास में एवं क्रियावाही नाड़ियां और मानव मस्तिष्क के क्रिया-केन्द्र उसके चरित्र विकास की वृद्धि के लिए कार्य करते हैं।

क्रियाकेन्द्र और ज्ञान-केन्द्र का घनिष्ट संबंध होने के कारण नमस्कार महामंत्र की आराधना, स्मरण और चिंतन से ज्ञान-केन्द्र और क्रिया-केन्द्रों का समन्वय होने से मानव मन सुदृढ़ होता है और आत्मिक विकास की प्रेरणा मिलती है। अन्तर्द्वन्द्व शांत हो जाते हैं और नैतिक भावनाओं का उदय होता है, जिससे अनैतिक वासनाओं का दमन होकर नैतिक संस्कार उत्पन्न होते हैं। इस महामंत्र में उच्चरित ध्वनियों से ऋण और धन दोनों प्रकार की विद्युत उत्पन्न होती है, जिससे कर्म कलंक भस्म हो जाता है। मानसिक एकाग्रता, आत्मिक सुख और आत्म-स्वरूप की उपलब्धि में महामंत्र का आलंबन श्रेयस्कर है। श्रद्धा, भक्ति और एकाग्रता पूर्वक इस महामंत्र की आराधना से बुद्धि, वाणी, मन, देह सब पवित्र बन जाते हैं अत: यह एकाग्रता का प्रतीक मंत्र है। भाव-शुद्धि का जनक है।

मौलिक मनोवृत्तियों के परिवर्तन की पृष्ठभूमि में नमस्कार महामंत्र की उपयोगिता

संवेगों के आधार पर मनुष्य के स्वभाव और चारित्र का अध्ययन करने के लिए जो विधि काम में लाई गई, उसका नाम मन:विज्ञान या मनोविज्ञान पड़ा। इसका अध्ययन करने वाले मनोवैज्ञानिक कहलाते हैं। मनोविज्ञान के अनुसार मनुष्य में चौदह मूल प्रवृत्तियां पाई जाती हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक एक्डूगल के चिन्तनानुसार व्यक्ति में जितनी मूल प्रवृत्तियां होती हैं, उतने ही संवेग होते हैं—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मौलिक प्रवृत्तियां	**संवेग**
1. पलायन-वृत्ति	भय
2. संघर्ष-वृत्ति	क्रोध
3. जिज्ञासा-वृत्ति	कुतूहल भाव
4. आहारान्वेषण-वृत्ति	भूख
5. विभीय-वृत्ति	वात्सल्य
6. यूथ-वृत्ति	एकाकीपन या सामूहिकता
7. विकर्षण-वृत्ति	जुगुप्सा भाव
8. काम-वृत्ति	कामुकता
9. स्वाग्रह-वृत्ति	उत्कर्ष भाव
10. आत्मलघुता-वृत्ति	हीनता भाव
11. उपार्जन-वृत्ति	स्वामित्व भाव
12. रचना-वृत्ति	सृजन भाव
13. याचना-वृत्ति	दु:ख भाव
14. हास्य-वृत्ति	उल्लासित भाव

ये मौलिक प्रवृत्तियां समस्त प्राणियों में पाई जाती हैं। मनुष्य इन मौलिक प्रवृत्तियों में परिवर्तन कर सकता है। केवल मूल प्रवृत्तियों द्वारा संचालित जीवन असभ्य और पाशविक कहलाता है। अत: मूल प्रवृत्तियों में दमन, विलयन, मार्गान्तरीकरण और शोधन–ये चारों परिवर्तन होते रहते हैं। मौलिक प्रवृत्तियों के परिवर्तन की पृष्ठभूमि में नमस्कार महामंत्र की उपयोगिता निर्विवाद और सार्वभौमिक है।

1. दमन

प्रत्येक मूल प्रवृत्ति का बल उसके बराबर प्रकाशित होने से बढ़ता है। यदि किसी मूल प्रवृत्ति के प्रकाशन पर कोई नियंत्रण नहीं रखा जाता है तो वह मनुष्य के लिए लाभकारी न होकर हानिकारक हो जाती है अत: दमन की क्रिया होनी चाहिए। उदाहरणार्थ यों कहा जा सकता है–संग्रह की प्रवृत्ति यदि संयमित रूप से रहे तो उससे मनुष्य जीवन की रक्षा होती है किन्तु जब यह अधिक बढ़ जाती है तो कृपणता और चोरी का रूप धारण कर लेती है। मनोवैज्ञानिकों द्वारा चिंता का विवेचन निम्न प्रकार से वर्णित है–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

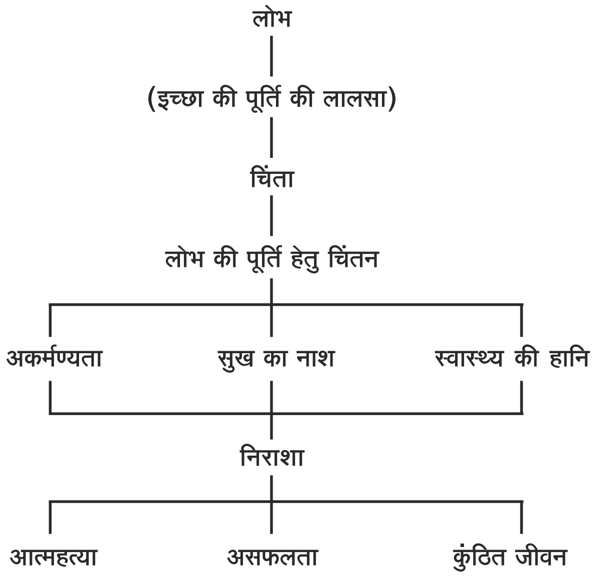

मनोवैज्ञानिकों द्वारा इस प्रकार चिंता का सारा विश्लेषण कर दिया गया है। सारा नक्शा बनाकर पेश कर दिया गया है। चिंता के अंतिम परिणाम तीन होते हैं—आत्महत्या, असफलता और कुंठित जीवन। जब चिंता की पूर्ति नहीं होती आदमी हर तरह से निराश हो जाता है, तो उसके सामने केवल तीन रास्ते रह जाते हैं। कोई बीमार हो गया, ईलाज नहीं बैठा, निराश हो गया। व्यक्ति परीक्षा में फैल हो गया, चिंता सताने लगी। निराश और चिंतित होने के कारण वे आत्महत्या कर लेते हैं, इस प्रकार की घटनाएं हम आए दिन देखते और सुनते हैं।

इस प्रकार की मनोवृत्तियों से ऊपर उठकर जीवन को उपयोगी बनाने के लिए आवश्यक है—अपनी वृत्तियों का दमन (नियंत्रण) और उर्ध्वीकरण। ब्राह्मणों में जनेऊ संस्कार की तरह जैन धर्म में बच्चों को मंत्र-दीक्षा दी जाती है। बचपन में महामंत्र नवकार के आदर्श के द्वारा मानव की मूल प्रवृत्तियों का उर्ध्वीकरण एवं नियंत्रण सरल एवं स्वाभाविक है। इस मंत्र का आदर्श श्रद्धा और दृढ़ विश्वास को उत्पन्न करता है, जिससे मूल प्रवृत्तियों को नियंत्रित रखने में बहुत बड़ी सहायता मिलती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्राचीन युग का योग और वर्तमान युग का मनोविज्ञान मानव के लिए वरदान स्वरूप है। मन की वृत्तियों के अध्ययन के लिए योगशास्त्र में ध्यान, प्राणायाम, मंत्र-विद्या आदि का आलम्बन लिया जाता है जबकि मनोविज्ञान शास्त्र ध्यान-विधि के अतिरिक्त वैज्ञानिक युग के साधनों का प्रयोग करता है। मनोवैज्ञानिकों ने पागल मनुष्यों के मनोभावों को समझने के लिए आज विज्ञान के साधनों से पर्याप्त लाभ उठाया है। मानव चिकित्सालयों में पागल मनुष्यों के विकृत मस्तिष्कों की परीक्षा की जाती है। बिजली के प्रयोग भी उन पर करते हैं।

मनोविज्ञान में मन के तीन भेद माने जाते हैं—चेतन, अवचेतन और अर्द्धचेतन। अचेतन मन को इच्छाओं एवं वासनाओं का अक्षय भण्डार माना गया है। मनोविज्ञान के अनुसार जब मनुष्य की कोई इच्छा अतृप्त रह जाती है और उसका दमन कर दिया जाता है तब चेतन मन से निकलकर वह अवचेतन मन में अपना स्थान बना लेती है। यदि उसका शोधन या विरेचन नहीं किया जाता है तो वह दमित इच्छा मनुष्य के शरीर में किसी भयंकर रोग का रूप ग्रहण कर लेती है अथवा पागलपन में परिवर्तित हो जाती है। इस विषय में मनोविज्ञान यह समाधान प्रस्तुत करता है कि इच्छाओं का दमन मत करो उसका उर्ध्वीकरण या रूपान्तरण करो।

वृत्तियों के उर्ध्वीकरण में बहुत बड़ा आलंबन बनता है—नमस्कार महामंत्र। मंत्रविद आचार्यों ने नमस्कार महामंत्र के साथ रंगों और चैतन्य-केन्द्रों का समायोजन किया है, जिसके अभ्यास के द्वारा वृत्तियों का उर्ध्वारोहण या रूपान्तरण आसानी से किया जा सकता है। हमारी मानसिक स्वस्थता का संबंध प्राणधारा के साथ जुड़ा हुआ है। प्राण को सक्रिय या निर्मम बनाने के लिए नमस्कार महामंत्र की साधना प्राण के पांच बीज—यैं, पैं, वैं, रैं, लैं के साथ की जाती हैं।[2] 'ॐ', 'अर्हम्' के साथ भी इसकी आराधना वृत्ति परिष्कार में योगभूत बनती है।

ज्ञानार्णव में आचार्य शुभचन्द्र ने लिखा है—महामंत्र के पदों की विद्युत शक्ति आत्मा में इस प्रकार का झटका देती है, जिससे आहार, भय, मैथुन, परिग्रह जन्य समस्याएं सहज ही परिष्कृत हो जाती हैं। इस महामंत्र की शक्ति को अवचेतन मन तक पहुँचाकर अवचेतन मन के स्तर पर जमीं परतों को भी निरस्त किया जा सकता है तथा मन को अनुशासित रखा जा सकता है। नमस्कार महामंत्र के उच्चारण, स्मरण, चिंतन, मनन और ध्यान द्वारा मन पर इस प्रकार के संस्कार पड़ते हैं, जिससे जीवन में श्रद्धा और विवेक का उत्पन्न होना स्वाभाविक है क्योंकि मनुष्य का जीवन श्रद्धा और सद्विचारों पर ही अवलंबित है। श्रद्धा और

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विवेक को छोड़कर मनुष्य मनुष्य की तरह जीवित नहीं रह सकता है। अत: जीवन की मौलिक प्रवृत्तियों का दमन या नियंत्रण करने के लिए महामंगल रूप नमस्कार महामंत्र का स्मरण परम आवश्यक है।

2. विलयन

मौलिक प्रवृत्तियों के परिवर्तन का दूसरा उपाय है—विलयन। विलयन दो प्रकार से हो सकता है— 1. निरोध द्वारा, 2. विरोध द्वारा।

निरोध का अर्थ है—वृत्तियों को उत्तेजित होने का अवसर ही नहीं देना। इससे मौलिक प्रवृत्तियां कुछ समय पश्चात् अपने आप ही नष्ट हो जाती हैं। विलियन जेम्स का कथन है कि यदि किसी प्रवृत्ति को अधिक काल तक प्रकाशित होने का अवसर न मिले तो वह नष्ट हो जाती है। अत: धार्मिक आस्था द्वारा व्यक्ति अपनी विचार प्रवृत्तियों को अवरुद्ध कर उन्हें नष्ट कर सकता है। दूसरा उपाय जो विरोध द्वारा प्रवृत्तियों के विलयन के लिए कहा गया है, उसका अर्थ यह है कि जिस समय एक प्रवृत्ति कार्य कर रही है, उसी समय उसके विपरीत दूसरी प्रवृत्ति को उत्तेजित होने देना। जैसे द्वन्द्व प्रवृत्ति के उमड़ने पर सहानुभूति की प्रवृत्ति को उभारा जाए तो उस प्रवृत्ति का विलयन सरलता से हो जाता है। इस प्रतिपक्षी वृत्ति को उत्तेजित करने में प्रेक्षा ध्यान में निर्दिष्ट अनुप्रेक्षाओं के प्रयोगों को सफल प्रयोग कहे जा सकते हैं। दसवैकालिक सूत्र में क्रोध आदि की विजय के लिए प्रतिपक्षी भावना का उल्लेख निम्न प्रकार से उद्धृत हुआ है—

उवसमेण हणे कोहं, माणं मद्दवया जीणे।
मायं चज्जव भावेण, लोहो संतोसओ जिणे॥ [3]

अर्थात् उपशम से क्रोध को, मृदुता से मान को, ऋजुता से माया को और संतोष से लोभ को जीतो।

नमस्कार महामंत्र कषाय एवं कामनाओं को समाप्त करने वाला मंत्र है। यह सद्भावना, सहिष्णुता, आत्मानुशासन तथा विनम्रता के भावों को विकसित करने वाला मंत्र है। अत: वृत्तियों के विलयन में यह मंत्र सहायक सिद्ध होता है।

जिस प्रकार कुतुबनुमा का निर्माण करते समय जब तक सुइयां चुंबकित नहीं कर दी जाती हैं, उनका मुँह किसी भी दिशा में रह सकता है, परन्तु जब वे चुम्बकित कर दी जाती हैं, तब उनमें विशेष शक्ति आ जाती है। उस समय उसका मुँह केवल उत्तर दिशा की ओर रहता है। उसके बाद वे हमेशा सचाई से उसी दिशा की ओर संकेत करती रहती हैं, ठीक उसी प्रकार नमस्कार महामंत्र समर्पण श्रद्धा व तन्मयता रूपी सुइयों से जब चुम्बकित हो जाता है, तब उसमें विशेष

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शक्ति का सामर्थ्य प्रकट होता है जो मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और माध्यस्थ भावों को विकसित व पुष्ट बनाता है। विकारों का परिष्कार करने के लिए पंच-परमेष्ठी के आदर्श से अन्य कोई उत्तम आदर्श नहीं हो सकता। जप का अर्थ भी यही है, शब्द के उच्चारण के माध्यम से किसी परम शक्ति की सन्निधि को प्राप्त कर लेना। जप की तन्मयता से जब परम आत्मा की, परम शक्ति की सन्निधि प्राप्त होती है, तब मनुष्य बदल जाता है। भय और वासनाएं समाप्त हो जाती हैं। आवेग और आवेश नष्ट हो जाते हैं और एक नये जीवन का निर्माण होता है।

3. मार्गान्तरीकरण

मार्गान्तरीकरण का उपाय दमन और विलयन से श्रेष्ठ है। नमस्कार महामंत्र के द्वारा बचपन से ही मौलिक प्रवृत्तियों का मार्गान्तरीकरण किया जा सकता है। सद्विचारों, भावनाओं एवं मंत्रोच्चारण से मौलिक प्रवृत्तियों का मार्गान्तरीकरण करने पर वे विचार-भावनाएं व्यक्ति को श्रेष्ठता और उदारता की ओर अग्रसर करने में सहायक बनती हैं।

ब्रिटिश पार्लियामेंट का सदस्य चुने जाने के बाद अपने पहले भाषण में बैंजामिन डिजरेली के मुँह से केवल दो ही शब्द निकल सके। पार्लियामेंट के सदस्यों ने उनका मजाक उड़ाते हुए कहा—अगली बार वह पार्लियामेंट का सदस्य नहीं बन पायेगा। लेकिन उन्होंने बड़े शांत-भाव से तमाम उपहासों का उत्तर देते हुए कहा—एक दिन ऐसा आयेगा जब तुम मेरे भाषणों को बड़े उत्साह से सुनोगे।

इस दृढ़ संकल्प से भय की वृत्ति का मार्गान्तरीकरण श्रम, उत्साह और गहरी लगन में हो गया। बैंजामिन डिजरेली के वे शब्द सत्य सिद्ध हुए। बहुत जल्दी ही वह अवसर आ गया जब अपने आत्म-विश्वास के बल पर वे ब्रिटेन के प्रधानमंत्री बन गये। वे पूरे पच्चीस वर्षों तक ब्रिटेन के सर्वेसर्वा बने रहे। यह विश्वास और श्रम का चमत्कार था। नमस्कार महामंत्र का जप भी व्यक्ति के भीतर ऐसा विश्वास और श्रद्धा का भाव उत्पन्न करता है, जिससे वृत्तियों का मार्गान्तरीकरण आसानी से संभव है। वस्तुत: साधक की विचारशक्ति स्विच का काम करती है और मंत्र-शक्ति विद्युत तरंग का। सचमुच यह मंत्र व्यक्ति को अपनी प्रसुप्त शक्तियों से परिचित कराने वाला महामंत्र है। इसकी साधना से अध्यात्म का समूचा मार्ग आलोकित होता है।

4. शोधन

मौलिक प्रवृत्तियों का शोधन उसका एक प्रकार से मार्गान्तरीकरण ही है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आर्त्त व रौद्र ध्यान से मन को हटाकर धर्मध्यान व शुक्ल ध्यान में लगाना शोधन है। नमस्कार महामंत्र अपने आपको देखने तथा शांति प्राप्त करने का सशक्त उपक्रम है। इसकी आराधना आर्त्त व रौद्र ध्यान से मुक्ति दिलाकर धर्मध्यान व शुक्लध्यान का मार्ग प्रशस्त करती है।

जैन आगमों में उल्लिखित आवेगों का उपशम, क्षयोपशम व क्षयीकरण ही मनोविज्ञान की भाषा में दमन, विलयन, मार्गान्तरीकरण और शोधन है। कर्म शास्त्रानुसार संवेग के चार प्रकार हैं—क्रोध, मान, माया, लोभ। इन्हें केवल किताबी अध्ययन से नहीं बदला जा सकता। इनके शोधन हेतु भीतरी परिवर्तन में अपना प्रस्ताव पारित करना होगा। परिवर्तन के लिए ध्यान, मौन, जप, स्वाध्याय, खाद्य-संयम, अनुप्रेक्षा, योगासन आदि अध्यात्म के महत्त्वपूर्ण पहलू हैं।

जिस प्रकार व्यवहार के धरातल पर एक कार्य का बार-बार किया जाने वाला अभ्यास एक विशेष प्रकार की रासायनिक क्रिया का संतुलन करता है, जो व्यक्तित्व निर्माण का प्रेरक व पोषक बनता है। उदाहरणार्थ—एक शब्द दस-बीस बार रटने से स्थाई रूप से याद हो जाता है। मुँह से जो बार-बार गालियां दी जाती हैं, वह व्यक्ति की आदत को बिगाड़ देती है। रूमाल हमेशा दाहिनी जेब में रखते हैं और एक दिन भूल से बाईं जेब में रख दिया तो हाथ दाहिनी जेब में ही जायेगा। साईकिल चलाने, टाइपराइटर सीखने, कार चलाने या किसी अन्य कार्य का अभ्यास हो जानेपर कार्य सहज हो जाता है। टाइप करने वाला मेटर को पढ़ता जाता है और अंगुलियां टाइप पर चलती रहती हैं, फिर भी टाइप में गलती नहीं होती क्योंकि अंगुलियों का वैसा अभ्यास हो चुका होता है। इसी प्रकार नमस्कार महामंत्र और शुभ भावों का पुनः-पुनः अभ्यास, अनुप्रेक्षा आदि के प्रयोगों का अभ्यास व्यक्ति के चारित्र का अंग बन जाता है।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी सिद्धहस्त महायोगी हैं। वर्षों तक ध्यान व मंत्र की गहरी साधना के पश्चात् उन्होंने ''एसो पंचणमोक्कारो'', ''मंत्र : एक समाधान'', ''भीतर की ओर'' में नमस्कार महामंत्र की विशिष्ट लब्धियों व मंत्रों का समायोजन व संकलन किया है। इन प्रयोगों के सतत् अभ्यास से उपरोक्त संवेगों पर नियंत्रण स्थापित कर उनका दमन, विलयन, मार्गान्तरीकरण एवं शोधन आसानी से किया जा सकता है। अध्यात्म विकास के द्वारों का उद्घाटन किया जा सकता है। संवेग नियंत्रण हेतु आचार्यश्री महाप्रज्ञजी की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण प्रयोग—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. काम वासना की शांति के लिए—
ॐ ह्रीँ णमो सव्व साहूणं[4] (ध्यान पैर के अंगूठे पर रहे)
2. आवेश या उत्तेजना शांति के लिए—
ॐ ह्रीँ णमो अरहंताणं[5]
3. मनोबल दुर्बल हो या डिप्रेशन के भाव आने पर—
ॐ ह्रीँ णमो सिद्धाणं[6]
4. स्मृति विकास के लिए—
ॐ ह्रीँ णमो आयरियाणं[7]
5. बुरा विचार आने पर—
ॐ ह्रीँ णमो उवज्झायाणं[8]
6. विपत्ति के समय—

एसो पंचणमुक्कारो सव्वपावपणासणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं॥[9]

नोट—उपरोक्त प्रत्येक मंत्र का 108 बार जप करें।

7. चिड़चिड़ापन से मुक्ति पाने के लिए—
आनन्द-केन्द्र पर हरे रंग में ''हूँ'' का जप।[10]
8. निषेधात्मक विचारों से मुक्ति पाने के लिए—
विशुद्धि-केन्द्र पर ॐ ह्रीँ णमो आयरियाणं का जप श्वास के साथ।[11]
(30 मिनट)
9. मंगल भावों को निर्मित करने के लिए—
''अरहंता मंगलं'' का जप विशुद्धि केन्द्र पर (प्रतिदिन एक माला)[12]
10. संकल्प सिद्धि के लिए—
ॐ ह्रीँ णमो सिद्धाणं—दर्शन केन्द्र पर दीर्घश्वास के साथ मानसिक जप आधा घंटा।[13]
11. अभ्युदय (सर्वतोमुखी विकास) के लिए—
ॐ ह्रीँ यैं णमो अरहंताणं (प्रतिदिन एक माला)[14]
12. अभय की साधना के लिए ॐ के साथ महामंत्र का जप, अनुकूल स्थिति के निर्माण हेतु ह्रीँ के साथ महामंत्र का जप। प्रतिदिन एक माला, मंत्र-सिद्धि के लिए 12,000 जप।[15]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संकल्प शक्ति : संवेग नियंत्रण

संकल्प एक कवच है, जो बाहरी खतरों से रक्षा करता है। संकल्प एक फिल्टर है, जो भीतर में स्थित दुर्विचार रूपी कचरे की सफाई करता है। संकल्प सफलता का राजमार्ग है। दुनियां की सबसे बड़ी कोई ताकत है तो वह है—संकल्प की शक्ति। संकल्प शक्ति के द्वारा संवेगों पर नियंत्रण सुगमता से पाया जा सकता है।

मुझे पारमार्थिक शिक्षण संस्था में प्रविष्ट हुए लगभग एक वर्ष हुआ था। एक दिन रात्रि के समय मैं गहरी नींद में सो रही थी। अचानक किसी उपद्रव के कारण एक मुमुक्षु बहिन के मुख से गहरी चीख निकली। चीख की आवाज सुनकर मैं भी जग गई। उस चीख से मेरे मानस में भय का संवेग प्रबल हो गया। मुझे पूरी रात्रि में नींद नहीं आई। मैं मन ही मन ॐ भिक्षु तथा नमस्कार महामंत्र का जप करती रही। वह चीख मेरे अवचेतन मन में पहुँच चुकी थी अत: उसे विस्मृत करने का प्रयत्न करने पर भी वह विस्मृत नहीं हो पा रही थी। सुबह मैं जागृत हुई तब भी चेहरे पर भय की रेखाएं परिलक्षित हो रही थीं। मैं दिन में भी अकेली कमरे में नहीं रह सकती थी, ज्योंही एकान्त होता, वह चीख और ज्यादा दिमाग में घूमने लगती।

इस मानसिक भय से मुक्ति पाने के लिए मैंने संकल्प शक्ति का प्रयोग किया। अनुप्रेक्षा के रूप में अहोरात्र दृढ़ संकल्प के साथ अजपाजप की तरह मेरे प्रत्येक श्वास में यह संकल्प चलता रहता—''मेरे चित्त पर अभय के भाव पुष्ट हो रहे हैं, भय के भाव क्षीण हो रहे हैं''। सात दिनों तक यह प्रयोग चला। मैं संकल्पमय बन गई। दृढ़ संकल्प के साथ अभय की अनुप्रेक्षा का ऐसा जादुई प्रभाव हुआ कि भय का संवेग अभय में बदल गया। प्रयोग के सातवें दिन ऐसा अनुभव होने लगा कि यदि मुझे रात्रि के बारह बजे भी संस्था में कहीं अकेली घूमना हो तो मैं घूम सकती हूँ। शब्द शक्ति के प्रभाव का अनुभव और विश्वास जीवन में पहली बार हुआ।

मैंने सोचा जब सामान्य शब्दावली भी बार-बार उच्चारित होने से इतनी प्रभावशाली बन सकती है, तब मंत्र-शक्ति के अचिंत्य प्रभाव की तो बात ही क्या? नमस्कार महामंत्र में किसी भौतिक अभिसिद्धि की कामना नहीं है। यह आत्मा के निकट ले जाने वाला मंत्र है। मनोविज्ञान के गूढ़ रहस्य इसमें अन्तर्निहित हैं। इसके स्मरण से साधक को मांगलिक जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है। उच्चारण से प्राण चेतना का उर्ध्वारोहण होता है। ज्ञानियों के प्रति नम्रता होने

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

से ज्ञान का विकास होता है। अहिंसा, संयम और तप की चेतना का विकास होता है। यह मंगल भावना से भरा मंत्र जगत् में मांगल्य भावों की वृद्धि करता है। इसी दृष्टि से इस महामंत्र को 'मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं' कहा है।

यह वास्तविक एवं पारमार्थिक मंगल है। मंगल वातावरण का निर्माता है। इस महामंत्र का अपना संगीत, अपना माधुर्य और अपना मनोविज्ञान हैं इसे अपने जीवन में आत्मसात् कर व्यक्ति विशिष्ट उपलब्धियों एवं योग्यताओं का स्वामी हो सकता है। अपेक्षा है मात्र सघन अभ्यास की। कहा भी है—

करत करत अभ्यास से जड़मति होत सुजान।
रसरीआवत जावत से, सिर पर पड़त निशान॥

कुए से पानी निकालते समय रस्सी अगर पत्थर पर चलती ही जाये, भले ही रस्सी घिस जाये, उस पत्थर को भी जरूर घिसेगी। वैसे ही नमस्कार महामंत्र के शक्तिशाली ध्वनि प्रकंपनों की चोटें श्वास की सहायता के साथ हमारे भीतर के दमित सद्-संस्कारों एवं भीतरी शक्तियों को जगाने में कामयाब होंगी।

निष्कर्ष

उपर्युक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण का अभिप्राय यह है कि नमस्कार महामंत्र के द्वारा कोई भी व्यक्ति अपने मन को प्रभावित कर सकता है। चित्त को निर्मल बना सकता है। यह मंत्र मनुष्य के चेतन, अचेतन और अर्द्धचेतन तीनों प्रकार के मनों को प्रभावित कर अचेतन और अवचेतन मन पर स्थाई भाव का ऐसा सुन्दर संस्कार डालता है, जिससे मूल प्रवृत्तियों का परिष्कार हो जाता है और अवचेतन मन में वासनाओं को अर्जित होने का अवसर ही नहीं मिल पाता।

जैसे मक्खन दही का सार है, गंगा जल का सार है, किनारा सागर का आधार है, ऐसे ही नमस्कार महामंत्र मंत्रों का सार, मानवता का सार, धर्मशास्त्र-अध्यात्म और मनोविज्ञान का सार है। यदि मंत्र का सही प्रयोग करना आ जाये तो यह उपयोग को स्थिर करने में, मन को एकाग्र और निर्मल करने में आलंबनभूत और सहायक बनेगा। वस्तुत: वह ज्ञान ही प्रज्ञा बन सकता है, जो ज्ञान प्रत्यक्ष अनुभूति से प्रादुर्भूत होता है। श्रद्धा ज्ञान देती है, नम्रता मान देती है और योग्यता स्थान देती है। नमस्कार महामंत्र की आराधना से यह त्रिवेणी संगम उजागर होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ–

1. Reader's Digest–February, 1960.
2. मनोनुशासनम्–प्रकरण-5, सूत्र-18, पृ. 103
3. दसवैकालिक, 8/66
4-8. भीतर की ओर, पृ. 324
9-10. वही, पृ. 324
11. मंत्र : एक समाधान, पृ. 94
12. वही, पृ. 90
13. वही, पृ. 27
14. वही, पृ. 89
15. वही, पृ. 275

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

15. आयुर्वेद और नमस्कार महामंत्र

आयुर्वेद आरोग्य का पूर्ण विज्ञान है, जिसका प्रथम प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य का रक्षण तथा दूसरा प्रयोजन रोगी के विकारों का शमन करना है। अमेरिका के विश्वविख्यात चिकित्सक ज. हरबर्ट शेल्टन ने ठीक कहा है–''शरीर में स्वत: अपने आपको ठीक और स्वस्थ बना लेने की अद्‌भुत शक्ति है।'' स्वस्थ का अर्थ ही स्व (अपने) में स्थ (स्थित) होना है। अर्थात् स्वास्थ्य बाहर से मिलने वाली वस्तु नहीं अपितु अपने ही भीतर बैठी शक्ति को जगाना है।

आयुर्वेद के प्रथम प्रयोजन की सिद्धि में अष्टांग योग का विशिष्ट महत्त्व है, क्योंकि अष्टांग योग शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक रूप से पुरुष की उन्नति कर उसे शारीरिक एवं मानसिक दोनों प्रकार की स्वच्छता प्रदान करता है अत: उसके अभ्यासी पुरुष कभी रोगी नहीं होते। आयुर्वेद के द्वितीय प्रयोजन की सिद्धि अर्थात् योग निवारणार्थ भी भिन्न-भिन्न यौगिक क्रियाओं का विशद उल्लेख यौगिक ग्रंथों में उपलब्ध है।

नमस्कार महामंत्र प्राण-शक्ति, आत्म-शक्ति और चैतन्य-शक्ति को जगाने का विज्ञान है। यह महामंत्र सब पापों का नाश कर दे, ऐसा महामंत्र है अत: इसके गर्भ में कर्म निर्जरा के साथ-साथ उपरोक्त दोनों प्रयोजन गर्भित हैं। व्यक्ति के आस-पास की जगह या इलेक्ट्रोडायनेमिक फिल्ड को परिवर्तित करने में इस महामंत्र की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस जप से आस-पास एक ऐसे निर्मल आभामण्डल का निर्माण होता है कि व्यक्ति पाप कर ही नहीं सकता।

पंच परमेष्ठी में स्थित अरिहंत व सिद्ध भगवन्त की आराधना से ज्ञानाचार व दर्शनाचार की शुद्धि होती है। आचार की गंगा में अभिष्णात आचार्यों की आराधना से आचार की शुद्धि होती है। समग्र श्रुत का अवगाहन कर ज्ञान का आलोक विकीर्ण करने वाले उपाध्यायों की आराधना से तपाचार की शुद्धि होती है। गृहस्थ के प्रपंचों से दूर परमात्मा से साक्षात्कार करने हेतु सतत् साधनारत संत, मुनियों की आराधना से वीर्याचार की शुद्धि होती है अत: महामंत्र की आराधना से पंचाचार की शुद्धि स्वत: सिद्ध है, जिसमें प्रमुख है–ज्ञान-दर्शन-चारित्र। तत्त्वार्थ सूत्र में कहा गया है–सम्यक् दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्ग:।[1] सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र मोक्ष का मार्ग है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

त्रिदोष मुक्ति की समस्या का समाधान : नमस्कार महामंत्र

आयुर्वेद के ग्रंथों में अच्छे स्वास्थ्य के लिए अग्नि, जल और वायु को मुख्य आधार माना गया है। अग्नि को पित्त, जल को कफ और वायु को वात के नाम से संबोधित किया जाता है। आयुर्वेद के अनुसार शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक असंतुलन का प्रमुख कारण है–वात, पित्त व कफ का असंतुलन। आयुर्वेद के ग्रंथों में रोग को परिभाषित करते हुए लिखा है–दोष वैषम्यं रोग:। दोष का अर्थ है–वात, पित्त और कफ। दोष की विषमता–अर्थात् वात, पित्त और कफ का असंतुलन रोग है। आरोग्य की परिभाषा में कहा गया है–दोष साम्यं आरोग्यं। दोष का साम्य–वात, पित्त व कफ का संतुलित रहना आरोग्य है।

अनेकान्त के अधिकृत प्रवक्ता आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के अनुसार शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक असंतुलन का प्रमुख कारण है–ज्ञान, दर्शन व चारित्र की निर्मलता में कमी होना। दूसरे शब्दों में कहें तो वात, पित्त व कफ का संतुलन ज्ञान-दर्शन व चारित्र की निर्मलता में सहयोगी बन सकता है। ज्ञान, दर्शन व चारित्र शुद्धि को त्रिदोष निवारण के तीन आध्यात्मिक हेतु कहा जा सकता है। ये तीनों आध्यात्मिक हेतु नमस्कार महामंत्र में विद्यमान हैं अत: नमस्कार महामंत्र में त्रिदोष मुक्ति की समस्या का समाधान खोजा जा सकता है।

दोषों का प्रकोप

यद्यपि रोगोत्पादन में वात, पित्त व कफ आदि दोषों की प्रधानता मानी गई है, किन्तु शास्त्रकारों ने यहां तक कहा है–

पित्तं पंगु कफ: पंगु, पंगवोमलधातव:।
वायुना यत्र नीयन्ते, तत्र गच्छति मेघवत्॥

अर्थात् पित्त, कफ, मल धातुएं सभी पंगु होती हैं, वायु उन्हें बादलों की तरह इधर-उधर ले जाती है। वातादि दोष सम्पूर्ण शरीर में रहने वाले हैं किन्तु विशेषत: वायु नाभि के नीचे रहती है, पित्त हृदय के मध्य रहता है और कफ हृदय के ऊपर के भाग में रहने वाला है।

पुरुष की अवस्था के अनुसार वृद्धावस्था वायु के प्रकोप का, युवावस्था पित्त के प्रकोप का और बाल्यकाल कफ के प्रकोप का समय है।

दिन या रात्रि के अन्त का भाग वायु के प्रकुपित होने का समय है। मध्य भाग पित्त के प्रकोप का समय है एवं अधोभाग कफ के प्रकोप का समय है। भोजन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

किये अन्नादि का अन्त वायु के प्रकोप का, मध्य भाग पित्त के प्रकोप का और आदि भाग कफ के प्रकोप का समय है।

वर्षा में वात्, शरद में पित्त और बसंत ऋतु में कफ का प्रकोप होता है।

वेगावरोध से विभिन्न रोग

1. असंधारणीय रोग

आयुर्वेद के महान ग्रंथ 'चरक' में महर्षि आत्रेय ने कहा है—

न वेगान् धारयेद्धीमांजाजातान् मूत्र पुरीषयोः।
न रेतसो न वातस्य नच्छर्द्याः क्षवथोर्न च॥

नोदगारस्य न जृम्भाया न वेगान् क्षुत्पिपासयोः।
न वाष्पस्य न निद्राया निःश्वासस्य श्रमेण च॥

आयुर्वेद में कुछ वेग रोकने के होते हैं और कुछ वेग नहीं रोकने के होते हैं। न रोकने वाले वेग—अधोवायु, मल, मूत्र, जंभाई, अश्रु, छींक, डकार, वमन वेग, भूख, प्यास, निद्रा आदि अनेक वेग ऐसे होते हैं, जिनको रोकने से रोगोत्पत्ति होती है, जैसे—अधोवायु रोकने से मल-मूत्र का अवरोध और पेट की अनेक बीमारियां, मल को रोकने से पेट में दर्द व आफरा और उर्ध्ववात मूत्र को रोकने से मूत्राशय, मूत्रमार्ग, मस्तक में पीड़ा और पेडू में आफरा आ जाता है। जंभाई को रोकने से कण्ठ, सिर, आँख, नाक तथा मुँह में तीव्र पीड़ा होती है और आँसू को रोकने पर सिर व आँख में विकार तथा पिनस (नजला) आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं। छींक को रोकने से सिर में शूल, अधोमुख का टेढ़ा होना और सब इन्द्रियों में दुर्बलता आ जाती है। उद्गार निरोध में कण्ठ व आमाशय में पीड़ा और वायु विकृत हो जाती है। वमन को रोकने से खुजली, चकते, दाह, अरुचि, सूजन, पाण्डु, विसर्प आदि भयंकर रोग प्रकट हो जाते हैं। क्षुधा को रोकने से तंद्रा, थकान, अंगमर्द महसूस होने लगते हैं। प्यास को रोकने से कण्ठ व मुँह का सूखना, स्मरण शक्ति का ह्रास व हृदय में पीड़ा प्रतीत होती है। निद्रा रोकने से जंभाई, अंगमर्द, आँख-सिर का भारीपन आदि विकार उत्पन्न होते हैं। अतः इन वेगों को स्वास्थ्य चाहने वाला व्यक्ति कभी न रोके।

2. संधारणीय वेग

काम, क्रोध, लोभ, मोह, ईर्ष्या आदि वेगों को रोकना चाहिए। मानसिक जगत् में काम का वात से, क्रोध का पित्त से, लोभ का कफ से संबंध जुड़ा हुआ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। सम्यक्-ज्ञान, सम्यक्-दर्शन और सम्यक्-चारित्र के द्वारा तीनों को संतुलित रखा जा सकता है।

अपाय वायु : उपाय ज्ञान

वात् अर्थात् वायु से शरीर में नाड़ी संस्थान के समस्त कार्य संचालित होते हैं। इसको और स्पष्ट किया जाये तो तात्पर्य होगा कि हमारे अंग-प्रत्यंग की संचालन प्रतिक्रियाएं, यथा—आँख को बंद करना, खोलना, नाक से श्वास लेना और छोड़ना, हाथ-पैर आदि का हलन-चलन तथा हृदय का स्पन्दन भी इसी वायु तत्त्व की प्रधानता का द्योतक है। इसके समरूप में क्रिया का संचालन करते रहने से स्वास्थ्य विकृति का अनुभव कदापि नहीं होता। विषमता आने पर विकारोत्पत्ति का शीघ्र आभास होने लगता है। विकार होने पर शरीर में तो शिथिलता आती ही है, मानसिक क्रियाओं में भी यह व्याघात उत्पन्न कर देता है। ''इन्द्रियाणां मनोनाथ: मनोनाथस्तु मारुत:।'' आयुर्वेद में वात विषमता से उत्पन्न होने वाले ८० रोगों का नामोल्लेख किया गया है। वात-विषमता का कारण मानसिक-विकारों का सम्मिश्रण होना है। शरीर में वायु की अधिकता से मन की चंचलता बढ़ने लगती है। व्यक्ति का व्यवहार बदलने लगता है। चिड़चिड़ा स्वभाव हो जाता है। वायु प्रधानता से भय, दूषित स्वप्न, वासनाएं, उत्तेजनाएं बढ़ती हैं। स्मृति का ह्रास होने लगता है। अपान दूषित होता है। स्वास्थ्य का मूल तत्त्व है वायु और विकारों का मूल तत्त्व है—दूषित वायु। इसलिए मानसिक विकारों का मूल रजोगुण माना गया है।

वायु प्रधानता वाले व्यक्ति को भय की संज्ञा निरन्तर बनी रहती है। भय से शरीर में ऐंठन पैदा होती है, आकस्मिक भय से हार्ट-फैल तक हो जाता है। आगम में अकाल मृत्यु के सात कारणों में भय भी एक कारण है। अपान वायु के दूषित होने से मस्सा, वीर्य संबंधी रोग, पेट में गर्मी आदि हो जाते हैं। अस्थिरता, जड़ता, भय, शून्यता, थकान और अरति—ये वायु वेग की प्रबलता में होते हैं। इन सबसे मुक्ति पाने के लिए शामक औषधियां काम में ली जाती हैं। शामक औषधि से कामवासनाएं शांत होती हैं। अनावश्यक भय से मुक्ति मिलती है। रोगों को दवा से दूर करना सामयिक उपचार हो सकता है पर वह दवा अनेक रोगों को जन्म दे सकती है। इनका सही समाधान प्रस्तुत करते हुए आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का कहना है अश्विनी मुद्रा (गुदा स्थान को ऊपर खींचना) करने से दूषित अपान वायु की शुद्धि होती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वातजनित रोगों का समूल नाश करने का उपाय है—ज्ञान। सम्यक् ज्ञान व्यक्ति की अनेक ग्रंथियों का निरसन कर उसे सम्यक् बोध प्रदान करता है।

महामंत्र से ज्ञान चेतना का जागरण

निर्जरा, कर्मक्षय व आत्मविशुद्धि की भावना से नमस्कार महामंत्र का जप कभी, कहीं, किसी भी दशा में सोते-जागते, उठते-बैठते किया जा सकता है, कोई आपत्ति नहीं। परन्तु रोग, भय, चिंता, क्षोभ आदि की चिकित्सा में इस महामंत्र की अनेक विधियों का उल्लेख उन रहस्यों के आधार पर मंत्रद्रष्टा आचार्यों ने किया है—

ज्ञान चेतना के जागरण की विधि

ज्ञान-केन्द्र पर णमो अरहंताणं का जप श्वेत वर्ण के साथ करने से आन्तरिक शक्तियां जागृत होती हैं। हमारे मस्तिष्क में ग्रे रंग—धूसर रंग का एक द्रव्य पदार्थ है वह समूचे ज्ञान का संवाहक है। पृष्ठरज्जू में भी यही पदार्थ है। मस्तिष्क में अर्हत् का धूसर रंग के साथ एवं श्वेत वर्ण के साथ ध्यान करने से ज्ञान की सोई हुई शक्तियां जागृत होती हैं। चेतना का जागरण होता है। इसलिए इस पद की आराधना के साथ ज्ञान-केन्द्र और सफेद वर्ण की समायोजना की गई है।

उपरोक्त विधि से जो महामंत्र नवकार के इस पद की आराधना करता है, उस व्यक्ति पर वायुजनित किसी भी प्रकार की चंचलता हावी नहीं हो सकती।

इस प्रयोग को करते समय वायु मुद्रा लगाने से प्रयोग शक्तिशाली और सद्य: फलदायी हो सकता है।

वायु मुद्रा विधि

अंगूठे के मूल में तर्जनी अंगुली को लगाना और उस पर हल्का-सा अंगूठे का दबाव देना।

लाभ—

1. शनि पर्वत, शनि रेखा के दोषों का अपनयन।
2. वात रोग, गठिया, साइटिका, वायुशूल, हर्णिया, स्पोण्डेलाइटिस में लाभप्रद।
3. घुटनों का दर्द ठीक होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. वायु मुद्रा लगाने से मणिबंध के बीच वात नाड़ी में बंध लग जाता है, फिर हाथ की कलाई को दाएं-बाएं घुमाने से सिर-दर्द, गर्दन दर्द में आराम।

अपाय पित्त : उपाय दर्शन

पित्त का सामान्य अर्थ गर्मी होता है। शरीर के विकारों के बहिष्कार में इसका बहुत योगदान है। शरीर को चुस्ती यही तत्त्व प्रदान करता है। अत: मल-मूत्र, श्वेत आदि का सम्यक् रूप से बहिष्करण इसके अविकारी होने का द्योतक है। भूख का आधिक्य या भूख का नष्ट हो जाना, शरीर की स्वाभाविक कांति या तेज का अभाव प्रकट होना और उष्णता का न्यूनाधिक्य, पित्त की विषमता की सूचना देता है। बौद्धिक विकास में पित्त का बहुत बड़ा महत्त्व है। अगर पित्त ठीक नहीं है, तो बौद्धिक विकास नहीं होगा। वह व्यक्ति चिंतनशील नहीं बनेगा, अच्छा काम नहीं कर सकेगा। इसलिए शरीर में पित्त का अपना मूल्य है।

पेचिश, अतिसार, अतिमूत्र, सूजन, गांठ, प्रदर, रक्तक्षय, सिरदर्द, पीलिया आदि रोग इसी की विषमता से होते हैं। पित्त रोग में रक्त दोष-युक्त बन जाता है। रक्त संचालन की प्रक्रिया बिगड़ जाने से शरीर के प्रत्येक अवयव पर इसका प्रभाव पड़ता है। इससे पाचन शक्ति भी नष्ट हो जाती है। परोक्ष रूप में नाड़ी संबंधी रोग भी मस्तिष्क को आघात पहुँचाते हैं अत: सुस्वास्थ्य के लिए नियमित आहार और तदनुरूप शारीरिक श्रम करते रहने से पित्त की समस्थिति रहती है।

पित्त के प्रकोप से अपान वायु दूषित रहने से क्रोध बढ़ता है, क्रोध की स्थिति में नाड़ी संस्थान उत्तेजित हो जाता है। विजातीय पदार्थ, जैसे–एड्रीनलीन स्राव रक्त मिश्रित होकर उत्तेजना का कारण बनता है। शरीर एक विशेष उष्मा का अनुभव करने लगता है। क्रोध की स्थिति में विशेष आघात श्लेष्म प्रधान धातु पर पड़ता है। वात-पित्त और कफ–तीनों धातुएं अन्योन्याश्रित हैं। एक का विकार दूसरे का अवरोधक बन जाता है।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का इस विषय में आध्यात्मिक सुझाव है कि दर्शन अर्थात् श्रद्धा के माध्यम से हम पित्त रोगों को शांत करें। जड़-मूल से समाप्त करें। जब व्यक्ति सम्यक् दर्शन, सही श्रद्धा को उपलब्ध होता है तब उसकी प्रथम व्यावहारिक अभिव्यक्ति होगी–शांति। क्योंकि सम्यक् श्रद्धा का शमन दर्शन मोहनीय कर्म के उपशम, क्षय अथवा क्षयोपशम के साथ जुड़ा हुआ है। शांत चित्त वाला व्यक्ति क्रोध आदि उत्तेजनाओं से अनभिज्ञ ही रहेगा। उत्तेजना उसका स्पर्श

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भी नहीं कर सकती। इमोशनल इन्टेलीजेन्स की बात करने वाले Damiel Galeman भी स्वीकार करते हैं Empathy is balm for anger.

महामंत्र से दर्शन चेतना का जागरण

दर्शन चेतना के जागरण की विधि–

णमो सिद्धाणं का जप अरूण रंग में दर्शन-केन्द्र पर करने से अन्तर दृष्टि जागृत होती है। तृतीय नेत्र पिच्युटरी ग्लैण्ड के स्रावों को नियंत्रित करने के लिए अरुण रंग महत्त्वूर्ण है। दस मिनट तक दर्शन-केन्द्र पर अरुण रंग का ध्यान करते ही स्फूर्ति आने लगती है। आत्म-साक्षात्कार, अन्तर्दृष्टि का विकास, अतीन्द्रिय चेतना का विकास दर्शन-केन्द्र से होता है। णमो सिद्धाणं मंत्र, अरुण रंग और दर्शन-केन्द्र–इन तीनों का समायोजन हमारी अन्तर्दृष्टि को जागृत करने का अनुपम साधन है। यह एक मार्ग है, कब किसको सिद्धि होती है, यह उसके प्रयत्न की सघनता पर निर्भर करता है। पर इतना निश्चित है कि यह मार्ग वहां तक पहुँचाता है।

अपाय कफ : उपाय चारित्र

सर्दी जुकाम के समय नाक से बहने वाला चिकना पदार्थ ही इसका वास्तविक स्वरूप है। यह जल धातु प्रधान होता है। आयुर्वेद में इसे ''श्लेषमा सौम्य:'' कहकर चन्द्रमा का अंश माना गया है। चिकनापन इसकी प्रमुख विशेषता है। शरीररूपी मशीन के हर कर पुर्जे को ग्रीस या तैल की तरह संचालित करने के सदृश इसके महत्त्व को समझना चाहिए। शरीर की गर्मी और ठंड को स्थानान्तरित करना इसका मुख्य कार्य है। परिश्रम की अधिकता से शरीर के अवयव रूपी कलपूर्जों की टूट-फूट की सम्पूर्ति इसी तत्त्व से होती है।

इसमें विषमता आने पर शरीर की सारी मशीनरी खुरदरी और असक्त बन जाती है। अनावश्यक भोजन करने से अवयवों के पोषक चालक तत्त्व दूषित हो जाते हैं फलत: नाक द्वारा आँव के रूप में इसका बहिर्गमन प्रारम्भ हो जाता है। शरीर में इसके संचित रहने का मुख्य स्थान पेट, कमर के नीचे का भाग, छाती अथवा जबड़े हैं।

यदि व्यायाम आदि शारीरिक श्रम के द्वारा इनका समुचित प्रयोग या संचालन न हो तो यह विकृत होकर फोड़े, फुन्सी, व्रण, मधुमेह आदि भयंकर रोगों के रूप में प्रकट होता है। इस तत्त्व की कमी के कई कारण हैं, जिनमें विशेषतया अधिक तले हुए मिर्च-मसाले, कषैले, कड़वे आदि पदार्थ हैं। इसकी कमी से

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

शरीर में गर्मी, जलन, शिथिलता, चक्कर, थकान, प्यास, चुभन आदि लक्षणों की अनुभूति होती है। शारीरिक कारणों के अतिरिक्त इसकी विषमता से ईर्ष्या, क्रोध, घुटन आदि मानसिक विकार उभर जाते हैं। शारीरिक विकृति को मिटाने के लिए भोजन को अच्छी तरह चबाना और मानसिक अवरोध का निराकरण करने के लिए मानसिक द्वन्द्वों से दूर रहना अपेक्षित है।

कफ प्रकोप से लोभ बढ़ता है। आयुर्वेद के अनुसार कफ मूर्च्छा पैदा करता है। कफ का कार्य है–जड़ता पैदा करना। लालच की प्रवृत्ति, लोभ की प्रवृत्ति इन सबके लिए कफ बहुत जिम्मेदार है। ''चरणं कफनाशनम्''–चारित्र से कफ का प्रकोप शांत होता है। चारित्र का काम है–चेतना की जागृति, जो चारित्र मोहनीय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम से उपलब्ध होती है। कफ प्रकोप से शरीर जकड़ जाता है, स्तब्ध हो जाता है। चेतना की जागृति से यह स्तब्धता मिट जाती है।

महामंत्र से चारित्र चेतना का जागरण

चारित्र–चेतना के जागरण की विधि

णमो आयरियाणं का विशुद्धि-केन्द्र पर नीले रंग के साथ जप करने से मन सक्रिय होता है। चयापचय की क्रिया संतुलित होती है। हमारे शरीर में नौ ग्रह हैं, उनमें सूर्य का स्थान तैजस-केन्द्र और चन्द्रमा का स्थान विशुद्धि-केन्द्र (कण्ठ) है। ज्योतिष चन्द्रमा के आधार पर व्यक्ति के मन की स्थिति को पढ़ता है। तैजस-केन्द्र हमारे शरीर में वृत्तियों को उभारता है और विशुद्धि-केन्द्र उन पर नियंत्रण करता है।

उपरोक्त विधि से णमो आयरियाणं पद की आराधना वृत्तियों को शांत कर पवित्रता की दिशा में सक्रिय बनाती है। योग के ग्रंथों में तो यहाँ तक कहा गया है कि कोई व्यक्ति गहरी धूप में बैठकर विशुद्धि-केन्द्र पर ध्यान करता है तो उसे ऐसी अनुभूति होगी कि मैं एयरकण्डीशन रूम में बैठा हूँ। इस प्रकार यह स्थान शीतलता और पवित्रता का है और आयरियाणं पद आचार की विशुद्धि का है तथा नीला रंग भी शीतल और पवित्र माना गया है। अत: तीनों का संबंध अथवा योग मिलने पर चारित्र की चेतनता का जागरण होता है, जिसका परिणाम शरीर में कफ प्रकृति का संतुलन रखना है। कफ का संबंध जल तत्त्व से है। जल मुख्यत: दो तत्त्वों के मिलने से बनता है–ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन। अत: यह शोधन और दोषनाशक दोनों गुणों से युक्त है। इसके अतिरिक्त कफ का कार्य है–शरीर के विजातीय तत्त्वों का निष्कासन। शरीर के तापमान को घटाना तथा जीवन शक्ति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

को अधिक से अधिक बढ़ाना—ये सारे तत्त्व पवित्रता एवं चारित्र विशुद्धि के प्रतीक हैं।

वात-कफ संतुलन : जप णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं

विधि

लाल रंग शक्ति वर्धक होने के साथ-साथ कर्म ग्रंथियों का भेदक भी है। जिन्हें वात और कफ के कारण कोई शिकायत है वे प्रात: और सायं ''णमो सिद्धाणं'' की लाल रंग (बाल सूर्य जैसा अरुण रंग) के साथ दो माला फेरें। इस अभ्यास सम्पन्नता के पन्द्रह मिनट बाद णमो आयरियाणं की पीले रंग के साथ एक माला अवश्य फेरें क्योंकि इन दोनों मंत्र-पदों में मुख्यतया शक्ति-बीज 'र', लक्ष्मी बीज 'अ', आत्मसिद्धि का हेतु 'य', भौतिक अभिसिद्धि का कारण 'म' संकट का निवारण 'ण' जैसे कई बीजाक्षरों का प्रयोग हुआ है।

पित्त जनित सामान्य व्याधियों के उपशम हेतु श्वेत, नीले और हरे रंग की विशेष धारणा करनी चाहिए। ये तीनों ही रंग मानसिक स्थिरता और मानसिक शांति बनाये रखने में विशेष सहयोग करते हैं।

वात-पित्त-कफ संतुलन : जप 'वं' [2]—

प्रयोग विधि—

1. मुद्रा—वज्रासन
2. लयबद्ध दीर्घश्वास का प्रयोग—5 मिनट
3. मंत्र वं का लयबद्ध उच्चारण—20 मिनट
4. परिणाम—वात-पित्त-श्लेषम रोग नाशक

निष्कर्ष

आयुर्वेद के तीन तत्त्व स्वास्थ्य की मीमांसा करने वाले हैं और जैन-दर्शन के तीन तत्त्व (रत्नत्रय) मोक्ष मार्ग के मीमांसक हैं। सूक्ष्मता से दोनों की अर्थात्मा का संस्पर्श करें तो ज्ञात होता है कि दोनों एक-दूसरे के संपूरक हैं, व्याख्या करने वाले हैं। वात, पित्त और कफ—तीनों का संतुलन ही स्वास्थ्य का आधार है। ज्ञान-दर्शन-चारित्र तीनों की समन्वित साधना मोक्ष प्रदान करने वाली है। वास्तव में स्वस्थ वही है, जो अपने स्वभाव में स्थित है, अपने आप में प्रतिष्ठित है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आयुर्वेद चिकित्सा में सबसे महत्त्वपूर्ण विषय निदान है। निदान शब्द का अर्थ है—मूल कारण। आयुर्वेद में रोग के मूल कारण को निदान कहा गया है। अगर रोग का निदान सम्यक् रूप से हो जाता है तो उस पर प्रयुक्त की जाने वाली औषधि नि:संदेह प्रभावोत्पादक सिद्ध होती है। निदान के अभाव में बहुमूल्य और धातु युक्त औषध भी निरर्थक सिद्ध हो जाती है।

अध्यात्म चिकित्सा का मूल है—भाव-चिकित्सा। रोग का मूल कारण वात-भय, पित्त-क्रोध, कफ-आसक्ति है। इन त्रिदोषों की द्रव्य व भाव-चिकित्सा शीघ्र कर लेनी चाहिए। इस विषय में शास्त्रोक्त कथन है—

जात मात्र चिकित्स्यस्तु, नो पेक्ष्योऽल्पतयो गद:।
वन्हि शास्त्रविषै स्तुत्य:, स्वल्पो पि विकारोत्यसौ॥

अभी रोग उग्रावस्था में नहीं है, ऐसा सोचकर उसकी कभी उपेक्षा नहीं करनी चाहिए क्योंकि साधारण और उपशांत रोग भी उपेक्षा करने पर विकराल रूप लेकर असाध्य बीमारी के रूप में उभर सकता है। जैसे—छोटा-सा अग्नि का स्फुलिंग भी विशाल राशि को भस्मसात् कर देता है। अति स्वल्प मात्रा में लेने पर भी विष जीवन लीला को समाप्त कर देता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि वात-पित्त व कफ—इन तीनों में से किसी भी प्रकृति वाले मनुष्य के लिए नमस्कार महामंत्र का जप अथवा ध्यान अत्यन्त लाभप्रद है। ज्ञान वात् दोष को जीतता है। दर्शन पित्त् दोष को जीतता है और चारित्र कफ दोष को जीतता है। नमस्कार महामंत्र में ये तीनों तत्त्व हैं इसलिए सम्यक् ज्ञान-दर्शन और चारित्र स्वरूप वाला महामंत्र अमृत के समान आनंद-स्वरूप है। मोक्ष प्रणेता, मोक्ष सुख के भोक्ता और मोक्ष के साधक—इन तीनों का महामंत्र में समावेश होने के कारण यह महामंत्र आन्तरिक चेतना में विद्यमान शक्तियों को विकसित करता है। परिणामत: मनुष्य की विलक्षण विवेक शक्ति एवं अनूठी बौद्धिक क्षमता विकसित होती है तथा चैतन्य केन्द्रों के जागरण से आनन्द, स्फूर्ति व उल्लास की उपलब्धि होती है।

सन्दर्भ—

1. तत्त्वार्थ सूत्र 9/23
2. तुम स्वस्थ रह सकते हो, पृ. 42

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

16. स्वर विज्ञान : महामंत्र जप

बाइबिल में बहुत सुन्दर कहा है—''विश्व में केवल एक ही मंदिर है और वह है—मानव शरीर।'' मानव शरीरस्थ चेतना की शुद्धि के लिए ध्यान और जप दोनों की मूल्यवत्ता है। मंत्र-जप से मनोबल और अभय का सहजतया विकास होता है। नमस्कार महामंत्र की अनादि सिद्ध, सनातन और स्वाभाविक ऐसी विशिष्ट रचना है कि इसके जप के प्रभाव से साधक का चित्त जप से ध्यान में, ध्यान से लय में, लय से समाधि में और समाधि से प्रज्ञा (उत्कृष्ट क्षयोपशम जन्य प्रातिभ ज्ञान) में शीघ्रता से पहुँच जाता है।

गणित शास्त्रानुसार किसी भी गतिमान पदार्थ को स्थिर करने के लिए उसे तीन लम्बसूत्रों द्वारा स्थिर करना पड़ता है। उन तीन सूत्रों से आबद्ध करने पर उनकी गति स्थिर हो जाती है। उदाहरणार्थ ऐसा कहा जा सकता है कि वायु के द्वारा नाचते हुए बिजली के बल्ब को यदि स्थिर करना हो तो उसे तीन समसूत्रों के द्वारा आबद्ध कर देना होगा क्योंकि वायु या अन्य किसी भी प्रकार के धक्के को रोकने के लिए चौथे सूत्र में आबद्ध करने की आवश्यकता नहीं होगी।

इसी प्रकार नमस्कार महामंत्र की स्थिर साधना करने के लिए साधक को अपनी त्रिसूत्र—मन, वचन व काया की क्रिया को आबद्ध करना पड़ेगा। उसी के लिए आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार की आवश्यकता है। मन को स्थिर करने से ही ध्यान की क्रिया निर्विघ्न चल सकती है। मन को किसी एक केन्द्र पर थामे रखना सूर्य को टकटकी लगाकर देखने से भी अधिक कठिन है। इसलिए ध्यान करने वालों के लिए आगमों में शक्तिशाली होना अनिवार्य बताया गया है। एकाग्रता सफलता का महान सूत्र है। आनंद का स्रोत है। स्वर के साथ किया गया मंत्र-जप विशेष लाभप्रद व मन-वचन-काया को शीघ्र एकाग्र करता है। इसलिए साधक को स्वरज्ञान होना आवश्यक है। लंकेश्वर के निम्नोक्त पद्य में जीवन का बहुत गहरा दर्शन और यथार्थ तत्त्व उद्भाषित हुआ है—

जग जीतने से मुश्किल है, नब्ज जीत लेना।
इस नब्ज के मारे, मैं मारा जा रहा हूँ॥

वास्तव में स्वर-विद्या वह चाबी है, जो साधना के अज्ञात दरवाजों को खोल सकती है। यह भारत की समृद्ध विद्या है। प्राचीन ऋषि-मुनियों ने इसको आगे बढ़ाया और आज विज्ञान इसमें नये-नये तथ्य जोड़ रहा है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वर विज्ञान : कर्म विज्ञान

स्वर-विज्ञान में कहा गया है–जितने भी सौम्य कर्म है, वे चन्द्र स्वर में करने चाहिए। जितने कठिन कार्य है, जिसमें अधिक श्रम करना पड़ता है, जिसमें शक्ति की अपेक्षा होती है, वे सब कार्य सूर्य स्वर में करने चाहिए। सुषुम्ना प्रवाह के समय योग व मुक्ति के फल को देने वाले कर्म करने चाहिए। जैसा कि कहा गया है–

चन्द्रनाड़ी प्रवाहेण, सौम्यकर्माणि कारयेत्,
सूर्यनाड़ी प्रवाहेण, रौद्रकर्माणि कारयेत्।
सुषुम्नाया: प्रवाहेण मुक्ति मुक्ति पलानि च॥

सूर्य स्वर के समय पिंगला नाड़ी या सिम्पेथेटिक नर्वस सिस्टम सक्रिय होता है, जो शक्ति देता है। कर्म सिद्धान्तानुसार अन्तराय कर्म के क्षयोपशम का समय है–सूर्य स्वर और ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय कर्म के क्षयोपशम का समय है–चन्द्रस्वर।[1] क्योंकि जैनदर्शन के सिद्धान्तों के अनुसार शक्ति की प्राप्ति अन्तराय कर्म के क्षय या क्षयोपशम से प्राप्त होती है। महामंत्र जो अष्टकर्म क्षीण करने की अद्वितीय शक्ति रखता है, उसका जप यदि सूर्य स्वर के साथ किया जाए तो वह अन्तराय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम में विशेष रूप से निमित्त बनता है। चन्द्रस्वर में महामंत्र का जप ज्ञानावरणीय और दर्शनावरणीय कर्म के क्षय अथवा क्षयोपशम में विशेष रूप से निमित्त बनता है। सुषुम्ना स्वर में महामंत्र का जप मोह कर्म के क्षय, क्षयोपशम अथवा उपशम में निमित्त बनता है।

भारतीय अध्यात्म के चिंतकों का कालबोध बहुत विशद था। इसी से स्वरोदय का जन्म हुआ। स्वरोदय कालबोध का ही वाचक है। ज्योतिष का ज्ञान इससे संबंधित है। जैविक घड़ी का ज्ञान भिन्न प्रकार का था कि कौन-सी घड़ी में कौन-सा कार्य सुफलदायी है? स्वाध्याय और ध्यान कब करना चाहिए? शासक और आचार्य से कब मिलना चाहिए? कब बातचीत करनी चाहिए? उनके किस पार्श्व में बैठना चाहिए? दाएं या बाएं बैठना चाहिए। इन सारी बातों का बहुत सूक्ष्म ज्ञान था। ये सारी बातें इसलिए देखी जाती थी ताकि कर्मविपाक को बदला जा सके।[2]

अनुभवी साधकों का कहना है कि चन्द्र स्वर साधने वाले व्यक्ति का कभी भी मूड खराब नहीं किया जा सकता। मन का संतुलन साधने के लिए सूर्यस्वर और चन्द्र-स्वर दोनों की साधना करनी होती है। मन को विकल्प शून्य करने के लिए चन्द्र-स्वर और प्राण शक्ति को तीव्र करने के लिए सूर्य-स्वर का प्रयोग

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

किया जाता है। विज्ञान की मस्तिष्क संबंधी खोजें अपूर्व हैं। वैज्ञानिकों ने माना है कि श्वास और मस्तिष्क का गहरा संबंध है। लयबद्ध श्वास से मस्तिष्क में अल्फा तरंगें उत्पन्न होती हैं। वैज्ञानिकों ने इस बात पर मुहर लगा दी कि प्राणी का स्वर-चक्र बदलता रहता है और उसके साथ-साथ व्यक्तित्व भी बदलता है, मूड बदलता है। मूड के बनने, बिगड़ने के पीछे स्वर या श्वास का योग होता है। मस्तिष्क का योग होता है। जिस समय मस्तिष्क संतुलित होता है स्वर ठीक चलता है तो मूड ठीक होता है। कर्मशास्त्र की दृष्टि से मोह-कर्म के क्षय, उपशम अथवा क्षयोपशम से व्यक्ति का मूड ठीक रहता है। समवर्ती श्वास-प्रेक्षा मूड पर अंकुश लगाने का प्रयोग है। समवर्ती श्वास-प्रेक्षा के विषय में कहा गया है—

बाहर भीतर एक रस, रहता है जो धीर।
उसे नहीं लगता कभी, ठण्डा गरम समीर॥

साधु संत चन्द्र स्वर को विकसित करते हैं। उन्हें उत्तेजित करना सरल नहीं है। ऐसे संत हुए जिन्हें हजार प्रयत्न करने पर भी उत्तेजित नहीं किया जा सकता। महाराष्ट्र के संत एक नाथ ने चन्द्र-स्वर सिद्ध कर लिया था। उनकी क्षमा की साधना उत्कृष्ट थी। आचार्य भिक्षु का भी चन्द्र स्वर बहुत प्रबल था। ऐसा अनेक घटनाओं से अनुभव होता है।

भृकुटि में त्रिवेणी

जैन आगमों में निर्देश दिया गया है कि एक मुनि को त्रिसंध्या में आगम स्वाध्याय नहीं करनी चाहिए, परन्तु मंत्र-सिद्धि के लिए त्रिसंध्या को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। ऋषि-मुनियों ने प्रतिदिन सन्ध्योपासना करने से ही दीर्घायु प्राप्त की थी। यम स्मृति में त्रिसंध्या में चार कार्यों के वर्जन का निर्देश देते हुए कहा है—

चत्वारि खलु कर्माणि संध्याकाले विवर्जयेत्।
आहारं मैथुनं निद्रां स्वाध्यायं च चतुर्थकम्॥

आहाराज्जायते व्याधि: क्रूरगर्भश्च मैथुने।
निद्राश्रियो निवर्तन्ते स्वाध्याये मरणं ध्रुवम्॥[3]

सन्ध्या काल में चार कार्य वर्जनीय है— 1. भोजन, 2. स्त्रीसंग, 3. निद्रा, 4. स्वाध्याय। इसका कारण स्पष्ट करते हुए कहा गया है—

संध्याकाल में भोजन करने से व्याधि होती है। स्त्रीसंग करने से क्रूर संतान उत्पन्न होती है। निद्रा से लक्ष्मी का ह्रास होता है और स्वाध्याय से आयु का नाश

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

होता है। इसी तरह पद्मपुराण, कूर्म पुराण, मार्कण्डेय पुराण, स्कन्दक पुराण में भी इसी तथ्य की पुष्टि की गई है–

''स्वप्नाध्ययन भोज्यानि सन्ध्ययोश्च विवर्जयेत्।'' [4]

अर्थात् दोनों संध्याओं के समय सोना, पढ़ना, भोजन करना, निषिध है। जैन आगम ठाणं में आगम स्वाध्याय के लिए वर्जित चार संध्याएं निम्न प्रकार से निर्दिष्ट हैं[5]–

1. प्रथम सन्ध्या–सूर्योदय से पूर्व।
2. पश्चिम सन्ध्या–सूर्यास्त के पश्चात्।
3. मध्याह्न सन्ध्या–दोपहर साढ़े ग्यारह से साढ़े बारह बजे तक।
4. अर्द्धरात्रि सन्ध्या–रात्री साढ़े ग्यारह से साढ़े बारह बजे तक।

संत दादू कहते हैं–''मन माला तहां फेरिये, जहां दिवस परसै रात''। माला को वहां फेरना चाहिए, वहां घुमाना चाहिए जहां न दिन स्पर्श करता है और न रात। प्रश्न हो सकता है कि क्या कोई ऐसा भी समय है, जहां दिन और रात दोनों नहीं रहते? इसका सकारात्मक उत्तर देते हुए कहा गया है–वह समय है संध्याकाल। संध्याकाल तीन समय होता है अतः इसे त्रिसंध्या भी कहते हैं। सामान्यतः दिन को पाँच भागों में बांटा गया है–सूर्योदय के तीन मुहूर्त्त का प्रातःकाल, फिर तीन मुहूर्त्त संगवकाल, अगले तीन मुहूर्त्त का मध्याह्नकाल, अगले तीन मुहूर्त्त का अपराह्न काल और उसके बाद तीन मुहूर्त्त का सांध्यकाल होता है।[6] त्रिसन्ध्या का उल्लेख करते हुए कहा गया है–

प्रातःसन्ध्यारानक्षत्रां मध्याह्ने मध्यभास्करम्।
ससूर्या पश्चिमां सन्ध्यां तिस्रः सन्ध्या उपासते॥ [7]

अर्थात् प्रातःकाल की सन्ध्या ताराओं के रहते-रहते, मध्याह्न की सन्ध्या सूर्य के मध्य आकाश में रहने पर और सायंकाल की सन्ध्या सूर्य के पश्चिम दिशा में चले जाने पर करनी चाहिए। इसको ऐसे भी समझा जा सकता है– सुबह सूर्योदय से पूर्व एक घंटे का समय, मध्याह्न 11.30 से 12.30 तक का समय, सायं सूर्यास्त के पश्चात् एक घंटे का समय–ये तीनों सन्ध्या मंत्र-सिद्धि के लिए अभीष्ट हैं। परन्तु संत दादु इस सन्ध्या से आगे की बात कह रहे हैं। वे कहते हैं मंत्र को जपना है, मंत्र को घुमाना है, तो हमारे शरीर में एक स्थान है, एक नाड़ी है–उसमें मंत्र को जपना चाहिए, मंत्र को घुमाना चाहिए। वह नाड़ी है–'सुषुम्ना'।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कहते हैं हमारे शरीर में 72,000 नाड़ियां हैं, उनमें तीन प्रमुख हैं—इड़ा, पिंगला और सुषुम्ना। इनका प्रारंभ होता है—हमारे मूलाधार चक्र से। तीनों ही नाड़ियों का मूलकेन्द्र यह है। हमारी रीढ़ की हड्डी के एक तरफ इड़ा नाड़ी प्रवाहित होती है और दूसरी तरफ पिंगला। सुषुम्ना का पथ बीच का है। इड़ा और पिंगला—ये दोनों अपनी वक्र गति से गुजरती हुई आज्ञा चक्र (दर्शन-केन्द्र) पर आकर मिल जाती हैं। सुषुम्ना नीचे से ऊपर सहस्रार तक पहले से ही व्यापत है। यहाँ पर तीनों का संगम हो जाता है, अत: इस स्थान को त्रिवेणी संगम कहा जाता है। यदि किसी को त्रिवेणी में स्नान करना है तो इलाहाबाद, प्रयाग जाने की जरूरत नहीं है, आपके घर के भीतर, आपकी इस देह में, इस भृकुटि में ही त्रिवेणी है, इसमें स्नान किया जा सकता है। वास्तविक त्रिवेणी स्थल यही है। संत कबीर के सामने यह प्रश्न आया तब उन्होंने कहा—

मुझको कहाँ ढूंढे बन्दे, मैं तो तेरे पास में।
ना मैं मक्के, ना मैं काशी, ना काबा कैलाश में॥
मैं तो हूँ विश्वास में॥

एक दार्शनिक ने भी यही कहा है—

न देवो विद्यते काष्ठे, न पाषाणे न मृणमये।
भावे हि विद्यते देवस्तस्माद् भावो हि कारणम्॥

देव न काष्ठ में है,न मिट्टी में है, न सोने-चांदी में है। देव अन्दर में है, अपनी भावना में है इसलिए अपने भावों की तरफ देखो। नि:संदेह मंत्र-सिद्धि के लिए मंत्र को सुषुम्ना स्वर में त्रिसन्ध्या जपना अत्यन्त लाभकारी और भाव-विशुद्धि का हेतु माना गया है।

तिथियों के साथ साधना क्रम : वैज्ञानिक आधार

रात्रि दो बजे से चार बजे तक का समय ध्यान के लिए श्रेष्ठ बताया गया है।[8] आत्मनिरीक्षण का समय पूर्व रात्रि और पश्चिम रात्रि को माना है।[9] पूर्व या दक्षिण दिशा की तरफ सिर करके सोना अच्छा माना जाता है। कहा जाता है कि पूर्व की तरफ सिर कर सोने से विद्या की प्राप्ति, दक्षिण की तरफ सिर तक सोने से धन तथा आयु की वृद्धि होती है। पश्चिम की तरफ सिर कर सोने से चिंता, उत्तर की तरफ सोने से हानि तथा मृत्यु होती है अर्थात् आयु क्षीण होती है। जैसा कि कहा गया है—

प्राक्शिर: शयने विद्याधनमायुश्चदक्षिणे।
पश्चिमे प्रबला चिंता हानि मृत्युरथोत्तरे॥[10]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इन नियमों को नहीं जानने वाले बहुत घाटे में रहते हैं और इन नियमों को जानने वाले बहुत लाभान्वित होते हैं। बीदासर के श्रावक शोभाचन्दजी बैंगानी के मामला चल रहा था। हथकड़ियां पहनने की नौबत आ चुकी थी। सुबह उन्हें बीकानेर जाना था। रात्रि में घड़ी का समय बराबर पता नहीं चला अत: रात को दो बजे वे सामायिक करने के लिए संतों के ठिकाने चले गये। उसी समय जयाचार्य ध्यान के लिए बाहर पधारे और संतों से कहा— ''इस समय जो व्यक्ति खीर-खांड का भोजन कर कार्य करें तो उसके नौ निध और बाहर सिद्ध होवे'' अर्थात् सफलता मिले। शोभजी ने बाहर से यह बात सुनी, वे तत्काल घर गये। खीर-खांड का भोजन किया और बीकानेर के लिए रवाना हो गये। उनकी जीत हो गई। वापस आकर जयाचार्य के दर्शन किये। जयाचार्य ने कहा—आज तो जाते वक्त मंगलिक नहीं सुनी। तब शोभजी ने कहा—गुरुदेव! आपके वचन ही मेरे लिए मंगलिक बन गये। इतना कहकर सारी घटना कह सुनाई।

एक जगत्सेठ एक जैन मुनि के पास आया। जैन मुनि ने कहा—तुम मंगलपाठ सुन लो। यह बहुत श्रेष्ठ समय है। जगत् सेठ वहां से सीधा व्यापारार्थ चला गया। उसका भाग्य खुल गया। उसके घर पर धन का अम्बार लग गया। दुनिया के श्रेष्ठ व्यापारियों में उसका नाम विश्रुत हो गया। जैन मुनि ने स्वर के आधार पर यह निर्णय लिया था और उसे मंगल पाठ सुनाया। तात्पर्य यही है कि जो नियमों को जानता है, वह समय का लाभ उठा सकता है। इन सारे रहस्यों के आधार पर ही शास्त्रों में तिथियों के साथ साधना क्रम की सुन्दर एवं वैज्ञानिक व्याख्या की गई है। साधना में एक जैसा मनोभाव नहीं रहता, इसलिए तीन प्रकार की तिथियों का निर्धारण है—

चरित्र तिथियां	:	अमावस्या, पूर्णिमा, चतुर्दशी
ज्ञान तिथियां	:	द्वितीया, पंचमी, एकादशी
दर्शन तिथियां	:	एकम्, तीज, छठ, सप्तमी, नवमी, दशमी, बारस, तेरस।
चरित्र तिथि के दिन	:	त्याग प्रत्याख्यान करना।
दर्शन तिथि के दिन	:	विशेष जप का प्रयोग करना।
ज्ञान तिथि के दिन	:	स्वाध्याय करना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जैन आगम में आगम स्वाध्याय के लिए वर्जित चार तिथियां[11]—

1. **आषाढ़ प्रतिपदा—**आषाढ़ी पूर्णिमा के बाद की तिथि, श्रावण का प्रथम दिन।
2. **इन्द्रमह प्रतिपदा—**आश्विन पूर्णिमा के बाद की तिथि, कार्तिक का प्रथम दिन।
3. **कार्तिक प्रतिपदा—**कार्तिक पूर्णिमा के बाद की तिथि, मार्गशीर्ष का प्रथम दिन।
4. **सुग्रीष्म प्रतिपदा—**चैत्री पूर्णिमा के बाद की तिथि, बैशाख का प्रथम दिन।

नोट—आगम स्वाध्याय के लिए वर्जित चार प्रतिपदाओं में पूर्ववर्ती चारों पूर्णिमाओं को भी आगम की स्वाध्याय वर्जित मानी है। ठाणं सूत्र में इन चार तिथियों का ही उल्लेख है पर परम्परा से इनके साथ भाद्रवी पूनम व उसके बाद ही प्रतिपदा को भी वर्जित माना गया है।

चन्द्र की कलाओं का प्रभाव भी मनुष्य के सूर्य स्वर व चन्द्र स्वर पर होता है। स्वर के माध्यम से उनका प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है। अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व तिथियों को व्रत आदि की साधना की जाती है, उससे मस्तिष्क को अधिक शक्ति मिलती है और उसका संतुलन बना रहता है।

चन्द्रमा और समुद्र के ज्वार-भाटे का संबंध है। मनुष्य के शरीर में जल तत्त्व की प्रधानता होने के कारण चन्द्र रश्मियों का प्रभाव उस पर पड़ता है। अष्टमी, चतुर्दशी आदि पर्व तिथियों पर उसका प्रभाव अधिक पड़ता है अत: इन दिनों में साधना के विशेष प्रयोग किये जाते हैं। मंत्र : एक समाधान में अष्टमी, पंचमी, षष्ठी, सप्तमी आदि तिथियों को महामंत्र के भिन्न-भिन्न पद्यों के जप का निर्देश उल्लिखित है।

अष्टमी के दिन जप साधना—

1. मंत्र—ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं।
2. मंत्र संख्या—एक माला।
3. प्रयोग विधि—अष्टमी के दिन मंत्र का प्रयोग करें।
4. परिणाम—पवित्र वातावरण का निर्माण होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इस प्रकार पंचमी तिथि को ''णमो सिद्धाणं'', षष्ठी तिथि को ''ॐ सिद्धेभ्यो नमः'', सप्तमी तिथि को ''णमो अरहंताणं'' के जप का निर्देश दिया गया है।

मंत्र साधना : श्रेष्ठ समय

जैन आगमों में दिन के प्रथम प्रहर में स्वाध्याय और दूसरे प्रहर में ध्यान का निर्देश दिया गया है। इस सिद्धान्त का निष्कर्ष निकलता है—चिंतन, मनन व बौद्धिकता का जो काम है, वह नौ बजे के बाद होना चाहिए। स्मृति जन्य जो काम है, वह नौ बजे के पहले होना चाहिए। नौ बजे के बाद चिन्तन जन्य काम अच्छा होता है। अगर कोई अनुसंधान करना चाहे तो उसके लिए दो बजे के बाद का समय उत्तम है। जप और ध्यान का समय सुबह ब्रह्ममुहूर्त्त (चार बजे से सूर्योदय तक) का उत्तम माना गया है। एक अंग्रेजी लेखक ने बहुत सुन्दर लिखा है—Early to bed and, early to rise makes a man healthy, wealthy and wise.

इसी तथ्य की पुष्टि एक सुभाषित से भी होती है—

राते वहेला जे सुवे, वहेला उठे वीर।
तन बुद्धि बहु धन बधे, सुख मां रहे शरीर॥

अनेक शास्त्रों में कहा गया है—स्वस्थ मनुष्यों की आयु की रक्षा के लिए ब्रह्ममुहूर्त्त में उठना चाहिए। यथा—

ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्तिष्ठेत्स्वस्थो रक्षार्थमायुषः। [14]
ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय तत्सर्व सम्यगाचरेत्। [15]
ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय चिन्तयेद्धितमात्मनः। [16]
ब्राह्मे मुहूर्त्ते उत्थाय धर्मार्थावनुचिन्तयेत्। [17]
ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुह्यते धर्मार्थौ चानुचिन्तयेत्। [18]
ब्राह्मे मुहूर्त्ते चोत्थाय मनसा मतिमान्नृप।
प्रबुद्ध क्षिन्तयेद्धर्ममर्थं चाप्यविरो॥ [19]

साधक को ब्रह्ममुहूर्त्त में उठकर ध्यान, जप, प्राणायाम आदि विविध प्रयोग विधिवत नियमित रूप से करने चाहिए। यह साधना की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ समय माना गया है। इसके पीछे कुछ वैज्ञानिक, सैद्धान्तिक और आध्यात्मिक रहस्य जुड़े हुए हैं, जिन्हें निम्न प्रकार से समझा जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

❊ आयुर्वेद के अनुसार प्रात:काल बहने वाली वायु के एक-एक कण में संजीवनी शक्ति का अपूर्व मिश्रण रहता है। इसका कारण स्पष्ट है कि रात्रि में चन्द्रमा द्वारा पृथ्वी पर बरसाये गये अमृत बिन्दुओं को इस समय वह अपने साथ लेकर बहती है। रात्रि विश्राम के बाद ज्ञान तंतु नव शक्ति युक्त होते हैं तथा प्रात:कालीन एकान्त व सर्वथा शांत वायुमण्डल में मस्तिष्क एकदम उर्वरक हो जाता है। यह स्थिति शारीरिक स्वास्थ्य, बुद्धि, आत्मा, मन, नेत्र-शक्ति व स्मरण-शक्ति को बढ़ाने में विशेष रूप से सहायक होती है।

अत: ब्रह्ममुहूर्त का समय स्वच्छ वातावरण की दृष्टि से उत्तम रहता है। इस समय मस्तिष्क में अल्फा तरंगें निर्मित होने से एकाग्रता सहज ही होने लगती है अत: इस समय की गई साधना सद्य: फलदायी होती है।

❊ आध्यात्मिक दृष्टि से ब्रह्ममुहूर्त में जागृत रहकर सद्‌चिन्तन व धर्मध्यान करने से आज्ञा-चक्र जागृत होता है। आज्ञा-चक्र चन्द्रमा का स्थान है। यह इस ब्रह्ममुहूर्त में अमृत वर्षा करता है। इस समय जागृत अवस्था में जप, ध्यान, प्राणायाम आदि धार्मिक क्रियाएं करने वाले व्यक्ति का आज्ञा-चक्र जागृत रहता है।

इस प्रकार ब्रह्ममुहूर्त में विश्व का वातावरण अत्यन्त पवित्र होता है। पाप परायण आत्माएं तो प्राय: इस समय लगभग निद्रा की गोद में रहती हैं। सब सन्त महात्मा प्राय: इस समय परम तत्त्व की साधना में लीन रहते हैं। वातावरण की पवित्रता के कारण अल्प प्रयास से ही साधक का मन एकाग्र हो जाता है अत: ब्रह्ममुहूर्त में स्वर-साधना सहित महामंत्र का जप करने से शनै:-शनै: जब प्राण की धारा सुषुम्ना में प्रवाहित होने लगती है, तब आध्यात्मिक जागरण प्रारंभ होता है।

जब तक सुषुम्ना में हमारा मंत्र प्रवाहित नहीं होता तब तक हमारी चेतना का उर्ध्वारोहण नहीं होता। इससे स्पष्ट होता है कि हमारी चेतना सुषुम्ना में प्राण के प्रवाहित होने से जागृत होती है, चाहे वह प्राणधारा मंत्र के द्वारा, योग शक्ति अथवा किसी क्रिया के द्वारा हो। जब प्राणधारा या मन सुषुम्ना में केन्द्रित हो जाता है, तब व्यक्ति अपने-आप शांत हो जाता है। उसकी वृत्तियां अन्तर्मुखी बन जाती हैं।

ब्रह्ममुहूर्त जागरण विधि

सबसे पहले उठते ही 'णमो अरहंताणं' बोले। तत्पश्चात् पूर्व या उत्तर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दिशा में कम से कम पांच बार नमस्कार महामंत्र का जप करें। फिर दोनों हथेलियों को खोलकर, एक साथ दोनों को सटाकर उसमें देखें, अर्द्धचन्द्र का आकार बनता है। उससे ऊपर सिद्धों की कल्पना करनी चाहिए। उसके ऊपर दोनों हाथों की आठों अंगुलियों के चौबीस पौरवों पर चौबीस तीर्थंकरों का नाम स्मरण कर चिंतन करना चाहिए कि वह दिन धन्य होगा, जिस दिन मैं भी अष्ट कर्मक्षय कर सिद्ध, बुद्ध और मुक्त बनूंगा/बनूंगी। फिर दोनों हथेलियों को सिर पर ले जाएं और उसके बाद जो स्वर चल रहा हो, उसी पैर को पहले बिस्तर से बाहर रखें, एक शुभ संकल्प के साथ।

प्राणधारा का संस्थान ओंकार

हमारे श्वास के साथ अनेक द्रव्य भीतर जाते हैं। प्राण तत्त्व भी भीतर जाता है। प्राण की साधना करने वाला साधक जानता है कि श्वास के साथ प्राण ऊर्जा किस रूप में भीतर जाती है। उसके कितने आकार बनते हैं। वे आकार निरन्तर आँखों के सामने घूमते रहते हैं। खुली आँख से भी वे आकार दिखाई देते हैं और बंद आँखों से भी।

अभ्यास करते-करते यह अनुभव गम्य होने लगता है। जब व्यक्ति प्राण की साधना में चलता है तब आकाश मण्डल में व्याप्त प्राण के परमाणु आकार लेना शुरू करते हैं। वे इतने आकारों में सामने आते हैं कि उनकी गणना नहीं की जा सकती। आकार बदलते रहते हैं। बदलते-बदलते जो अंतिम आकार होता है, वह ओंकार की प्रतिकृति होती है। प्राणधारा का यह आकार साधक के सामने अभिव्यक्त होता है।

ओंकार प्राण-शक्ति का विशेष रूप है। प्राण शक्ति का पूरा विकास होता है जब वह हमारे भीतर प्रवेश करती है, तब ओंकार का रूप धारण कर लेती है। प्राणधारा का विशेष आकार या संस्थान है–ओंकार। इसलिए इसे इतना महत्त्व दिया गया है। शास्त्रों में 'ॐ', 'अर्हं' व 'सोऽहं' का जप कुंभक के साथ करने का विशेष रूप से उल्लेख मिलता है।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि स्वर विज्ञान के साथ जब मंत्राक्षर ध्वनित होते हैं, तब वे इच्छा या भावना शक्ति से प्रेरित होकर एक विशेष प्रकार का कंपन, गति व तरंग उत्पन्न करते हैं। वायु में रहने वाले ईथर से जब ये शब्द टकराते हैं तो कम्पन्न पैदा होता है। ईथर के परमाणु अत्यन्त सूक्ष्म और अत्यन्त

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संवेदनशील होते हैं। वे एक सैकण्ड में 34 अरब तक कम्पन्न कर सकते हैं। साधारणतया एक सैकेण्ड में 32 से 68 तक होने वाले कम्पनों को हमारे कान सुन सकते हैं। इससे कम या ज्यादा कम्पनों को सुनना, समझना कानों के लिए संभव नहीं है। जब ये कम्पन अपनी चरम सीमा तक पहुँचते हैं, तब उनमें प्रकाश की किरणें निकलने लगती हैं। इन्हीं किरणों को ''एक्सरेज़'' कहा जाता है। इन किरणों में अद्‌भुत गतिशीलता होती है। वे प्राय: एक सैकण्ड में एक करोड़ मील तक चल सकती हैं। रेड़ियो, टेलीविजन आदि का निर्माण इसी शक्ति के आधार पर हुआ है।

वायु के कम्पन नष्ट हो जाते हैं पर ईथर के कम्पनों का कभी नाश नहीं होता। पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के सिद्धान्तानुसार ईथर के ब्लिष्ट प्रकंपन अपने समान-धर्मी दुर्बल प्रकंपनों को अपनी ओर खींचते हैं। यदि वे दुर्बल होते हैं तो समान धर्मी ब्लिष्ट प्रकंपनों की ओर खिंच जाते हैं। इस प्रकार वे वातावरण में संग्रहीत होकर संघ-शक्ति के आधार पर एक नई चेतना को जन्म देते हैं और एक ऐसे चुम्बकत्व का सृजन करते हैं, जो उन शब्दों के साथ जुड़ी हुई चेतनाओं से मनुष्य को प्रभावित कर सकें।

नमस्कार महामंत्र के ये 68 अक्षर सचमुच अक्षर हैं अर्थात् जिनका प्रभाव कभी भी नष्ट या क्षीण नहीं होता। ये अक्षर जिनके हृदय में स्थान कर लेते हैं, उनके पाप विसर्जित होने लगते हैं। आचार्य सिद्धसेन दिवाकर के शब्दों में, ''जैसे गरुड़ का स्वर सुनकर चन्दन का वृक्ष सर्पों के बंधन से मुक्त हो जाता है, वैसे पंच नमस्कार महामंत्र की गंभीर ध्वनि सुनने से मनुष्य भी तमाम बंधनों से मुक्त हो जाता है।''

सन्दर्भ–

1. जैन धर्म अर्हत्-अर्हताएं, पृ. 231
2. सोया मन जग जाए, पृ. 149
3. यम स्मृति, 76, 77
4. मार्कण्डेय पुराण, 34/73, स्कन्दक पुराण–मा.कौ. 41/161
5. ठाणं, 4/257
6. विष्णुपुराण, 2/8/61-64
7. देवी भागवत्, 11/16/2-3

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. जैन धर्म अर्हत्-अर्हताएं, पृ. 231
9. दसवैकालिक, चूलिका, 2/12
10. भगवंत भास्कर, आचार मायूख
11. ठाणं, 4/256
12. मंत्र : एक समाधान, पृ. 378
13. जैन धर्म अर्हत्-अर्हताएं, पृ. 232
14. अष्टांगहृदय-सूत्र, 2/1
15. देवी भागवत्, 11/2/2
16. व्यास स्मृति, 3/71
17. लघु व्यास संहिता, 1/1
18. मनु स्मृति, 4/92
19. विष्णु पुराण, 3/11/5

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

17. मंत्र जप : मुद्रा की वैज्ञानिक उपयोगिता

मुद्रा शब्द आते ही जो सामान्य बोध होता है, वह करेंसी के रूप में होता है। जब विनिमय के लिए मुद्रण की व्यवस्थऍा की गई, तब से सिक्कों को मुद्रा कहना प्रारम्भ हुआ होगा। ऐसे सामान्यत: 'टंकण' भी मुद्रण का एक प्रकार है। भारतीय परम्परा में प्रत्येक शब्द के साथ उसकी आत्मा पर विचार किया गया है। शब्द यद्यपि एक संकेत होता है, फिर भी वह उसके निकटतम भाव का स्पर्श करता है। 'मुद्रा' शब्द साधना पद्धति में विशिष्ट आकृति के लिए प्रयुक्त होता है। आकृति को संस्थान, पोज, मुद्रा भी कहा जाता है। शरीर की भिन्न-भिन्न आकृतियां हमें भिन्न-भिन्न भावों को समझने का अवकाश देती है। जब तक आसन नहीं सधता तब तक मुद्रा ठीक नहीं होती। इस अपेक्षा से ध्यान, जप के लिए आसन, मुद्रा और यौगिक क्रियाएं विज्ञान सम्मत अनिवार्यताएं हैं, जिनकी महत्ता को उजागर करने के लिए कुछ बिन्दु मननीय हैं–

- ❊ मुद्राएं चित्त स्थैर्य में विशेष सहायक हैं क्योंकि इनके अभ्यास से मेरुदण्ड सबल बनता है और प्राण उत्थान के साथ कुंडलिनी जागरण की संभावना प्रबल हो जाती है।[1]
- ❊ विभिन्न मुद्राओं का प्रयोग आत्मोन्नति के महान् उद्देश्य से किया जाये तो अन्तर जागृति के साथ आवेग-क्षीणता, सहज प्रसन्नता, दूरदर्शिता और प्रतिकूल स्थितियों में सामंजस्य (एडजेस्टमेन्ट) व संतुलन बनाये रखने की योग्यता प्राप्त होती है।[2]
- ❊ मुद्राएं केवल आकृतियां ही नहीं हैं, वे व्यक्ति को प्राणवान बनाकर विभिन्न तत्त्वों का प्रस्फोटन करती हैं, जिससे व्यक्ति प्रभावित होता है।
- ❊ मुद्राओं से व्यक्ति के स्नायु तथा ग्रंथितंत्र प्रभावित होते हैं। मुद्रा उसी तदाकार परमाणु की आकृतियां बनकर शरीर से निकलती रहती हैं। उन आकृतियों से न केवल वातावरण प्रभावित होता है बल्कि व्यक्ति का अंतरंग भी प्रभावित होता है। ये वातावरण और अंतरंग व्यक्तित्व को बदल देती है।[3]
- ❊ बाह्य मुद्रा के निर्माण से चित्त की एक विशेष स्थिति निर्मित होती है। इस विशेष स्थिति से भावना में प्रगाढ़ता आती है। भावना से प्रभावित

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चित्त अन्तर लोक में प्रविष्ट हो जाता है। अन्तर से उठने वाली भावना के प्रकंपनों का जोड़ भी एक विशिष्ट आकृति का निर्माण करता है।[4]

- भावों की सृष्टि के अनुसार मानव का जीवन और उसका व्यवहार प्रभावित होता है अर्थात् मुद्रा द्वारा भावों को अभिव्यक्ति मिलती है और भाव द्वारा मुद्राएं उभरती रहती हैं अत: दोनों का अन्योन्याभाव संबंध है। नि:संदेह आसन, मुद्रा और बंध–तीनों भिन्न-भिन्न होते हुए भी एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं।
- वीतराग-मुद्रा, ज्ञान-मुद्रा, कायोत्सर्ग-मुद्रा, महामुद्रा, सर्वेन्द्रिय-संयममुद्रा, अनिमेष-मुद्रा आदि मुद्राएं अन्तर को समलयता में लाने के द्वार हैं अत: इन मुद्राओं में ध्यान, जप आदि प्रयोग सद्य: फलदायी होते हैं।[5]

मुद्राओं के आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, व्यावहारिक फलश्रुतियों के आधार पर निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि कुछ मुद्राएं संस्कारगत होती हैं और कुछ मुद्राएं अभ्यास व प्रयोगसिद्ध होती हैं। वीतराग आदि प्रयोग सिद्ध मुद्राएं हैं। संस्कारगत मुद्राएं वे मुद्राएं हैं, जिनसे चाहे-अनचाहे परिस्थिति उत्पन्न होते ही व्यक्ति उस मुद्रा में आ जाता है जैसे हाथ ठुड्डी पर आ जाता है। उस मुद्रा को देखते ही समझा जा सकता है कि व्यक्ति चिंताग्रस्त है। इसी प्रकार सर्दी लगते ही व्यक्ति अपने आपको उससे बचाने के लिए हाथों की मुट्ठियां बनाकर काँख में दबाता है। अकड़ और अहंकार के भावों को अभिव्यक्ति देने के लिए भी व्यक्ति इसी तरह की मुद्रा बनाता है। विनय भाव की अभिव्यक्ति के समय व्यक्ति दोनों हाथों को जोड़कर नमस्कार मुद्रा में स्थित हो जाता है। इस प्रकार इन संस्कारगत मुद्राओं के अलावा कुछ मुद्राएं ऐसी भी हैं, जिनका सम्यक् अभ्यास कर व्यक्ति अपने भाव, संस्कार और स्वास्थ्य को स्वस्थ रख सकता है।

मुद्रा : एक समीक्षात्मक अध्ययन

भारतीय परम्परा में मुद्रा का विकास क्रम आदिम युग से ही उपलब्ध है। जब भाषा का इतना विकास नहीं हुआ था तब आदिम युगीन प्रजातियां, संकेतों, चित्रों और अनुकृतियों के माध्यम से एक-दूसरे तक अपना संवाद पहुँचाती थी। भगवान ऋषभ-आदिनाथ, बाबा, आदम के नामों से विख्यात थे। उनकी दो पुत्रियां–ब्राह्मी, सुन्दरी थी। आदि पुरुष ने अपनी पुत्री ब्राह्मी को जो लिपी सिखाई, वह ब्राह्मी लिपी के नाम से प्रसिद्ध हुई। सुन्दरी को नृत्य आदि अनेक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कलाएं सिखाई। नृत्य में मुद्राओं की अभिव्यक्ति इस तरीके से की जाती है कि पूरा का पूरा भाव हृदयंगम हो जाता है। मुद्रा के माध्यम से जो यथार्थ एक क्षण में अभिव्यक्त किया जाता है, उसे अगर शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त किया जाये तो एक लम्बा वक्तव्य बन जाता है। मुद्रा की सूक्ष्म मुद्राएं समग्र भावों को अवतरित कर देती है। वहां केवल शरीर ही विभिन्न मुद्राओं में आकार नहीं लेता, बल्कि सम्पूर्ण चेतना भी उस रूप में ढ़ल जाती है।

योगासनों के विभिन्न प्रकार भी एक प्रकार की मुद्राएं हैं, जिस तरह शब्द की सूक्ष्म ध्वनि नाद है, उसी तरह शरीर के अंतरंग सूक्ष्म स्पन्दन का अवतरण मुद्रा है। हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है कि शक्ति जागे बिना चक्रों का भेदन नहीं होता। शक्तिकेन्द्र (मूलाधार) में सोई शक्ति को जागृत करने का एक उपाय मुद्राओं का अभ्यास है। मुद्राएं सूक्ष्म शरीर को प्रभावित करती है। इससे प्राण शरीर सक्रिय हो जाता है। देवताओं को मुदित करने और पाप का नाश करने के कारण इसे मुद्रा कहा है। यह सब काम और अर्थ को साधने वाली है। घेरण्ड संहिता में मुद्राओं की महत्ता का दिग्दर्शन कराते हुए कहा गया है–योगियों द्वारा खोजी गई ये मुद्राएं अद्‌भुत हैं। शरीर में ये चैतन्य को अभिव्यक्ति देने वाली या कुंजियां हैं। घेरण्ड संहिता में कुछ मुद्राओं का उल्लेख निम्न प्रकार से किया गया है–

महामुद्रा नभोमुद्रा उड्डीयान जलंधर।
मूलबंधन महाबंध महावेद्यश्च खेचरी॥

विपरीत करिणी योनि वज्रोली शक्तिचालिनी।
तडागी मांडवी मुद्रा शाम्भवी पंचधारणा॥

अश्विनी पाशिनी काकी मातंगी च भुजंगिनी।
पंचविंशति मुद्रावै सिद्धिदाश्चेह योगिनाम्॥[6]

मुद्राओं के नाम–महामुद्रा, नभोमुद्रा, उड्डीयानबंध, जालंधर बंध, मूलबंध, महाबंध, महावेध, खेचरी, विपरीत करणी, योनि, वज्रोली, शक्ति, तडागी, माण्डवी, शांभवी, पंचधारणा, अश्विनी, पाशिनी, काकी, मातंगी, भुजंगिनी। ये मुद्राएं योगियों को सिद्धि देने वाली है।

जैन दर्शनानुसार जीव और अजीव दोनों के अपने-अपने आकार (संस्थान) होते हैं। उन आकारों से ऊर्जा का विकीरण आकारों की प्रतिछवि के अनुरूप निकलता रहता है। अजीव-पुद्‌गल के पाँच संस्थान हैं–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वृत्त	–	गोलाकार
परिमंडल	–	गोल चुड़ी का आकार
त्रिकोण	–	तीन कोण का आकार (त्रिभुजाकार)
चतुष्कोण	–	चार कोण का आकार (चौकी का)
आयत्	–	प्रलम्ब डण्डे का आकार

निरन्तर एक प्रकार की आकृतियां निकलते रहने से उनका प्रभाव विस्तृत होता है। यंत्र के प्रयोग संस्थान के आकार की रचना है। मंत्र विशिष्ट यंत्रों से परिवेष्टित हो विशेष प्रभाव छोड़ते हैं। मंत्र के द्वारा प्राणवान संकल्पशील साधक के द्वारा बनाये गये यंत्र प्राणवान बनकर यथेष्ट फल की प्राप्ति कराते हैं। इसी तरह प्राणवान व्यक्ति द्वारा निर्दिष्ट मुद्राएं भी विशेष प्रभावकारी होती हैं। 'वर्गणा' जैन दर्शन का परिभाषिक शब्द है, जिसका तात्पर्य है–सजातीय परमाणु। वर्गणाएं आठ हैं–

1. औदारिक वर्गणा–मांस, मज्ञा से निर्मित मनुष्य आदि का शरीर।
2. वैक्रिय वर्गणा–विशिष्ट परमाणु पुद्गलों से नारक, देव द्वारा निर्मित शरीर।
3. आहारक वर्गणा–विशिष्ट विभूति से साधक के द्वारा निर्मित शरीर।
4. तैजस वर्गणा–ऊर्जा द्वारा निर्मित शरीर।
5. कार्मण वर्गणा–कर्म समूह (परमाणुओं) से निर्मित शरीर।
6. मनो वर्गणा–मनन करने योग्य परमाणु स्कन्ध और दूसरों के मन के परमाणुओं को जानना।
7. भाषा वर्गणा–भाषा के ग्रहण योग्य परमाणु स्कन्ध।
8. श्वासोच्छ्वास वर्गणा–श्वासोच्छ्वास के प्रयोग में आने वाले परमाणु स्कन्ध।

वर्गणाओं को जिस समय हम ग्रहण करते हैं, उस समय हमारी जैसी भी मुद्रा होती है, उसका स्वरूप भी तदाकार हो जाता है इसलिए मुद्रा और वर्गणा का गहरा संबंध है।

प्रेक्षाध्यान और मुद्राएं

प्रेक्षाध्यान भाव परिवर्तन की एक प्रक्रिया है। जैसे हमारे भाव होते हैं, वैसी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हमारे शरीर की मुद्राएं बनती हैं। आलस्य, शोक, प्रसन्नता, जल्दबाजी, धैर्य, जिज्ञासा, अहंकार, क्रोध, लोभ, आसक्ति, घृणा आदि जितने भी भाव हैं, उतनी ही मुद्राएं स्पष्टतया शरीर पर दृष्टिगोचर होने लगती हैं। प्रेक्षाध्यान का एक उद्देश्य है—निषेधात्मक भावों का निरसन और विधेयात्मक भावों का विकास। अगर हम विधेयात्मक भावों की मुद्राएं ध्यान काल में अथवा जप करते समय तथा जीवन में निरन्तर काम में ले तो भीतर में हमारे भाव भी उसी अनुपात में बदलते नजर आयेंगे। इसीलिए प्रेक्षाध्यान में जैसे आसनों का महत्त्व है, वैसे मुद्रा का भी महत्त्व है।

साधनाकाल में ध्यान के बाद स्वाध्याय और स्वाध्याय के बाद पुन: ध्यान करना चाहिए। स्वाध्याय की सीमा में जप, भावना, अनुप्रेक्षा—इन सबका समावेश होता है। यथासमय और यथाशक्ति इन सबका प्रयोग आवश्यक है। आत्मा की भावना करने वाला आत्मा में स्थित हो जाता है। 'सोऽहं' के जप का यही मर्म है। अर्हम् की भावना करने वाले में 'अर्हत्' होने की प्रक्रिया शुरू हो जाती है।

प्रेक्षाध्यान में जहां गहराई से देखने का प्रयोग करवाया जाता है, वहीं शरीर की स्थिति और मुद्रा को भी ध्यान में रखा गया है। भगवान महावीर और भगवान बुद्ध ने अभय की मुद्रा का प्रयोग जनता के समक्ष प्रस्तुत कर अहिंसा और अभय का सामूहिक निदर्शन दिया था। अभय मुद्रा के द्वारा वे न केवल प्राणियों को अभय प्रदान करते थे अपितु अभय की मुद्रा द्वारा समता का निदर्शन भी करते थे। बहुत सुन्दर और यथार्थ कहा गया है—

साधना का सार तत्त्व है समता,
मानव का आचार सत्त्व है समता।
पराया भी अपना बनता है इससे,
मुक्ति का अमरत्व है समता॥

प्रेक्षाध्यान में अनुप्रेक्षा के अनुचिंतन के प्रयोगों का मंतव्य भी आकृति के दर्शन में छिपा है क्योंकि आकार और भावों के अनुरूप सृष्टि होती है। कायोत्सर्ग, लेश्याध्यान, चैतन्य-केन्द्रप्रेक्षा—ये सब विशुद्ध मुद्राओं के प्रयोग हैं।

नि:संदेह मुद्रा ध्यान का अभिन्न अंग हैं। ध्यान की किसी भी अवस्था में मुद्रा अवश्यंभावी होती है। प्रेक्षाध्यान में सर्वप्रथम बैठने की मुद्रा को सही बनाना होता है। अत: ध्यान से पूर्व सर्वप्रथम यही सुझाव दिया जाता है—एक आसन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का चुनाव करें (पद्मासन, सुखासन, वज्रासन, सिद्धासन)। रीढ़ की हड्डी और गर्दन को सीधा रखें, आँखें कोमलता से बंद करें। ब्रह्ममुद्रा (वीतराग मुद्रा) या ज्ञान मुद्रा का चुनाव करें। बैठने की मुद्रा सही होने से मेरुदण्ड सीधा और शक्तिशाली बनता है। मेरुदण्ड सीधा रहने से ध्यान में एकाग्रता बनी रहती है तथा व्यक्ति वृद्ध नहीं होता, मेधावी बनता है। जिस तरह एंटीना सीधा रहने से टी.वी. पर दृश्य स्पष्ट आता है, वैसे ही मेरुदण्ड सीधा रहने से विचारधारा स्वस्थ बनती है। इसी तथ्य को 'ध्यान-शतक' की निम्नोक्त गाथा से समझा जा सकता है—

सुखासन समासीनः सुश्लिष्टाधरपल्लवः।
नासाग्रन्यस्तदृग्द्वन्द्वो, दन्तैर्दन्तानसंस्पृशन्॥

प्रसन्नवदनः पूर्वाभिमुखो वाऽप्युदङ्मुखः।
अप्रमत्तः सुसंथानो ध्याता ध्यानोद्यतो भवेत्॥

जप और मुद्रा विज्ञान

वर्तमान शरीरशास्त्र के अनुसार हमारे शरीर में पर्याप्त गुरुत्वाकर्षण की आवश्यकता है। वह मांग वज्रासन, पद्मासन, सुखासन (कमलासन), सिद्धासन, कायोत्सर्गासन आदि आसन तथा वीतराग-मुद्रा (ब्रह्ममुद्रा), ज्ञानमुद्रा आदि मुद्राओं में बैठने से पूर्ण होती है। इस दृष्टि से जप और ध्यान में भी इन आसन और मुद्राओं को प्राचीन काल से महत्त्व दिया जाता आ रहा है। स्वास्थ्य और साधना—दोनों ही दृष्टियों में इनकी मूल्यवत्ता स्वयंसिद्ध है। पतंजलि ने लिखा 'आसन' से द्वन्द्वों का अभिघात कम हो जाता है, द्वन्द्वों को सहने की क्षमता विकसित हो जाती है। भगवान् महावीर जैसे बड़े साधक की साधना का विश्लेषण करें तो वे वीरासन, वज्रासन आदि-आदि आसन मुद्राओं में ध्यानस्थ मिलते हैं।[7] वीतराग-मुद्रा ध्यान व जप की मुद्रा है। तीर्थंकर भगवान की अधिकांश प्रतिमाएं वीतराग मुद्रा में हैं। ध्यान तथा जप के आसन तथा मुद्रा में मेरुदण्ड तथा टांगों की स्थिति पर विशेष ध्यान दिया जाता है। कई योगाचार्य टांगों को दोहरी रखकर ध्यान अथवा जप करने की पद्धति को वैज्ञानिक मानते हैं, क्योंकि बुद्धि की सूक्ष्मता के लिए रक्ताभिसरण-क्रिया का उर्ध्वगतिक होना आवश्यक है। पूर्वोक्त ध्यानासनों से शरीर के निम्नवर्ती भागों में रक्त का प्रवाह हल्का होता है। इस प्रकार मस्तिष्क के सूक्ष्म तंतुओं के लिए पर्याप्त रक्त बच जाता है। साधना के प्रारंभ में बौद्धिक सूक्ष्मता तथा स्वस्थता अधिक आवश्यक होती है। इसलिए पर्यंक आसन (पद्मासन) आदि आसनों को मानसिक एकाग्रता में अत्यन्त सहायक माना गया है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वीरासन से धृति का विकास होता है।[8] स्वस्तिक आसन के द्वारा स्मृति का विकास होता है।[9] पद्मासन के द्वारा स्मृति का विकास होता है, विचार-शक्ति का विकास होता है।[10] यह आसन नाभि स्थित सूर्य चक्र को जागृत करता है, जिसके जागरण का सीधा प्रभाव कुंडलिनी पर होता है। धीरे-धीरे यही आसन कार्यवाही नाड़ियों को नियंत्रित करता है। इस आसन में स्वास्थ्य-केन्द्र पर दबाव पड़ने से ऊर्जा का उर्ध्वारोहण होता है। उकडू आसन से नीचे के स्नायुओं पर दबाव पड़ता है। गोदोहिका आसन से पीछे की ओर दबाव पड़ता है। ये सब आसन ऊर्जा को उर्ध्वगामी बनाने वाले आसन हैं।[11] योग ग्रंथों में सिद्धासन के विषय में कहा गया है—''मोक्षं चैव विधीयते फलकरं सिद्धासनं प्रोच्यते।''[12] सिद्धासन में प्रतिदिन ध्यान तथा जप करने से साधक मोक्ष तथा सब सुखों की उपलब्धि करता है। हठयोग प्रदीपिका में इसे बहत्तर हजार नाड़ियों के मलों का शोधन करने वाला आसन बताया है। इस आसन के सिद्ध होने पर फिर किसी अन्य आसन की आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। इस आसन में स्थित होकर किसी भी मंत्र की आराधना करने पर अवश्य ही सिद्धि प्राप्त होती है। पद्मासन के बाद महत्त्व की दृष्टि से इसी का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस आसन का अच्छा अभ्यास हो जाने पर अनेक प्रकार की सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं। स्थूल शरीर के साधक भी इस आसन का अभ्यास अवश्य कर सकते हैं। ब्रह्मचर्य पालन के लिए यह अत्यन्त उपयुक्त माना गया है। जो साधक पद्मासन या सिद्धासन में पन्द्रह मिनट बैठने का अभ्यास कर लेता है और एकाग्रतापूर्वक जप साधना करता है, उसे आशातीत लाभ की प्रतीति होती है। वात रोग के लिए यह आसन सर्वोत्तम माना गया है। यह रंगों और नस-नाड़ियों को सुदृढ़ करने में भी सहायक होता है। इस आसन की विधि निम्न प्रकार से है—

बायें पैर की एड़ी को गुदा के स्थान पर रखने से और दायें पैर को लिंग पर रखने से जो आसन मुद्रा बनती है, वह सिद्धासन है।

इस प्रकार लम्बे समय तक किसी एक ध्यानासन का अभ्यास करने वाला कुछ दैहिक प्रवृत्तियों से ऊपर उठ जाता है और क्रमशः उसे आत्म-जिज्ञासा उत्पन्न होती है और उसकी साधना के स्रोत खुलने लगते हैं।

1. वीतराग-मुद्रा (ब्रह्ममुद्रा)

विधि—

बायें हाथ की हथेली नाभि के पास स्थिर रहें। दायें हाथ की हथेली बायें हाथ की हथेली के ऊपर रखें। अंगूठे एक-दूसरे के ऊपर रहें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नोट–वीतराग मुद्रा में पद्मासन सर्वश्रेष्ठ है। सुखासन या वज्रासन में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है।

मुद्रा की वैज्ञानिकता

इस मुद्रा में दोनों हाथों के मिलने से और हथेलियों को ठीक गोलाई में रखने से नाभि के भीतर उठती हुई तरंगों और हथेलियों की तरंगों में एक लयबद्धता आती है। शक्ति का वलय बनता है, जिससे व्यक्ति ध्यान अथवा जप की गहराई में आसानी से उतर सकता है। वीतराग की स्मृति से सहज वीतराग भाव विकसित होता है। दोनों हथेलियों के मिलने से हमारे शरीर में स्थित धन और ऋण दोनों प्रकार की विद्युत का संगम व संतुलन रहने से सहज स्थिरता और तटस्थता का विकास होता है।

परिणाम–

1. वीतराग भाव का विकास।
2. शक्ति का उर्ध्वारोहण।
3. स्थिरता का विकास।
4. ऊर्जा का संतुलन।
5. तत्त्वों का समीकरण।

2. ज्ञान–मुद्रा

विधि–

दोनों हाथों को घुटनों पर रखें, अंगूठे के पास वाली तर्जनी अंगुली के ऊपर वाले पोर को अंगूठे के ऊपर वाले पोर से मिलाएं। हल्का-सा दबाव दें। शेष तीनों अंगुलियां सटी हुई सीधी रहेंगी। अंगूठे और तर्जनी के मिलने से जो हाथ की आवृत्ति बनती है, यही ज्ञान मुद्रा है।

नोट–

ध्यान अथवा जप करते समय सर्वाधिक प्रयोग ज्ञान मुद्रा का किया जाता है। पद्मासन, सुखासन, वज्रासन में ध्यान अथवा जप करते समय अथवा अन्य किसी भी आसन में इस मुद्रा का प्रयोग किया जा सकता है।

मुद्रा की वैज्ञानिकता

इस मुद्रा का स्नायु मण्डल व मस्तिष्क पर हितकारी प्रभाव पड़ता है। हस्त

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विज्ञान के अनुसार जीवन रेखा, बुध रेखा के दोष दूर होते हैं तथा अविकसित शुक्र पर्वत का विकास संभव होने लगता है। अंगूठे में स्थित अग्नि-तत्त्व और तर्जनी में स्थित वायु तत्त्व का संतुलन होने से पाचन की स्वस्थता बढ़ती है तथा वायु विकार दूर होते हैं।

परिणाम

1. ज्ञान का विकास।

2. स्मरण शक्ति का विकास।

3. स्वभाव परिवर्तन–जिद्दीपन, चिड़चिड़ापन, अस्थिरता, क्रोधीपन, उत्तावलापन और व्याकुलता की वृत्ति का निराकरण होता है।

4. शांत और प्रफुल्लित मन का निर्माण।

5. एकाग्रता का विकास।

6. कार्य में सफलता की प्राप्ति।

7. पढ़ने में रुचि।

8. मस्तिष्क के स्नायुओं का शक्तिशाली बनना।

9. सिरदर्द तथा निद्रा रोग का शमन।

3. समन्वय–मुद्रा

विधि–

हाथ की अंगुलियों और अंगुष्ठक को मिलाकर एक संपुट बना लिया जाता है। अंगुलियों के परस्पर मिलने से पाँचों तत्त्वों का समन्वय होने के कारण इसे समन्वय मुद्रा कहा जाता है।

नोट– सुखासन अथवा पद्मासन में जप अनुष्ठान के अनुसार आठ मिनट से अड़चास मिनट तक इस मुद्रा का प्रयोग किया जा सकता है।

मुद्रा की वैज्ञानिकता

अंगुलियों और अंगुष्ठक के पोरों को परस्पर मिलाने से मस्तिष्क एवं पिच्युटरी ग्रंथि पर दबाव पड़ने से उसकी सक्रियता बनी रहती है। इस मुद्रा में हाथों का आकार सुकर की तरह हो जाने के कारण इसे सुकरी मुद्रा भी कहा जाता है। पौराणिक वैदिक परम्परा में माना जाता है कि भगवान विष्णु ने सुकर अवतार में पृथ्वी को अपने दांतों से निकालकर लाने का महान् पराक्रम किया था। यह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मुद्रा योग मुद्रा में शक्तिशाली मानी गई है। कार्य की सफलता और मंत्र की सफलता के लिए इस मुद्रा को महत्त्वपूर्ण माना गया है।

परिणाम

1. समन्वय की भावना का विकास।
2. शक्ति का विकास।
3. तत्त्वों का संतुलन।
4. अनिष्ट का निवारण।

नोट–हंसी-मुद्रा में राजसिक शक्तियों का विकास होता है। इस दृष्टि से इस मुद्रा में जप, मंत्र आदि अनुष्ठान का निषेध है।[13] सबसे छोटी अंगुली को छोड़कर शेष अंगुलियों के पोरों को अंगूठे के अग्रभाग से दबाने से यह मुद्रा बनती है।

कायोत्सर्ग मुद्रा की वैज्ञानिकता

ध्यान से पूर्व कायोत्सर्ग का होना मनोवैज्ञानिक चिकित्सा-पद्धति से पूर्ण सम्मत है क्योंकि ग्रंथि रेचन शिथिलीकरण के बिना नहीं होता है। जप से पूर्व भी कायोत्सर्ग किया जा सकता है अथवा खड़े-खड़े कायोत्सर्ग की मुद्रा में जप किया जा सकता है। भगवान महावीर ने हर उपलब्धि को आसनस्थ तपस्वी होकर कायोत्सर्ग की मुद्रा में पाया। जब केवलज्ञान उत्पन्न हुआ तब वे उकडू आसन में बैठे थे, दो दिन का उपवास था और ध्यानान्तरिका में विद्यमान थे। जैन परम्परा में वर्तमान अवसर्पिणी काल के चौबीस तीर्थंकरों में से भगवान् ऋषभ, भगवान् नेमिनाथ और भगवान् महावीर ने पल्यंकासन मुद्रा (पद्मासन) में निर्वाण प्राप्त किया और शेष इक्कीस तीर्थंकरों ने कायोत्सर्ग मुद्रा में निर्वाण प्राप्त किया। पद्मासन में अरहंतों की मुद्रा लगभग वीतराग मुद्रा ही मिलती है।

कायोत्सर्ग मुद्रा का भी अपना विशिष्ट स्थान है। समग्र तंत्र को स्थिरता, शांति और समाधि प्रदान करने में कायोत्सर्ग मुद्रा अतीव महत्त्वपूर्ण सहयोग देती है। खड़े रहकर किये जाने वाले कायोत्सर्ग में पैरों को अंगुलियों के पास आठ अंगुल के फासले में और एड़ी के पास चार अंगुल के फासले में रखे जाते हैं। दोनों पैरों के बीच में इस निश्चित फासले की नियमितता के बारे में भी विज्ञान ने खोज की और उसका रहस्योद्घाटन करते हुए कहा कि–इस प्रकार खड़े रहने से हमारे शरीर का वजन पैरों के अगले हिस्से पर अधिक रहता है। ऐसा होने से शरीर के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संतुलन की समग्रता सुचारू एवं व्यवस्थित होती है। Strait ritress के अनुसार व्यक्ति की इस मुद्रा से वह हृदय रोग से बच सकता है। हृदय रोग के अधिकांश व्यक्ति अपने शरीर का वजन पैर के पीछे हिस्से यानि एडियों पर अधिक देते हैं जबकि अगले हिस्से पर वजन आने से काफी शिकायतें अपने आप हल हो जाती हैं। वंदना, नमस्कार की मुद्रा में भी इन हिस्सों पर अधिक दबाव पड़ता है।

मनोविज्ञान के अनुसार कायोत्सर्ग की मुद्रा से हमारा अन्य व्यक्ति पर प्रभाव पड़ता है परन्तु हम पर अन्य का प्रभाव नहीं पड़ सकता। साथ ही यह मुद्रा मानसिक एकाग्रता को बढ़ाने में भी सहायक सिद्ध होती है।

नमस्कार महामंत्र और मुद्रा (नमस्कार–मुद्रा) [14]

भारतीय संस्कृति में नमस्कार की परम्परा प्राचीन काल से चली आ रही है। यह परम्परा विनम्रता, ऋजुता, समर्पण, सम्मान सूचक भावों को विकसित करने वाली है। प्रात:काल उठते ही मंगल भावों के साथ अपने इष्ट को नमस्कार किया जाता है। नमस्कार मुद्रा के पाँच प्रकार हैं—

1. अर्हं मुद्रा,
2. सिद्ध मुद्रा,
3. आचार्य मुद्रा,
4. उपाध्याय मुद्रा,
5. मुनि मुद्रा।

वे पाँचों मुद्राएं हमारे शारीरिक, मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कही जा सकती हैं। इनका नियमित प्रयोग और अभ्यास संतुलित व्यक्तित्व के निर्माण में सहायक है।

1. अर्हं मुद्रा—

दोनों हाथ आनन्द-केन्द्र पर नमस्कार मुद्रा में रहें।

विधि— ''ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं'' (मैं अरहंतों को नमस्कार करता हूँ) का उच्चारण करें। श्वास को भरते हुए हाथों को कानों से स्पर्श करते हुए ऊपर ले जाएं। श्वास रोकें, फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ते हुए मंत्रोच्चारण के साथ सीने के मध्य हाथों को आनन्द केन्द्र पर ले आएं।

नोट— इस मुद्रा को पद्मासन, सुखासन, समपादासन आदि कई आसनों में कर सकते हैं। मुख्य रूप से यह पद्मासन, सुखासन में बैठकर की जाती है।

लाभ—

1. एकाग्रता बढ़ती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. व्यक्ति की अनेक सुप्त अर्हताएं जागृत होती हैं।
3. शारीरिक दृष्टि से अंगुलियां, हथेलियां, मणिबंध, कुहनी आदि स्कन्ध शक्तिशाली बनते हैं, हाथों का दर्द दूर होता है।
4. पेट, सीना, पसलियां और पृष्ठरज्जू पर खिंचाव पड़ने से ये अंग स्वस्थ और सक्रिय होते हैं। जड़ता टूटती है। आलस्य दूर होता है। एड्रीनल तथा थाइमस ग्रंथियों के स्राव बदलने लगते हैं। शरीर का सारा कार्य सुचारू रूप से चलने लग जाता है तथा विसर्जन योग्य तत्त्व विसर्जन तंत्र की ओर भेज दिये जाते हैं।
5. इच्छा शक्ति का विकास होता है।
6. शरीर स्वस्थ तथा शक्तिशाली बनता है।

2. सिद्ध–मुद्रा–

दोनों हाथ आनन्द केन्द्र पर नमस्कार मुद्रा में रहें।

विधि– पद्मासन अथवा सुखासन लगाएं। दृष्टि को दोनों भौहों के मध्य भृकुटि पर जमाएं। ''ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं'' का उच्चारण करें। श्वास भरते हुए दोनों हाथों को ऊपर ले जाएं। ऊपर ले जाकर दोनों हथेलियों को विपरीत दिशा में खोल दें अर्थात् कमल का आकार बनायें। बाहें कोनों का स्पर्श करती रहें। कुछ क्षण इस मुद्रा में रूकें, फिर श्वास छोड़ते हुए हाथों को आनन्द-केन्द्र पर ले आएं।

लाभ–

1. स्वास्थ्य लाभ के साथ-साथ निर्मल भावधारा का निर्माण।
2. हथेलियों के खुलने से हथेलियों की मांसपेशियों पर दबाव पड़ता है, उससे मांसपेशियां लचीली तथा पुष्ट होती हैं।
3. एड्रीनल तथा थाइमस ग्रंथियों के स्राव संतुलित तथा क्रियाशील हो जाते हैं।
4. ज्ञान चक्षुओं पर विशेष प्रभाव पड़ने से उनकी सक्रियता बढ़ जाती है।
5. यह मुद्रा योगियों को कार्यसिद्धि प्रदान करती है।
6. कंधों का दर्द दूर होता है।
7. पेट का मोटापा कम होता है।
8. स्वतंत्र चिंतन का विकास होता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

3. आचार्य मुद्रा–

विधि– पूर्ववत् मुद्रा में बैठें। मन को मस्तिष्क में केन्द्रित करें। ''ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं'' का उच्चारण करें। श्वास भरते हुए दोनों हाथों को खोलें तथा दोनों अंगूठों से कंधों का स्पर्श करें। हथेलियां खुली हुई रहें। श्वास छोड़ते हुए वापिस धीरे-धीरे आनन्द-केन्द्र पर हाथों को नमस्कार की स्थिति में ले आएं।

लाभ–

1. आचरण की शुद्धि होती है।

2. थाइमस ग्रंथि के स्राव का संतुलन होने से भावधारा निर्मल होने लगती है।

3. आनन्द की प्राप्ति होती है।

4. हृदय और फेफड़े मजबूत होते हैं।

5. कंधे तथा मांसपेशियां भी मजबूत और सक्रिय होती है।

6. रासायनिक पाचन ग्रंथियों में स्राव सुचारू रूप से होने लगता है।

4. उपाध्याय मुद्रा–

विधि– पूर्ववत् मुद्रा में बैठें। ''ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं'' का उच्चारण करें। श्वास भरते हुए दोनों हाथों को ऊपर ले जाएं। अंगूठे और तर्जनी अंगुली को पान के आकार में बनायें। दृष्टि आकाश की ओर रहे। श्वास रोकते हुए गर्दन को पीछे ले जाएं, पान के आकार के मध्य आकाश को देखें। श्वास छोड़ते हुए वापस धीरे-धीरे हाथ आनन्द-केन्द्र पर ले आएं।

लाभ–

1. व्यक्ति के विवेक में वृद्धि होती है।

2. शिक्षण तथा उपाध्याय के प्रति विनम्रता बढ़ती है अर्थात् ज्ञान या ज्ञानी के प्रति विनम्रता का विकास होता है।

3. आँखों की ज्योति बढ़ती है।

4. कमर तथा गर्दन के दर्द में लाभ होता है।

5. थाइराइड, पेराथाइराइड, पिनियल तथा पिच्युटरी ग्रंथियों के स्राव संतुलित होते हैं, जिसके कारण मानसिक संतुलन बना रहता है तथा ज्ञान का भण्डार विकसित होकर व्यक्ति को समझ शक्ति से परिपूर्ण बनाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. मुनि मुद्रा

विधि– पूर्ववत् मुद्रा में बैठें। ''ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं'' का उच्चारण करें। श्वास भरते हुए दोनों हाथों को ऊपर ले जाएं। अंजलि बनायें। बिना हाथ मोड़े श्वास छोड़ते हुए विनम्रता पूर्वक आगे झुकें, जमीन पर ललाट लगाएं।

लाभ–

1. मानसिक प्रसन्नता का विकास होता है।
2. करुणा और मैत्री की भावना का विकास होता है।
3. अहंकार का विसर्जन होता है।
4. श्रद्धा एवं समर्पण की भावना जागृत होती है।

निष्कर्ष

मानव शरीर में मस्तिष्क से लेकर पांव के अंगूठे तक स्नायुमण्डल फैला हुआ है। आसन तथा मुद्राओं से शरीरस्थ स्नायुमण्डल प्रभावित होता है। सम्यक् आसन तथा सम्यक् मुद्रा से स्फूर्ति, शक्ति, तेजस्विता और ओज उत्पन्न होने लगता है, जिससे व्यक्ति युवक की तरह साहसी और शक्ति सम्पन्न बनता है। शक्ति और कार्यक्षमता का मूल कारण मोटापा या चर्बी नहीं स्नायु-संस्थान की सुव्यवस्था है। विभिन्न मुद्राओं के प्रयोग से शरीर के विकृत तत्त्वों का निष्कासन होने से शारीरिक रोगों का उपशम भी होता है। ध्वनि और मुद्रा पूर्वक किया गया आह्वान दिव्य शक्तियों के साथ सम्पर्क स्थापित करने का माध्यम भी बनता है। प्रेक्षाध्यान में भी मुद्राओं का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनसे शक्ति और स्वास्थ्य को सुरक्षित रखा जा सकता है। कहा भी गया है–''नास्ति मुद्रा समं किंचित् संसिद्धये-क्षितिमंडले''। इस पृथ्वीमण्डल पर मुद्राओं के समान सिद्धि दिलाने वाला और कुछ भी नहीं है।

इस सारे विश्लेषण के पश्चात् निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि मुद्राएं व्यक्तित्व एवं स्वभाव परिवर्तन में अपना मूल्यवान सहयोग प्रदान कर सकती है। मुद्राओं से शरीर के तत्त्वों का संतुलन बना रहता है। मुद्रा और भाव एक-दूसरे की अभिव्यक्ति के पूरक हैं। मुद्राओं से भाव, भावों से ग्रंथितंत्र के स्राव, ग्रंथि तंत्र के स्रावों से मनुष्य के आवेग और संवेग उत्तेजित होते हैं। आवेग और संवेग पुन:-पुन: प्रकट होने से मनुष्य का वैसा स्वभाव बन जाता है। अत: स्वभाव को बदलने के लिए सम्यक् मुद्रा का सम्यक् प्रयोग आवश्यक है। इस प्रकार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वास्थ्य और साधना दोनों ही दृष्टियों से इनकी उपयोगिता को इन्कार नहीं किया जा सकता। शिव संहिता तथा घेरण्ड संहिता में 32 आसन, पन्द्रह मुद्राएं तथा पाँच बंधों का उल्लेख है, परन्तु मैंने जप एवं ध्यान के लिए उपयोगी आसन तथा मुद्राओं का चुंबक रूप में विवेचन किया है तथा नमस्कार मुद्रा का उल्लेख किया है। घेरण्ड संहिता के अनुसार पूर्ण योगाभ्यास के सात प्रकार हैं—

शोधनं दृढ़ता चैव स्थैर्यं धैर्यं च लाघवम्।
प्रत्यक्षंच निर्लिप्तं घटस्थं सप्त साधनम्॥

1. षट् कर्म से शोधन होता है।
2. आसनों से शरीर में दृढ़ता आती है।
3. मुद्राओं के अभ्यास से स्थिरता होती है।
4. प्रत्याहार से धैर्य का विकास होता है।
5. प्राणायाम से शरीर में हल्कापन आता है।
6. ध्यान से आत्मा प्रत्यक्ष होता है।
7. समाधि से मोक्ष-लाभ होता है।

अत: निर्विवाद कहा जा सकता है कि 'मुद्रा' का अपना विज्ञान है। इनकी वैज्ञानिक उपयोगिता असंदिग्ध है। मंत्र-जप में इन मुद्राओं को मंत्र की सफलता और लक्ष्य प्राप्ति का सेतु कहा जा सकता है। योग साधक आचार्यश्री तुलसी के शब्दों में—

योगासन है स्वास्थ्य सुरक्षा, अति उत्तम तप है स्वाध्याय।
ध्यान धर्म का शीर्ष सम्मुन्नत, कायोत्सर्ग जप शुभ आय॥

अविचल मन करणीय है, निर्धारित ध्रुव योग।
खड़े-खड़े आधी घड़ी, हो स्वाध्याय प्रयोग॥

सन्दर्भ—

1. योग की प्रथम किरण, पृ. 56
2. वही, पृ. 56
3. वही, पृ. 56
4. साधना प्रयोग और परिणाम, पृ. 3
5. वही, पृ. 3

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6 घेरण्ड संहिता

7. जैन धर्म अर्हत्-अर्हताएं, पृ. 172

8. आमंत्रण आरोग्य, पृ. 131

9. वही, पृ. 131

10. वही, पृ. 131

11. किसने कहा मन चंचल है, पृ. 61

12. घेरण्ड संहिता

13. हस्तमुद्रा प्रयोग और परिणाम, पृ. 63

14. प्रेक्षाध्यान, वर्ष-26, अंक-8, अगस्त 2005, पृ. 22, 23, 24
अणुव्रत, 16-28 फरवरी, 2003, पृ. 12

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

18. महामंत्र का दार्शनिक स्वरूप

दर्शन सत्य को परखने की कसौटी है। विश्व के दर्शनों में जैनदर्शन एक पूर्ण दर्शन है। यह सभी दर्शनों में विलक्षण है क्योंकि इसकी कुछ अपनी मौलिक अवधारणाएं हैं। वैसे सभी धर्मों एवं दर्शनों में कतिपय विलक्षणताएं होती हैं पर जैनदर्शन कुछ ऐसी अतिरिक्त विलक्षणताएं अपने भीतर समेटे हुए हैं, जो अन्यत्र दुर्लभ हैं। आचार्यश्री तुलसी द्वारा विरचित निम्नोक्त पद्य से जैन-दर्शन के सन्दर्भ में पर्याप्त जानकारी मिल सकती है–

आदर्शोऽत्र जिनेन्द्र आप्तपुरुषः रत्नत्रयाराधना।
स्याद्वादः समयः समन्वयमयः सृष्टिर्मता शाश्वती।
कर्तृत्वं सुखदुःखयोः स्वनिहितं ध्रौव्यं व्ययोत्पत्तिमत्।
एका मानव जातिरित्युपगमोऽसौ जैन धर्मो महान्॥

जैन धर्म महान् है। उसमें आदर्श है–आप्तपुरुष। उसका साधना पथ है–रत्नत्रयी की आराधना। सिद्धान्त है–समन्वय प्रधान अनेकान्तवाद। इसकी अन्य दार्शनिक मान्यताएं हैं–सृष्टि शाश्वत है, सुख और दुःख का कर्त्ता व्यक्ति स्वयं है, प्रत्येक पदार्थ उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य युक्त है तथा मनुष्य जाति एक है।

जैन धर्म के मुख्य सिद्धान्त

- आत्मा है।
- उसका पूर्वजन्म और पुनर्जन्म है
- वह कर्म का कर्त्ता है।
- कृत कर्म का भोक्ता है।
- बंधन है और उसके हेतु हैं।
- मोक्ष है और उसके हेतु हैं।

भगवान् महावीर के अन्तेवासी शिष्य गणधर गौतम ने भगवान से पूछा–भंते! किं तत्तं। प्रत्युत्तर में भगवान ने कहा–उपन्नेइ वा, विगमेइ वा, धुवेइ वा। उत्पन्न होते हैं, नष्ट होते हैं और स्थिर भी रहते हैं। तात्पर्य यह हुआ द्रव्य रूप से सारे पदार्थ स्थिर हैं। अवस्था रूप से पैदा होते हैं और नष्ट होते हैं। जिस प्रकार सुनार सोने के कड़े को भांजकर कंठी का निर्माण करता है। इससे कड़े का नाश

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

होता है, कंठी का निर्माण होता है और सोना अपने रूप में स्थिर रहता है। उत्पाद, व्यय और ध्रौव्य यह जैन दर्शन की त्रिपदी है। जैसे विष्णु ने वामनावतार में तीन चरणों में समग्र ब्रह्माण्ड को माप लिया, वैसे ही अमाप्य मेधा के धनी इन्द्रभूति गौतम ने उपरोक्त तीन प्रश्नों के माध्यम से सम्पूर्ण श्रुत-ज्ञान (अर्हत्-दर्शन) को आत्मसात् कर लिया। इसी त्रिपदी के आधार पर उन्होंने द्वादशांगी की रचना की।

अर्हतों की इस त्रिपदी के आधार पर गणधरों को गणधर लब्धि की प्राप्ति होती है, जिससे वे अन्तर्मुहूर्त में चौदह पूर्वों की विशाल ज्ञान-राशि को ग्रहण कर उसे दोहराने की अद्भुत क्षमता को प्राप्त कर लेते हैं। दसवें विद्यानुवाद पूर्व में विद्या एवं मंत्र-साधना आदि की अनेक शाखाओं की चर्चा थी। किन्तु वह वर्तमान में उपलब्ध नहीं है, उसमें गणधर विद्या भी एक शक्तिशाली विद्या थी। हजारों वर्षों के अन्तराल में अनेक महत्त्वपूर्ण विद्याएं समाप्त हो गई हैं। यही कारण है आज भारत आधुनिक ज्ञान-विज्ञान की दृष्टि से परांगमुख बन गया है, चाहे कम्प्यूटर हो, चाहे रोबोट हो, चाहे भौतिक विज्ञान के सूक्ष्म रहस्यों को जानना हो, भारतीय विद्यार्थी विदेशों में जाते हैं, अध्ययन करते हैं। हमारे यहां प्राच्य विद्याएं लुप्त हो गईं। मुख्यत: तीन प्रकार की विद्याएं थीं–1. गणधर विद्या, 2. पूर्व विद्या, 3. वर्धमान विद्या।

वर्तमान में प्रथम दो विद्याएं सर्वथा लुप्त हैं। तीसरी वर्धमान विद्या का अल्पांश ही विद्यमान है। उसमें अपनी आन्तरिक शक्तियों को जगाने के उपाय बतलाये गये हैं। वैज्ञानिक जो काम ट्रांसमीटर से लेते हैं, योगी वही कार्य ट्रांस (साक्षात्कार) में जाकर लेते हैं।

नमस्कार महामंत्र को चौदह पूर्वों का सार माना है। चौदह पूर्वों के सार का तात्पर्य है–विश्व की सम्पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान राशि जिसमें संग्रहित है, वह ज्ञान कोष। व्याकरण शास्त्र की दृष्टि से भी इस रहस्य को समझा जा सकता है। संस्कृत व्याकरण में संक्षीप्तिकरण का एक सूत्र है–'आद्यन्ताभ्यां प्रत्याहारे' प्रत्याहार में आदि और अन्त का संकेत करने पर मध्य के सभी अक्षरों का ग्रहण हो जाता है। जैसे 'अल' कहने पर 'अ' से लेकर 'ल' तक समस्त स्वर और व्यंजन संग्रहित हो जाते हैं। वर्गीय सूत्र के द्वारा 'क' वर्ग कहने पर क, ख, ग, घ ड़ पाँचों वर्णों का ग्रहण हो जाता है। नमस्कार महामंत्र में सभी वर्णों के अक्षरों की संघटना है। लब्धि सम्पन्न साधक एक अक्षर के द्वारा ही समस्त शास्त्र का बोध प्राप्त कर लेते हैं। मंत्र के द्वारा यह लब्धि अशक्य नहीं है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र का अपना दर्शन है, विज्ञान है, सिद्धान्त है और विशिष्ट स्वरूप है। इस महामंत्र में जैन-दर्शन के गूढ़ तत्त्व—आत्मवाद, कर्मवाद, मोक्षवाद, स्याद्वाद, अपरिग्रहवाद आदि अनेकों तत्त्वों का समावेश है। इसका दार्शनिक और सैद्धान्तिक पक्ष इतना विराट है, जिसकी थाह पाना छद्मस्थ व्यक्ति की कल्पना से परे है। फिर भी इसके कुछ सैद्धान्तिक पक्षों को उजागर करने से इसकी विराटता का आकलन किया जा सकता है। इस महामंत्र की कुछ अपनी मौलिक विशेषताएं हैं। यही कारण है कि काल के साथ भी इसका महत्त्व घटा नहीं, अपितु आज तक बढ़ता रहा है।

महामंत्र में देव–गुरु–धर्म

इस संसार में प्रत्येक अस्तित्व एक-दूसरे के सहारे पर टिका हुआ है। पृथ्वी का सहारा सूर्य, सूर्य का सहारा ब्रह्माण्ड का केन्द्रीय सूर्य है। असंख्य ब्रह्माण्ड भी अपनी धुरी पर किसी पराशक्ति के सहारे टिके हुए हैं, ऐसा वैज्ञानिक मानते हैं। उनका कहना है यह पृथ्वी सूर्य का सहारा लेकर सात मील प्रति सैकण्ड की गति से एक घंटे में 25,200 मील आगे बढ़ जाती है, फिर भी वह अपनी धुरी पर स्थिर रहती है। इसी कारण जगत् में प्रत्येक वस्तु किसी न किसी के सहारे से गतिशील भी है और स्थिर भी है। प्रत्येक परमाणु घूम रहा है, एटम घूम रहा है पर अपने केन्द्र पर स्थिर भी है। अपने गुरुत्वाकर्षण से बंधा हुआ भी है। एक-दूसरे का अस्तित्व आपस में जुड़ा हुआ है। जैन दर्शन का प्रमुख सिद्धान्त है 'परस्परोपग्रहो जीवानाम्'—सबको एक-दूसरे का आलंबन चाहिए। पिता-पुत्र को सहारा देता है और पुत्र पिता को। वैसे ही पति-पत्नी, भाई-बहिन, माँ-बेटी—ये सब एक-दूसरे से निरपेक्ष नहीं रह सकते। सहयोग का आदान-प्रदान ही संबंधों को सुदृढ़ और सरस बनाये रख सकता है। ये सब सहारे लौकिक हैं, व्यावहारिक हैं, तात्कालिक हैं। आज है कल नहीं भी, पर स्थाई सहारा है—'श्रद्धा'।

श्रद्धा से मनुष्य की कर्मजा शक्ति सहस्रगुणित हो जाती है। साधना के बीज को श्रद्धा के सलिल से सिंचन देने पर सिद्धि के सुगंधित सुमन स्वयं खिल उठते हैं। श्रद्धा धर्म प्रज्ञप्ति का आधारभूत तत्त्व है। विश्व के सभी धर्मों में किसी विशिष्ट शक्ति को श्रद्धा का केन्द्र बिन्दु माना गया है। हिन्दु परम्परा में ब्रह्मा, विष्णु, महेश को, बौद्ध धर्म में अर्हत् या बुद्ध को, जैन धर्म में देव (अर्हत्), गुरु, धर्म को श्रद्धा का केन्द्र माना गया है। आचार्यश्री तुलसी की ये मार्मिक पंक्तियां श्रद्धा का अगाध समुद्र अपने भीतर समेटे हुए हैं—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देव मेरे दिव्य अर्हन् श्रेष्ठ सारे लोक में।
साधना धन साधु मेरे सुगुरु पथ आलोक में॥
धर्म वह जो साधना पथ केवली उपदिष्ट है।
आत्मनिष्ठामय अमल सम्यक्त्व मुझको इष्ट है॥

मोक्ष प्राप्ति का अनन्य उपाय है—धर्म। धार्मिक चेतना के जागरण हेतु धर्म का ज्ञाता, अधिकृत प्रवक्ता, मार्गदर्शक तथा साधना के क्षेत्र में आने वाली बाधाओं का निराकरण करने वाला सुयोग्य प्रशिक्षक चाहिए। इस गुरुत्तर दायित्व के संवाहक होते हैं—धर्मगुरु। सामान्यत: गुरु भी जब तक परिपूर्ण नहीं हो जाते तब तक उन्हें भी किसी ऐसे नियंता की अपेक्षा रहती है, जो आप्त पुरुष हो। जिनकी वाणी के आधार पर धर्मगुरु सफलता पूर्वक अध्यात्म का अलोक लोक-चेतना तक पहुँच सके। ऐसे केन्द्रिय व्यक्तित्व, ज्ञान के महास्रोत अर्हत् ही होते हैं। सम्राट, चक्रवर्ती, ऋषि, महर्षि तथा देव-देवेन्द्रों के भी वे श्रद्धेय और पूज्य होते हैं अत: वे देवाधिदेव सर्वज्ञ होते हैं। वे तप, संयम की उत्कृष्ट साधना कर आर्हत्य लक्ष्मी का वरण करते हैं। आचार्य हेमचन्द्र के शब्दों में—

सर्वज्ञो जितरागादि दोषस्त्रैलोक्य पूजित:।
यथास्थितार्थवादी च देवोऽर्हन् परमेश्वर:॥

नमस्कार महामंत्र के प्रथम पद पर देव, तीसरे, चौथे व पांचवे पद पर गुरु, छठे से नौवें पद पर अहिंसा-संयम-तपोमय धर्म प्रतिष्ठित है। इस प्रकार महामंत्र की आराधना देव, गुरु, धर्म की आराधना है। इनकी आराधना से केवली-भाषित धर्म पर श्रद्धा जागृत होती है और सम्यक्त्व रत्न की उपलब्धि होती है। इससे यह पूर्णतया स्पष्ट हो जाता है कि यह किसी देवी-देवता की आराधना का मंत्र नहीं है। लक्ष्मी की आराधना करने वाले पहले लक्ष्मी को देवी के रूप में सामने रखते हैं, सरस्वती की आराधना करने वाले सरस्वती को देवी के रूप में उपस्थित रखते हैं। देवी-देवताओं की आराधना के साथ कोई न कोई देवी-देवता उपस्थित रहता है लेकिन इस मंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसकी आराधना के वक्त कोई विशिष्ट देवी-देवता उपस्थित नहीं रहता। कुछ आचार्यों का अभिमत है कि इस महामंत्र के प्रत्येक अक्षर पर 1008 विद्या देवियों का निवास है। ये सभी विद्या-देवियां कुल मिलाकर 68544 होती हैं। विशेष बात यह है कि ये सभी विद्या-देवियां सिद्ध की हुई हैं तथा पंच-परमेष्ठी के प्रति समर्पित हैं, इसलिए इस महामंत्र का स्मरण करने से विद्या देवियां साधक को सहायता करती हैं। देवी-देवताओं का उपस्थित होना, इच्छित सेवा कर देना—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

यह इस मंत्र का आनुषंगिक फल है न कि मूल फल। जो व्यक्ति केवल चेतना के जागरण एवं राग-द्वेष की क्षीणता की दृष्टि से इसका जप करता है, उसके सहज रूप से लौकिक काम भी सफल हो जाते हैं। इस मंत्र के साथ जुड़े परमेष्ठी शब्द का व्युत्पत्यार्थ करते हुए कहा गया है—''परमे व्योम्नि चिदाकाशे ब्रह्मपदे वा तिष्ठिति इति परमेष्ठिन:''। लोकाकाश में चिद् आकाश में ब्रह्मपद पर प्रतिष्ठित है, वे परमेष्ठी हैं। इस महामंत्र में स्थित अर्हत् और सिद्ध तो ब्रह्मपद में स्थित हैं ही, आचार्य और उपाध्याय अर्हतों के प्रतिनिधि होते हैं, उनकी अनुपस्थिति में उनका काम आचार्य और उपाध्याय ही करते हैं इसलिए उनको भी परमेष्ठी माना गया है। अब प्रश्न है साधु का। इसका सीधा समाधान यही है कि अर्हत् हो, आचार्य अथवा उपाध्याय हो, ये सब सबसे पहले साधु हैं, बाद में और कुछ। वास्तव में तो साधु भी परमेष्ठी का ही रूप है। भगवद् गीता की टीका में भी इसी तथ्य की पुष्टि होती है—

कान्ता-कंचन-चक्रेषु भ्राम्यते भुवनत्रयम्।
तासु तेषु विरक्तो य: द्वितीय: परमेश्वर:॥

सारा संसार स्त्री और कंचन के चक्र में घूम रहा है। जो व्यक्ति इनसे विरक्त है, वह दूसरा परमेश्वर है।

उपरोक्त विवेचन के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महामंत्र में देव-गुरु-धर्म का निवास है, महामंत्र की आराधना का तात्पर्य है कि देव-गुरु व धर्म की आराधना करना।

महामंत्र में रत्नत्रयी

दुनिया में सर्वोत्कृष्ट वस्तु को रत्न कहा जाता है। पौराणिक युग के देवों और दानवों ने मिलकर समुद्र-मंथन किया। चौदह रत्न निकले, उनसे देवों और दानवों को संतुष्ट किया गया।

अध्यात्म के साधकों ने अर्हत् वाणी के आलोक में आत्म-मंथन किया। उन्हें तीन रत्न मिले। उन तीनों रत्नों के आधार पर प्रकाश, आनंद तथा शक्ति के स्रोतों की खोज की। नीतिकारों ने लोक भाषा में कहा—पृथ्वी पर तीन ही रत्न हैं—अन्न, जल, सुभाषित। भगवान महावीर ने कहा—धर्म के क्षेत्र में तीन रत्न हैं—सम्यक् ज्ञान, सम्यक् दर्शन, सम्यक् चारित्र।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर रत्न को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. लौकिक रत्न,
2. लोकोत्तर रत्न।

लौकिक रत्न बाह्य समृद्धि के सूचक हैं और लोकोत्तर रत्न आन्तरिक समृद्धि के प्रतीक हैं। सम्यक्-ज्ञान, सम्यक्-दर्शन और सम्यक् चारित्र–ये कर्म मुक्ति के सर्वोत्तम उपाय हैं, इसलिए रत्न कहलाते हैं। इनका समन्वित नाम है– रत्नत्रयी। मोक्ष प्राप्ति का पहला सूत्र है–सम्यक् दर्शन, दूसरा सूत्र है–सम्यक् ज्ञान और तीसरा सूत्र है–सम्यक् चारित्र। यह त्रिपदी ही मोक्षपदी है। यह त्रिपदी ही सम्यक्त्व का आधार है। सम्यक्त्व मोक्ष प्राप्ति का अधिकार पत्र है। कहा भी है–''सम्यक्त्वनेन हि युक्तस्य ध्रुवं निर्वाण संगमः''। जो वास्तव में सम्यक्त्व से युक्त है, उसको निश्चय ही मोक्ष की प्राप्ति होती है। जिस प्रकार एक के अंक के बिना शून्य का कोई महत्त्व नहीं, उसी प्रकार सम्यक्त्व के बिना ज्ञान, तप तथा ध्यान की मूल्यवत्ता नहीं बढ़ती।

कुछ व्यक्ति धर्म के प्रति मूढ़ होते हैं, कुछ ध्येय के प्रति तो कुछ आराध्य के प्रति मूढ़ होते हैं। दृष्टि सम्पन्नता (सम्यक्त्व) से सभी प्रकार की मूढ़ताएं समाप्त हो जाती हैं। सम्यक् दृष्टा का ध्येय होता है–आत्म-साक्षात्कार। उसका धर्म होता है–आत्मरमण और उसका आराध्य या भगवान होता है–वीतराग आत्मा। संबोधि में बहुत सुन्दर कहा गया है–

सम्यक् श्रद्धा भवेत्तत्र सम्यक् ज्ञानं प्रजायते।
सम्यक् चारित्र-संप्राप्तेर्योग्यता तत्र जायते॥ [1]

गीता में उद्धृत भक्ति मार्ग ही वास्तव में दर्शन है। रामानुज ने भी इसी भक्ति (दर्शन) को मोक्ष साधन के रूप में स्वीकार किया है। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने इसी तथ्य की पुष्टि करते हुए कहा है–दर्शन यानि आस्था के बिना ज्ञान संभव नहीं है।[3] अतः साधना के क्षेत्र में दर्शन विशुद्धि का बहुत बड़ा स्थान है।

नमस्कार महामंत्र से संपृक्त पवित्र-आत्माओं में प्रथम दो पदों में सम्यक् ज्ञान व सम्यक् दर्शन का उत्कृष्ट बिन्दु–केवलज्ञान व केवलदर्शन समाहित है। वह स्थिति आत्मविकास की तेरहवीं भूमिका में घटित होती है। बारहवें गुणस्थान तक चारित्र की प्रधानता होती है (जो मुनि पद में आ जाता है)। बारहवें गुणस्थान में मोह कर्म सर्वथा क्षीण हो जाता है। क्षीण होते ही चारित्र का उत्कृष्ट बिन्दु आ जाता है। वीतरागता आ जाती है। तेरहवें गुणस्थान में कोई चारित्रिक विशेषता नहीं होती। वहां विशेषता का बिन्दु है–केवलज्ञान, केवलदर्शन, जो ज्ञानावरणीय,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दर्शनावरणीय और अन्तराय—इन तीन कर्मों के क्षीण होने से उपलब्ध होता है। चारित्र मोहनीय कर्म का क्षय निष्पन्न भाव अर्हतों व सिद्धों में होता है किन्तु कर्म बंधन का अभाव होने के कारण क्षायिक चारित्र की उन्हें अपेक्षा नहीं पर मोह-कर्म के क्षायिक भाव निष्पन्न से होने वाले गुण उनमें पाये जाते हैं। इस प्रकार महामंत्र के प्रथम दो पदों में रत्नत्रयी का उत्कृष्ट स्वरूप निहित है। इन दो पदों के स्मरण से रत्नत्रयी की आराधना होती है। ज्ञान की आराधना से अज्ञान क्षीण होता है, दर्शन की आराधना से आस्था का निर्माण होता है। जन्म-मरण की परम्परा का अन्त होता है और मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होता है। चारित्र की आराधना से स्थिरता उपलब्ध होती है। कर्मों का निरोध तथा स्व-नियंत्रण की क्षमता का विकास होता है। इसकी परिपूर्ण आराधना से परमात्म तत्त्व प्रकट होता है।

तीसरा पद णमो आयरियाणं—आचार्य हमें ज्ञान-दर्शन व चारित्र में स्थिर रखते हैं। चौथा पद णमो उवज्झायाणं—उपाध्याय का ज्ञान निर्मल होता है। पांचवां पद णमो लोए सव्व साहूणं—मुनि पद में आचार्य, उपाध्याय, केवली, साधु सबका समावेश है। मुनि पांच महाव्रत, पांच समिति व तीन गुप्ति के आराधक होते हैं। साधना के उत्कर्ष के साथ-साथ ज्ञान-दर्शन और चारित्र की निर्मलता बढ़ती है। यह रत्नत्रयी की आराधना ही आत्मा की आराधना है और यही धर्म है। जितने भी अर्हत्, बुद्ध और परमप्रज्ञा प्राप्त साधक हुए हैं, उन्होंने धर्म चिंतना में किसी न किसी रूप में 'त्रयी' को स्वीकृति दी है। हिन्दू धर्म में इसे ज्ञान योग, भक्ति योग और कर्म योग के रूप में प्रतिष्ठा प्राप्त है। इन्हीं तत्त्वों को इस्लाम धर्म में मारफत, तरीकत और सरीअत कहा गया है। महात्मा बुद्ध इन्हें सम्मदिट्ठि, सम्मासंकप्पो और समावायामो कहते हैं तो पारसी धर्म भी हुमता (पवित्र-विचार), हक्ता (पवित्र-वाणी) और हर्षता (पवित्र-कर्म) पर बल देता है।

यह रत्नत्रयी जितनी पुष्ट-सशक्त होती है, धर्म उतना ही ज्यादा शक्तिशाली बनता है। महामंत्र की आराधना रत्नत्रयी की आराधना है। श्रद्धाबल को बढ़ाने के तीन उपाय हैं— 1. गुरु का पथ दर्शन, 2. मानसिक एकाग्रता, 3. सहनशीलता। महामंत्र नवकार की आराधना से तीनों बिन्दुओं की सिद्धि होती है।

पंच परमेष्ठी में नव तत्त्व

तत्त्व का सामान्य अर्थ है वास्तविक या अस्तित्ववान पदार्थ। रहस्यभूत पदार्थ को भी तत्त्व कहते हैं। चैतन्य का विकास और मोक्ष-मीमांसा के परिप्रेक्ष्य में तत्त्व का अर्थ है—पारमार्थिक वस्तु। चैतन्य जागरण और परम सत्ता की

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उपलब्धि हेतु इन तत्त्वों का सम्यक् बोध अपेक्षित है। जैन दर्शन के अनुसार मुख्य रूप से दो तत्त्व हैं—जीव और अजीव। संसार के दृश्य-अदृश्य, सूक्ष्म-स्थूल, मूर्त्त-अमूर्त्त, जड़-चेतन सभी पदार्थों का समावेश इन दो तत्त्वों में हो जाता है। फिर भी मोक्ष साधना के रहस्य को बतलाने के लिए इन दो तत्त्वों के नौ भेद किये गये हैं, जो नव तत्त्व के नाम से विश्रुत हैं। नव तत्त्व—जीव, अजीव, पुण्य, पाप, आश्रव, संवर, निर्जरा, बंध और मोक्ष।

इन नव तत्त्वों में प्रथम भेद जीव का, अंतिम भेद मोक्ष का है। जीव आत्मा की अशुद्ध अवस्था है, मोक्ष आत्मा की विशुद्ध अवस्था है। मध्यगत भेदों में मोक्ष के साधक बाधक तत्त्वों का निरूपण है। संबोधि में सम्यक्त्व के आधारभूत तत्त्वों का उल्लेख करते हुए कहा है—

अस्त्यात्मा शाश्वतो, बन्धस्तदुपायश्च विद्यते।
अस्ति मोक्षस्तदुपायो, ज्ञेय दृष्टिरसौ भवेत्॥[4]

अर्थात् आत्मा है, वह शाश्वत है, पुनर्भवी है। बंध है और उसका हेतु है। मोक्ष है और उसका उपाय है। यह ज्ञेय दृष्टि है, सम्यक्त्व का आधारभूत तत्त्व है।

नमस्कार महामंत्र में जो देव-गुरु व धर्म का स्वरूप है, वही विश्व का स्वरूप है क्योंकि विश्व का स्वरूप नव-तत्त्वों के अतिरिक्त नहीं है तथा नव पद स्वरूप यह नमस्कार महामंत्र भी नव तत्त्व स्वरूप होने से विश्व स्वरूप से अलग नहीं है। इन नव तत्त्वों को नव पदार्थ या नव सद्भाव पदार्थ भी कहते हैं। इन तत्त्वों को जानने से अहिंसा की सही समझ विकसित होती है। आचार व्यवहार संयत होता है। उसका फलित है—मुक्ति। मुक्ति के आरोहण क्रम को भगवान् महावीर ने निम्न प्रकार से बताया है[5]—

1. जीव अजीव का ज्ञान।
2. जीव की बहुविध गतियों का ज्ञान।
3. पुण्य-पाप, बंध और मोक्ष का ज्ञान।
4. भोग विरक्ति।
5. आन्तरिक और बाह्य संयोगों का त्याग।
6. अनगार वृत्ति।
7. अनुत्तर संवर-योग की प्राप्ति।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

8. अबोध से अर्जित पाप कर्मों का विलय।

9. केवल-ज्ञान, केवल-दर्शन की उपलब्धि।

10. अयोग अवस्था।

11. सिद्धत्व प्राप्ति।

जीव आदि नवतत्त्वों का ज्ञान पंच-परमेष्ठी के ज्ञान से निम्न प्रकार से होता है, इसलिए पंच-परमेष्ठी से विश्व स्वरूप नव तत्त्व अलग नहीं है—

पाप प्रकृति से सर्वथा रहित और पुण्य प्रकृति के प्रकर्ष को प्राप्त अरिहंत भगवान के ज्ञान, ध्यान और स्वरूप चिंतन से पाप व पुण्य—इन दो तत्त्वों का ज्ञान होता है। अजीव के संग से सर्वथा रहित और जीव तत्त्व से पूर्ण श्री सिद्ध भगवान के ज्ञान, ध्यान तथा स्वरूप चिंतन से अजीव और जीव तत्त्व का ज्ञान होता है।

शुद्ध आचरण का पालन करने वाले और कराने वाले आचार्य आश्रव द्वार को रोकने वाले और संवर के भावों को प्राप्त किये हुए होते हैं। अत: उनके ज्ञान, ध्यान तथा स्वरूप चिंतन से आश्रव और संवर तत्त्व का ज्ञान होता है। उपाध्याय ज्ञान, ध्यान में लीन रहते हैं अत: उनके कर्म का बंध कम और निर्जरा ज्यादा होती है। जैन आगमों में एक बेले की तपस्या और सात लव (4 मिनट 27 सैकण्ड) का ध्यान कर्म निर्जरा के लिए बराबर बताया गया है। इस दृष्टि से ध्यान के द्वारा कर्मों की निर्जरा अधिक होती है। अत: उपाध्याय के स्वरूप चिंतन से बंध व निर्जरा तत्त्व का ज्ञान होता है। साधु मोक्ष मार्ग के साधक होने से उनके ध्यान से मोक्ष तत्त्व का ज्ञान होता है।

नमस्कार महामंत्र के दूसरे पद पर स्थित सिद्ध भगवान में नव तत्त्वों में से दो तत्त्व होते हैं—जीव और मोक्ष। शेष चार परमेष्ठी में से अर्हत् परमेष्ठी में नव तत्त्वों में से सात तत्त्व पाप और मोक्ष को छोड़कर और शेष तीन परमेष्ठी में मोक्ष तत्त्व को छोड़कर आठ तत्त्व विद्यमान रहते हैं। इस प्रकार परमेष्ठी मंत्र में नव तत्त्वों का समावेश है।[6]

पंच परमेष्ठी में छ: आवश्यक

गुरु आज्ञा के अनुपालन और मोक्षाभिलाषी भव्य प्राणी के लिए आवश्यक का अनुपालन अनिवार्य है। आवश्यक करणीय सामायिक आदि क्रिया का अनुष्ठान 'आवश्यक' कहलाता है। इन अनुष्ठानों का प्रतिपादक शास्त्र भी आवश्यक

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कहलाता है। साधु और श्रावक के लिए छः आवश्यक करणीय कार्य बतलाये गये हैं।[7]

छः आवश्यक के नाम–

1. सामायिक,	2. चतुर्विंशति स्तव,	3. वंदना,
4. प्रतिक्रमण,	5. कायोत्सर्ग,	6. प्रत्याख्यान।

इन छः आवश्यकों का क्रम भी मनोवैज्ञानिकता से परिपूर्ण है, जिसको निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

सर्वप्रथम सामायिक आवश्यक समता योग की साधना है। नमस्कार महामंत्र के णमो पद से हम सामायिक आवश्यक की तुलना कर सकते हैं। णमो का अर्थ है–नमन, समर्पण और सामायिक का अर्थ है–आत्मा में रमण, समता में रमण, यह बिना समर्पण के नहीं हो सकता। इस साधना से पापकारी प्रवृत्तियों का निरोध होता है। मन में समता व सहजता आने से साधक का चित्त एक विषय पर केन्द्रित होने लगता है। लेकिन यह दशा प्रारंभिक अवस्था की होती है अतः उसे किसी आलंबन की अपेक्षा रहती है। जैसे बच्चे को अंगुली का सहारा, डूबते को तिनके का सहारा, बूढ़े को लकड़ी का सहारा वैसे ही सामायिक आवश्यक के पश्चात् भक्ति योग का आलंबन अपेक्षित है। दूसरे चतुर्विंशति आवश्यक में अरिहंत, सिद्ध आत्माओं का स्मरण, वंदन व गुणोत्कीर्तन है, जिनका स्मरण अध्यात्म विकास तथा दर्शन विशुद्धि का श्रेष्ठ मार्ग है। इस दूसरे 'चतुर्विंशतिस्तव' का समावेश नमस्कार महामंत्र के प्रथम व द्वितीय पद में हो जाता है। देव (अर्हन्) वंदन के बाद तीसरे आवश्यक में गुरु वंदन करके साधक अपने उपकारी धर्मोपदेशक गुरुजनों के प्रति कृतज्ञता और विनय प्रदर्शित कर चित्त को प्रफुल्लित बनाता है। इस तीसरे 'वंदन आवश्यक' का समावेश नमस्कार महामंत्र के तीसरे, चौथे व पांचवे पद में हो जाता है।

समता, श्रद्धा, गुरुवंदन रूप त्रिवेणी की आराधना की फलश्रुति मानसिक सरलता के रूप में अभिव्यक्त होती है। सरल हृदयी अपने दोषों का परिमार्जन व निरीक्षण आसानी से कर सकता है। अतः प्रतिक्रमण का चतुर्थ आवश्यक क्रम भी संगत है। इस चौथे प्रतिक्रमण आवश्यक का समावेश महामंत्र की चूलिका के प्रथम पदों में हो जाता है क्योंकि यह महामंत्र सब पापों का नाश करने वाला है और संक्षेप में प्रतिक्रमण का तात्पर्य निम्नांकित बिन्दुओं से समझा जा सकता है–

1. प्रमादवश पर-स्थान (असंयम) में चले जाने पर पुनः स्व-स्थान (संयम) में आना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

2. औदयिक भाव से क्षयोपशम भाव में लौटना।

3. नि:शल्य हो अशुभयोग से शुभ योग में प्रवृत्त होना।

मन शांत होने के पश्चात् ध्यान की प्रक्रियाएं प्रारंभ होती हैं। इस अपेक्षा से प्रतिक्रमण के पश्चात् पांचवा 'कायोत्सर्ग-आवश्यक' है। देह के प्रति आसक्ति, ममत्व भावना आदि को छोड़ देना कायोत्सर्ग है। इस पांचवें आवश्यक का समावेश 'मंगलाणं च सव्वेसिं' पद में हो जाता है, क्योंकि देह के प्रति ममत्व का विसर्जन ही मैत्री, प्रमोद, कारुण्य और मध्यस्थ भाव को विकसित करता है। इन प्रशस्त भावों से सर्वत्र मंगल ही मंगल होता है। प्रतिक्रमण तथा कायोत्सर्ग से अन्त:करण की शुद्धि के पश्चात् नये पाप कर्मों का बंधन न हो इस हेतु प्रत्याख्यान की उपयोगिता को मध्य नजर रखते हुए छठा—'प्रत्याख्यान आवश्यक' रखा गया है। त्याग को समस्त सुखों का जनक माना गया है। इसका वास्तविक अर्थ आन्तरिक दोष-दुर्गुणों, वासना, तृष्णा, लोभ, मोह, अहंकार आदि से छुटकारा पाने से है। इस छठे 'प्रत्याख्यान आवश्यक' का समावेश 'पढमं हवइ मंगलं' में हो जाता है, क्योंकि भगवान महावीर ने किसी सम्प्रदाय को धर्म नहीं कहा। उनकी आत्मा की अनुभूति के स्वर थे—अहिंसा, संयम, तपोमय धर्म ही उत्कृष्ट मंगल है।

जिस प्रकार मकान साफ करने के पश्चात् पुन: उसमें मिट्टी न आ जाए इसलिए दरवाजे बंद किये जाते हैं। वास्तव में प्रत्याख्यान, आश्रव द्वार बंद करने की प्रक्रिया है। कामना को कम अथवा समाप्त करने की साधना है। नमस्कार महामंत्र भी कामनाओं को पैदा नहीं समाप्त करने का मंत्र है। इस प्रकार छ: आवश्यक की परिसमाप्ति पर दो बार णमोत्थुणं (शक्र-स्तुति) में प्रथम बार सिद्ध भगवान को तथा दूसरी बार अर्हत् भगवान को नमस्कार किया जाता है। सिद्ध व अर्हत् को नमस्कार करता हुआ साधक वीतराग स्वरूप को प्राप्त करने की योग्यता को विकसित करता हुआ एक दिन उसे प्राप्त करने में सफल हो जाता है। यही तथ्य आचार्य हेमचन्द्र की वाणी से इस रूप में मुखर हुआ—''वीतरागो भवेज्जीव: वीतरागं विचिन्त्यन्'' । इस प्रकार छ: आवश्यक में समता से सिद्धि तक की साधना क्रमश: अन्तर्निहित है और छ: आवश्यक महामंत्र में अन्तर्निहित है। अत: महामंत्र की आराधना का मतलब है छ: आवश्यक की आराधना।

निष्कर्ष

सर्व श्रुतान्तर्गत नमस्कार महामंत्र में चौदह पूर्वों की विशाल ज्ञान राशि का महासमन्दर समाया हुआ है। विश्व की सारी शाब्दिक विशिष्टता, ज्ञानराशि,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चौदह पूर्वों में समा जाती है। इस दृष्टि से यह महामंत्र विश्व के समस्त मंत्रों में अग्रणी स्थान प्राप्त करता है। इसकी शक्ति अतुल है क्योंकि लोकोत्तर महापुरुष ही इसके योजक हैं। अर्थ से तीर्थंकर और सूत्र से गणधर इसके योजक हैं।

चतुरंग सेना में जिस प्रकार सेनानी मुख्य है, वैसे ही दर्शन, ज्ञान, चारित्र, तप रूपी चतुरंग आराधना में नमस्कार महामंत्र मुख्य है। अथवा नमस्कार रूपी सारथी से चलित ज्ञान रूपी अश्व से संयुक्त, तप नियम तथा संयम रूपी रथ जीव को मुक्ति नगरी तक पहुँचाने में समर्थ हो सकता है, यह शास्त्रकारों का सिद्धान्त है। अत: श्री जिनशासन में नमस्कार महामंत्र को विशिष्ट स्थान प्रदान किया गया है। 'नव लाख जपता नरक निवारे' इत्यादि अनेक सुभाषित नवकार की श्रेष्ठता को सिद्ध करने हेतु प्रामाण्य हैं।

जब घर में आग लगती है, तब गृहस्वामी शेष वस्तुओं को छोड़कर समर्थ महारत्न को ही ग्रहण करता है। रण संकट में आपत्ति निवारण हेतु समर्थ सैनिक भी शेष शस्त्रों को छोड़कर एक अमोघ अस्त्र को ही ग्रहण करता है, वैसे ही अन्त समय में महारत्न के समान अथवा कष्ट समय में अमोघ अस्त्र के समान नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया जाता है। श्रुत सम्पन्न व्यक्ति अत्यन्त समर्थ होने पर भी तात्कालिक मृत्यु, भय आदि की स्थिति में सम्पूर्ण द्वादशांग के श्रुत-स्कन्धों का अनुचिंतन नहीं कर सकता। अत: उस आपदा की स्थिति में नमस्कार महामंत्र का स्मरण करता है। इस मंत्र के द्वारा समस्त उत्तम आराधना पकड़ में आ जाती है। जैसे सम्पूर्ण द्वादशांग परिणाम विशुद्धि का हेतु है, वैसे ही अर्हत् नमस्कार, परमेष्ठी नमस्कार परिणाम विशुद्धि का हेतु है। महामंत्र के द्वारा पुन: भाव नमस्कार करने वाला साधक दर्शन विशुद्धि को विशुद्ध करता हुआ अर्हत् सिद्ध स्वरूप में प्रतिष्ठित हो जाता है।

सन्दर्भ–

1. संबोधि, 14/8
2. मनुस्मृति, 6/74
3. जीवन की पोथी, पृ. 4
4. संबोधि, 12/4
5. दसवैकालिक, अध्ययन-4, 14-25
6. णमोक्कार अनुप्पेहा
7. प्रतिक्रमण

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

19. तप और नमस्कार महामंत्र

भारतीय साधना पद्धति में तप का बहुत बड़ा महत्त्व माना गया है। जैसे सूर्य और अग्नि का ताप मलों की शुद्धि करता है, वैसे ही हमारी जैविक विद्युत का ताप भी मलों का शोधन करता है। योगों की (मन, वचन, काया की) निर्मलता सहिष्णुता और स्थिरता एक बहुत बड़ा ताप है, जिससे चेतना पर जमा हुआ मल पिघल-पिघल कर बह जाता है। जिस प्रकार इक्षु के पोर-पोर में माधुर्य रस, तिल के कण-कण में तेल, पुष्प की कली-कली में सौरभ व्यापत है, उसी प्रकार जैन दर्शन के प्रत्येक चिंतन में तप का महत्त्व है। भगवान महावीर ने तप को व्यापक सन्दर्भ दिया। उनके अनुसार केवल नहीं खाना ही तपस्या नहीं है, कायोत्सर्ग भी तपस्या है, ध्यान भी तपस्या है, स्वाध्याय (जप) भी तपस्या है। अन्त:करण का शोधन तथा इन्द्रिय-संयम (प्रतिसंलीनता) भी तपस्या है।

दो अक्षर का एक छोटा-सा शब्द 'तप- जिसकी शब्द संरचना जितनी लघु है, उसका कार्य उतना ही महान है। अणु से भी कई गुणा शक्ति तप में है। अणु शक्ति का दुरुपयोग करने वाला संहार भी कर सकता है। लाखों व्यक्तियों को प्राण रहित कर सकता है। यही बात तप के दुरुपयोग के सन्दर्भ में भी है। तप से प्राप्त शक्ति के द्वारा एक स्थान पर बैठा मानव $16^1/_2$ जनपदों को भस्म कर सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि तप में अणु से भी कई गुणा शक्ति है। शक्ति अपने आप में शक्ति है। उसका दुरुपयोग करना शक्ति का दोष नहीं व्यक्ति की उच्छृंखलता है। मूलत: आत्मशुद्धि की भावना से किया जाने वाला तप ही सच्चा तप है। वही तप अनंत ज्ञान, अनंत शक्ति, आत्म स्वरूप और परमात्म पद की प्राप्ति करने में समर्थ है।

जैन धर्म में तप के बारह प्रकार हैं। प्रथम छ: प्रकारों को बाह्य तप और अंतिम छ: प्रकारों को आभ्यन्तर तप कहा गया है। प्रथम चार प्रकार आहार से संबंधित हैं। शेष आठ प्रकारों में साधना की अनन्य विधियां हैं। कष्ट-सहिष्णुता, पंचेन्द्रिय-संयम, वासना-विजय, अहं-विसर्जन, क्रोध-जय, प्रायश्चित्त, सरलता, नम्रता, विनय, सेवा, स्वाध्याय (जप), ममत्व-त्याग आदि की साधना तप की परिधि में है।

तप : परिभाषा एवं वैज्ञानिकता

शब्द रचना की दृष्टि से 'तप' शब्द तप् धातु से बना है, जिसका अर्थ है– तपना।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्य अभयदेव सूरि ने 'तप' शब्द का निरुक्त निम्न प्रकार से किया है– ''रस-रुधिर-मांस-मेदास्थि-मज्जा-शुक्राण्यनेन तप्यन्ते कर्माणि वाऽशुभानीत्यतपस्तपो नाम निरुक्तः।'' अर्थात् जिस साधना के द्वारा रस, रुधिर, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र तप जाते हैं, सूख जाते हैं अथवा अशुभ कर्म नष्ट हो जाते हैं, जल जाते हैं, उसे तप कहते हैं।

प्रसिद्ध टीकाकार आचार्य मलयगिरी के अनुसार–'तापयति अष्टप्रकारं कर्म इति तपः' जो आठ प्रकार के कर्मों को तपाता है, वह तप है।

भगवती सूत्र में कर्मों को सूखे घास की उपमा दी गई है। जैसे सूखे घास को अग्नि क्षण भर में जला डालती है, वैसे ही तप रूपी अग्नि कर्मों को भस्म कर डालती है।

चूर्णिकार जिनदास गणी महत्तर ने भी यही परिभाषा देते हुए लिखा है– 'तवोणाम तावयति अट्ठविहं कम्मगंठि नासेतिति वुतं भवइ'। जो आठ प्रकार की कर्मग्रंथियों को तपाता है, नाश करता है वह तप है।

उपरोक्त परिभाषाओं के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि तप संजीवनी बूंटी है। तप से कर्म निर्जरा के साथ-साथ शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और भावनात्मक स्वास्थ्य को भी बल मिलता है। हम जिस युग में जी रहे हैं, वह वैज्ञानिक युग है अतः तप को वैज्ञानिक परिप्रेक्ष्य में समझना नितान्त अपेक्षित है। तप से शरीर में स्वस्थता आती है, इसका वैज्ञानिक क्रम निम्न प्रकार से है–

शरीर का भीतरी यंत्र रबर की लचीली नलियों के समान है। अधिक खाने से वे फैल जाती हैं, जिससे रक्त की स्वाभाविक क्रिया में व्याघात पड़ता है। उपवास में भोजन का ग्रहण नहीं होने से नलियां सिकुड़कर अपनी दशा में आने लगती हैं, रक्त से व्यर्थ पानी निकल जाता है अतः वह गाढ़ा बन जाता है। यह क्रिया उपवास के कई दिनों तक चलती है। लम्बे उपवास करने वालों को शरीर में हल्कापन अनुभव होने लगता है। परन्तु शीघ्र ही नलिकाओं की दीवार से पुराना श्लेष्म निकलकर रक्त में मिल जाता है, जिससे रक्त अधिक गाढ़ा हो जाता है। जब गाढ़ा रक्त संकुचित नलियों में से प्रवाहित होता है तो एक बार व्यक्ति को बेचैनी का अनुभव होता है पर यह जब शीघ्र ही मुत्राशय के मार्ग से बाहर निकल जाता है, तब बेचैनी मिट जाती है। इसलिए पांचवे, छठे उपवासी की अपेक्षा बीसवें-इक्कीसवें दिन का उपवासी अपने आप में अधिक शक्ति का अनुभव करता है। इस प्रकार शरीर के दूषित कोष विभिन्न प्रकार के पदार्थों में विभक्त होकर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मल-मूत्र, त्वचा या श्वास-प्रश्वास मार्ग से बाहर निकल जाते हैं। यही कारण है कि तपस्या में फोड़ा या गांठ आदि बड़ी तीव्र गति से ठीक होने लगते हैं।

भारतीय धार्मिक प्रथाओं में भी व्रत को बहुत महत्त्व दिया गया है। विभिन्न जातियों के लोग अपने विशेष पर्वों पर व्रत अथवा उपवास करते हैं। व्रत उपवासों को इतना महत्त्व देने का दृष्टिकोण केवल धर्म या पुण्य के साथ ही नहीं जुड़ा है अपितु शारीरिक और मानसिक विकास के लिए भी अत्यन्त प्रभावशाली है।

नमस्कार महामंत्र और उपवास

व्रत (तप) में मंत्र से कई गुणा ज्यादा शक्ति है। परन्तु जब तप व जप दोनों का मणि कांचन योग मिल जाता है तो कर्मों की विशेष निर्जरा और शीघ्र कार्य-सफलता हस्तगत होने लगती है। जैन ग्रंथों में मंत्र-जप के फल की तुलना उपवास के साथ निम्न प्रकार से उपलब्ध है–

भगवान महावीर से गणधर गौतम ने पूछा–भंते! एक उपवास से जीव कितने कर्मों को क्षीण करता है? प्रत्युत्तर में भगवान ने कहा–गौतम! एक नैरयिक जीव एक हजार वर्ष तक जितने कर्मों को क्षीण नहीं कर सकता, उतने कर्म एक उपवास से क्षीण कर लेता है।

सब व्यक्ति उपवास करने में समर्थ नहीं होते अत: नमस्कार महामंत्र से नि:सृत विविध मंत्रों की निर्धारित संख्या में माला जपकर उपवास के फल को प्राप्त किया जा सकता है।

1. अरहंत–इस मंत्र की चार माला जपने से एक उपवास का लाभ होता है।[1]
2. अरिहंत-सिद्ध–इस मंत्र की तीन माला जपने से एक उपवास का लाभ होता है।[2]
3. अरिहंत-सिद्ध–आइरिय-उवज्झाय-साहू–इस मंत्र की दो माला जपने से एक उपवास का लाभ होता है।[3]
4. अर्हत् सिद्धाचार्योपाध्याय सर्व साधुभ्यो नम:–इस मंत्र की दो माला जपने से एक उपवास का लाभ होता है।[4]
5. 'अ' वर्ण की पांच माला जपने वाले को एक उपवास का लाभ होता है। अर्हं (ऽर्हं) का अवग्रह 'अ' रूप है। इसका नाभि पर ध्यान करना चाहिए।[5]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

6. नमस्कार महामंत्र की एक अनुपूर्वी जपने से छः मास की तपस्या का लाभ होता है।
7. ॐ अर्हं अ सि आ उ सा णमो अरहंताणं नमः–इस मंत्र की हृदय कमल में एक माला जपने से एक उपवास का लाभ होता है।
8. ॐ नमो ॐ अर्हं अ सि आ उ सा णमो अरहंताणं नमः–इस मंत्र को हृदय कमल में एक सौ आठ बार जपने से एक उपवास का लाभ होता है। इस मंत्र से पानी को मंत्रित कर अग्नि या दावानल के आगे उस पानी की रेखा खींचने से दाह शांति।[8]
9. नमस्कार महामंत्र की नव पदानुपूर्वी जपने से छः मास की तपस्या का फल तथा जघन्य 66 सागर, उत्कृष्ट पांच सौ सागरोपम के नरक गति का आयुष्य क्षय होता है।

भारतीय संस्कृति में तप–जप के उद्देश्य

जैन दर्शन में तप और जप का अनुष्ठान विशेष रूप से होता ही है पर भारतीय संस्कृति में भी तप व जप का विशिष्ट स्थान रहा है। अनेक उद्देश्यों से भारतीय संस्कृति में तप व जप करने की परम्परा प्रचलित है, यथा–

1. देव को अधीन (वश में) करने के लिए, जिससे अभिष्ट कार्य में सिद्धि मिल सके।
2. पुत्र, धन, ऐश्वर्य आदि भौतिक उपलब्धियों के लिए।
3. सुयोग्य वर प्राप्ति के लिए।
4. दीर्घकालिक सुहाग के लिए।
5. हर कठिन कार्य की सिद्धि के लिए, जिससे दुःसाध्य कार्य भी सुसाध्य बन जाता है।
6. चक्रवर्ती के तेरह तेले जैन परम्परा में प्रसिद्ध हैं। वे कार्य सिद्धि के लिए समय-समय पर तप व मंत्र की आराधना करते हैं।
7. वासुदेव-बलदेव को भी जब विशेष सहयोग की अपेक्षा हो तो वे देवोपासना कर उनके सहयोग से कार्य सिद्ध करते हैं, जैसे–श्रीकृष्ण वासुदेव ने अमरकंका नगरी से द्रोपदी को लाने जाते वक्त गंगानदी को सुस्थित देव की आराधना से पार किया था।
8. महान पुरुषों की स्मृति में या अपने प्रिय व्यक्ति की स्मृति में उस दिन तप व जप किया जाता है, जिस दिन उन्होंने शरीर त्याग किया था।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

9. प्रत्येक शुभ कार्य में तप व मंत्र जप का बल साथ रहने से कार्य की निर्विघ्नता बनी रहती है।

जैन आगमिक दृष्टि से केवल निर्जरा के लिए तप जप करने का विधान है। आत्मशुद्धि के लक्ष्य से किये गये तप जप से प्रासंगिक फल के रूप में ऋद्धियां-सिद्धियां सहज ही अपना प्रभुत्व व वर्चस्व स्थापित कर लेती है। भगवान् महावीर ने तप का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए कहा है–

1. नो इहलोगट्ठयाए तवमहिट्ठेज्जा।
2. नो परलोगट्ठयाए तवमहिट्ठेज्जा।
3. नो कित्तिवण्णसद्दसिलोगट्ठयाए तवमहिट्ठेज्जा।
4. नन्नत्थ निज्जरट्ठयाए तवमहिट्ठेज्जा।

अर्थात् इहलोक (वर्तमान जीवन की भोगाभिलाषा) के निमित्त तप नहीं करना चाहिए। परलोक (पारलौकिक भोगाभिलाषा) के निमित्त तप नहीं करना चाहिए। कीर्ति, वर्ण, शब्द (लोक प्रसिद्धि), श्लोक (ख्याति) के लिए तप नहीं करना चाहिए। निर्जरा के अतिरिक्त अन्य किसी भी उद्देश्य से तप नहीं करना चाहिए। सभी तीर्थंकरों ने कठोर तपस्याएं की। उनके शासन में साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविकाएं भी कर्म निर्जरा हेतु विविध तपस्याएं करते हैं। इतिहास साक्षी है भरत चक्रवर्ती ने अपने पूर्व भव में 66 लाख मासखमण किये तो श्रीकृष्ण वासुदेव ने अपने पूर्व भव में 99 लाख मासखमण किये। भगवान ऋषभ ने एक वर्ष का कठोर तप तपा तो भगवान महावीर ने छद्मस्थ अवस्था के 12 वर्ष व एक पक्ष की अवधि में सिर्फ 350 दिन ही भोजन किया।

जैन आगमों का वाचन करने वाले मुनि अध्ययन (स्वाध्याय) के साथ-साथ उपधान (तप) करते हैं। नमस्कार महामंत्र का जप व स्मरण कर आगम वाचन प्रारंभ करते हैं, जिसका उद्देश्य है आगम ज्ञान का सम्यक् ग्रहण और आगम वाचन में निर्विघ्नता। प्रत्येक आगम के लिए अलग-अलग तप उपधान निश्चित है।

प्राचीन काल में चातुर्मास प्रवेश के दिन साध्वियां तप व मंत्र-जप किया करते थे और वर्तमान में भी यह क्रम कुछ अंशों तक चल रहा है। पाप विशुद्धि के प्रायश्चित्त के रूप में भी आचार्य शिष्य को तप व स्वाध्याय का निर्देश देते हैं।

जैन दर्शन में छोटे-से-छोटा तप है–नवकारसी तप। इस तप में सूर्योदय से लेकर एक मुहूर्त (48 मिनट) तक आहार पानी का त्याग किया जाता है। नमस्कार महामंत्र पढ़कर इस तप को पूर्ण किया जाता है, इसलिए इसे नमस्कार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

संहिता भी कहते हैं। इस तप में पानी ग्रहण नहीं किया जाता, इसलिए यह तप चौविहार ही होता है। आवश्यक सूत्र में इस तप को ग्रहण करने का पाठ उपलब्ध है—

उग्गए सूरे नमोक्कारसहियं पचक्खामि चउव्विहं पि आहारं—असणं पाणं खाइमं साइमं अन्नत्थणाभोगेणं सहसागारेणं वोसिरामि।

आध्यात्मिक दृष्टि से इस तप से सौ वर्ष के अशुभ कर्म क्षय होने का लाभ प्राप्त होता है। वैज्ञानिक दृष्टि से सूर्यास्त के बाद भोजन करने से जैसे सूर्य रश्मियों की ऊर्जा उन्हें उपलब्ध नहीं होती, वैसे ही सूर्योदय से पहले या तत्काल बाद भोजन ग्रहण करने से भी पाचन संस्थान प्रभावित होता है क्योंकि सूर्य उदय हो जाने पर भी उसकी किरणों का ताप प्राणी जगत् को उपलब्ध होने में 50-60 मिनट का समय लग ही जाता है। यद्यपि बाल सूर्य की रश्मियों का ध्यान अनुप्रेक्षा आदि प्रयोगों में बहुत महत्त्व का है, परन्तु भोजन पचाने में सहायक तत्त्व कुछ समय बाद ही मिल सकते हैं। आयुर्वेद का भी नियम है कि सूर्योदय के पश्चात् कुछ घंटों तक पेय पदार्थ के अतिरिक्त कुछ नहीं लेना चाहिए। सूर्योदय के पूर्व एवं सूर्यास्त के बाद गरिष्ठ भोजन करने का तात्पर्य है—बीमारियों को निमंत्रण देना। अत: जैन उपासना विधि में नवकारसी तप का महत्त्व आध्यात्मिक, वैज्ञानिक और शारीरिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है।

तप के साथ नमस्कार महामंत्र के जप की अनेक विधियों का उल्लेख गीतार्थ मुनियों द्वारा कथित है। यद्यपि निम्नोक्त विधियां आगमोक्त नहीं है पर लक्ष्य आत्मशुद्धि ही है।

1. कल्याण तप [10] —

प्रत्येक तीर्थंकर के पांच कल्साणक होते हैं—

1. च्यवन (गर्भ में आना), 2. जन्म, 3. दीक्षा
4. केवल-ज्ञान, 5. निर्वाण।

इन सबकी गणना करने पर चौबीस तीर्थंकरों के 120 कल्याणक हो जाते हैं। इन 120 कल्याणकों की तिथियों में इस तप का साधक उपवास करता है या एकासन करता है जो साधक उपवास के द्वारा इन पंच कल्याण तिथियों की आराधना करना चाहता है, वह मार्गशीर्ष शुक्ला दशम और एकादशी का बैला करके प्रारंभ करता है। जो साधक एकासन के द्वारा इन पंच कल्याणकों की आराधना करना चाहता है वह मार्गशीर्ष शुक्ला दशमी को आयम्बिल करता है और एकादशी को उपवास करता है। एक दिन में एक कल्याणक हो तो एकासन करने वाला साधक एकासन करता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

एक दिन दो कल्याणक हो तो नीवी करता है। एक दिन में तीन कल्याणक हो तो आयंबिल करता है। एक दिन में चार कल्याणक हो तो उपवास करता है।

उपवास करने वाले साधक की चर्या इस प्रकार है—

एक दिन में एक कल्याणक हो तो उपवास करता है। एक दिन में दो, तीन कल्याणक हो तो वह उसकी आराधना दूसरे वर्ष में करता है।

जप—

च्यवन कल्याणक के दिन 'परमेष्ठिन: नम:' इस पद की 20 माला का जप करता है।

जन्म कल्याणक के दिन 'अर्हते नम:' इस मंत्र की 20 माला या दो हजार जप करता है।

दीक्षा कल्याणक के दिन 'नाथाय नम:' इस मंत्र का दो हजार जप करता है।

केवल-ज्ञान के दिन 'सर्वज्ञाय नम:' इस मंत्र का दो हजार जप करता है।

निर्वाण कल्याणक के दिन 'पारंगताय नम:' इस पद का दो हजार जप करता है।

नोट—

जिस कल्याणक में जिस तीर्थंकर का च्यवन, जन्म, दीक्षा, केवल-ज्ञान या निर्वाण दिन हो उस दिन उस तीर्थंकर का नाम मंत्र-जप से पूर्व जोड़ देना चाहिए। जैसे आज महावीर स्वामी का निर्वाण कल्याणक दिन है, तो आज साधक 'महावीर पारंगताय नम:' इस पद का दो हजार जप करेगा। पद्म प्रभु के जन्म कलयाणक के दिन 'पद्मप्रभार्हते नम:' पद का जप करेगा।

2. नव पद ओली तप[11]—

अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप—इन नव पदों की आराधना के लिए यह तप किया जाता है। यह तप एक वर्ष में दो बार किया जाता है। चैत्र शुक्ला सप्तमी से प्रारंभ कर चैत्र पूर्णिमा को पूर्ण किया जाता है। दूसरी बार आश्विन शुक्ला सप्तमी से प्रारंभ कर आश्विन पूर्णिमा को पूर्ण किया जाता है। यदि तिथि घटती-बढ़ती हो तो साधक षष्ठी या अष्टमी से प्रारंभ कर पूर्णिमा को पूर्ण कर देता है। इस तप की एक आवृत्ति में नौ दिन का तप होता है और नौ बार आवृत्ति की जाती है, जिसमें इक्यासी आयंबिल किये जाते हैं। एक वर्ष में दो बार की आवृत्ति होने से इस तप को पूर्ण करने में साढ़े चार वर्ष का समय लगता है। नव दिनों की साधना निम्न प्रकार से है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. प्रथम पद अरहंत का है। अरहंतों का रंग सफेद है। इसलिए साधक इस दिन जल के साथ श्वेत रंग के धान्य (चावल) खाकर आयंबिल करता है। 'ॐ ह्रीं णमो अरहंताणं' इस पद की 12 माला का जप करता है। बारह माला अरहंतों के बारह गुणों की प्रतीक है।

2. दूसरा पद सिद्धों का है। सिद्धों का रंग लाल है। इसलिए साधक लाल रंग का धान्य (गेहूँ आदि) खाकर आयंबिल करता है। सिद्धों के आठ गुण हैं इसलिए साधक 'ॐ ह्रीं णमो सिद्धाणं' इस पद की आठ माला पूर्व दिशा की ओर अभिमुख हो जपता है।

3. तीसरा पद आचार्य का है। आचार्य का रंग पीला है। साधक पीले रंग का धान्य (चना) खाकर आयंबिल करता है। आचार्य के गुण छत्तीस हैं। इसलिए साधक 'ॐ ह्रीं णमो आयरियाणं' इस पद की छत्तीस माला दक्षिण दिशा की ओर अभिमुख हो जपता है।

4. चौथा पद उपाध्याय का है। उपाध्याय का रंग हरा है। साधक हरे रंग का धान्य (मूंग) खाकर आयंबिल करता है। उपाध्याय के पच्चीस गुण होते हैं। इसलिए साधक 'ॐ ह्रीं णमो उवज्झायाणं' इस पद की पच्चीस माला पश्चिम दिशा की ओर अभिमुख होकर के जपता है।

5. पांचवां पद साधु का है। साधु का रंग काला है। साधक काले रंग का धान्य (उड़द) खाकर आयंबिल करता है। साधु के गुण सत्ताइस होते हैं। इसलिए 'ॐ ह्रीं णमो लोए सव्व साहूणं' इस पद की सत्ताइस माला का जप उत्तर दिशा की ओर अभिमुख हो जपता है।

6-9. अन्तिम चार पद क्रमश: ज्ञान-दर्शन-तप के हैं। साधक श्वेत रंग के धान्य (चावल आदि) खाकर आयंबिल चारों दिन करता है। चारों दिनों में जप का क्रम अलग-अलग रहता है।

6. 'ॐ ह्रीं णमो नाणस्स' – 51 माला आग्नेय कोण (पूर्व दक्षिण के बीच की दिशा) की ओर मुँह करके जपता है।

7. 'ॐ ह्रीं णमो दंसणस्स' – 67 माला नैऋत्यकोण (दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा) की ओर मुँह करके जपता है।

8. 'ॐ ह्रीं णमो चरित्तस्स' – 17 माला वायव्यकोण (पश्चिम और उत्तर के बीच की दिशा) की ओर मुँह करके जपता है।

9. 'ॐ ह्रीं णमो तवस्स' – 12 माला ईशान कोण (पूर्व और उत्तर के बीच की दिशा) की ओर मुँह करके जपता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जिस पद के जितने गुण हैं, उस दिन उतने ही स्वस्तिक, खमासमणा और लोगस्स का ध्यान करता है।

3. णमोक्कार मंत्र तप[12] –

णमोक्कार मंत्र के मूल पद पाँच हैं। प्रत्येक के क्रमश: सात, पांच, सात, सात और नौ अक्षर हैं। जिस पद के जितने अक्षर हों, उतने ही उपवास साधक करता है तथा उसी पद की 20 माला फेरता है।

4. अष्टकर्म सूदन तप[13] –

इस तप में सिद्ध भगवान के आठ गुणों का क्रमश: जप किया जाता है, जिसकी विधि निम्न प्रकार से है–

कर्म	तप	लोगस्स का ध्यान	मंत्र
1. ज्ञानावरणीय	उपवास	पांच	ॐ ह्रीं अनंत-ज्ञान गुणेभ्यो नम: की 20 माला
2. दर्शनावरणीय	एकासन	नौ	ॐ ह्रीं अनंत-दर्शन गुणेभ्यो नम: की 20 माला
3. वेदनीय	एगलसिथं (एक अन्न का दाना ही खाया जा सके)	दो	ॐ ह्रीं अव्याबाध गुणेभ्यो नम: की 20 माला
4. मोहनीय	एकलठाणा	अट्ठाईस	ॐ ह्रीं यथाख्यात गुणेभ्यो नम: की 20 माला
5. आयुष्य	एक दत्ति (एक बार में एक साथ जो मिले वही खाना)	चार	ॐ ह्रीं अक्षयनिधि गुणेभ्यो नम: की 20 माला
6. नाम	निवी	एक सौ तीन	ॐ ह्रीं अरुपगुणेभ्यो नम: की 20 माला
7. गोत्र	आयंबिल	दो	ॐ ह्रीं अगुरुलघु गुणेभ्यो नम: की 20 माला
8. अंतराय	अष्ट कवल (सिर्फ 8 ग्रास)	पांच	ॐ ह्रीं अनंत वीर्य गुणेभ्यो नम: की 20 माला

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. तीर्थंकर गोत्र तप–

तीर्थंकर गोत्र बंध के बीस बोल बताये गये हैं। इस तप में बीस स्थानक तप की बीस ओली पूर्ण करनी होती हैं एक ओली में बीस पद की आराधना की जाती है। जिस दिन जिस पदकी आराधना की जाती है उस दिन उसी पद की 20 माला का जप किया जाता है। साधक को तप के दिन ब्रह्मचर्य पालन और भूमि शयन करना होता है। इस तप की शुद्ध आराधना करने से तीर्थंकर गोत्र बंधता है, तीसरे भव में मुक्ति प्राप्त होती है, ऐसी मान्यता है। बीस पदों की माला का जप इस प्रकार है–

01. णमो अरहंताणं	02. णमो सिद्धाणं
03. णमो आयरियाणं	04. णमो उवज्झायाणं
05. णमो लोए सव्व साहूणं	06. णमो पवयणस्स
07. णमो दसंणस्स	08. णमो नाणस्स
09. णमो चरित्तस्स	10. णमो विनय संपन्नाणं
11. णमो किरियाणं	12. णमो बंभवयधारीणं
13. णमो गोयमस्स	14. णमो तवस्सीणं
15. णमो चरणस्स	16. णमो जिणाणं
17. णमो सुयनाणस्स	18. णमो अपुव्वनाणस्स
19. णमो सुयनाणस्स	20. णमो तित्थस्स।

नोट– कुछ प्राचीन ग्रंथों में इन पद जपों के पहले ॐ ह्रीं का उल्लेख मिलता है।

6. चन्द्र प्रज्ञप्ति विद्या कल्प मंत्र–

निम्नोक्त गाथा चन्द्र प्रज्ञप्ति सूत्र का मंगलाचरण है, जो अतीव प्रभावशाली है–

नमिऊण असुर-सुर-गरुल-भुयंग-परिवंदिए-गयकिलेसे।
अरिहे सिद्धायरिए उवज्झाए सव्वसाहूय॥

मुनि श्रमण सागर ने लिखा है कि उपरोक्त गाथा आचार्य भिक्षु का सिद्धमंत्र था। वे इस आगम गाथा को ''ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ब्लूं'' इन बीजाक्षरों के साथ जपते थे।[14]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विधि—

एक तेला या आयम्बिल की तपस्या में उत्तर की ओर मुख करके एकासन पर 12500 जप करें तो सर्व कार्य सिद्ध हो, सिद्ध होने पर प्रयोग विधि निम्न प्रकार से प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध है—

नमिऊण—एक श्वास में 21 बार जपने से चोर भय मिटे।

असुर—चौविहार तेला और तेले की रात एक आसन पर उत्तर की ओर मुँह करके 12000 जप करें तो वैमानिक देव उपस्थित हो।

सुर—एक श्वास में बत्तीस बार जपे तो पिशाच, राक्षस का भय टले।

गरुल—उत्तर की ओर अभिमुख हो 5000 जपे तो नागदेव का भय टले।

भुयंग—एक श्वास में बत्तीस बार जपे तो सर्प का भय टले।

परिवंदिए—एक श्वास में एक सौ आठ बार जपे तो अग्नि शांत हो।

गय—एक श्वास में एक सौ आठ बार जपे तो हाथी भय टले।

किलेसे—एक श्वास में एक सौ आठ बार जपे तो शत्रु भय टले।

अरिहे—एक श्वास में एक सौ आठ बार जपे तो शत्रुता का भाव दूर होता है अथवा शत्रु वश में होता है।

सिद्धा—एक श्वास में 121 बार जप व प्रात:काल एक माला जपे तो नव निधि प्राप्त होवे।

आयरिये—एक श्वास में 108 बार जपे तो चोर भय टले, बड़ा आदमी वश में होवे।

उवज्झाए—एक श्वास में इक्कीस बार जपे तो बड़ा उपद्रव टले।

सव्व साहू—एक श्वास में इक्कीस बार जपें तो बड़ा उपद्रव टले।

सत्ताइस दिन प्रतिदिन सत्ताइस माला जपे तो सर्व व्याधि टले। आनन्द होवे। इन दिनों नवकारसी तप तथा ब्रह्मचर्य व्रत का पालन अनिवार्य है।

चन्द्र प्रज्ञप्ति की उपर्युक्त गाथा के आधार पर बना निम्नोक्त यंत्र पास में रहने से सब प्रकार का भय दूर होकर आनंद मंगल रहता है, ऐसी मान्यता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ऊँ	ह्रीं	श्रीं	न	मि	ऊ	ण
ग	य	कि	ले	से	अ	अ
ए	ए	स	व्व	सा	रि	सु
दि	ज्झा	न	म:	हू	हे	र
वं	व	श्रीं	ह्रीं	य	सि	सु
रि	उ	ए	रि	य	द्धा	र
प	ग	यं	भु	ल	रु	ग

निष्कर्ष

मनुष्य केवल शरीर और मन से ही रुग्ण नहीं होता, वह चेतना के स्तर पर भी रुग्ण होता है। हमारी यह चेतना न जाने कबसे कितने-कितने कर्म संस्कारों से आवृत्त है। प्रतिपल शुभ-अशुभ पुद्‌गल इस चेतना को अपनी मलिनता से आच्छन्न कर रहे हैं। वे कर्म संस्कार तथा विजातीय तत्त्व जब बाहर प्रकट होते हैं तब मन और शरीर भी उससे प्रभावित होते हैं। मनुष्य बाह्य उपचार के द्वारा उन रोगों का उपशमन कर देना चाहता है किन्तु रोग के मूल तक नहीं पहुँच पाता। अध्यात्म चिकित्सकों ने रोग के मूल तक पहुँचने के लिए निर्जरा के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया। अध्यात्म के क्षेत्र में निर्जरा की प्रक्रिया कर्म मल के विशोधन की प्रक्रिया है। भगवान महावीर द्वारा प्रतिपादित निर्जरा के बारह प्रकार/तपस्याओं के कारण विवक्षित है। निर्जरा का दसवां प्रकार–स्वाध्याय (जिसमें जप का समावेश हो जाता है) का, ग्यारहवां प्रकार ध्यान का तथा पहला प्रकार अनशन का है। जब तपस्या (अनशन) के साथ नमस्कार महामंत्र का जप तथा ध्यान किया जाता है तो इस मणि काञ्चन योग का ऐसा जादुई प्रभाव होता है कि बाह्य और आन्तरिक मल अति शीघ्र विसर्जित होने लगते हैं। उनसे प्रक्षालित और विशोधित होकर चेतना उसी प्रकार निर्मल बन जाती है, जिस प्रकार अग्नि से तपा सोना। उपाध्याय विनयविजयजी ने तप को नमस्कार करते हुए कहा है–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निकाचितानामपि कर्मणां यद, गरीयसां भूधरदुर्द्धराणाम्।
विभेदने वज्रमिवातितीव्रं, नमोऽस्तु तस्मै तपसेऽद्भूताय॥ [15]

उस अद्भुत तप को नमस्कार, जो गुरुत्तर तथा पर्वतों की भांति दुर्धर निकाचित कर्मों को भी अति तीव्रता से वज्र की भांति तोड़ देता है।

इस प्रकार तप और जप दोनों का गहरा संबंध है। ये साधक की सिद्धि में सहायक, प्रेरक और लक्षित मंजिल के सुदृढ़ सौपान हैं। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि जो बूंद में भी सागर का स्वाद और उसका विराट वैभव प्रदान करता है, वह मंत्र है—नमस्कार महामंत्र। जो सीमा से असीम की ओर ले जाता है वह मंत्र है—नमस्कार महामंत्र। यह मंत्र ही वह शिखर और किनारा है, जो हमें उस पार की झलक देता है।

सन्दर्भ—

1-2. योगशास्त्र, प्रकरण-8, श्लोक-39, पृ. 240

शतानि त्रीणि षट्वर्ण चत्वारि चतुरक्षम।
पञ्चावर्णं जपन योगी चतुर्थ फलमश्नुते॥

3-4. योगशास्त्र, प्रकरण-8, श्लोक-38, पृ. 239

गुरु पंचकनामोत्था विद्यास्यात् षोड्शाक्षरा।
जपन् शतद्वयं तस्याश्चतुर्थस्याप्यनुयात्फलम्॥

5. योगशास्त्र, प्रकरण-8

6. मंगल किरण, पृ. 137

7, 8. एसोपंचणमोक्कारो, पृ. 124

9. दसवैकालिक, 9वां अध्ययन, चतुर्थ उद्देशक, 6 सूत्र

10. जैन साधना पद्धति में तपोयोग, पृ. 58, 59

11. तपोरत्न महोदधि, पृ. 36, 37

12. समता वाणी, पृ. 401

13. वही, पृ. 369

14. भिखू स्याम्, कथ्य तथ्य

15. शान्त सुधारस, ढाल-9, श्लोक-4

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

20. महामंत्र के सन्दर्भ में रंगों की उपादेयता

रंग प्रकृति की अत्यन्त रहस्यमय सार्थक प्रतिध्वनियां हैं। रंगों का अध्ययन जीवन मूल्यों का अध्ययन है। रंग हमारे विचारों, आदर्शों, संवेगों, क्रियाओं और इन्द्रियजन्य ज्ञान को व्यक्त करने का माध्यम है। कौन-सा रंग व्यक्तित्व पर कैसा प्रभाव डालता है? यह रंगों की गुणात्मकता और व्यक्ति के स्वभाव पर निर्भर करता है। एक ही रंग रुचि भिन्नता के कारण अलग-अलग प्रभाव दिखाता है। मनोवैज्ञानिकों का कहना है कि रंग व्यक्ति के अवचेतन स्तर और मस्तिष्क को सबसे अधिक प्रभावित करने वाला तत्त्व है। रंग रहस्यवादी तथा विकृत मन वाले लोगों से प्रत्युत्तर निकलवाने की क्षमता रखता है। वैज्ञानिक युग में रंगों को विटामिन्स से भी अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाने लगा है।

हमारे चारों तरफ रंग ही रंग है। रंगों का अपना जगत्, अपनी भाषा और अपना वर्ण्य भी है। रंगों में ऊर्जा है जो हमें जीवन्त रखती है। रंगों में भावनाएं हैं, उनका पूरा मनोविज्ञान है। हम अपने व्यावहारिक जीवन में भी इस बात का अनुभव कर रहे हैं कि भावनाओं के साथ चेहरे का रंग बदलता है। जैसे डर से पीला, शर्म से गुलाबी, गुस्से से लाल और ईर्ष्या से हरा—ये बदलते हुए रंग इस तथ्य की ओर संकेत कर रहे हैं कि प्रत्येक शुभाशुभ भाव का अपना रंग होता है। इस तथ्य को हजारों वर्ष पूर्व विभिन्न धार्मिक ग्रंथों ने भी प्रस्तुत कर दिया था।

जैन आगम भगवती में उल्लेख आता है—गणधर गौतम ने भगवान महावीर से पूछा—भन्ते! हिंसा, झूठ, चौरी, अब्रह्मचर्य, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ आदि जितने मानसिक सूक्ष्म भाव हैं, क्या इनमें वर्ण होता है? भगवान् ने कहा—इनमें पाँचों वर्ण होते हैं। अर्थात् प्रत्येक प्रवृत्ति का अपना एक विशेष रंग होता है।[1]

वैदिक ऋचाओं में सप्तरश्मि, सप्तर्चि, सप्तर्षि, सप्ताश्व जैसे शब्दों का प्रयोग स्वयं रंगों की प्राचीनता पर प्रकाश डालता है।[2] सांख्य दर्शन में सत्व, रजस्, तमस् त्रिगुणात्मक प्रकृति का लोहित, शुक्ल और कृष्ण वर्ण कहा गया है। सांख्य दर्शन में इसका कारण स्पष्ट करते हुए कहा है—सत्व गुण निर्मल और प्रकाशक है इसलिए सफेद है। रजस् गुण रागात्मक, सक्रिय और चंचल है इसलिए लाल है। तमोगुण अज्ञान रूप तथा आवारक है इसलिए काला है।[3]

विभिन्न दृष्टिकोणों के आधार पर निःसंदेह कहा जा सकता है कि रंगों से शरीर युक्त आत्मा प्रभावित होकर तदनुरूप क्रियाएं करने लगता है। इस सन्दर्भ में नमस्कार महामंत्र और रंग विज्ञान के संबंध को इसलिए जानना आवश्यक है

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

कि हम उससे और अधिक लाभान्वित हो सकते हैं, क्योंकि प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में रंग हमें प्रभावित करते ही हैं। हम उचित रंगों के ध्यान से कषाय व राग के प्रभाव को शनैः-शनैः समाप्त कर सकते हैं। भावधारा को निर्मल कर सकते हैं। अतः महामंत्र के संदर्भ में रंगों की उपोदयता समीचीन है, क्योंकि जीवन के सभी क्षेत्रों में, सभी भूमिकाओं पर यह महामंत्र सहायक और उपयोगी है। ध्यान साधना में भारतीय दर्शन के प्रवक्ताओं द्वारा भिन्न-भिन्न रंग संवेदनाओं का प्रयोग किया जाता रहा है। इन प्रयोगों को आज भी भलीभांति समझकर उनका लाभ उठाया जा सकना संभव है।

विज्ञान और मनोविज्ञान जिन घटनाओं को असंभव मानता है महामंत्र के प्रभाव से वे घटनाएं प्रत्यक्ष घटित होती देखी जाती हैं। आत्मिक शक्ति की पुष्टि, वृद्धि, अभ्युदय तथा अशुभ शक्तियों से रक्षा होती है, बशर्ते कि दृढ़ श्रद्धा, भक्ति तथा तप के साथ-साथ जप, ध्यान और शुभ संकल्प का योग हो।

रंगों की विलक्षणता

रंगों का जगत् विलक्षण तो है ही, युक्तियुक्त और अर्थगर्भित भी है। चित्रकला, मूर्तिकला और स्वास्थ्य के सन्दर्भ में बताये गये सूर्य नमस्कार के पीछे भी रंग रहस्यों की एक कतार खड़ी है। तीर्थंकरों के वर्णों का भी शास्त्रों में उल्लेख मिलता है। भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित लेश्या का सिद्धान्त भी भाव और रंग–इन दो धाराओं में चलता है। पातंजल योग में वर्णित कैवल्यपाद में चतुर्विध कर्म का विवरण लेश्याओं के अध्ययन में एक विशेष दृष्टि देता है। प्राकृत चिकित्सा प्रणाली में मानस रोगी को सुधारने के लिए विभिन्न रंगों की किरणों एवं बोतलों से सिद्ध जल का प्रयोग किया जाता है। योग प्रणाली में पृथ्वी, जल आदि तत्त्वों के रंगों के परिवर्तन के अनुसार मानस् परिवर्तन का क्रम बतलाया गया है।

रंगों के प्रभाव से स्वयं रंग जाने के स्थान पर उनका इच्छानुकूल और मनःस्थिति के अनुरूप प्रयोग करना ही औचित्यपूर्ण है, इसमें कोई संदेह नहीं। नमस्कार महामंत्र के सन्दर्भ में रंगों की उपादेयता को समझने से पूर्व रंग विज्ञान को समझना अत्यन्त अपेक्षित है। इस दृष्टि से रंगों के कुछ रहस्य प्रस्तुत किये जा रहे हैं।

सूर्य किरणों के सात रंगों में तीन रंग–लाल, पीला और नीला मूल रंग हैं, शेष इनके मिश्रणों से बनते हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वैज्ञानिक परीक्षणों द्वारा रंगों की प्रकृति पर काफी प्रकाश डाला गया है—

रंगों के नाम	प्रकृति
लाल	गर्म
नारंगी	गर्म
लाल-नारंगी	बहुत गर्म
पीला	गर्म किन्तु लाल नारंगी से कम
हल्का गुलाबी	गर्म
गढ़ा गुलाबी	गर्म
बादामी	गर्म
हरा	न अधिक गर्म न अधिक ठंडा
नीला	ठंडा
शुभ्र (बनफली)	न गर्म न ठंडा

इनमें नारंगी लाल रंग के परिवार का रंग है। बैंगनी और जामुनी नीले रंग के परिवार के रंग हैं। आधुनिक विज्ञान के अनुसार श्वेत रंग सात रंगों के एकीकरण से बनता है।

अवयव और रंग

प्राणी का सम्पूर्ण शरीर-दृश्यमान एवं भीतरी अवयव अलग-अलग रंगों से निर्मित है। अम्बाजोगाई (महाराष्ट्र) के मेडिकल कॉलेज में मैंने शरीर के भिन्न-भिन्न अवयवों के भिन्न-भिन्न रंग साक्षात् देखे। अवयवों के अतिरिक्त शरीरस्थ मास, मज्जा, रक्त आदि सभी का पृथक्-पृथक् रंग है। करोड़ों कोशिकाएं, मनुष्य की वाणी और विचारों के समस्त प्रकंपन भी रंगीन हैं। डॉक्टर रीबेन अम्बर ने लिखा है—''रंगों की गर्मी और ठंडक को मापा जा सकता है। कांच की गिलास में पानी भरकर उसमें थर्मामीटर रख दें, फिर किरणें डालें। लाल किरणें गर्मी प्रकट करेंगी और नीली किरणें शीतलता बता देंगी। शक्ति और वजन का माप करना हो तो सूक्ष्म वजन बताने वाली छोटी तुला (हीरा पन्ना तोलने वाली) लेकर उसके पलड़ों पर किरणें डालें। पलड़ा रोशनी की ओर झूक जायेगा।''

रेखा विज्ञान के अनुसार हमारा अंगूठा, तर्जनी, मध्यमा, अनामिका व कनिष्ठा अंगुली क्रमश: श्वेत, पीले, लाल, नीले व काले रंग के स्वामी हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तत्त्व विज्ञान के अनुसार पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु व आकाश—इन पांचों तत्त्वों का वर्ण क्रमश: पीला, सफेद, लाल, नीला व सर्व वर्ण वाला है, जिनके परिणाम क्रमश: देहलाभ, भूख, प्यास आदि की सहिष्णुता, आतप को सहन करने की क्षमता, लाघव, ऐश्वर्य तथा अतीन्द्रिय ज्ञान बताये हैं।

आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ने रंग विज्ञान पर अपना मौलिक चिन्तन प्रस्तुत करते हुए कहा है—मनुष्य शरीर के अवयवों एवं चैतन्य-केन्द्रों के अलग-अलग रंग होते हैं। इसलिए शारीरिक अवयवों की पुष्टि एवं चैतन्य केन्द्रों की जागृति के लिए अलग-अलग रंगों का श्वास लेना अपेक्षित होता है।

अवयवों एवं चैतन्य केन्द्रों के रंग

अवयव	रंग[4]	चैतन्य केन्द्र	रंग[5]
सिर और गर्दन	नीला	शक्ति-केन्द्र	पीला
गला	गहरा नीला	स्वास्थ्य-केन्द्र	नारंगी
छाती और फेफड़े	बैंगनी	तैजस-केन्द्र	लाल
आंत, गुर्दा	हरा	आनन्द-केन्द्र	वायलेट
मूत्राशय	हरा	विशुद्धि-केन्द्र	इंडिगो (बैंगनी)
त्वचा	हरा	दर्शन-केन्द्र	नीला
आमाशय	नारंगी	ज्योति-केन्द्र	जामुनी
जिगर और तिल्ली	पीला	ज्ञान-केन्द्र	हरा, आसमानी
धड़, बाजू, जननेन्द्रिय	लाल		

श्वास के द्वारा रंगों के आकर्षण की प्रक्रिया

हमारे स्थूल शरीर में कोई अंग रुग्ण हो गया अथवा उसकी स्वाभाविक क्रिया असंतुलित हो गई तो श्वास क्रिया द्वारा उस अंग को संतुलित किया जा सकता है क्योंकि श्वास में सब रंग हैं। श्वास के साथ ये सब हमारे भीतर जाते हैं और हमें प्रभावित भी करते हैं। जब हम आकाश मण्डल में फैले हुए परमाणुओं के ग्रहण का संकल्प करते हैं, तब श्वास के रंगों की शक्ति अधिक बढ़ जाती है। जो रंग चाहिए उसी रंग की कल्पना करने से वह रंग हमारे शरीर के चारों ओर प्रकट हो जायेगा। फिर उस रुग्ण अंग पर या जिस स्थान में रंग पहुँचाना है, उस स्थान पर मन को एकाग्र करके गहरे श्वास लेने से कार्य सिद्धि होती है। मन की एकाग्रता से वह रंग वहीं पहुँचकर रोग को शांत कर देता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

खोजों से यह ज्ञात हुआ है कि रंग-विशेष की तरंग, ग्रंथि विशेष को प्रभावित करती है, जैसे–सुप्रसिद्ध रंग चिकित्सक तथा भौतिक शास्त्री डॉक्टर ब्रनलर ने रंग चिकित्सा क्षेत्र में बहुत से प्रयोग किये हैं। उनके अनुसार एक प्रसिद्ध नायिका स्कॉटलैण्ड से लन्दन में उनके पास ईलाज के लिए आई। उसकी आवाज बिल्कुल बंद हो गई थी। अन्य डॉक्टरों ने कहा कि वह लगभग छः सप्ताह तक स्टेज पर नहीं आ पायेगी। उन्होंने उसके यकृत एवं स्वर तंत्र के स्थान पर पीले नारंगी रंग का प्रयोग किया। उसकी आवाज 40 मिनटों में सामान्य हो गई।

रंगों की प्रभावकता

रंग हमारे भावतंत्र को तो प्रभावित करते ही हैं पर शरीर-तंत्र को भी प्रभावित करते हैं। शारीरिक स्तर पर लाल रंग एड्रीनल ग्लैण्ड को उत्तेजित करता है। शरीर की स्फूर्ति तथा सक्रियता बढ़ाता है। रक्त संबंधी सभी रोगों पर प्रभाव डालता है। नारंगी रंग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाता है। फेफड़े पेन्क्रियाज और प्लीहा को सशक्त बनाता है। कैल्शियम की अभिवृद्धि करता है। इससे नाड़ी की गति बढ़ती है, रक्तचाप सामान्य होता है। यह रंग फेफड़े और छाती से संबंधित रोगों के लिए उपयोगी है। पीला रंग मांसपेशियों की मजबूती और पाचन संस्थान को स्वस्थ रखने में सहायक है। छोटी आंत एवं बड़ी आंत से संबंधित बीमारियों में प्रभावकारी है। हरा रंग हृदय एवं रक्त संचार तंत्र को प्राणवान बनाता है। मानसिक तनाव को कम करता है। इसके अधिक प्रयोग से पिच्युटरी एवं मांसपेशियों के उत्तकों पर बुरा प्रभाव पड़ता है। नीला रंग चयापचय की वृद्धि करता है। रक्त कणों का परिशोधन करता है। बैंगनी रंग शरीर में पोटेशियम का संतुलन करता है। यह ट्यूमर के विकास को अवरुद्ध करता है। गुलाबी रंग भावनात्मक विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सफेद रंग सभी प्रकार की बीमारियों को दूर करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह असीम शक्तिदायक है। जब रोग का सही निदान न हो तब सफेद रंग का ध्यान विशेषतः लाभप्रद होता है।[6]

रंगों का प्रभाव मन पर भी पड़ता है, जैसे काला रंग मनुष्य में असंयम, हिंसा और क्रूरता के विचार उत्पन्न करता है। नीला रंग मनुष्य में ईर्ष्या, असहिष्णुता, रसलोलपुता और अनासक्ति का भाव उत्पन्न करता है। कापोत रंग मनुष्य में वक्रता, कुटिलता और दृष्टिकोण का विपर्यास उत्पन्न करता है। अरुण रंग मनुष्य में ऋजुता, विनम्रता और धर्मप्रेम उत्पन्न करता है। पीला रंग मनुष्य में क्रोध, मान,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

माया, लोभ की अल्पता व इन्द्रिय विजय का भाव तथा शांति के भाव उत्पन्न करता है। सफेद रंग मनुष्य में गहरी शांति व जितेन्द्रियता का भाव उत्पन्न करता है।

विचारों का भी रंगों से तालमेल है, जो इस प्रकार है—भक्ति विषयक रंग आसमानी है। लाल रंग कामोद्वेग-विषयक है। पीला रंग तर्क-वितर्क विषयक है। गुलाबी रंग प्रेम-विषयक है। हरा रंग स्वार्थ-विषयक है। लाल-काले रंग का मिश्रण क्रोध विषयक है।

मन और विचार के साथ रंगों के उपरोक्त दोनों वर्गीकरण के तुलनात्मक अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि प्रत्येक रंग दो प्रकार के होते हैं— 1. प्रशस्त रंग, 2. अप्रशस्त रंग।

कृष्ण, नील, कापोत—अप्रशस्त कोटि के ये तीनों रंग मनुष्य के विचारों पर बुरा प्रभाव डालते हैं तथा अरुण, पीला और सफेद—प्रशस्त कोटि के ये तीनों रंग मनुष्य के विचारों पर अच्छा प्रभाव डालते हैं।

क्रोध से अग्नि तत्त्व प्रधान हो जाता है, उसका वर्ण लाल है। मोह से जल तत्त्व प्रधान हो जाता है, उसका वर्ण पीला है। प्रशस्त लेश्याओं के जो वर्ण हैं, उनकी प्रधानता क्रोध आदि से होती है। सूत्रकृतांग की चूर्णि में लिखा है—''कैला अपि स्निग्ध धायान्तस्तेजस्विनश्च सुवर्णा: अवदाता अपि फरुषच्छविणो दुवण्णां''। अर्थात् स्निग्ध छाया वाला तथा तेजस्वी श्याम वर्ण (नील वर्ण) भी सुवर्ण है और परुष स्पर्श वाला गौर वर्ण भी दु:वर्ण है।[7]

प्रज्ञापना सूत्र में उल्लेख मिलता है कि भगवान महावीर से प्रश्न पूछा गया कि कृष्ण, नील, कापोत लेश्या के परिणाम प्रशस्त है या अप्रशस्त? भगवान ने कहा—कृष्ण, नील, कापोत लेश्या के समय हमारे आत्म-परिणाम प्रशस्त अप्रशस्त दोनों होते हैं। सापेक्ष दृष्टि से कहा जा सकता है कि कृष्ण की अपेक्षा नील, नील की अपेक्षा कापोत लेश्या विशुद्ध है।[8]

इन दोनों निरुपणों में विरोधाभास है। इससे यह जानने के लिए अवकाश मिलता है कि लाल, पीला और सफेद वर्ण अच्छे विचारों को उत्पन्न नहीं करते, किन्तु प्रशस्त कोटि के लाल, पीले और सफेद वर्ण ही अच्छे विचारों को उत्पन्न करते हैं।

नमस्कार महामंत्र के जप के साथ रंगों की समायोजना की गई है, उनसे भी यही तथ्य प्रमाणित होता है, जैसे—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्र	वर्ण	मंत्र	वर्ण
णमो अरहंताणं	श्वेत वर्ण	अ	लाल
णमो सिद्धाणं	रक्त वर्ण (अरुण)	उ	श्वेत
णमो आयरियाणं	पीत वर्ण	म्	नीला
णमो उवज्झायाणं	हरित वर्ण		
णमो लोए सव्व साहूणं	कृष्ण वर्ण (नील)		

लेश्या के प्रसंग में कृष्ण वर्ण व नील वर्ण को सर्वाधिक निकृष्ट माना गया है किन्तु मुनि के साथ इन वर्णों का समायोजन किया गया है। इससे भी यही निष्कर्ष निकलता है कि कृष्ण लेश्या (निकृष्टतम-चित्तवृत्ति) को उत्पन्न करने का हेतु अप्रशस्त कृष्ण वर्ण बनता है। मुनि के साथ जिस कृष्ण वर्ण की योजना की गई है, वह प्रशस्त है।

रंग विज्ञान का अभिमत है कि विभिन्न भावदशाओं में विभिन्न रंगों की हजारों छवियां एक-दूसरे में समाकर कई नई छवियों की सृष्टि करती हैं। आभामंडल में रंगों की छाया का अपना विशिष्ट महत्त्व होता है। ' द सेवन कीज टू कलर हीलिंग' में लिखा है—संसार में रंग की छः हजार से भी अधिक छवियां हैं। ब्रिटिश रंग कॉन्सिल, जिसका अपना केटलॉग है, (विषय-सूचि है) उनमें नील रंग की 14000, ब्राउन रंग की 1375, लाल रंग की 1000, हरे रंग की 820, नारंगी रंग की 550, ग्रे रंग की 500, बैंगनी रंग की 360 और सफेद रंग की 12 छवियां बताई गई हैं। इन छवियों की विभिन्नता के कारण नमस्कार महामंत्र में पांचों वर्णों को उपमित करते हुए कहा गया है। स्फटिक के समान सफेद वर्ण, बाल सूर्य जैसा अरुण वर्ण, दीपशिखा जैसा पीला वर्ण, पन्ने जैसा हरा वर्ण, नभ जैसा नीला वर्ण अथवा कस्तूरी जैसा श्याम वर्ण।

साधक को वैचारिक पवित्रता, भावना शुद्धि तथा बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास के लिए रंगों का मानसिक अनुचिंतन करना चाहिए। मुख्यतया अनुचिंतनीय वर्ण ये हैं—अरुण, पीत और श्वेत। मन की एकाग्रता के लिए आकाश पर दृष्टि टिकाना अत्यन्त उपयोगी है।

मुनि का ध्यान करते समय कृष्ण वर्ण का अनुचिंतन करना बहुत उपयोगी है। सामान्यतया कृष्ण वर्ण दीनता का सूचक है किन्तु उसकी एक विशेषता यह है कि वह बाहर से आने वाली रश्मियों को अपने में केन्द्रित कर लेता है, इसलिए

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उसका अनुचिंतन करने वाला बाहरी प्रभावों से अपने आप को बचा लेता है। नमस्कार महामंत्र का अपने प्रशस्त रंगों के साथ जप करने से केवल रंगों की पूर्ति ही नहीं होती अपितु विचारों में निर्विकारता व सात्विकता भी आने लगती है। रंगों की शुद्धि होने से शांति का अनुभव होने लगता है तथा महामंत्र का जप रंगों के साथ करने से सब ग्रहों के दोष दूर हो जाते हैं।

एक बार एक ज्योतिषी बीकानेर के प्रमुख श्रावक ''मानमल भंवरलाल झाबक'' की दुकान में आया। वह जहां बैठा था। सामने नमस्कार की एक तस्वीर लगी हुई थी, जिसमें पांचों पद अपने-अपने वर्णों में लिखे हुए थे। वह ज्योतिषी कुछ समय तक उस तस्वीर को देखता रहा। फिर सुन्दरलालजी, मांगीलालजी दोनों भाइयों से पूछा—''आप इस मंत्र को जानते हैं क्या?'' मांगीलालजी ने कहा—''यह तो हमारा जन्मजात मंत्र है हम इसका हमेशा जप करते हैं।'' फिर उसने कहा—''क्या आप इस मंत्र के साथ जुड़े रंगों के बारे में जानते हैं?'' दोनों भाइयों ने सकारात्मक उत्तर दिया। उसके बाद उस ज्योतिषी ने कहा—''इस मंत्र के साथ जो रंग जुड़े हुए हैं, इन रंगों में सब प्रकार के ग्रह दोष निवारण की अद्‌भुत क्षमता विद्यमान है। जो व्यक्ति इस मंत्र का अपने-अपने रंगों के साथ नित्य जप करता है उसे कभी ग्रह अपना दुष्प्रभाव नहीं दिखा सकते। यह बहुत शक्तिशाली मंत्र है।''

नमस्कार महामंत्र में प्रयुक्त कुछ अक्षरों के वर्ण इस प्रकार हैं[1]—

अ—शरच्चन्द्र सदृश

आ—शंख ज्योति सदृश

उ—पीत चम्पा सदृश

ए—रजनी कुसुम सदृश

ण, त, ध, ल—पीत विद्युल्लताकृति सदृश

य—पलाल के धुएं सदृश

म—सूर्य सदृश

न, र, व—विद्युत की आकृति सदृश।

अत: इस महामंत्र की साधना अथवा पुन:-पुन: जप के द्वारा मनुष्य सहज ही संकल्प शक्ति, आत्म शक्ति तथा अन्य अनेक शक्तियों का प्रगटीकरण कर लेता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि हमारे शरीर में सभी रंगों की उपस्थिति है। रंगों का संतुलन और संयोजन भी हमारे शरीर में है। यदि इनमें से एक भी रंग की कमी या अधिकता हो जाये, अनुपात या संतुलन बिगड़ जाये तो शरीर में घबराहट पैदा हो जाती है, शरीर रुग्ण भी हो सकता है। शरीर से संबंधित रंग की कमी-पूर्ति करने के लिए विटामिन्स लिए जाते हैं, लेकिन संबंधित रंग की पूर्ति नमस्कार महामंत्र से संबंधित पद से भी हो सकती है। उदाहरणार्थ—हमारे शरीर में श्वेत रंग की कमी है यानि हमारे रक्त में डब्ल्यू.बी.सी. (व्हाइट ब्लड सेल्स) की कमी है, जिसके कारण अस्वास्थ्य बढ़ता है तो 'णमो अरहंताणं' के जप से हमारे शरीर में श्वेत रंग की पूर्ति हो जाती है। इसी प्रकार लाल रंग की कमी से आलस्य बढ़ता है। जब हम 'णमो सिद्धाणं' का ध्यान करते हैं तो लाल रंग की सहज ही पूर्ति हो जाती है। हमारे शरीर में पीले रंग की कमी हो जाने से ज्ञान तंतु कमजोर पड़ जाते हैं। जब हम 'णमो आयरियाणं' पद की आराधना करते हैं, तो पीत रंग की पूर्ति हो जाती है। शरीर में हरे रंग की कमी से रोग-प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। जब हम 'णमो उवज्झायाणं' पद का ध्यान करते हैं तो प्रतिरोधक क्षमता बढ़ जाती है। शरीर में नीले रंग की कमी से क्रोध अधिक आता है। 'णमो लोए सव्व साहूणं' पद का जब हम ध्यान करते हैं तो इसकी पूर्ति हो जाती है। इस रंग की पूर्ति होने से क्रोध शांत होने लगता है।

इस प्रकार आवश्यकतानुसार रंगों की पूर्ति नमस्कार महामंत्र के अभीक्ष्ण ध्यान से करके व्यक्तित्व का चहुँमुखी विकास किया जा सकता है।

सन्दर्भ—

1. भगवती सूत्र, 12/102-107
2. कर्म पुराण, 1/41/23.
3. सांख्य कौमुदी, पृ. 200
4. भीतर की ओर, पृ. 143
5. वही, पृ. 31
6. वही, पृ. 139-140
7. सूत्रकृतांग चूर्णि, पृ. 314
8. प्रज्ञापना पद 17/सूत्र-138, उपांग सुत्ताणि, खण्ड-2, पृ. 234
9. मंत्र भलो नवकार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

21. परमेष्ठी का रंगों के साथ तुलनात्मक अध्ययन

1. णमो अरहंताणं – सफेद (शुक्ल) रंग

महामंत्र में प्रत्येक परमेष्ठी के रंग को ज्योतिर्मय देखने का अभ्यास होना चाहिए क्योंकि चमकते रंग आभामंडल में निर्मलता और उज्ज्वलता लाते हैं। वे आभामंडल की क्षमता बढ़ाते हैं। उनकी जो विद्युत चुम्बकीय रश्मियां हैं, वे बहुत शक्तिशाली बन जाती हैं। जैसे ही णमो अरहंताणं का जप करें हमें ऐसा लगना चाहिए कि हमारे चारों ओर स्फटिकवत् वातावरण बन गया है। हमारे सामने बर्फ जैसी सफेदी (स्नोह्वाइट) छाई हुई है।

नमस्कार महामंत्र में प्रथम पद पर स्थित णमो अरहंताणं पद के साथ सफेद (शुक्ल) रंग का समायोजन अर्हतों की वीतरागता, परम शांति व कैवल्यज्ञान का प्रतीक है। यह निर्विवाद सत्य है कि जहां निर्मलता, स्वच्छता, पवित्रता होगी उसी ओर सभी आकृष्ट होंगे। यही कारण है कि तीर्थंकरों के आभामंडल में सब प्राणी निर्वैर भाव को प्राप्त हो जाते हैं। इस रंग की अपनी मौलिक विशेषताएं हैं, जो तीर्थंकरत्व की भूमिका का निर्माण करने में उत्तरदायी सिद्ध होती है। इसी तथ्य की पुष्टि स्थिर-योगी जयाचार्य की निम्नोक्त पंक्तियों में परिलक्षित है–

तीर्थंकर अभिनन्दन की आराधना में जयाचार्य संगान करते हैं–

''लीन संवेगे हो ध्यायो शुक्ल ध्यान, क्षायक श्रेणी चढ़ी हुवा केवली।''

प्रभु पद्म की स्तवना में जयाचार्य का भक्त हृदय बोल उठता है–

''ध्यान शुक्ल प्रभु ध्यान नै, पाया केवल सोय।''

आठवें चन्द्र प्रभु की स्तवना में जयाचार्य अपनी भावना की अभिव्यक्ति करते हुए कहते हैं–

अहो! वीतराग प्रभु तूं सही, तुम ध्यान ध्यावै चित रोक हो।
प्रभु! तुम तुल्य ते हुवै ध्यान सूं, मन पाया परम संतोष हो॥

तीर्थंकरों के साथ श्वेत रंग का तुलनात्मक अध्ययन एक नई दृष्टि के साथ कुछ रहस्यात्मकता संजोये हुए है, यथा–

1. स्पेक्ट्रम में सूर्य की किरणों के साथ सफेद रंग दिखाई देता है, तब वहां सातों रंग होते हैं। अत: श्वेत रंग में सारी शक्तियां निहित हैं। सभी रंग सन्निहित होने के कारण यह रंग एकता का परिचायक है। इसका दूसरा नाम प्रकाश

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

है। यह पवित्रता, प्रकाश, विकास तथा दैहिक शक्ति के ज्ञान का प्रतीक है। इधर अर्हत् (वीतराग) परम अर्हता सम्पन्न होकर अनंत-ज्ञान, अनंत-दर्शन से देवाधिदेव पद को सुशोभित करते हैं।

2. श्वेत रंग ठंडा है। तीर्थंकर भगवन्त मोह कर्म के सर्वथा क्षीण होने के कारण परम शांति में स्थित हैं। इस रंग का अनुरागी भी सात्विक वृत्ति और सात्विक भावना वाला होता है। भगवान महावीर के शिष्यों के श्वेत परिधान के विधान के पीछे यही आधार दृष्टिगोचर होता है।

3. श्वेत रंग का ध्यान उष्मा का शमन करता है। उष्मा के कम होने से उत्तेजना स्वत: कम हो जायेगी। प्रथम पद के साथ श्वेत रंग का ध्यान गुस्से को कम करने का महत्तम प्रयोग कहा जा सकता है। ज्योति केन्द्र पर चंदेसु निम्मलयरा का ध्यान भी इस योग्यता को विकसित करता है। ये आवेश शमन के स्वर्ण सूत्र कहे जा सकते हैं। क्योंकि तीर्थंकर क्रोध की भूमिका को पार कर शुक्ल ध्यान की भूमिका पर आरूढ़ होते हैं अत: उनका ध्यान व्यक्ति को शुक्ल ध्यान की भूमिका पर आरोहण कराता है।

4. यह रंग शांति और उन्नति प्रदायक है। केवल ज्ञान उन्नति और विकास की चरम परिणति है।

5. यह रंग अध्यात्म विकास की उच्च भूमिका पर प्रतिष्ठित करने वाला है, तीर्थंकर सर्वोच्च पद पर स्थित है।

6. शास्त्रों में शिव को सत्यं शिवं सुन्दरं का प्रतीक मानकर सफेद रंग में इसलिए अभिव्यक्ति दी कि शिव के मस्तिष्क पर अर्द्धचन्द्राकार चांद की ध्वलिमा—अध्यात्म, आनन्द और अनुग्रह की अर्थवत्ता लिये हुए है। ब्रह्मा के सन्दर्भ में भी उल्लेख मिलता है कि उनके दायीं ओर सरस्वती श्वेत परिधान में अधिष्ठित हैं जो ज्ञान और विधा की प्रतीक हैं। बायीं ओर सावित्री पीले या चमकदार नीले वस्त्रों में स्थित है जो विकास और समृद्धि की सूचक हैं। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी का मानना है कि शिव के ललाट पर चन्द्रमा और सिर पर गंगा—ये दोनों इस बात की प्रतीक हैं कि शिव ने क्रोध पर विजय प्राप्त की थी। उनका मस्तक इतना शीतल और शांत हो गया कि वे कालकूट विष को भी पचा गये। तीर्थंकरों की वीतरागता में क्षमा आदि सद्गुण स्वत: समाहित होने से वे राग-द्वेष विजेता कहलाते हैं। अहंकार व ममकार का विसर्जन ही सबसे बड़ी साधना है और यही वीतरागता की अनुभूति का रहस्य है। संत कबीर ने बहुत सुन्दर और यथार्थ कहा है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जब मैं था तब गुरु नाहि, अब गुरु है मैं नाहि।
प्रेम गलि अति सांकरी, तांमे दो ना समाहि॥

7. जैन आगमों में लेश्या का एक गुण गुरुलघु कहा गया है। भगवती सूत्र के अनुसार गुरुलघु का अर्थ है—अठारह पापों में प्रवृत्त जीव गुरु और अठारह पापों से निवृत्त जीव लघु कहलाता है।[1] कृष्ण लेश्या का जीव पापों में निरत होने से गुरु और शुक्ल लेश्या का जीव पापों से विरत होने के कारण लघु कहलाता है। वस्तु का गुरुत्व व्यक्ति को नीचे ले जाता है और लघुत्व ऊपर की ओर खींचता है।

अशुभ लेश्या का विचार भारी होने से जीव को नीचे और शुभ लेश्या का विचार हल्का होने से जीव को ऊपर ले जाता है। जैन दर्शन के अनुसार सातवीं नरक भूमि सबसे नीचे है, वहां परम कृष्ण लेश्या है और सबसे ऊपर चार अनुत्तर विमान में अधिक निर्मल शुक्ल (परम शुक्ल) लेश्या पाई जाती है। अर्थात् श्वेत रंग व्यक्ति को उर्ध्वरेत्ता बनाता है।

इन सारे तथ्यों के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि ज्योतिर्मय श्वेत रंग के साथ ज्ञान-केन्द्र (चोटी का भाग) पर णमो अरहंताणं का जप अथवा ध्यान करने से जो निष्पत्ति आती है, वह निम्न बिन्दुओं के आधार पर अनुभूत की जा सकती है—

1. मन, वचन और काया की गुप्ति का विशिष्ट होना।
2. चित्त का सदा प्रसन्न रहना।
3. आर्त्त और रौद्र ध्यान का प्रसंग नहीं आना।
4. धर्म ध्यान व शुक्ल ध्यान की धारा का सतत् प्रवाहित रहना।

2. णमो सिद्धाणं अरुण (बाल सूर्य जैसा) रंग

ज्योतिर्मय अरुण रंग व्यक्ति को सतत अपने लक्ष्य की ओर उत्साहित रखता है। यह रंग तप, त्याग, विरक्ति, शक्ति और स्वास्थ्य का प्रतीक है। सिद्ध भगवन्त वे होते हैं, जो परम शक्ति को उपलब्ध हो गये हैं। श्री मज्जयाचार्य ने सिद्धों की आराधना रंगों के आधार पर करने की तीन फलश्रुतियां बतलाई हैं—

1. सिद्धों की आराधना से आरोग्य मिल सकता है।
2. सिद्धों की आराधना से बोधि मिल सकती है।
3. सिद्धों की आराधना से समाधि मिल सकती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सिद्धों की आराधना के तीन रूप तीन वर्णों के साथ जयाचार्य ने उद्धृत किये हैं–

1. चाँद के रूप में सिद्ध का ध्यान करें। श्वेत रंग का ध्यान करें।
2. सूर्य के रूप में सिद्ध का ध्यान करें। लाल (अरुण) रंग का ध्यान करें।
3. सागर के रूप में सिद्ध का ध्यान करें। समुद्र का रंग नीला होता है, अत: नीले रंग का ध्यान करें।[2]

पश्चिम के ओकल्ट साइन्स के लोग मानते हैं–नीले रंग का ध्यान अध्यात्म का प्रवेश द्वार है। सफेद रंग का ध्यान निर्मलता, पवित्रता और ज्ञान का घटक माना जाता है। लाल रंग के ध्यान से अन्तर्दृष्टि का जागरण, संकल्प शक्ति का विकास और इन्ट्यूशन पावर की प्राप्ति होती है। नील वर्ण का ध्यान विशुद्धि केन्द्र पर, श्वेत रंग का ध्यान ज्योति केन्द्र पर और लाल रंग का ध्यान दर्शन केन्द्र पर किया जाता है।

उपरोक्त ध्यान की प्रक्रिया को आचार्यश्री महाप्रज्ञजी ''आध्यात्मिक विकास मंत्र'' के रूप में इस प्रकार निर्दिष्ट करते हैं–

चन्द्रेसु निम्मलयरा–

ज्योति-केन्द्र ललाट के मध्य भाग अथवा पूरे ललाट पर चन्द्रमा की भांति श्वेत रंग की परिकल्पना के साथ इस जप को करें।

आइच्चेसु अहियं पयासयरा–

दर्शन-केन्द्र भृकुटि के मध्य बाल सूर्य की भांति अरुण रंग की परिकल्पना के साथ इस जप को करें।

सागरवर गंभीरा–

विशुद्धि-केन्द्र (कण्ठ) पर समुद्र की भाँति नीले रंग की परिकल्पना के साथ इस जप को करें।

सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु–

ज्ञान केन्द्र पर श्वेत रंग की परिकल्पना के साथ इस जप को करें।

नोट–सफेद रंग की माला से निर्दिष्ट विधिपूर्वक 21 दिन तक प्रतिदिन पांच माला जपें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वैदिक साहित्य में संध्या ध्यान का विधान है। संध्या के समय ब्रह्मा, विष्णु और शिव का ध्यान–इन्हीं तीन रंगों–लाल, श्वेत और कृष्ण में किया जाता है। यहाँ कृष्ण का अर्थ काला नहीं नील है। इस ध्यान के परिणाम की चर्चा में बताया गया है कि इन तीनों रंगों का ध्यान करने वाला अपने स्वास्थ्य को भी प्राप्त करता है।[3]

श्रीमज्जयाचार्य ने भी इन तीनों रंगों पर बल देते हुए 'चौबीसी' में उल्लेख किया है–जो व्यक्ति तीर्थंकर मल्लि का नील वर्ण में ध्यान करता है वह उत्तरोत्तर निर्मल ध्यान की श्रेणी में आरोहण करता जाता है। वह व्यक्ति अल्पकाल में घनघात्य कर्मों का क्षय कर परम ज्ञान को उपलब्ध हो जाता है।

जो साधक सुविधि नाथ तीर्थंकर जिनका अपर नाम 'पुष्पदंत' है, का श्वेत वर्ण के साथ ध्यान करता है, वह वाक् लब्धि को प्राप्त होता है। उसका उपशम भाव वृद्धिंगत होने लगता है। वह जन्म जन्मान्तर के दोषों से मुक्त हो जाता है।

जो साधक वासुपूज्य तीर्थंकर का ध्यान लाल वर्ण के साथ करता है, उसके राग-द्वेष क्षीण होते हैं और वह वीतरागता की ओर अग्रसर होता जाता है। उपरोक्त भावों की अभिव्यक्ति में चौबीसी की निम्नोक्त गाथाएं हैं–

नील वर्ण मल्लि जिनेश्वर, ध्यान निर्मल ध्यायो।
अल्पकाल मांही प्रभु, परमज्ञान पायो॥ (19/1)

श्वेत वर्ण प्रभु शोभता, वारू वाण अमामी हो।
उपशम रस गुण आगली, मेटण भव–भव खामी हो॥ (9/2)

द्वादशमा जिनवर भजिये, राग–द्वेष मच्छर माया तजियै।
प्रभु लाल वरण तन छिब जाणी, प्रभु वासुपूज्य भजलै प्राणी॥ (12/1)

सभी तीर्थंकर सिद्ध होते हैं, उनकी स्वरूपावस्थि समान है इसलिए इन वर्णों में अर्हतों व सिद्धों की आराधना का विधान है।

ज्योतिर्मय अरुण रंग में दर्शन केन्द्र पर 'णमो सिद्धाणं' का जप करने से जो निष्पत्ति आती है, वह निम्न बिन्दुओं के आधार पर अनुभूत की जा सकती है–

1. विनम्र वृत्ति, 2. अचपलता,
3. इन्द्रिय व मन का संयम, 4. पापभीरुता,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

5. सबका हितैषी, 6. धर्मप्रियता,
7. धर्म में दृढ़ता—स्वीकृत भार का निर्वहन।
8. स्वरूपावस्था का अनुभव व प्राप्ति।

3. णमो आयरियाणं—पीला रंग

पीला रंग सजगता, उत्सुकता, स्पष्टवादिता, आशावादिता, प्रसन्नता एवं मनोबल की मजबूती का प्रतीक रंग है। सरस्वती का रंग भी पीला है, यह इस बात का साक्ष्य है कि पीला रंग ज्ञान तंतुओं की सक्रियता को बढ़ाता है।

आचार्य पांच आचार के पालक होते हैं। उनका मनोबल और ज्ञानबल बहुत मजबूत होता है। अतः 'णमो आयरियाणं' का जप पीले रंग के साथ विशुद्धि-केन्द्र (कण्ठ के भाग) पर करने से मनोबल दृढ़ होता है, प्रज्ञा की निर्मलता, बुद्धि की निर्मलता और ज्ञानतंतुओं की निर्मलता बढ़ती है। वृत्तियां शांत होती हैं तथा कला में रुचि बढ़ती है।[4] समस्या से घिरा व्यक्ति यदि दस मिनट तक आँखें मूंदकर पीले रंग का ध्यान विशुद्धि-केन्द्र पर अथवा आनन्द-केन्द्र पर अरुण रंग का ध्यान करता है तो उसे ऐसा लगने लगेगा कि समस्या बिना सुलझाये सुलझ रही है।[5] आचार (आचरण) शुद्धि का भी यह महत्त्वपूर्ण प्रयोग है। इस जप की निष्पत्तियां निम्न बिन्दुओं के आधार पर अनुभूत की जा सकती है—

1. चित्त की प्रशांति,
2. इन्द्रियों पर विशिष्ट विजय।
3. क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रतनु हो जाते हैं, इसलिए उपशम-भाव विशिष्ट बन जाता है।

4. णमो उवज्झायाणं—हरा रंग

हरा रंग ऊर्जा, यौवन, सृजनात्मकता, सार्वभौमिक दृष्टि प्रदान करने वाला दूसरों की समस्याओं को सुलझाने की क्षमता रखने वाला रंग माना गया है। यह रंग पीले और नीले रंग का मिश्रण है, इसलिए बुद्धि और सत्य की सहायता से मन और आत्मा के द्वार खोलने वाला है। यह मैत्री, सहयोग, सेवा, परोपकार, दया, आशा, शांति और विश्वास का सूचक रंग है। आध्यात्मिक क्षेत्र में यह एकाग्रता, ध्यान और स्थिर कार्यों के लिए आदर्श वातावरण तैयार करता है। यह

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आध्यात्मिक रंग सबसे अच्छा एन्टीबायोटिक्स है। इसमें बहुत विष-शामक शक्ति है। जानकार व्यक्ति सांप काटने पर हरे रंग का प्रयोग करता है। जैसे हरे रंग की पट्टी लगा देना, हरे रंग का कपड़ा पहना देना आदि। आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के अनुसार—''नमस्कार महामंत्र विष का नाश करने वाला मंत्र है।'' 'णमो उवज्झायाणं' का आनन्द-केन्द्र पर हरे रंग में ध्यान करने से शरीर और मन—इन दोनों में जमे हुए विजातीय तत्त्व और विषैले परमाणुओं का उत्सर्जन होता है। वे बाहर निकल आते हैं। इससे भावधारा निर्मल होती है और सामंजस्य का भाव बढ़ता है।[6] इस जप की निष्पत्तियां निम्न बिन्दुओं के आधार पर अनुभूत की जा सकती है—

1. आध्यात्मिक उन्नयन,
2. श्रुत की संप्राप्ति,
3. विनम्रता का विकास।

5. णमो लोए सव्व साहूणं—नीला रंग

नीला रंग सत्य, भक्ति, शांति और वफादारी का रंग है। यह ठंडा, सौम्य और शांत होता है। इसे भी आध्यात्मिकता और ध्यान का रंग माना गया है। यह मन को तनाव मुक्त करता है तथा आध्यात्मिक व दार्शनिक विषयों के प्रति प्रेरित करता है। इस रंग से पापों के प्रति पश्चात्ताप करने की भावना जागृत होती है।

ज्योतिर्मय नीला रंग अनेक बीमारियों और मानसिक उलझनों के लिए शायद सबसे ज्यादा शक्तिशाली दवा है। शरीर में गर्मी के बढ़ने पर अथवा रक्तचाप के बढ़ने पर एक रंग चिकित्सक का सुझाव होगा नीले रंग की बोतल में सूर्य की धूप में पांच-छः घंटे पानी रखकर एक औंस मात्रा में वह पानी पीने का। इस प्रयोग से शरीर की गर्मी शांत हो जाती है।

'णमो लोए सव्व साहूणं' यह बहुत शक्तिशाली मंत्र है। जैन आचार्यों ने स्वास्थ्य के लिए इस मंत्र को अत्यन्त लाभकारी बताया है। इस शक्तिशाली स्वास्थ्य वर्धक मंत्र पर प्रभूत प्रकाश डाला गया है।

आजकल वैज्ञानिक भी इस बात को सिद्ध कर चुके हैं कि भोजन की तरह मंत्र-जप के समय भी मुँह से भिन्न-भिन्न रस पैदा होते हैं। भिन्न-भिन्न सिलवरी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ग्रंथियों के स्रावित रस अतिरिक्त शक्तिधारा से उतरती हुई ऊर्जा का आकर्षण करती है। यही आकर्षण आरोग्य का हेतु बनता है।

'णमो लोए सव्व साहूणं' मंत्र का शक्ति-केन्द्र पर चमकते हुए नीले रंग में जप करने से रोग निवारण और शक्ति का जागरण होता है।[7]

प्रणव ध्यान के भेद, प्रभेद बताते हुए आचार्य हेमचन्द्र ने कहा है—

पीतं स्तम्भेऽरूणं वश्ये क्षोभणे विद्रुमप्रभम्।
कृष्णं विद्वेषणे ध्यायेत् कर्मघाते शशिप्रभम्॥[8]

स्तंभन कार्य में पीत वर्ण के, वशीकरण में लाल वर्ण के, क्षोभण कार्य में मूंगे के वर्ण वाले, विद्वेषण कार्य में काले वर्ण के और कर्मों का नाश करने के लिए चन्द्रमा के समान उज्ज्वल श्वेत वर्ण के ओंकार का ध्यान करना चाहिए।

नासाग्रे प्रणव: शून्यमनाहतमिति त्रयम्।
ध्यान् गुणाष्टकं लब्ध्वा ज्ञानमाप्नोति निर्मलम्॥

शंख-कुंद-शशांकाभांस्त्रीनमून् ध्यायत: सदा।
समग्र-विषयज्ञान प्रागल्भ्यं जायते नृणाम्॥[9]

नासिका के अग्रभाग पर प्रणव—ओंकार, शून्य—0 और अनाहत—ह इन तीन का अर्थात् 'ओं हं' का ध्यान करने वाला अणिमा, गरिमा आदि आठ सिद्धियों को प्राप्त करके निर्मल ज्ञान को प्राप्त करता है।

शंख, कुंद और चन्द्र के समान श्वेत वर्ण प्रणव, शून्य और अनाहत का ध्यान करने वाले पुरुष समस्त विषयों के ज्ञान में प्रवीण हो जाते हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र की शक्तिमता, तेजस्विता और गुणात्मकता को प्रायोगिक धरातल पर ही अनुभूत किया जा सकता है। प्रायोगिक धरातल पर जितनी-जितनी परिपक्वता आती है, उतने ही रहस्य हस्तगत होते जाते हैं। रंग और चैतन्य-केन्द्रों के साथ महामंत्र का ध्यान योग साधना का एक विलक्षण प्रयोग कहा जा सकता है। इसके अभीक्ष्ण प्रयोग से साधक को आनन्द का जीवन जीने की कला प्राप्त हो जाती है और वह अपने अनंत शक्ति और अनंत आनन्द के भण्डार को अनावृत्त करने में सफल हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ—

1. भगवती सूत्र 1/384, अंगसुत्ताणि, खण्ड-2, पृ. 65
2. मन का कायाकल्प, पृ. 118
3. वही, पृ. 118
4. उपासना कक्ष, पृ. 20
5. मनोनुशासनम्, पृ. 101
6. एकला चलो रे, पृ. 263
7. वही, पृ. 264
8. योगशास्त्र, प्रकाश-8, श्लोक-31, पृ. 227
9. वही, प्रकाश-8, श्लोक 60-62, पृ. 245

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

22. महामंत्र सिद्धान्त और गणित

वर्तमान वैज्ञानिक युग में विज्ञान ने नवीन-नवीन तथ्यों का उद्‌घाटन किया है, उनमें ''साउण्ड-एनर्जी'' ध्वनि-शक्ति भी एक है। हीरे जैसे कठोर रत्न को ध्वनि तरंग काट सकती है। समुद्री तकनीक के विशेषज्ञ डॉक्टर 'जो मैकल्निस' और कनाडा के एक डॉक्टर 'वे' ने बर्फ से ढ़के हुए आर्कटिक उत्तरी अमरीका के समुद्र में सन् 1853 में डूबे एच.एम.एस. ब्रेडलबेन की खोज में सबसे ज्यादा आधुनिक तकनीक का प्रयोग किया।

डॉक्टर 'जो' ने इस जहाज के डूबने की जगह का सही पता लगाने के लिए 'साउण्ड स्केन सोनार' का प्रयोग किया। यह मशीन एक तैरते हुए जहाज से समुद्र की तलहटी पर ध्वनि तरंगें फैंकती है और ऊँची फ्रीक्वेन्सी की ध्वनि में संकेतों के जरिये सागर की सतह पर पड़ी हुई किसी भी चीज की तस्वीर खींच लेती है। अगर मौसम और परिस्थितियां अच्छी हो तो साउण्ड स्केन सोनार से एक्स-रे के बराबर साफ चित्र आता है।[1]

नमस्कार महामंत्र के असाधारण महत्त्व का प्रमुख कारण इसकी शब्द रचना है, जो व्यक्ति को परम कल्याण की ओर अग्रसर करती है। मंत्रकर्त्ता ने नमस्कार महामंत्र में जिन अक्षरों का विन्यास किया है, उसमें ध्वनि प्रकंपन के विशेष प्रकार का उल्लेख किया गया है। परीक्षण के अनुसार वह मंत्र विशेष प्रभावक होता है, जिसमें म, स, ह, र और अ, इ आदि का विशेष योग होता है। नमस्कार महामंत्र में ये सभी अक्षर ध्वनियां बार-बार प्रयुक्त हुई हैं। इस महामंत्र में अन्तर्निहित गणित में गहरा तत्त्व दर्शन भी है।

पद्, अक्षर आदि का गणित

आचार्यश्री तुलसी ने नमस्कार महामंत्र के पद, अक्षर आदि के गणित को निम्नोक्त दोहे में अंकित किया है–

णमोक्कार के पांच पद, अक्षर है पैंतीस।
ग्यारह लघु चौबीस गुरु, दीर्घ पनर ह्रस्व बीस॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पद	अक्षर	लघु	गुरु	दीर्घ	ह्रस्व	मात्राएं
णमो अरहंताणं	7	3	4	2	5	11
णमो सिद्धाणं	5	1	4	2	3	8
णमो आयरियाणं	7	3	4	3	4	11
णमो उवज्झायाणं	7	2	5	3	4	12
णमो लोए सव्व साहूणं	9	2	7	5	4	16
कुल योग	35	11	24	15	20	58

नमस्कार महामंत्र के मूल पांच पदों के पैंतीस अक्षर हैं। इसमें तीस स्वरयुक्त व्यंजन तथा पांच स्वतंत्र स्वर हैं। इसके स्वर व व्यंजनों का विश्लेषण करने से ज्ञात होता है कि इस मंत्र के सभी वर्ण अजन्त हैं, यहां हलन्त एक भी वर्ण नहीं है अत: पैंतीस अक्षरों में पैंतीस स्वर मानने चाहिए, पर वास्तविकता यह है कि पैंतीस अक्षरों के होने पर भी यहां स्वर चौतीस हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि 'णमो अरहंताणं' इस पद में छ: ही स्वर माने जाते हैं। मंत्र शास्त्र के व्याकरण के नियमानुसार प्रथम पद 'अरहंताणं' के 'अ' का लोप हो जाता है। यद्यपि प्राकृत में एङ[2]—नेत्यनुवर्तते। एंङित्येदौतौ। ''एदोतो: संस्कृतोक्त: संधि: प्राकृते तु न भवति। यथा देवो अहिणंदणो, अहो अच्चरिअं इत्यादि'', सूत्र के अनुसार संधि न होने के कारण 'अ' का अस्तित्व ज्यों का त्यों रहता है। अ का लोप या खण्डाकार नहीं होता, किन्तु मंत्रशास्त्र में 'बहुलम्' सूत्र की प्रवृत्ति मानकर 'स्वरयोख्यवधाने प्रकृतिभावो लोपो वैकस्य'[3] इस सूत्र के अनुसार अरिहंताणं वाले पद के 'अ' का लोप विकल्प से हो जाता है। अत: इस पद में छ: ही स्वर माने जाते हैं। इस प्रकार मंत्र में कुल पैंतीस अक्षर होने पर भी चौतीस ही स्वर रहते हैं। अत: स्वर चौतीस एवं व्यंजन तीस कुल मिलाकर इस महामंत्र में पांच पद के चौसठ अक्षर होते हैं। इस प्रकार वर्णमाला की संख्या की अपेक्षा भी इस महामंत्र में द्रव्यश्रुत की पूरी वर्णमाला आ जाती है। इन चौसठ अनादि वर्णों द्वारा समस्त श्रुत ज्ञान के अक्षरों का प्रमाण प्राप्त किया जाता है।

इस प्रकार नमस्कार महामंत्र में 5 पद, 64 बीज, 35 अक्षर, 58 मात्राएं, 34 स्वर एवं 30 व्यंजन—यह एक अद्वितीय बीज संयोजन है। चूलिका सहित नमस्कार महामंत्र में 9 पद, 8 संपदा और 68 अक्षर हैं। संपदा अर्थात् अर्थ का विश्राम। शास्त्रों में इसकी व्याख्या करते हुए कहा गया है—''सांगत्येन पद्यते

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिच्छिद्यतेऽर्थोयाभिरिति संपदः''। जिससे अच्छी तरह अर्थ समझ में आ जाये उसे संपदा कहते हैं। इस महामंत्र में आठ संपदाओं का उल्लेख किया गया है। प्रथम सात पद की सात संपदा और आठवें व नवें पद की एक संपदा को मिलाने से आठ संपदा हुई।

इस महामंत्र का जप करते समय उतावलापन, उच्चारण की अस्पष्टता और कायिक अस्थिरता से अवश्य बचना चाहिए। मंत्र स्रष्टा आचार्यों ने इन्हीं सब तथ्यों को ध्यान में रखकर महामंत्र के पदों पर, अक्षरों पर, विरामस्थल, उच्छ्वास आदि की संख्याएं निर्धारित की हैं। चूलिका सहित नौ पदों में स्वर यावत् निःश्वास तक की तालिका निम्नोक्त रूप से समझी जा सकती है—

1. स्वर	—	6
2. व्यंजन	—	62
कण्ठस्थानी व्यंजन	—	31
मूर्धन्य व्यंजन	—	9
ओष्ठस्थाई व्यंजन	—	13
तालव्य व्यंजन	—	3
दन्त्य व्यंजन	—	8
3. अर्द्धस्वर	—	15
4. उष्माक्षर	—	11
5. अनुस्वार	—	13
6. मात्रा	—	58
7. उच्छ्वास	—	पांच पदों की एक आवृत्ति में तीन।
8. निःश्वास	—	पांच पदों की एक आवृत्ति में तीन।

पाप के 108 हेतु माला के 108 मणके

मर्यादा महोत्सव के पश्चात् कई सिंघाड़े एक साथ अपने-अपने चातुर्मासिक क्षेत्र की ओर विहार कर रहे थे। आचार्यश्री तुलसी ने उनको अनेक शिक्षाएं प्रदान कीं। शिक्षात्मक प्रेरक बिन्दुओं में एक बिन्दु था, कन्याओं एवं नई बहुओं को गुरु धारण कराते समय उन्हें तत्त्व बोध देने का प्रयास करना। बात-बात में तत्त्वबोध कैसे दिया जा सकता है? यह समझाने की दृष्टि से आचार्यश्री ने साध्वियों से एक प्रश्न किया—नमस्कार महामंत्र की माला फेरती हो? साध्वियों

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

ने सकारात्मक उत्तर दिया। आचार्य प्रवर का दूसरा प्रश्न था–माला के मणके 108 ही क्यों होते हैं? जप के लिए संख्या का निर्धारण क्यों किया गया है?

एक साध्वी बोली नमस्कार महामंत्र के पांच पदों के 108 गुण होने के कारण 108 मणकों पर जप किया जाता है।

इसके अतिरिक्त कोई दूसरा कारण ध्यान में है–आचार्यश्री के इस प्रश्न ने साध्वियों को मौन कर दिया। उनकी मौन जिज्ञासा को समाहित करते हुए आचार्यश्री ने कहा–हर प्रश्न के उत्तर में कुछ नया सोचने की मनोवृत्ति रहनी चाहिए। प्रस्तुत प्रसंग में जैनदर्शन के तीन शब्द विचारणीय हैं–1. संरंभ, 2. समारंभ और 3. आरंभ।

1. संरंभ–हिंसा आदि पापकारी प्रवृत्ति करने के लिए उद्यत होना।
2. समारंभ–हिंसा आदि पापकारी प्रवृत्ति के लिए साधन जुटाना।
3. आरंभ–हिंसा आदि पापकारी प्रवृत्ति में प्रवृत्त होना।

उक्त तीन कारणों से जीव कर्म का बंधन करता है। इन तीन कारणों को मन, वचन और काया–इन तीन योगों से गुणा किया जाये तो 3×3=9 होते हैं। इन नौ प्रवृत्तियों को तीन करण अर्थात् करना, करवाना और अनुमोदन करना से गुणा करें तो 9×3=27 की संख्या आती है।

कर्मबंध का मूल निमित्त है–कषाय। उसके चार भेद हैं–1. क्रोध, 2. मान, 3. माया और 4. लोभ। पूर्वोक्त 27 की संख्या को 4 से गुणा करने पर 27×4=108 होती है। इस कथन का प्रतिपाद्य है कि 108 हेतुओं से व्यक्ति पाप का अर्जन करता है। इसलिए 108 बार जप करने की प्रक्रिया सुझाई गई है। तत्त्व बोध का नया तरीका समझाकर गुरुदेव ने साध्वियों के मन को आह्लादित कर दिया।[4]

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि पाप के 108 हेतुओं को क्षीण करने के प्रतीक हैं–माला के 108 मणके। पंच परमेष्ठी मंत्र में किसी व्यक्ति विशेष को नमस्कार न कर उनके 108 गुणों को नमस्कार किया गया है। महामंत्र की प्रभावकता का यही राज है।

ऋणमुक्ति का प्रतीक महामंत्र

संसार सागर में परिभ्रमण कराने वाले पांच आश्रव और संसार सागर से निस्तार कराने वाले पंच परमेष्ठी, जिनकी अन्तरात्मा में पांच संवर तत्त्व की

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

साधना अन्तर्निहित है। गणितीय दृष्टि से इसका विश्लेषण रहस्यमय भी है और महत्त्वपूर्ण भी है। संसारी प्राणी के ऋण को जानने के लिए पांच आश्रव को क्रमशः 1, 2, 3 के क्रम से लिखने पर 12345 की संख्या बनती है।

मिथ्यात्व आश्रव का प्रतीक 1 का अंक है।

अव्रत आश्रव का प्रतीक 2 का अंक है।

प्रमाद आश्रव का प्रतीक 3 का अंक है।

कषाय आश्रव का प्रतीक 4 का अंक है।

योग आश्रव का प्रतीक 5 का अंक है।

इन अंकों को एक-दूसरे के समीप अनुक्रम पूर्वक रखने से 12345 की संख्या बनती है।

''कर्माकर्षक आत्म परिणाम आश्रवः''। शुभ-अशुभ कर्म को ग्रहण करने वाले जीव के आत्म-परिणाम आश्रव हैं। वे उपरोक्त मिथ्यात्व आदि पांच प्रकारों में अभिव्यक्त होते हैं।

आश्रव का प्रतिपक्षी तत्त्व है–संवर। संवर शब्द को परिभाषित करते हुए कहा गया है–''आश्रव निरोधः संवरः''। आश्रव का निरोध करने वाला तत्त्व संवर है। संवर के निम्नोक्त पांच प्रकार हैं–

1. सम्यक्त्व संवर, 2. व्रत संवर,
3. अप्रमाद संवर, 4. अकषाय संवर,
5. अयोग संवर।

जैन आगमों में आत्म-विकास की चौदह भूमिकाओं का एक विकासक्रम है, उसे चौदह गुणस्थान (जीव-स्थान) के नाम से पहचाना जाता है। आत्म-विशुद्धि की इन चौदह भूमिकाओं के निर्माण का आधार है–मोहकर्म और पांच आश्रव तत्त्वों की न्यूनाधिकता, क्योंकि मोहकर्म और आश्रव जितने-जितने दुर्बल होते हैं, उतने ही अधिक आत्मगुण विकास पाते हैं और वह विकास ही गुणस्थान है। पंच-परमेष्ठी का स्थान इन गुणस्थानों के क्रम की छठी भूमिका से प्रारंभ होकर आत्म-विकास के आधार पर तेरहवीं भूमिका में पहुँचने पर केवल ज्ञान को उपलब्ध होता है और चौदहवीं भूमिका तक उनका अस्तित्त्व है, फिर शाश्वत पद अर्थात् सिद्ध पद की प्राप्ति होती है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अब यह समझना है कि संसारी प्राणी 12345 रुपयों के कर्ज को महामंत्र नवकार की आराधना से किस प्रकार उतारता है और ऋणमुक्त होता है।

इस अनंत संसार में परिभ्रमणशील प्रथम गुणस्थान स्थित जीवों के पांच आश्रव रूप द्वार खुला रहने से 12345 रुपयों का कर्ज रहता है। शुभ अध्यवसाय, शुभ भाव अथवा महामंत्र के प्रभाव से आत्मा की विकास यात्रा प्रारंभ होती है। आत्मा मिथ्यात्व को छोड़कर सम्यक्त्व रत्न को उपलब्ध करता है। सम्यक्त्व रत्न की उपलब्धि होने पर मिथ्यात्व के एक अंक का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। इसका मतलब सम्यक्त्व आते ही दस हजार रुपयों का कर्जा उतर गया। सम्यक्त्व अवस्था में महामंत्र का जप अथवा पंच-परमेष्ठी का अनुचिंतन करने से कर्मों की बंध श्रृंखला शिथिल होने लगती है, जिससे त्याग-चेतना का विकास होता है और सम्यक्त्व संवर की उपलब्धि होती है। आत्म-विकास की चौथी भूमिका पर स्थित जीव सम्यक्त्वी तो रहता है पर आंशिक व्रत-चेतना का विकास आत्म-विकास की पांचवीं भूमिका (श्रावक) पर होता है अत: सम्यक्त्व संवर पांचवें गुणस्थान में होता है। इस प्रकार चतुर्थ व पंचम गुणस्थान स्थित जीवों के 2345 रुपयों का कर्जा रहता है।

सम्यक्त्व व व्रत चेतना के साथ महामंत्र की साधना आगे बढ़ती है तब व्रत चेतना का विस्तार सम्पूर्ण व्रत के रूप में होता है। अर्थात् व्रत संवर का विकास होता है। व्रत संवर की प्राप्ति होते ही अव्रत आश्रव के अंक-2 का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। 2 अंक का अस्तित्व समाप्त होते ही 2000 रुपयों का कर्जा उतर जाता है। अत: आत्म-विकास की छठी भूमिका (प्रमत्त संयत गुणस्थान) पर 345 रुपयों का कर्ज रहता है।

सम्यक्त्व संवर और व्रत संवर के साथ महामंत्र का जप आत्मा में स्थित प्रमाद आश्रव के बंधन को शिथिल कर निर्जरित कर देता है तब अप्रमाद संवर का प्रवेश होता है और प्रमाद आश्रव का अस्तित्व समाप्त हो जाता है। प्रमाद आश्रव के साथ अंक 3 का अस्तित्व भी समाप्त हो जायेगा अत: वहां पर सिर्फ 45 रुपयों का कर्ज अवशेष रहता है। यह आत्म-विकास की सातवीं भूमिका पर घटने वाली घटना है।

सम्यक्त्व, व्रत, अप्रमाद संवर के साथ महामंत्र की यात्रा का प्रभाव कषाय आश्रव पर होगा। उससे कषाय आश्रव के साथ अंक-4 का अस्तित्व समाप्त हो जायेगा। कषाय आश्रव का अस्तित्व समाप्त होते ही अकषाय संवर की प्राप्ति होगी। यह आत्म-विकास की दसवीं भूमिका के बाद घटने वाली घटना है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

क्षपक श्रेणी पर आरूढ़ संयति के बारहवें गुणस्थान पर केवल 5 रुपयों का कर्ज रहता है। वह भी शुभ योग आश्रव रूप होता है। क्रमशः साधना आगे बढ़ती है और साधक चार घाती कर्मों को क्षीण कर आत्म-विकास की तेरहवीं भूमिका पर केवलज्ञान प्राप्त कर लेता है। तत्पश्चात् योग आश्रव का निरोध होने से अयोग संवर चौदहवें गुणस्थान में उपलब्ध होते ही 'अ इ उ ऋ लृ' इन पाँच ह्रस्व अक्षरों के उच्चारण जितने समय में 5 रुपयों का कर्ज भी उतर जाता है और आत्मा सर्वथा कर्जमुक्त/कर्ममुक्त हो मोक्ष पद/शाश्वत पद को प्राप्त होती है।

अतः यह निर्विवाद कहा जा सकता है कि जिस प्रकार भोजन का प्रत्येक कण शरीर का पोषण करता है, इन्द्रियों की शक्ति बढ़ाता है और क्षुधा को शांत करता है, उसी प्रकार महामंत्र के जप का प्रत्येक क्षण व उसका नियमित पुनरावर्तन अज्ञान, प्रमाद, कषाय आदि को क्षीण कर सिद्धावस्था तक पहुँचाता है।

महामंत्र में सर्वश्रुत ज्ञान के अक्षरों का योग

आगम साहित्य की दृष्टि से महामंत्र को सर्वश्रुतों के आभ्यन्तर माना है। चूलिका सहित यह महामंत्र महाश्रुत स्कन्ध की उपमा को प्राप्त है। प्रमुख सभी श्रुत स्कन्धों का मंगलाचरण इसी महामंत्र से हुआ है। इतना ही नहीं इसके गणितीय पक्ष के आँकड़ों का आकलन किया जाये तो इसमें सर्वश्रुत ज्ञान के अक्षरों का योग अपना एक वरेण्य स्थान रखता है, जिसको निम्न प्रकार से समझा जा सकता है–

1. नमस्कार महामंत्र के 35 अक्षर हैं। इस मंत्र के अक्षरों की संख्या के इकाई दहाई रूप अंकों को परस्पर गुणा करने से योग और प्रमाद संख्या आती है। यथा–पैंतीस अक्षर हैं, इसमें इकाई का अंक 5 और दहाई का अंक 3 है, अतः 5×3=15 योग या प्रमाद।

2. नमस्कार महामंत्र के इकाई, दहाई रूप अंकों को जोड़ने से कर्म संख्या आती है, यथा–35 अक्षर संख्या में 5+3=8 कर्म संख्या।

3. नमस्कार महामंत्र की अक्षर संख्या की इकाई अंक संख्या में से दहाई रूप अंक संख्या घटाने से मूल द्रव्य संख्या, नय संख्या, भाव संख्या आती है, यथा–35 अक्षर संख्या है, इसका इकाई अंक 5 और दहाई अंक 3 है, अतः 5-3=2 जीव और अजीव द्रव्य, द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नय या निश्चय और व्यवहार नय, सामान्य और विशेष, अंतरंग और बहिरंग अथवा द्रव्यहिंसा और भावहिंसा, प्रत्यक्ष और परोक्ष प्रमाण।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

4. नमस्कार महामंत्र की स्वर संख्या के इकाई, दहाई रूप अंकों का गुणा कर देने पर अविरति या श्रावक के व्रतों की संख्या अथवा अनुप्रेक्षाओं की संख्या निकलती है। यथा—नमस्कार महामंत्र की स्वर संख्या 34 है। अत: 4×3=12 अविरति, श्रावक के व्रत या अनुप्रेक्षा।

5. नमस्कार महामंत्र की स्वर संख्या के इकाई, दहाई के अंकों को जोड़ देने पर तत्त्व, नय या सप्तभंगी के भंगों की संख्या आती है, यथा—34 स्वर संख्या है, अत: 4+3=7 तत्त्व, नय या भंग संख्या।

6. नमस्कार महामंत्र के स्वर, व्यंजन और अक्षरों की संख्या का योग कर देने पर प्राप्त योग की संख्या पृथकत्त्व के अनुसार अन्योन्य योग करने पर पदार्थ संख्या आती है, यथा—34 स्वर, 30 व्यंजन और 35 अक्षर हैं। अत: 34+30+35=99। इस प्राप्त योगफल का अन्योन्य योग किया 9+9=18 पुन: अन्योन्य योग 1+8=9 पदार्थ संख्या।

7. नमस्कार महामंत्र के समस्त स्वर और व्यंजनों की संख्या को सामान्य पद संख्या से गुणा कर स्वर संख्या का भाग देने पर शेष तुल्य गुणस्थान और मार्गणा संख्या आती है। अथवा नमस्कार महामंत्र के समस्त स्वर और व्यंजनों की संख्या से गुणा कर व्यंजनों की संख्या का भाग देने पर शेष तुल्य गुणस्थान और मार्गणा संख्या आती है। यथा—इस महामंत्र के विशेष पद 11, सामान्य पद 15, स्वर 34, व्यंजन 30 हैं। अत: 34+30=64, 64×5=320, 320÷34=9 लाब्धी और 15 शेष। यही शेष संख्या गुणस्थान या मार्गणा की है।

8. समस्त स्वर और व्यंजनों की संख्या को व्यंजनों की संख्या से गुणा कर विशेष पद संख्या का भाग देने पर शेष तुल्य द्रव्यों के काय की संख्या आती है। यथा—30+34=64, 64×30=1920, 1920÷11=174 लाब्धी और 6 शेष। शेष संख्या ही काय और द्रव्यों की संख्या है। अथवा समस्त स्वर और व्यंजनों की संख्या को स्वर संख्या से गुणा कर सामान्य पद संख्या का भाग देने पर शेष तुल्य द्रव्यों 64×34=2176, 2176÷5=435 लाब्धी और 1 शेष। यही शेष प्रमाण द्रव्य और काय की संख्या है।

9. नमस्कार महामंत्र की मात्राओं, स्वर, व्यंजन और विशेष पद के योग में सामान्य अक्षरों का अन्योन्य गुणनफल जोड़ देने पर कुल कर्म प्रकृतियों की संख्या होती है, यथा—इस महामंत्र की 58 मात्राएं, 34 स्वर, 30 व्यंजन, 11

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

विशेष पद, 35 सामान्य अक्षर और सामान्य अक्षरों का अन्योन्य गुणनफल 5×3=15। अत: 58+34+30+11+15=158 कर्म प्रकृतियां हैं।

10. मात्राओं, स्वर और व्यंजनों की संख्या का योग कर देने पर उदय योग्य कर्म-प्रकृतियां आती हैं। यथा–58+30+34=122 उदय योग्य प्रकृति संख्या।

11. मंत्र, स्वर व व्यंजन संख्या का पृथकत्व के अनुसार अन्योन्य गुणा करने से बंध योग्य प्रकृतियों की संख्या आती है। यथा व्यंजन 30, स्वर 34, अन्योन्य गुणनफल 3×0=0। इस क्रम में शून्य दस का मान देता है। 4×3=12 और 12×10=120 बंध योग्य प्रकृतियां।

12. नमस्कार महामंत्र की व्यंजन संख्या का इकाई, दहाई क्रम से योग करने पर रत्नत्रय की संख्या आती है, यथा–30 व्यंजन संख्या 0+3=3 रत्नत्रय संख्या। द्रव्य कर्म, भाव कर्म और नो कर्म, मनोगुप्ति, वचनगुप्ति और कायगुप्ति अथवा मन, वचन, काय योग।

13. स्वर और व्यंजन की संख्या का योग कर इकाई, दहाई अंक क्रम से गुणा करने पर तीर्थंकर संख्या आती है। यथा–30+34=64 अन्योन्य क्रम करने पर 4×6=24 तीर्थंकर संख्या।

14. स्वर संख्या को इकाई, दहाई क्रम से गुणा करने पर चक्रवर्तियों की संख्या आती है, यथा–34 स्वर, अन्योन्य करने पर 4×3=12 चक्रवर्ती, द्वादश अनुप्रेक्षा, बारह भावनाएं, द्वादश श्रावक व्रत आदि।

15. स्वर, व्यंजन और अक्षरों के योग का अन्योन्य क्रम से योग करने पर नारायण, प्रतिनारायण और बलदेव की संख्या आती है। यथा स्वर 34, व्यंजन 30, अक्षर 35 अत: 30+34+35=99। अन्योन्य योग 9+9=18 पुन: अन्योन्य क्रम योग 1+8=9 नारायण, प्रतिनारायण, बलदेवों की संख्या।

16. नमस्कार महामंत्र की मात्राओं का इकाई, दहाई क्रम से योग करने पर चारित्र संख्या आती है। यथा–58 मात्राएं 8+5=13 चारित्र।

17. नमस्कार महामंत्र की मात्राओं का इकाई, दहाई क्रम से गुणा करने पर जो गुणनफल प्राप्त हो, उसका पारस्परिक योग करने पर गति, कषाय और बंध संख्या आती है। यथा–58 मात्राएं हैं अत: 8×5=40, 0+4=4 गति, कषाय और बंध संख्या।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

18. स्वर और व्यंजन संख्या का पृथकत्त्व अन्योन्य क्रम के अनुसार गुणा कर योग कर देने पर परीषह संख्या आती है। यथा—34 स्वर, 30 व्यंजन, 4×3=12, 0×3=0। इस क्रम में शून्य दस के तुल्य है। अत: 12+10=22 परीषह संख्या।

19. इस महामंत्र के कुल स्वर और व्यंजनों का योग 34+30=64 है। मूल वर्णों की संख्या भी चौसठ है। प्राकृत भाषा के नियमानुसार अ इ उ और ए मूल स्वर तथा ज झ ण त द ध य र ल व स और ह—ये मूल व्यंजन इस मंत्र में निहित हैं। अतएव 64 अनादि मूल वर्णों को लेकर समस्त श्रुतज्ञान के अक्षरों का प्रमाण निम्न प्रकार निकाला जा सकता है—

चउट्ठिपदं विरलिय दुगं च दाउण संगुणं किच्चा।
सऊणं च कए पुण सुदणाणस्सक्खरा होंति॥

अर्थात् उक्त चौसठ अंकों का विरलन करके प्रत्येक के ऊपर दो का अंक देकर एक घटा देने से जो प्रमाण रहता है, उतने ही श्रुत ज्ञान के अक्षर होते हैं। यहाँ 64 अक्षरों का विरलन कर रखा तो—

$1^2/1^2/1^2/1^2/1^2/1^2/1^2/1^2/1^2/$..................$1^2/$=
18446744073709551616-1=18446744073709551615

इन अक्षरों का प्रमाण गाथा में निम्न प्रकार कहा गया है—

एकट्ठं च च य छस्सत्तयं च च य सुण्णसत्ततियसत्ता।
सुण्णं णव पण पंच य एक्कं छक्के क्कगो य पणयं च॥ [5]

इस प्रकार नमस्कार महामंत्र के व्यंजन, स्वर, अक्षर और मात्राओं का गणित करने पर इस महामंत्र में समस्त श्रुत-ज्ञान का समावेश हो जाता है। अत: इस महामंत्र में समस्त श्रुत ज्ञान के अक्षर निहित हैं, क्योंकि अनादि निधान मूलाक्षरों पर से ही उक्त प्रमाण निकाला गया है अत: संक्षेप में जिनवाणी रूप यह मंत्र है।

पंच परमेष्ठी की गणना

पंच परमेष्ठी की गणना करने पर सबसे ज्यादा सिद्ध जीव होंगे। सिद्ध अनंत हैं। इस अवसर्पिणी काल में अरिहंत चौबीस हुए हैं। अन्य धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि जिस प्रकार जैन धर्म में 24 तीर्थंकर की संख्या उपलब्ध है, उसी प्रकार अन्य धर्मों में भी 24 की संख्या

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मिलती है। यथा–वैष्णव 24 अवतार, बौद्ध मत वाले 24 दीपंकर और मुसलमान 24 पयंबर मानते हैं अर्थात् इन सभी के अनुसार परमात्मा की संख्या 24 ही मान्य है। परमात्मा शब्द के अंकों का जोड़ भी 24 ही होता है, जैसे–परमात्मा–५+२+४।।+८+४।।=२४ अनंत अवसर्पिणी-उत्सर्पिणी काल की अपेक्षा अरिहंत अनंत हो चुके हैं इसलिए बड़ी साधु वंदना में कहा गया है[6]–

नमूं अनंत चौबीसी, ऋषभादिक महावीर।
इण आर्य क्षेत्र मां, घाली धर्म नी सीर॥

महा अतुल बली नर, शूरवीर ने धीर।
तीर्थ प्रर्वतावी पहुँच्या, भव जल तीर॥

वर्तमान समय में अर्हतों की संख्या महाविदेह क्षेत्र की अपेक्षा बीस है अत: यह उक्ति विश्रुत है 'बीस विहरमान सदा शाश्वत' अर्थात् कम से कम बीस तीर्थंकर शाश्वत रहते हैं। यदि अर्हंत भगवन्तों की उत्कृष्ट संख्या एक साथ हो तो एक सौ सत्तर हो सकती है। यदि एक-एक महाविदेह में बत्तीस-बत्तीस तीर्थंकर एक साथ हो तो पांच महाविदेह क्षेत्र में 32×5=160 तथा पांच भरत क्षेत्र के एक-एक तीर्थंकर और पांच एरभरत क्षेत्र के एक-एक तीर्थंकर, इस प्रकार कुल संख्या 160+5+5=170 होती है। तीर्थंकरों की यह उत्कृष्ट संख्या इस अवसर्पिणी काल के दूसरे तीर्थंकर श्री अजितनाथ के समय में हुई थी। ऐसा अवसर कभी कभार अनंत चौबीसी के बाद मिलता है।

अढ़ाई द्वीप में कम से कम दो करोड़ केवली शाश्वत रहते हैं। महाविदेह क्षेत्र में प्रत्येक विहरमान के दस लाख केवली शाश्वत होते हैं। अत: 20 विहरमान के 20×10 लाख=2 करोड़। अढ़ाई द्वीप में अधिक से अधिक नौ करोड़ केवली हो सकते हैं। प्रत्येक महाविदेह के एक करोड़ अस्सी लाख तथा पांच महाविदेह के नौ करोड़ उत्कृष्ट केवली हो सकते हैं।

अढ़ाई द्वीप में जघन्य दो हजार करोड़ (20 अरब) उत्कृष्ट नौ हजार करोड़ (नब्बे अरब) साधु हो सकते हैं।

इस अवसर्पिणी काल में 24 तीर्थंकरों के 1452 गणधर हुए, जिन्होंने तीर्थंकरों के गण का भार संभाला।

चौबीस तीर्थंकरों के साधुओं की कुल संख्या–28,48,000 है।[7] प्रत्येक तीर्थंकर के साधुओं की संख्या क्रमश: निम्न प्रकार है–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

क्रम	तीर्थंकर का नाम	साधुओं की संख्या
1.	भगवान ऋषभ प्रभु	84,000
2.	भगवान अजित प्रभु	1,00,000
3.	भगवान संभव प्रभु	2,00,000
4.	भगवान अभिनंदन प्रभु	3,00,000
5.	भगवान सुमति प्रभु	3,20,000
6.	भगवान पद्म प्रभु	3,30,000
7.	भगवान सुपार्श्व प्रभु	3,00,000
8.	भगवान चन्द्र प्रभु	2,50,000
9.	भगवान सुविधि प्रभु	2,00,000
10.	भगवान शीतल प्रभु	1,00,000
11.	भगवान श्रेयांस प्रभु	84,000
12.	भगवान वासुपूज्य प्रभु	72,000
13.	भगवान विमल प्रभु	68,000
14.	भगवान अनंत प्रभु	66,000
15.	भगवान धर्म प्रभु	64,000
16.	भगवान शांति प्रभु	62,000
17.	भगवान कुंथु प्रभु	60,000
18.	भगवान अर प्रभु	50,000
19.	भगवान मल्लि प्रभु	40,000
20.	भगवान मुनि सुव्रत प्रभु	30,000
21.	भगवान नमि प्रभु	20,000
22.	भगवान अरिष्टनेमि प्रभु	18,000
23.	भगवान पार्श्व प्रभु	16,000
24.	भगवान महावीर प्रभु	14,000
	कुल योग	**28,48,000**

अट्ठाइस लाख, अड़तालीस हजार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चौबीस तीर्थंकरों की साध्वियों की संख्या निम्न प्रकार है–

क्रम	तीर्थंकर नाम	प्रमुख शिष्या	साध्वियों की संख्या
01.	भगवान ऋषभ प्रभु	ब्राह्मी सुन्दरी	3,00,000
02.	भगवान अजित प्रभु	फाल्गुनी जी	3,30,000
03.	भगवान संभव प्रभु	सोमाजी	3,36,000
04.	भगवान अभिनंदन प्रभु	उत्तराणीजी	6,03,000 (मतान्तर से 6,30,000)
5.	भगवान सुमति प्रभु	कासवाजी	5,30,000
6.	भगवान पद्म प्रभु	रत्नाजी	4,20,000
7.	भगवान सुपार्श्व प्रभु	सोमाजी	4,30,000
8.	भगवान चन्द्र प्रभु	सोमाजी	3,38,000
9.	भगवान सुविधि प्रभु	वारूणीजी	1,20,000
10.	भगवान शीतल प्रभु	सुलसाजी	1,06,000 (मतान्तर से 1,00,006)
11.	भगवान श्रेयांस प्रभु	धरणीजी	1,03,000
12.	भगवान वासुपूज्य प्रभु	धारिणीजी	1,00,000
13.	भगवान विमल प्रभु	धरणिधराजी	1,00,800
14.	भगवान अनंत प्रभु	पद्मावतीजी	62,000
15.	भगवान धर्म प्रभु	शिवजी	62,400
16.	भगवान शांति प्रभु	सुदूजी	61,500 (मतान्तर से 89,000)
17.	भगवान कुंथु प्रभु	अञ्जुजी	60,000
18.	भगवान अर प्रभु	रखियांजी	66,000
19.	भगवान मल्लि प्रभु	बंधुमतिजी	55,000
20.	भगवान मुनि सुव्रत प्रभु	पुष्फवतीजी	50,000
21.	भगवान नमि प्रभु	अनिलाजी	41,000
22.	भगवान अरिष्टनेमि प्रभु	यक्षाजी	40,000
23.	भगवान पार्श्व प्रभु	पुष्फचूलाजी	38,000
24.	भगवान महावीर प्रभु	चन्दन बालाजी	36,000

कुल संख्या–44,25,400

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

वर्तमान में उपलब्ध साध्वियों की संख्या 44,25,400 है। इसमें कुछ ग्रंथों में अलग-अलग संख्या है, जो पास में दी हुई है। जयमलजी महाराज ने साध्वियों की संख्या बड़ी चौबीसी में 48,70,800 दी है।[8] संभव है उस समय मतान्तर में इतनी ही संख्या उपलब्ध हो।

वर्तमान आगमों में चौबीस ही तीर्थंकरों के साधु-साध्वियों की संख्या का स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है, अत: ऐसा मतान्तर संभव है।

निष्कर्ष

उपरोक्त विश्लेषण के बाद नि:संदेह कहा जा सकता है कि गणित का विशाल साम्राज्य महामंत्र में अन्तर्निहित है, जिसके द्वारा जीवन रूपी गणित को पढ़ने की दिव्य दृष्टि मिलती है। उस दिव्य दृष्टि को पाने के लिए साधक को इस महामंत्र के जप में वैसे ही तन्मय हो जाना चाहिए, जैसे—समुद्र में मछली। समुद्र में मछली को दसों दिशाओं में पानी का ही अनुभव होता रहता है। इसी प्रकार जप करते समय इस महामंत्र के मंत्राक्षरों का आन्दोलन चारों ओर व्याप्त हो जाये और स्वयं मंत्राक्षर ध्वनि के महासागर में डूब गया हूँ—ऐसा अनुभव होना चाहिए। इस प्रकार तन्यमतापूर्वक जप करने से महामंत्र के दिव्य चमत्कारों का साधक को स्वयं अनुभव होने लगता है और एक दिन वह दिव्य दृष्टि को उपलब्ध हो जाता है।

अंक गणित में 1 की संख्या को जितना महत्त्व प्राप्त है, उतना ही महत्त्व धर्म क्षेत्र में परमेष्ठी नमस्कार का है। अर्हत् आदि महापुरुषों का नाम लेने से पाप मल उस प्रकार दूर हो जाते हैं, जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश से अंधकार का नाश हो जाता है तथा कमल खिल उठते हैं। कमलों के विकास में सूर्य निमित्त कारण है, साक्षात्कर्त्ता नहीं। इसी प्रकार अर्हत्, सिद्ध, आचार्य आदि महान् आत्माओं का नाम भी संसारी आत्माओं के उत्थान में निमित्त कारण बनता है। सत्पुरुषों का नाम लेने से विचार पवित्र बनते हैं। विचार पवित्र होने से आचरण भी शुद्ध हो जाता है और शुद्धाचरण से जीव उर्ध्व गति को प्राप्त होता है।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि इन पैंतीस अक्षर रूप बिन्दु में सर्व सुख का सिन्धु समाया हुआ है। वट से बीज में अनंत विशाल वृक्ष की क्षमताएं हैं, वैसे ही नमस्कार महामंत्र में अपार लब्धि, अगणित शक्ति और दिव्य दृष्टि प्रकट करने की क्षमता गागर में सागर के न्याय से भरी पड़ी है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ–

1. विश्व प्रसिद्ध अनमोल खजाने, पृ. 18
2. त्रिविक्रमदेव का प्राकृत व्यकरण, पृ. 14, सूत्र-21
3. जैन सिद्धान्त कौमुदी, पृ. 4, सूत्र 1/2/2
4. प्रेरणा पल दो पल, भाग-2, पृ. 36
5. मंगलमंत्र णमोकार : एक अनुचिंतन, पृ. 75, 76
6. बड़ी साधु वंदना, गाथा-1, 2
7. बड़ी साधु वंदना, गाथा-99
8. बड़ी साधु वंदना, गाथा-104

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

23. नमस्कार महामंत्र का गणितानुयोग

नमस्कार महामंत्र पाप रूपी पर्वत को भेदने के लिए वज्र के समान है। दुःख रूपी बादलों को बिखेरने के लिए प्रचण्ड पवन के समान है। मोहरूपी दावानल को शांत करने के लिए आषाढ़ी मेघ के समान है। अज्ञान रूपी अंधकार को दूर करने के लिए सूर्य के समान है। सम्यक्त्व रूपी रत्न को पैदा करने के लिए रोहणाचल पर्वत के समान है। जिस प्रकार वात-पित्त-कफ मानव शरीर के लिए आवश्यक हैं और उनका संतुलन बिगड़ जाने से मनुष्य का जीना मुश्किल हो जाता है, ठीक उसी प्रकार जीवन में सम्यक्-ज्ञान, सम्यक् दर्शन तथा सम्यक् चारित्र का होना आवश्यक है। इनके अभाव में आत्मा का विकास संभव नहीं है। ये तीनों तत्त्व मनुष्य मात्र के लिए आवश्यक हैं।

नमस्कार महामंत्र में सर्व द्रव्यों का योग देखा जा सकता है। इसमें संसार से मोक्ष प्राप्त करने का संगीत समाया हुआ है। यह सम्यक् ज्ञान-दर्शन-चारित्र को अभिव्यक्त करने की पद्धति है। यह धर्म की कथा है। इस प्रकार सर्व-अनुयोग नमस्कार महामंत्र है। गणितानुयोग की दृष्टि से महामंत्र जपने की जो विधि है, उसे अनुपूर्वी की संज्ञा से अभिहित किया गया है। गणित शास्त्र का उपयोग लोक व्यवहार चलाने के लिए तो होता ही है पर आध्यात्मिक क्षेत्र में भी इस शास्त्र का व्यवहार प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। भगवती सूत्र में श्री गांगेयजी के भंगों का उल्लेख गणित शास्त्र के आधार पर ही उल्लिखित है। जिज्ञासा होना स्वाभाविक ही है कि साधना की दृष्टि से गणित का क्या उपयोग है? समाधान की शैली में कहा जा सकता है कि साधना की दृष्टि से इसका उपयोग है—एकाग्रता का विकास। मन को स्थिर करने के लिए गणित एक प्रधान साधन है। जैनाचार्यों ने धार्मिक गणित का विधान कर मन को स्थिर करने का सुन्दर और व्यवस्थित मार्ग बतलाया है।

जिस प्रकार पशु को किसी नवीन स्थान पर नये खूंटे से बांधने पर वह विद्रोह करता है, चाहे नई जगह उसके लिए कितनी ही सुखप्रद क्यों न हो? फिर भी अवसर मिलते ही वह रस्सी तोड़कर अपने पुराने स्थान पर भाग जाना चाहता है, इसी प्रकार मन भी नये विचारों में लगना नहीं चाहता। कारण स्पष्ट है, क्योंकि विषय विचिन्तन का अभ्यस्त मन आत्म चिंतन में लगने से घबराता है। यह बहुत चंचल है। कहा भी है—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मन कभी गतिहीन कभी पंख बन जाता है,
पल भर मौन फिर शंख बन जाता है।
क्षण-क्षण बदलने वाला यह मन,
कभी राजा और कभी रंक बन जाता है॥

धार्मिक गणित के सतत अभ्यास से यह मन आत्म-चिंतन में लगता है, जिससे व्यर्थ की अनावश्यक बातें विचार क्षेत्र में प्रविष्ट नहीं हो पाती।

नमस्कार महामंत्र का गणित इसी प्रकार का है, जिससे इसके अभ्यास द्वारा मन विषय विचिन्तन से विमुख हो जाता है और नमस्कार महामंत्र की साधना में लग जाता है। आध्यात्मिकता और वैज्ञानिकता के साथ-साथ इस महामंत्र के वर्णों की संयोजना ही किसी अद्‌भुत गणित विज्ञान के निगूढ़ सिद्धान्त पर की हुई मालूम होती है, जिसके कारण अल्प प्रयत्न से ही साधक की वृत्तियों में अन्तर्मुखता आ जाती है। नमस्कार महामंत्र की अनुपूर्वी एकाग्रता को बढ़ाने वाली जप विधि है। इसके जप से कर्मों की विशेष निर्जरा होती है। इसका एक बार शुद्ध चित्त से जाप करने वाले को छः मास की तपस्या का लाभ मिलता है। कहा भी है—

अनुपूर्वी प्रतिदिन जपिये, चंचल मन स्थिर हो जावे।
छः मासी तप का फल होवै, पाप पंक सब धुल जावे॥ 1॥
मंत्रराज नवकार हृदय में, शांति सुधारस बरसाता।
लौकिक जीवन सुखमय करके, अजर-अमर पद पहुँचाता॥ 2॥

आनुपूर्वी परिभाषा और पर्याय

अनुपूर्वभाव: आनुपूर्वी अनुक्रमोऽनुपरिपाटीति पर्याया: त्र्यादिवस्तुसंहतिरिति भाव:।[1]

अनुपूर्वभाव, आनुपूर्वी, अनुक्रम और अनुपरिपाटी—ये चारों शब्द एकार्थक हैं। आनुपूर्वी का अर्थ है—तीन, चार आदि प्रदेशों की संहति।

आनुपूर्वी के प्रकार—

आणुपुव्वी दसविहा पण्णता, तं जहा—नामाणुपुव्वी, ठवणाणुपुव्वी, दव्वाणुपुव्वी, खेताणुपुव्वी, कालाणुपुव्वी, उक्कितणाणुपुव्वी, गणनानुपुव्वी, संठाणाणुपुव्वी, सामायारियाणुपुव्वी, भावाणुपुव्वी।[2]

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आनुपूर्वी के दस प्रकार प्रज्ञप्त हैं–

1. नाम आनुपूर्वी, 2. स्थापना आनुपूर्वी,
3. द्रव्य आनुपूर्वी, 4. क्षेत्र आनुपूर्वी,
5. काल आनुपूर्वी, 6. उत्कीर्तन आनुपूर्वी,
7. गणना आनुपूर्वी, 8. संस्थान आनुपूर्वी,
9. सामाचारी आनुपूर्वी, 10. भाव आनुपूर्वी।

द्रव्यानुपूर्वी के प्रकार

द्रव्यानुपूर्वी के दो प्रकार प्रज्ञप्त हैं–

1. औपनिधिकी–द्रव्य की क्रम व्यवस्था का बोध।

2. अनौपनिधिकी–द्रव्यों का नय के आधार पर विस्तार से बोध। औपनिधिकी से तात्पर्य है विवक्षित अध्यायों की पूर्वानुपूर्वी आदि के क्रम से स्थापना करना, इससे विषय-वस्तु का बोध सुगम हो जाता है। इस आनुपूर्वी के तीन प्रकार हैं–पूर्वानुपूर्वी, पश्चानुपूर्वी और अनानुपूर्वी।

प्रथमात्य आनुपूर्वी अनुक्रम: परिपाटी पूर्वानुपूर्वी।
पश्चात्यात्–चरमादारंभ: वयत्ययेनैवानुपूर्वी पश्चादानुपूर्वी।
न आनुपूर्वी यथोक्त प्रकारद्वयातिरिक्तरूपेत्यर्थ:।

पूर्वानुपूर्वी–अनुलोम क्रम–प्रथम से गणना प्रारंभ करना।

पश्चानुपूर्वी–प्रतिलोम क्रम–अंतिम से गणना प्रारंभ करना।

अनानुपूर्वी–अनुलोम क्रम और प्रतिलोम क्रम को छोड़कर कहीं से भी गणना प्रारंभ करना।

आनुपूर्वी बनाने की विधि

पुव्वानुपुव्वि हेठा समयाभेदेण कुण जहाजेट्ठं।
अवरिमतुल्लं पुरओ नसोजन पुव्वक्कमो सेसे॥

हेठिति–पढ़माए पुव्वाणुपुव्विलताए अहो भंगरयणं बितियादिलतासु। समया इति इह अणाणुपुव्विभंगरयणं व्यवस्था समयो तं अभिंद माणोत्ति तं भंगरयणव्यवस्थंअविणासेमाणो। तस्स य विणासो जति सरिसंकं एकलताए ठवेति, जति व ततिय लक्खणातो उवक्कमेणं पठवेति ता भिण्णो समयो। तं भेदं अकुव्वमाणो, कणसु जधाजेट्ठत्ति जो जस्स आदिए स तस्स जेठो भवति। जहा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दुगस्स ऐगो जेठो, अणुजेठो तिगस्स एक्को जेठाणुजेट्ठो जहा चउक्कस्स एक्को, अतो परं सव्वे जेठाणुजेट्ठा भणितव्वा।[4]

विवक्षित पदों की क्रमश: स्थापना पूर्वानुपूर्वी है। उसके नीचे शेष भंगों की यथा ज्येष्ठ स्थापना की जाती है। जो जिसकी आदि में होता है, वह ज्येष्ठ है। जैसे दो का ज्येष्ठ एक है। तीन के लिए एक अनुज्येष्ठ है। चार-पांच आदि के लिए एक ज्येष्ठानुज्येष्ठ है। उपरितन अंक के नीचे ज्येष्ठ अंक स्थापित किया जाता है। यदि ज्येष्ठ अंक न हो तो अनुज्येष्ठ और उसके अभाव में ज्येष्ठानुज्येष्ठ का न्यास किया जाता है। विशेष ज्ञातव्य है कि इस अंकन्यास में समय-भेद का वर्णन अनिवार्य है। समय भेद का अर्थ है–एक ही भंग रचना में दो सदृश अंकों की स्थापना।

द्वितीय भंग खाना की पंक्ति में अंतिम अंक न्यास प्रथम पंक्ति के अंतिम अंक के सदृश होता है। शेष अंक पूर्व क्रम से स्थापित किये जाते हैं। पूर्व क्रम का अर्थ है–पहले छोटी संख्या तत्पश्चात् बड़ी संख्या अर्थात् एक के बाद दो.....।

पुव्वाणुपुव्वि इचिछत जति वण्णाते परोप्परब्भत्था। अंतहियभागलद्धा वोचत्थंकाण ठाणंते॥ आदित्थेसवि एवं जे जत्थ ठिता य ते तु वज्जेजा। सेसेही य वोचत्थं कमुक्कमा पूर सरिसेहि॥

भागहित लद्धठवणा दुगादि एगुत्तरेहिं अब्भत्था।
सरिसंकरयणताणा दिगादियाणं मुणेयव्वा॥

पढमदुगट्ठाणेसु जेट्ठादितिगेण उत्तदिट्ठंतो।
अणुलोमं पडिलोमं पूरे सेसेहि उवउत्तो॥[5]

पुव्वानुपूर्वी में स्थापित अंकों का परस्पर गुणन करने पर जो संख्या आती है, उतने ही विकल्प होते हैं। जैसे–तीन संख्या के विकल्प करने हो तो– $1\times2\times3=6$

अन्तस्थित का भाग देने पर $6\div3=2$

दो विकल्पों में अंतिम अंक सदा अपरिवर्तित रहेगा। दो विकल्पों के बाद तीसरे में तीसरा अंक परिवर्तित रहेगा।

प्रथम दो स्थान सदा अनुलोम-विलोम क्रम से बदलते रहेंगे। उसके नीचे सदृश अंक नहीं आयेगा। उदाहरण के लिए यहां तीन अंकों की स्थापना की जा रही है– 1, 2, 3। इनका परस्पर गुणन करने पर छ: भंग ($1\times2\times3=6$) बनते हैं। प्रथम भंग पूर्वानुपूर्वी क्रम से, अंतिम भंग पश्चानुपूर्वी क्रम से और मध्यवर्ती चार भंग अनानुपूर्वी क्रम से स्थापित किये जाते हैं–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्थापना—

1	2	3
2	1	3
1	3	2
3	1	2
2	3	1
3	2	1

यहाँ दूसरे भंग में एक का ज्येष्ठ नहीं है, जो दो के नीचे स्थापित है। एक के आगे तीन स्थापित है, क्योंकि यह उपर्युक्त अंक के सदृश है। एक के पीछे शेष बचा अंक दो स्थापित है।

इसी क्रम पद्धति में चार, पांच यावत् अनंत पदों की आनुपूर्वी की रचना की जा सकती है—

नमस्कार महामंत्र आनुपूर्वी विधि

उपरोक्त नियमानुसार नमस्कार महामंत्र में पांच पद हैं, इनके नियंत अंक क्रमशः एक, दो, तीन, चार और पांच हैं। इनका कितने प्रकार से स्थापन हो सकता है? यह जानने के लिए क्रमशः इन अंकों का परस्पर गुणा करना चाहिए। यथा—1×2×3×4×5=120। इस प्रकार परमेष्ठियों का क्रम 120 प्रकार का होगा। पहली पंक्ति अनुक्रम से, अंतिम पश्चात् क्रम से और बीच की शेष 118 पंक्तियां अक्रम से रहेगी। परन्तु इनको गणितीय नियमानुसार ऊपर बताये भंगों के क्रम से स्थापित किया जाता है। इसलिए 120 पंक्तियों के 20 कोष्ठक बनाये गये हैं। इस रहस्य को आनुपूर्वी, जो यहाँ गणितीय पद्धति से दी जा रही है, उसे देखकर आसानी से समझा जा सकता है। इस प्रकार अनुपूर्वी में 120 बार नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया जाता है।

नमस्कार महामंत्र आनुपूर्वी

जहां 1 है, वहां णमो अरहंताणं पढ़ें।

जहां 2 है वहां णमो सिद्धाणं पढ़ें।

जहां 3 है, वहां णमो आयरियाणं पढ़ें।

जहां 4 है, वहां णमो उवज्झायाणं पढ़ें।

जहां 5 है, वहां णमो लोए सव्व साहूणं पढ़ें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1

1	2	3	4	5
2	1	3	4	5
1	3	2	4	5
3	1	2	4	5
2	3	1	4	5
3	2	1	4	5

2

1	2	4	3	5
2	1	4	3	5
1	4	2	3	5
4	1	2	3	5
2	4	1	3	5
4	2	1	3	5

3

1	3	4	2	5
3	1	4	2	5
1	4	3	2	5
4	1	3	2	5
3	4	1	2	5
4	3	1	2	5

4

2	3	4	1	5
3	2	4	1	5
2	4	3	1	5
4	2	3	1	5
3	4	2	1	5
4	3	2	1	5

5

1	2	3	5	4
2	1	3	5	4
1	3	2	5	4
3	1	2	5	4
2	3	1	5	4
3	2	1	5	4

6

1	2	5	3	4
2	1	5	3	4
1	5	2	3	4
5	1	2	3	4
2	5	1	3	4
5	2	1	3	4

7

1	3	5	2	4
3	1	5	2	4
1	5	3	2	4
5	1	3	2	4
3	5	1	2	4
5	3	1	2	4

8

2	3	5	1	4
3	2	5	1	4
2	5	3	1	4
5	2	3	1	4
3	5	2	1	4
5	3	2	1	4

9

1	2	4	5	3
2	1	4	5	3
1	4	2	5	3
4	1	2	5	3
2	4	1	5	3
4	2	1	5	3

10

1	2	5	4	3
2	1	5	4	3
1	5	2	4	3
5	1	2	4	3
2	5	1	4	3
5	2	1	4	3

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11

1	4	5	2	3
4	1	5	2	3
1	5	4	2	3
5	1	4	2	3
4	5	1	2	3
5	4	1	2	3

12

2	4	5	1	3
4	2	5	1	3
2	5	4	1	3
5	2	4	1	3
4	5	2	1	3
5	4	2	1	3

13

1	3	4	5	2
3	1	4	5	2
1	4	3	5	2
4	1	3	5	2
3	4	1	5	2
4	3	1	5	2

14

1	3	5	4	2
3	1	5	4	2
1	5	3	4	2
5	1	3	4	2
3	5	1	4	2
4	3	1	4	2

15

1	4	5	3	2
4	1	5	3	2
1	5	4	3	2
5	1	4	3	2
4	5	1	3	2
5	4	1	3	2

16

3	4	5	1	2
4	3	5	1	2
3	5	4	1	2
5	3	4	1	2
4	5	3	1	2
5	4	3	1	2

17

2	3	4	5	1
3	2	4	5	1
2	4	3	5	1
4	2	3	5	1
3	4	2	5	1
4	3	2	5	1

18

2	3	5	4	1
3	2	5	4	1
2	5	3	4	1
5	2	3	4	1
3	5	2	4	1
5	3	2	4	1

19

2	4	5	3	1
4	2	5	3	1
2	5	4	3	1
5	2	4	3	1
4	5	2	3	1
5	4	2	3	1

20

3	4	5	2	1
4	3	5	2	1
3	5	4	2	1
5	3	4	2	1
4	5	3	2	1
5	4	3	2	1

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नव पदानुपूर्वी का गणित

महामंत्र का जप नौ पदों के साथ भी अनुपूर्वी के रूप में जपा जाता है। वहां पांच पद तो मूल के हैं और चार पद—नमो नाणस्स, नमो दंसणस्स, नमो चरित्तस्स, नमो तवस्स—ये हैं। ये चार पद महामंत्र की चूलिका—एसो पंचणमुक्कारो..... के प्रतीक हैं। इस विधि के अनुसार पांच पद साधक और सिद्ध की भूमिका के हैं और अंतिम चार पद साधना के सूचक हैं। नव पद होने से इसे नवपदानुपूर्वी कहते हैं। नवपदानुपूर्वी गुणने से छ:मासी तप का फल होता है तथा जघन्य 66 सागर, उत्कृष्ट 500 सागरोपम के पाप कर्म क्षय होते हैं। नव पदानुपूर्वी के बारह बोक्सों को देखें, प्रत्येक बोक्स सीधा, खड़ा, दोनों क्रास—चारों तरफ से जोड़ने पर सभी अंकों का योग 45 ही आता है, 4 व 5 का योग 9 होता है। मंत्र के पद भी नौ हैं तथा नौ का अंक भी अखण्ड है।

जिस प्रकार नौ का अंक अक्षय, अखंडित है, उसी प्रकार नव पद्यात्मक महामंत्र की साधना करने वाला साधक भी अक्षय, अजरामर पद को प्राप्त कर लेता है। संत तुलसीदास ने भी नौ के अंक का महत्त्व दर्शाते हुए लिखा है—

तुलसी राम स्नेह करूँ, त्यागि सकल उपचार।
जैसे घटत न अंक नौ, नौ को लिखत परिहार॥

(औपचारिकताएं)

अंक नौ की अखण्डता—

9, 18—1+8=9, 27-2+7=9
36—3+6=9, 45—4+5=9
63—6+3=9, 72—7+2=9
81—8+1=9, 90—9+0=0

नौ के पहाड़े की गणना में नौ का अंक मूल है, तदनुसार—18, 27, 36, 45, 54, 63, 72, 81, 90 अंक हैं। इसमें पहले अंक को हम शुद्धि का और दूसरे अंक को अशुद्धि का प्रतीक मानें तो सबसे पहले 18 का अंक आयेगा। समस्त विश्व के अबोध प्राणी 18 अंक की दशा में हैं, जिसमें शुद्धि का अंश एक और अशुद्धि (काम, क्रोध, तृष्णा आदि) का अंश आठ है। फिर 27 में शुद्धि का अंश दो और अशुद्धि का अंश सात है। पहले से एक अंश शुद्धि का ज्यादा और अशुद्धि का कम हुआ। इस क्रम से क्रमश: शुद्धि के अंक का विकास और अशुद्धि के अंक का ह्रास होते-होते जब 90 तक पहुँचते हैं तब शुद्धि का अंश नौ और

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अशुद्धि का अंश 0 (शून्य) हो जाता है। इस प्रकार 90 का अंक हमारे सामने यह आदर्श रखता है कि साधना के पूर्ण हो जाने पर साधक की आत्मा विशुद्ध हो जाती है। उसमें अशुद्धि का अंश एक भी नहीं रहता है। अशुद्धि के सर्वथा अभाव का प्रतीक 90 के अंक में नौ के आगे का शून्य है।

नमस्कार महामंत्र की शुद्ध हृदय से साधना करने वाला साधक भी नौ के पहाड़े के समान विकसित होता हुआ अंत में 90 के रूप में अर्थात् सिद्ध स्वरूप में पहुँच जाता है। इस प्रकार अक्षय अंक में अक्षय पद की यात्रा का समावेश अपने आप में एक रहस्यमय गणित है।

अंक ज्योतिष के अनुसार 9 का स्वामी मंगल है। मंगल दृढ़ता, धैर्य, तेजस्विता आदि का कारक है। मंगल प्रभावी व्यक्ति बड़े दृढ़ निश्चयी और पराक्रमी होते हैं।[6]

साधारण बोलचाल और धर्मशास्त्रों की भाषा में भी मंगल विघ्ननाश और कार्यसिद्धि का सूचक है। प्रत्येक शुभ कार्य को मंगल कहा जाता है। नमस्कार महामंत्र परम शुद्धि, परम मुक्ति और परम सिद्धि का साधन है। यह मंत्र हमें वह शक्ति प्रदान करता है कि हम मन के स्वामी बनते हैं, यह क्या कम महत्त्वपूर्ण है।

नव का एक अर्थ नवीन होता है। नमस्कार महामंत्र के साधक को इसके जप से नवीन-नवीन सिद्धियों और उपलब्धियों की प्राप्ति होती है।

इस प्रकार नमस्कार महामंत्र के नव पदों का स्मरण माला के द्वारा भी किया जाता है और यंत्र के द्वारा भी। यंत्रों के द्वारा जप करने की विधि अनुपूर्वी गणित का विशेष प्रयोग और चमत्कार है। निम्नोक्त यंत्र के प्रत्येक बोक्स के अक्षरों के आधार पर नमस्कार महामंत्र का निम्नोक्त विधि से उच्चारण किया जाता है।

नव पदानुपूर्वी (जप-विधि)

जहां 1 हो वहां नमो अरहंताणं का उच्चारण करें।
जहां 2 हो वहां नमो सिद्धाणं का उच्चारण करें।
जहां 3 हो वहां नमो आयरियाणं का उच्चारण करें।
जहां 4 हो वहां नमो उवज्झायाणं का उच्चारण करें।
जहां 5 हो वहां नमो लोए सव्व साहूणं का उच्चारण करें।
जहां 6 हो वहां नमो नाणस्स का उच्चारण करें।
जहां 7 हो वहां नमो दंसणस्स का उच्चारण करें।
जहां 8 हो वहां नमो चरित्तस्स का उच्चारण करें।
जहां 9 हो वहां नमो तवस्स का उच्चारण करें।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1

1	9	5	8	4	3	6	2	7
6	2	7	1	9	5	8	4	3
8	4	3	6	2	7	1	9	5
2	7	6	4	3	8	9	5	1
4	3	8	9	5	1	2	7	6
9	5	1	2	7	6	4	3	8
5	1	9	3	8	4	7	6	2
7	6	2	5	1	9	3	8	4
3	8	4	7	6	2	5	1	9

2

2	6	7	9	1	5	8	3	4
9	1	5	4	8	3	6	7	2
4	8	3	2	6	7	1	5	9
1	5	9	6	7	2	3	4	8
8	3	4	1	5	9	7	2	6
6	7	2	8	3	4	5	9	1
7	2	6	3	4	8	9	1	5
5	9	1	7	2	6	4	8	3
3	4	8	5	9	1	2	6	7

3

3	8	4	5	1	9	7	6	2
5	1	9	7	6	2	3	8	4
7	6	2	3	8	4	5	1	9
4	3	8	9	5	1	2	7	6
9	5	1	2	6	7	4	3	8
2	7	6	4	3	8	9	5	1
8	4	3	1	9	5	6	2	7
1	9	5	6	2	7	8	4	3
6	2	7	8	4	3	1	9	5

4

4	2	9	3	7	5	8	6	1
3	7	5	8	6	1	4	2	9
8	6	1	4	2	9	3	7	5
6	1	8	2	9	4	5	3	7
2	9	4	7	5	3	1	8	6
7	5	3	6	1	8	9	4	2
5	3	7	9	4	2	6	1	8
1	8	6	5	3	7	2	9	4
9	4	2	1	8	6	7	5	3

5

5	1	9	3	8	4	6	2	7
3	8	4	7	6	2	1	9	5
7	6	2	5	1	9	8	4	3
4	3	8	9	5	1	2	7	6
2	7	6	4	3	8	9	5	1
9	5	1	2	7	6	4	3	8
1	9	5	8	4	3	7	6	2
8	4	3	6	2	7	5	1	9
6	2	7	1	9	5	3	8	4

6

6	2	7	1	9	5	3	8	4
8	4	3	6	2	7	5	1	9
1	9	5	8	4	3	7	6	2
9	5	1	2	7	6	4	3	8
2	7	6	4	3	8	9	5	1
4	3	8	9	5	1	2	7	6
7	6	2	5	1	9	8	4	3
3	8	4	7	6	2	1	9	5
5	1	9	3	8	4	6	2	7

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

7

7	2	6	3	4	8	5	9	1
3	4	8	5	9	1	7	2	6
5	9	1	7	2	6	3	4	8
1	5	9	8	3	4	6	7	2
6	7	2	1	5	9	8	3	4
8	3	4	6	7	2	1	5	9
2	6	7	4	8	3	9	1	5
4	8	3	9	1	5	2	6	7
9	1	5	2	6	7	4	8	3

8

8	3	4	2	6	7	5	9	1
6	7	2	9	1	5	3	4	8
1	5	9	4	8	3	7	2	6
3	4	8	1	5	9	6	7	2
7	2	6	8	3	4	1	5	9
5	9	1	6	7	2	8	3	4
9	1	5	7	2	6	4	8	3
4	8	3	5	9	1	2	6	7
2	6	7	3	4	8	9	1	5

9

9	1	5	2	6	7	4	8	3
4	8	3	9	1	5	2	6	7
2	6	7	4	8	3	9	1	5
8	3	4	6	7	2	1	5	9
6	7	2	1	5	9	8	3	4
1	5	9	8	3	4	6	7	2
5	9	1	7	2	6	3	4	8
3	4	8	5	9	1	7	2	6
7	2	6	3	4	8	5	9	1

10

1	9	5	3	4	8	6	2	7
8	4	3	7	2	6	1	9	5
6	2	7	5	9	1	8	4	3
2	7	6	8	3	4	9	5	1
4	3	8	1	5	9	2	7	6
9	5	1	6	7	2	4	3	8
7	6	2	9	1	5	3	8	4
5	1	9	4	8	3	7	6	2
3	8	4	2	6	7	5	1	9

11

3	5	7	9	4	2	6	8	1
8	1	6	5	3	7	2	4	9
4	9	2	1	8	6	7	3	5
2	4	9	6	1	8	5	7	3
6	8	1	7	5	3	9	2	4
7	3	5	2	9	4	1	6	8
5	7	3	4	2	9	8	1	6
1	6	8	3	7	5	4	9	2
9	2	4	8	6	1	3	5	7

12

9	2	4	8	6	1	3	5	7
1	6	8	3	7	5	4	9	2
5	7	3	4	2	9	8	1	6
7	3	5	2	9	4	1	6	8
6	8	1	7	5	3	9	2	4
2	4	9	6	1	8	5	7	3
4	9	2	1	8	6	7	3	5
8	1	6	5	3	7	2	4	9
3	5	7	9	4	2	6	8	1

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

चौबीस तीर्थंकर आनुपूर्वी

तीर्थंकरों का भावपूर्वक स्मरण करते हुए उनके गुणानुवाद में उत्कृष्ट रस आने पर जीव तीर्थंकर नाम कर्म का बंध कर सकता है। तीर्थंकर देव मोक्ष मार्ग के प्रदाता हैं। इस आनुपूर्वी के माध्यम से हम वीतराग भाव के सौपान चढ़ सकते हैं। इस आनुपूर्वी के अंकों को सीधा, खड़ा या तिरछा जोड़ने पर इसका योग 65 ही आता है। इसलिए इसे पैंसठिया यंत्र के रूप में भी पढ़ा जा सकता है।

इस तीर्थंकर स्मरणानुपूर्वी में तीर्थंकरों का नाम लिया जायेगा। जहां जो संख्या का क्रमांक हो वहां उन्हीं तीर्थंकर का नाम लें तथा 25वीं संख्या में भगवान महावीर स्वामी के प्रथम गणधर श्री गौतम स्वामी का नाम लिया जायेगा।

नामों की क्रम संख्या–

1. भगवान ऋषभ देव,
2. भगवान अजित नाथ,
3. भगवान संभव नाथ,
4. भगवान अभिनंदन,
5. भगवान सुमति नाथ,
6. भगवान पद्म प्रभु,
7. भगवान सुपार्श्व नाथ,
8. भगवान चन्द्र प्रभु,
9. भगवान सुविधि नाथ,
10. भगवान शीतल नाथ,
11. भगवान श्रेयांस नाथ,
12. भगवान वासुपूज्य,
13. भगवान विमल नाथ,
14. भगवान अनंत नाथ,
15. भगवान धर्म नाथ,
16. भगवान शांति नाथ,
17. भगवान कुंथु नाथ,
18. भगवान अर नाथ,
19. भगवान मल्लिनाथ,
20. भगवान मुनि सुव्रत,
21. भगवान नमिनाथ,
22. भगवान अरिष्टनेमि,
23. भगवान पार्श्वनाथ,
24. भगवान महावीर,
25. श्री गौतम स्वामी।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

निम्नोक्त 25 बोक्सों को क्रमानुसार पढ़ें–

1

15	16	22	03	09
02	08	14	20	21
19	25	01	07	13
06	12	18	24	05
23	04	10	11	17

2

11	17	23	04	10
3	09	15	16	22
20	21	2	08	14
07	13	19	25	01
24	05	06	12	18

3

12	18	24	05	06
04	10	11	17	23
16	22	03	09	15
08	14	20	21	02
25	01	07	13	19

4

13	19	25	01	07
05	06	12	18	24
17	23	04	10	11
09	15	16	22	03
21	02	8	14	20

5

14	20	21	02	08
01	07	13	19	25
18	24	05	06	12
10	11	17	23	04
22	03	09	15	16

6

20	21	02	08	14
07	13	19	25	01
24	05	06	12	18
11	17	23	04	10
03	09	15	16	22

7

16	22	03	09	15
08	14	20	21	02
25	01	07	13	19
12	18	24	05	06
04	10	11	17	23

8

13	23	04	10	11
09	15	16	22	03
21	02	08	14	20
13	19	25	01	07
05	06	12	18	24

9

18	24	05	06	12
10	11	17	23	04
22	03	9	15	16
14	20	21	02	08
01	07	13	19	25

10

19	25	01	07	13
06	12	18	24	05
23	04	10	11	17
15	16	22	03	09
02	08	14	20	21

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

11

25	01	7	13	19
12	18	24	05	06
04	10	11	17	23
16	22	03	09	15
08	14	20	21	02

12

21	02	08	14	20
13	19	25	01	07
05	06	12	18	24
17	23	04	10	11
09	15	16	22	03

13

22	03	09	15	16
14	20	21	02	08
01	07	13	19	25
18	24	05	06	12
10	11	17	23	04

14

13	04	10	11	17
15	16	22	03	09
02	8	14	20	21
19	25	01	07	13
06	12	18	24	05

15

24	05	06	12	18
11	17	23	04	10
03	09	15	16	22
20	21	02	08	14
07	13	19	25	01

16

05	06	12	18	24
17	23	04	10	11
09	15	16	22	03
21	02	08	14	20
13	19	25	01	07

17

01	07	13	19	25
18	24	05	06	12
10	11	17	23	04
22	03	09	15	16
14	20	21	02	08

18

02	08	14	20	21
19	25	01	07	13
06	12	18	24	05
23	04	10	11	17
15	16	22	03	09

19

03	09	15	16	22
20	21	02	8	14
07	13	19	25	01
24	05	06	12	18
11	17	23	04	10

20

04	10	11	17	23
16	22	03	09	15
08	14	20	21	02
25	01	07	13	19
12	18	24	05	06

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

21

10	11	17	23	04
22	03	09	15	16
14	20	21	02	08
01	07	13	19	25
18	24	05	06	12

22

06	12	18	24	05
23	04	10	11	17
15	16	22	03	09
02	08	14	20	21
19	25	01	07	13

23

07	13	19	25	01
24	05	06	12	18
11	17	23	04	10
03	09	15	16	22
20	21	02	08	04

24

08	14	20	21	02
25	01	07	13	19
12	18	24	04	06
04	10	11	17	23
16	22	03	09	15

25

09	15	16	22	03
21	02	08	14	20
13	19	25	01	07
05	06	12	18	24
17	23	04	10	11

आवर्त्त जप (कर माला)

माला जप एवं आनुपूर्वी-जप की तरह आवर्त्त-जप जिसे करमाला भी कहा जाता है, जप की एक प्राचीन विधि रही है। प्राचीन काल में यह जप अत्यधिक प्रचलित था, क्योंकि यह मन की एकाग्रता में अत्यन्त सहायक माना जाता है। इस आवर्त्त जप की फलश्रुति एक प्राचीन गाथा से जानी जा सकती है।

कर आपते जो पंचमंगलं सादुपडिमसंखाए।
नवकारा आवत्तइ छलन्ति तं ना पिसयाई॥

जो व्यक्ति अंगुलियों के बारह पोरवों पर नवकार नंदावर्त्त आदि प्रक्रियाओं से करता है अर्थात् 108 बार नमस्कार महामंत्र का जप करता है, उसे निम्नोक्त लाभ होते हैं—

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

1. कर्म निर्जरा,
2. चित्त की निर्मलता,
3. आस-पास के वातावरण का प्राण-शक्ति से प्रभावित होना,
4. पिशाच आदि उसे पीड़ित नहीं कर सकते,
5. पिशाच आदि उसे छल नहीं सकते।

आवर्त्त के प्रकार

1. नंदावर्त्त, 2. शंखावर्त्त, 3. ह्रीं आवर्त्त,
4. ॐ आवर्त्त, 5. नवपद आवर्त्त, 6. साधारण आवर्त्त।

आवर्त्त जप-विधि

दाहिने हाथ की अंगुलियों पर जप करें। सर्वप्रथम जिस अंगुली के पोरवे पर एक अंक स्थापित है, उस पर पूरा नमस्कार महामंत्र बोलें, उसके पश्चात् जिस पोरवे पर दो अंक स्थापित हैं, उस पर नमस्कार महामंत्र बोलें। ऐसे अंकों के अनुक्रम से सभी अंगुलियों पर नमस्कार महामंत्र बोलें। यह एक आवर्त्त हुआ। ऐसे नौ आवर्त्त करने से एक माला पूरी होती है। जैसे नन्दावर्त्त में तीन अंगुलियों पर अंक स्थापित हैं तो वहां बारह आवर्त्त से माला पूरी समझें। आवर्त्त के चित्र निम्नांकित हैं—

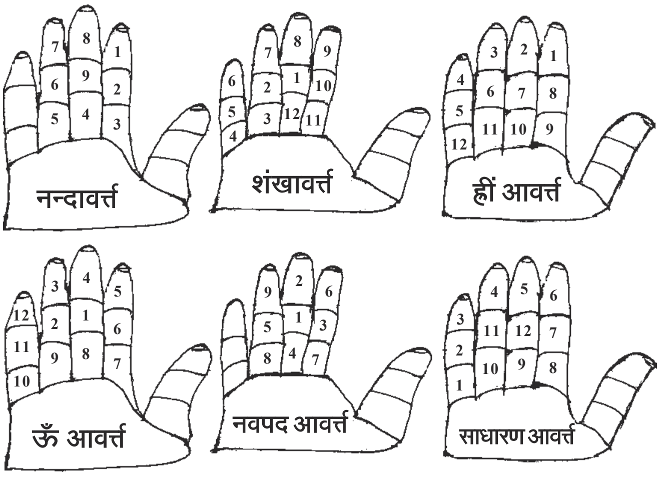

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नवपद आवर्त्त

सिद्ध चक्र मंत्र का भी अपर नाम नवपद है। यह जैनों में सर्वप्रसिद्ध है। इस आवर्त्त के प्रत्येक अंक पर नौ पद बोले जाते हैं। पंच परमेष्ठी के पांच पद और नमो नाणस्स, नमो दंसणस्स, नमो चरित्तस्स, नमो तवस्स—ये चार पद अथवा इन चार पदों के स्थान पर एसो पंचणमुक्कारो आदि चार पद भी बोले जाते हैं।

सिद्धावर्त्त

सिद्धावर्त्त में वर्तमान काल के चौबीस तीर्थंकर, जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनका ध्यान किया जाता है। दोनों हाथों को मुख के सामने खुले रखकर दोनों हाथों की आयुष्य रेखा बराकर मिलावें, जो सिद्धशिला की आकृति के समान भाषित होने लगे। इसके बाद दोनों हाथों की आठों अंगुलियों के चौबीस पोरवों पर चित्र के अनुसार (चित्र साथ में है) चौबीस तीर्थंकरों का ध्यान करें। जप करते समय प्रत्येक तीर्थंकर का जप करने की विधि—पहले अंक पर ''ॐ ह्रीं श्रीं ऋषभदेवाय नमः'' दूसरे अंक पर ''ॐ ह्रीं श्रीं अजितनाथाय नमः'' तीसरे अंक पर ''ॐ ह्रीं श्रीं संभवनाथाय नमः'' इत्यादि गुरु गम से समझ लेना चाहिए।

निष्कर्ष

पंच परमेष्ठी में मन लगाना पर्वतारोहण सदृश है। जिस प्रकार पर्वत

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पर चढ़ना कठिन है परन्तु चढ़ने के बाद वायुमंडल की प्रफुल्लता से मन भ्रमर आनंदित हो जाता है, उसी प्रकार नमस्कार महामंत्र में मन लगना कठिन है पर मन लग जाने पर जिस आनंद की अनुभूति होती है, वह अनिर्वचनीय है।

नमस्कार महामंत्र का गणितानुयोग मन की चंचलता को कम करता है। जिस प्रकार दशमलव के गणित में आवर्त्त संख्या बार-बार एक ही आती है पर प्रत्येक दशमलव का एक नवीन अर्थ एवं मूल्य होता है। अंकशास्त्र की दृष्टि से प्रत्येक दूसरी लिखी उसी संख्या का मान दस गुणा बढ़ जाता है, जैसे—इकाई से लिखना शुरू करते हैं और दहाई, सैंकड़ा, हजार, लाख आदि लिखते हैं। अंक तो वह एक ही है किन्तु दूसरी बार ही लिखने में उसका मान दस गुणा बढ़ जाता है, इसी प्रकार नमस्कार महामंत्र के बार-बार उच्चारण, मनन और ध्यान का प्रत्येक बार नूतन अर्थ होगा तथा मूल्यवत्ता बढ़ती जायेगी। आनुपूर्वी-जप और आवर्त्त-जप—ये एकाग्रता को बढ़ाने के विशिष्ट गणितीय फार्मुले हैं, जो यंत्र रूप में विशिष्ट फल प्राप्ति के सूचक भी हैं। इस विधि से एकाग्रता पूर्वक महामंत्र का प्रत्येक बार उच्चारण रत्नत्रय-गुण विशिष्ट आत्माओं के निकट ले जाने में समर्थ है। यंत्रों में शब्दों की तुलना में अंकों का ज्यादा महत्त्व होता है। कम्प्यूटर शब्दावली में इनकी तुलना 'ग्राफिक्स' से की जा सकती है।

मंत्रों में जिस प्रकार एक निश्चित वर्णक्रम होता है, वैसे ही यंत्रों में एक निश्चित अंकक्रम होता है। कुंजीपटल (की बोर्ड) और टेलिफोनिक 'की पैड' के उपयोग से संदेश का आदान-प्रदान यंत्रों की साधना का विकसित रूप नहीं तो और क्या है? मोबाइल फोन के 'की पैड' का आम उपयोगकर्त्ता यह बात जानता है कि एक भी अंक आगे पीछे होने पर संदेश पहुँचेगा ही नहीं या फिर गलत व्यक्ति तक पहुँचेगा। इस प्रकार यंत्र भी अदृश्य शक्तियों तक संदेश विनिमय की टेलिफोनिक प्रणाली कही जा सकती है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि विषय कषाय को जीतने के लिए नमस्कार महामंत्र का गणितानुयोग पूर्वक जप अमोघ अस्त्र के समान है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सन्दर्भ–

1. अनुयोगद्वार हारिभद्रिय वृत्ति, पृ. 30
2. अनुयोगद्वार, 101
3. अनुयोगद्वार हारिभद्रियवृत्ति, पृ. 41
4. अनुयोगद्वार चूर्णि, पृ. 31
5. वही, पृ. 31
6. महामंत्र नवकार, पृ. 16-17

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–1

महामंत्र की प्रभावक घटनाएं

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र–महिता: सिद्धाश्च सिद्धि स्थिता:।
आचार्या जिन शासनोन्नतिकरा: पूज्या उपाध्यायका:॥
श्री सिद्धान्त–सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधका:।
पंचैते परमेष्ठिन: प्रतिदिनं, कुर्वन्तु नो मंगलम्॥

मंत्र सदा अनुभूति से ही प्रमाणित रहे हैं। यद्यपि इनकी प्रामाणिकता योगियों की योगप्रणाली रही है। अनुभव को भाषा का रूप देना कठिन है, फिर भी व्यवहार विश्रुत कुछ सफलताएं प्रामाणिकता को सिद्ध भी कर सकती है। इसे हम दो विभागों में विभक्त कर सकते हैं–

1. पौराणिक अनुभव,
2. लौकिक अनुभव।

लौकिक अनुभवों की तीन कोटियां हैं– 1. भय मुक्ति, 2. कष्ट मुक्ति, 3. कषाय मुक्ति।

जैन धर्म के कथा साहित्य में नमस्कार महामंत्र की महिमा के अगणित पृष्ठ भरे पड़े हैं। नमस्कार महामंत्र का जप एक ऐसी दिव्य शक्ति है कि अनेक कार्यों में आशातीत सफलता मिलती है। सैकड़ों-हजारों कथाएं, घटनाएं एक स्वर से इसकी महिमा का गान कर रही हैं।

इस परिशिष्ट में विवरणित घटना प्रसंगों में से कुछ घटनावृत्त 'रक्षणहार एक नवकार' गुजराती पुस्तक में पढ़कर उनको मैंने हिन्दी भाषा में अनुदित किया है। कुछ घटनाएं प्राचीन ग्रंथों एवं श्रुतानुश्रुत श्रुति के आधार पर उद्धृत की गई हैं। हो सकता है किसी श्रोता अथवा पाठक ने उन घटनाओं को अन्य प्रकार से सुना हो, पढ़ा हो। यदि इसमें कोई कमी रही हो तो पाठक उन अंशों का संशोधन कर समझ लें।

महामंत्र की प्रभावक घटनाएं

(1) महामंत्र का महाप्रभाव

28 दिसम्बर, 1973 मुम्बई से एक बस सौरीपुर गमन हेतु रवाना हुई। आगरे से आगे बढ़ने के पश्चात् छ: डाकुओं ने अचानक चलती बस को रोका और बस में बैठे यात्रियों को लूटा। लूटने के बाद उस बस में से चार व्यक्तियों को

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उन्होंने बन्दूक का भय दिखाकर अपने साथ ले लिया और बस को छोड़ गंतव्य पथ की ओर चल पड़े। उन चार व्यक्तियों के नाम इस प्रकार हैं—राजेन्द्र भाई, चिनू भाई, नवीन भाई, सुरेश भाई। डाकुओं ने सोचा कि ये मुम्बई के माफतलाल परिवार की सुखी संतान हैं इसलिए हम इनके माता-पिता से जितनी रकम चाहेंगे, हमें मिल जायेगी। ऐसा सोचकर वे इन चारों को अपने साथ लेकर चल पड़े। चारों ही मन-मन में नमस्कार महामंत्र का जप व शंखेश्वर पार्श्वनाथ का जप करने लगे। भय के कारण चारों के कलेजे कांप रहे थे।

डाकुओं ने उनको घने जंगल में पथरीले और कंटकाकीर्ण मार्ग में दो घंटे तक दौड़ाया। चारों थक कर चूर-चूर हो गये। पर उनकी चाल थोड़ी-सी धीमे होते ही वे उन्हें बन्दूक का डर दिखाते और तेज दौड़ने को कहते। दो घंटे दौड़ने के पश्चात् सब एक नदी के पानी में उतर गये और दो घंटे उस पानी में दौड़े। ठिठुरती सर्दी में बहुत मुश्किल से उस नदी को पार किया। नदी पार होते ही चंबल की घाटियों एवं गुफाओं में डाकुओं ने फिर उन्हें दौड़ने के लिए कहा। चारों भूखे-प्यासे थे, दौड़ना मुश्किल हो रहा था पर डाकू अपनी चाल को धीमे होने ही नहीं देते थे।

घंटा-डेढ़ घंटा दौड़ते-दौड़ते फिर एक नदी दिखाई दी। डाकुओं ने अपने पास जो बंदूक आदि सामान था वह वजन भी उनके कंधों पर रख दिया और नदी को पार करने के लिए कहा। उस नदी को पार कर डाकू कुछ निश्चिन्त हो गये। फिर एक गुफा में विश्राम किया। उन चारों को एक तरफ बिठा दिया और एक डाकू को बंदूक देकर उनकी पहरेदारी में बिठा दिया। चारों मन ही मन नमस्कार महामंत्र व शंखेश्वर पार्श्वनाथ का जप कर रहे थे। बस में लूटे सामान को डाकुओं ने प्रेम से आपस में बांट लिया। फिर इन चारों के पॉकेट संभाले पर उन्हें तो पहले बस में ही लूट लिया था। अत: उनके पास कुछ नहीं मिला। हाँ राजेन्द्र भाई के पॉकेट में एक बीड़ी का भीगा हुआ बंडल अवश्य मिला, उसको निकाल लिया। सब डाकू बीड़ी पीने लगे। बीड़ी पीते-पीते डाकुओं के सरदार ने राजेन्द्र भाई से उसका नाम पूछा और मजाक उड़ाते हुए कहा—तुम्हारी मुम्बई की बीड़ी तो भीग गई है, क्या यह बीड़ी पीओगे।

महामंत्र के प्रभाव से राजेन्द्र भाई का साहस बढ़ा। उसने अपना नाम बताते हुए कहा—कोई बात नहीं? बीड़ी भीग गई तो वह तो सुख जायेगी, पर आपने अपनी अंगुली में जो अभी अंगुठी पहनी है वह मेरी शादी की निशानी है, हम लोग इसका चले जाना अपशुकून मानते हैं इसलिए यह बींटी मुझे वापस दे

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दो। डाकुओं के उस सरदार ने मानवता का परिचय दिया और बिना किसी ननूनच के वह अंगुठी अपनी अंगुली में से निकालकर उसको दे दी। तभी धीरे से नवीन भाई ने कहा—हमें प्यास लगी है। तभी एक डाकू ने एक पानी की बोतल उनके हाथ में थमाते हुए कहा—''पानी को घी की तरह पीना''। सभी ने एक-एक घूंट पानी पीकर गले को गीला किया। फिर डाकुओं ने अपने सामान में से सुखी रोटियों की पोटली निकाली, सबने खाई, उनको भी दी। फिर कंबलें निकाली, स्वयं ओढ़ी, उनको भी दी।

कुछ समय पश्चात् राजेन्द्र भाई ने हिम्मत कर पूछ ही लिया, डाकुओं के सरदार से कि हमारा यहां से छुटकारा कब होगा? तब वह सरदार बोला, जब तुम्हारे मां-बाप चार लाख रुपये देंगे? तब वह बोला—हमारे मां-बाप तो इतने धनवान नहीं हैं। तब वह सरदार बोला—तुम सोचते होंगे कि पुलिस हमारा पता लगा लेगी और तुम मुक्त हो जाओगे पर यहां पुलिस भी तुम्हें नहीं छुड़ा सकती। इतनी रकम देने से ही तुम लोगों की छुट्टी होगी। कुछ समय विश्राम करने के पश्चात् फिर वे वहां से घाटियों में दौड़ते रहे। दौड़ते-दौड़ते कहीं कोई बस की आवाज सुनाई देती तब वे पकड़े जाने के भय के कारण तत्काल अपना रास्ता बदल देते। दूसरी रात को उन्होंने एक इक्षु के खेत में अपना डेरा डाला। एक व्यक्ति भोजन लेकर आया। सबने खाना खाया, उनको भी खिलाया और इक्षु की खेती के बीच में एक-एक कर सब सो गये। उन चारों पर एक डाकू की पहरेदारी रही पर वे चारों अहर्निश अजपाजप की तरह महामंत्र जपते रहे। अर्द्धरात्रि हुई कि सब उठ खड़े हुए, दौड़े और उनको भी दौड़ाया। महामंत्र के प्रभाव से उन लोगों की घबराहट कुछ कम हुई, वे उनसे बातचीत भी करने लगे। पांच-छ: दिवस दौड़ने के पश्चात् वे एक सुरक्षित स्थान पर पहुँचकर निश्चिन्त हो गये। फिर डाकुओं के सरदार ने एक दिन कहा—घाटी लम्बी हो गई है, अब परिवार वाले और पुलिस कोई भी तुम लोगों को हमारे चंगुल से मुक्त नहीं करा पायेगा। तुम्हारे परिवार वाले चार लाख रुपये देंगे तब ही तुम मुक्त हो सकोगे।

चारों भाइयों ने मिलकर चिंतन किया कि हमारे परिवार वाले दस-दस हजार रुपये दे सकते हैं। थोड़ा बहुत इधर-उधर से करें तो चारों परिवार के मिलकर पचहत्तर हजार से ज्यादा नहीं दे सकते। चारों ने निर्णय किया और सरदार से कहा—हमारे परिवार वाले पचहत्तर हजार से ज्यादा नहीं दे सकते। सरदार चार लाख से दो लाख तक आ गया। फिर एक लाख में छोड़ने की बात तय हुई। सरदार ने राजेन्द्र भाई से एक पत्र लिखवाया। इतने में एक दूसरा डाकू

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आया और कहने लगा–''मैं बी.ए. पास डाकू हूँ, चार लाख से बिल्कुल कम नहीं लेना।'' इतना कहते हुए उसने उस पत्र को फाड़ दिया। वह बी.ए. पास डाकू बोला–''मैं मुम्बई जाकर इनके घर की सारी हैसियत की जानकारी कर आता हूँ''। पर वह वापस नहीं आया। इस बीच कई बार गाड़ियों के हॉर्न सुनाई देते। हॉर्न सुनकर वे कुछ समय के लिए विचलित हो जाते पर ज्यों ही हॉर्न सुनाई देना बंद होता, वापस निश्चिंत हो जाते।

जब वह डाकू वापस नहीं आया तब उस सरदार को उस पर बहुत गुस्सा आया। वह कहने लगा मैं उसकी बातों में आ गया अन्यथा अब तक सारा काम हो जाता और इनको छोड़ देता क्योंकि चंबल की घाटियों के चारों तरफ उनको गिरफ्तार करने के लिए लगभग एक हजार पुलिस का पहरा लग रहा था। कब क्या हो जाये? कुछ पता नहीं। इसलिए वह रुपये मंगवाकर अतिशीघ्र ही उन्हें मुक्त करना चाहता था।

एक दिन सरदार ने उन्हें एक लाख रुपये में छोड़ने का निर्णय कर उनसे कहा–''तुममें से एक भाई मेरे आदमी के साथ जाये और अपने माता-पिता से एक लाख रुपए लेकर आ जाए। फिर मैं तुम सबको छोड़ दूँगा।'' उन्होंने राजेन्द्र को रुपये लाने के लिए भेजने का निर्णय किया। सरदार ने एक शर्त पर उनको भेजने का निर्णय किया कि राजेन्द्र इस विषय में किसी से कुछ भी नहीं कह सकेगा, न पुलिस को कोई खबर कर सकेगा और न पुलिस को साथ लेकर आ सकेगा। अन्यथा इन तीनों भाइयों को यहीं खत्म कर दिया जायेगा। वह एक गुप्त मार्ग से मेरे एक आदमी के साथ जायेगा पर मुम्बई में नहीं, उसके माता-पिता आदि स्वजन आगरा में रामनारायण गुप्ता के घर उनसे मिल सकेंगे। इन सारी शर्तों पर राजेन्द्र जाने के लिए तैयार हो गया। सरदार ने उनके माता-पिता को आगरा रामनारायण गुप्ता के घर अपने पुत्र से मिलने की सूचना दे दी। यह उनके अपहरण का ग्यारहवां दिन था। सात जनवरी को वह यहां से जाए और बारह जनवरी को वापस आए। इस निर्णय पर राजेन्द्र भाई महामंत्र व शंखेश्वर पार्श्वनाथ का स्मरण करता हुआ तीनों भाइयों से विदा लेकर बहुत ही सावधानीपूर्वक रवाना हुआ। इधर तीनों भाई भी जप में तल्लीन हो गये। जब वे निर्धारित स्थान पर पहुँचे तो पारिवारिक जन पहले से ही आए हुए थे। सब महामंत्र का लयबद्ध जप कर रहे थे। पूरे घर का वातावरण महामंत्र की मंगल-ध्वनि से ध्वनित था। जब से इनका अपहरण हुआ, माता-पिता आयम्बिल तप कर रहे थे। इस संकल्प के साथ कि जब तक लड़के घर पर नहीं आयेंगे, हम आयम्बिल तप करेंगे। राजेन्द्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

भाई ने एक लाख रुपयों की बात कही तथा अपनी वचनबद्धता के कारण पुलिस को सूचना देने से इन्कार कर दिया क्योंकि शेष तीनों भाइयों की सुरक्षा का भी प्रश्न था। इतनी रकम वहां पर थी नहीं, मुम्बई से रकम की व्यवस्था करनी थी और बारह तारीख को वापस वहां पहुँचना था अत: राजेन्द्र भाई अतिशीघ्र उस व्यवस्था में जुट गया।

इधर डाकुओं के सरदार ने चारों तरफ से पुलिस की लग रही बड़ी कार्यवाही की जानकारी पाकर कुछ डाकुओं को इधर-उधर छिपा दिया और कुछ डाकुओं को सी.आई.डी. के रूप में जानकारी रखने के लिए इधर-उधर भेज दिया। पुलिस ने सरदार के माता-पिता को गिरफ्तार कर लिया और मारने की धमकी दी। फिर उसके साले को गिरफ्तार कर लिया और कहा–'यदि वह कल की तारीख में अपहृत युवकों को नहीं छोड़ेंगे तो तुम्हारी मृत्यु है।' साले ने कहा– आप मुझे छोड़ दें। मैं कल उनको छुड़वा दूँगा। वचनबद्ध हो वह गुप्त मार्ग से अपने बहनोई के पास पहुँचा, सारी बात कही। पर वह सरदार राजेन्द्र भाई के एक लाख रुपयों की इंतजारी में था। उसने कहा–बारह तारीख को राजेन्द्र आने वाला है, एक लाख रुपये मिल जायेंगे, फिर हम उन्हें छोड़ देंगे। बहुत समझाने पर जब वह नहीं समझा तब उसने बन्दूक अपने हाथ में ली और पुलिस के साथ वचनबद्धता की बात दोहराते हुए कहा–''यदि आप इनको नहीं छोड़ते हैं तो मैं मर रहा हूँ''।

बहनोई सरदार ने अपने साले के हाथ से बन्दूक अपने हाथ में ली और उन्हें छोड़ने का निर्णय ले लिया। वह इन तीनों भाइयों के पास आया, जहां वे महामंत्र का जप कर रहे थे। वहां पर आकर सरदार ने उन तीनों भाइयों से कहा– 'हम तुम लोगों को छोड़ रहे हैं, यहाँ से जल्दी चले जाओ।' उन्होंने कहा–क्या राजेन्द्र भाई आ गया? एक लाख रुपये ले आया। सरदार बोला नहीं राजेन्द्र भाई नहीं आया पर तुमको छोड़ा जा रहा है। पर एक बात का ध्यान रखना। मैं तुमको जिस गुप्त मार्ग से भेजूं उधर से ही जाना। नौ जनवरी को अपहरण के तेरहवें दिन बिना किसी रकम के उन्हें मुक्त कर दिया।

वे महामंत्र का स्मरण कर तथा शंखेश्वर पार्श्वनाथ का नाम लेकर वहां से चले। एक व्यक्ति उन्हें भादल स्टेशन तक पहुँचाने आया। भादल स्टेशन पर आकर उन्होंने सुख की सांस ली और एक-दूसरे से कहने लगे देख लिया ना महामंत्र का महाप्रभाव। इस मंत्र ने हमें बाल-बाल बचाया है। इस मंत्र ने संकट की घड़ियों में हमारे भीतर पौरुष और शक्ति को जागृत किया है। दस जनवरी को वे आगरा पहुँचे। वहां रामनारायण गुप्ता के घर से राजेन्द्र भाई को अपने साथ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

लिया। वहां समागत पारिवारिक जनों के गले लगे। सारी स्थिति की अवगति दी और कहा कि यह सारा महामंत्र और शंखेश्वर पार्श्वनाथ का प्रभाव है। फिर चारों भाई वहीं से शंखेश्वर गये और वहां से सकुशल मुम्बई अपने घर पहुँच गये।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि जब कभी भी जल-प्रवाह अथवा अग्निदाह का भयंकर उपद्रव आ जाये, शत्रु, प्लेग, चोरादि तथा अन्य ऐसे उपसर्ग उपस्थित हो जायें तो एकाग्र-चित्त हो नमस्कार महामंत्र का जप करने से उपद्रव और उपसर्ग शांत होते हैं। महामंत्र के महाप्रभाव के कारण ही डाकुओं ने चारों भाइयों के साथ अमानवीय व्यवहार नहीं किया। सचमुच यह महामंत्र जिनकी वाणी और हृदय में रम जाता है, उसके व्याधि, जल, अग्नि, चोर, डाकू, सिंह, हाथी, संग्राम और सर्प आदि के भय नष्ट हो जाते हैं।

(2) अपराजेय मंत्र

शत्रुञ्जय तीर्थ की यात्रा के विचारों में खोया पन्द्रह वर्षीय बालक विराट ट्रेन में बैठा-बैठा रंग-बिरंगे स्वप्न संजो रहा था। इसी बीच सोनगढ़ स्टेशन पर कुछ क्षणों के लिए ट्रेन रुकी। एक मनुष्यों का दल ट्रेन से नीचे उतरा। सम्मोहित होने के कारण विराट भी उनके पीछे-पीछे उतर गया। विराट ने स्टेशन पर सोनगढ़ लिखा हुआ देखा और सोचने लगा मुझे तो शत्रुञ्जय जाना है। मैं यहाँ क्यों उतरा? प्रयास करने पर भी वह ट्रेन की तरफ नहीं मुड़ सका। उनके पीछे-पीछे चलता रहा। स्थिति की विकटता जान वह नमस्कार महामंत्र को मन ही मन जपता रहा।

चलते-चलते सूर्यास्त हो चुका था। घना जंगल, वे सब निर्भय होकर बातें करते-करते चल रहे थे। एक वृक्ष के नीचे वे कुछ क्षणों के लिए रुके। विराट भी वहां रुक गया। उस समूह में से एक व्यक्ति ने कहा—''देखो! इस बालक के चेहरे पर कैसा तेज चमक रहा है? कितना सुन्दर है यह बालक?'' उन्होंने विराट से नाम आदि पूछे। पर विराट बिना कुछ जवाब दिये महामंत्र का जप करता रहा। रात्रि का गहन अंधकार बढ़ रहा था पर वे अपने सधे हुए पैरों से आगे बढ़ रहे थे। विराट उस अंधकार में बड़ी मुश्किल से चल रहा था। चलते-चलते चोरों की पल्ली में सबने प्रवेश किया और अपने गंतव्य तक पहुँच गये। सबने खाना खाया। विराट को भी खाना खाने के लिए कहा। विराट दिन भर का भूखा भी था, इतना चलने के कारण थक कर चूर-चूर भी हो गया था पर रात्रि भोजन नहीं करने के कारण वह कुछ नहीं बोला और भोजन भी नहीं किया। एकमात्र महामंत्र की रटन उसके भीतर चल रही थी।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सरदार ने उसे बहुत प्रलोभन दिया। तुम्हें यहाँ का सरदार बनाया जायेगा। यह सारी सम्पत्ति तुम्हारी होगी। तुम्हें यहाँ कोई तकलीफ नहीं होगी। आराम से यहां रहो। खाओ, पीओ और मौज करो। विराट कुछ नहीं बोला। सरदार ने उसे पलंग पर सोने के लिए कहा, वह सो गया। वे सब भी सो गये। सोते ही सबको गहरी नींद आ गई पर विराट गहरा थका हुआ था तो भी उसे नींद नहीं आ रही थी। वह नमस्कार महामंत्र अजपाजप की तरह जपता रहा।

इस प्रकार तीन दिन बीत गए, विराट उनसे कुछ भी नहीं बोला। तेला हो गया। काष्ठ मौन में एकमात्र महामंत्र की शरण उसने ले रखी थी। तीसरे दिन उसने सोचा शक्तिशाली महामंत्र मेरे साथ है, मुझे घबराना नहीं है। आज रात्रि में यहाँ से भाग जाना है। तीन दिनों में उसने बारीकी से देख लिया कि ये किधर से आते हैं, किधर से जाते हैं, कौन कहाँ पहरा देता है आदि-आदि। फिर सोचा कि मैं यहाँ से दौड़ा और सफल नहीं हुआ तो उसका परिणाम होगा—मृत्यु। इतने में उसके भीतर से एक आवाज उसे सुनाई देती है—महामंत्र तुम्हारे साथ है, फिर तुम्हें कौन परास्त कर सकता है? उसने दृढ़ निश्चय कर लिया कि आज रात्रि में मुझे यहाँ से भागना है।

रात्रि में सब सो गये। विराट अपनी योजनानुसार मध्य रात्रि में उठा, चारों तरफ दृष्टि दौड़ाई, देखा सब गहरी नींद में सो रहे हैं। सरदार खर्राटे भर रहा है। वह निश्चिंत होकर उठा। नमस्कार महामंत्र का स्मरण करता हुआ सोचने लगा कि इस वेश में जाऊँगा तो बाहर पहरा लग रहा है, द्वारपाल मुझे पकड़ लेंगे। अत: मुझे यहाँ से सरदार की ड्रेस में ही निकलना चाहिए। जप करते-करते उसने हिम्मत कर सरदार की ड्रेस पहन ली। सरदार के तकिये के नीचे लकड़ी थी, उसको धीरे से निकाल लिया और अर्द्धरात्रि के समय लकड़ी के सहारे जप करता हुआ चल दिया।

दरवाजा खोला। द्वारपाल ने सरदार समझकर कुछ भी नहीं पूछा। उसको सलाम भरी। अब वह उस पल्ली को पारकर महामंत्र के सहारे जंगल में पहुँचा। गहन अंधकार, पशु-पक्षियों का भय। जहरीले जन्तुओं का भय। अनजान मार्ग। कोई पगडंडी नहीं। उम्र मात्र पन्द्रह वर्ष। पर न जाने महामंत्र ने क्या शौर्य वीर्य भर दिया विराट में। वह निर्भय होकर चलता रहा। उसे ऐसा लगा जैसे कोई अंगुलि पकड़कर उसे चला रहा है और एक पगडंडी का रास्ता दिखा रहा है। चलते-चलते वह थक गया। पैर चलने का उत्तर दे रहे थे पर कहीं रुकने से सिपाही आदि कोई भी पहुँचकर पकड़ सकते हैं, ऐसा सोचकर वह चलता ही रहा।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

थोड़ा प्रकाश हुआ। उसे एक मन्दिर दिखाई दिया। वह मन्दिर में गया। विश्राम के लिए सोचने लगा कि उसे दूर से दौड़कर आता हुआ सिपाही दिखाई दिया। सिपाही को देखते ही मानो उसके पैरों में कोई शक्ति आ गई हो। वह हिरण की तरह खूब तेज दौड़ा। कहां वह तीन दिन का भूखा-प्यासा, हारा-थका पन्द्रह वर्ष का किशोर और कहां प्रतिदिन दौड़ने का अभ्यासी वह सिपाही। आखिर विराट को रुकना पड़ा।

विराट सिपाही के सामने अभय होकर खड़ा रहा। मानो महामंत्र ने उसकी घबराहट को दूर कर दिया हो। सिपाही ने कहा–''सरदार का मुझे आदेश है तुम्हें पकड़ने का अत: तुम मेरे साथ चलो। तुम क्यों घबराते हो? तुम्हें इतनी सम्पत्ति मिलेगी। यहाँ तुम्हारा मान-सम्मान बढ़ेगा और तुमको यहां का सरदार बनाया जायेगा।''

विराट जप करता-करता सब कुछ सुनता रहा। जब सिपाही मौन हुआ तब विराट ने ओजस्वी वाणी में निडरता के साथ अपनी बात कहनी शुरू की। उसने सिपाही से कहा–भैया! अभी तो सूरज उगा है। किरणें फैलनी अवशेष हैं। क्या यह उगता सूरज बिना प्रकाश के अस्त हो जायेगा? क्या जिन्दगी के सारे अरमान अधूरे रहेंगे। तुम मेरी तरफ देखो। क्या गुलाब सा यह सुकोमल जीवन ऐसे ही मुरझा जायेगा? मुझे न सम्पत्ति चाहिए, न सरदार का पद चाहिए। मुझे चाहिए मेरा नमस्कार महामंत्र और आदिनाथ भगवान का नाम; और मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।

विराट के चेहरे के तेज और ओजस्वी वाणी ने सिपाही के चिन्तन को बदल दिया। उस नन्हे बालक पर उसको करुणा आ गई। उसने विराट से कहा– अच्छा बच्चा! तू यहां से अपने घर चला जा। मैं सरदार को जाकर कह दूँगा कि मैंने बहुत खोज-बीन की है पर वह मुझे नहीं मिला। विराट ने सिपाही को प्रणाम किया। मानवता के लिए धन्यवाद दिया और महामंत्र का अजपाजप करता हुआ वहां से निर्भय होकर चल दिया। कुछ समय पश्चात् वह सोनगढ़ स्टेशन पर पहुँच गया।

कथानक के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि विराट का एकमात्र रक्षणहार था–नमस्कार महामंत्र। महामंत्र ने विराट को धैर्य दिया, शक्ति दी, शौर्य दिया और उसे अभय बनाया। अभय ही नहीं बनाया उसे मार्ग दिखाया, उसे सहारा दिया और सिपाही का हृदय परिवर्तन भी कर दिया। ऐसा अपराजेय मंत्र जिसके मन और मुख में निवास करता है, वह व्यक्ति परिस्थितियों का दास नहीं बनता, परिस्थितियां स्वयं उनसे परास्त हो जाती हैं।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(3) महामंत्र ने मुझे आस्तिक बनाया

डॉक्टर सुरेश भाई झवेरी भारत से इंग्लैण्ड M.R.C.P. की डिग्री प्राप्त करने गया था। जाते वक्त माँ ने धार्मिक जीवन जीने की प्रेरणा देते हुए नमस्कार महामंत्र पर अटूट श्रद्धा रखने के लिए प्रेरित किया। सुरेश भाई बुद्धिमान और परिश्रमी था। अध्ययन करते-करते ही उसने इस क्षेत्र में अच्छा अनुभव प्राप्त कर लिया था। वहां के अच्छे-अच्छे बड़े डॉक्टरों से भी उसका अच्छा सम्पर्क था। जैसे-जैसे बुद्धि ने विस्तार लिया, वह धर्म से विमुख होता चला गया।

सन् 1961, 14 फरवरी को उसकी परीक्षा होने वाली थी परन्तु छ: जनवरी को वह अचानक भयंकर रूप से बीमार हो गया। शरीर की छटपटाहट देखकर ऐसा लगता था मानो वह अंतिम सांसें ले रहा था। डॉक्टर जॉन का ईलाज शुरू किया गया पर एक इंजेक्शन से भी भयंकर रिएक्शन हो गया। फिर डॉक्टर गिब्सन को बुलाया गया, जिसके सान्निध्य में वह डॉक्टरी का अध्ययन कर रहा था। डॉक्टर गिब्सन तत्काल पहुँच गया पर स्थिति की गंभीरता को देखकर उसे तत्काल वहां की सबसे बड़ी हॉस्पिटल—हेमरस्थित हॉस्पिटल में ले जाने का सुझाव दिया।

डॉक्टर गिब्सन ने वहां डॉक्टरों को फोन कर केस लेने के लिए कहा तो पता चला कि यहाँ पर पहले से सब सीटें भरी हुई हैं और वेटिंग लिस्ट में 50 से ऊपर नाम आए हुए हैं। वे स्वयं तत्काल वहां पहुँचे और हॉस्पिटल के ऊपरी अधिकारी प्रो. स्केन्डिंग के पास जाकर कहने लगे—यह अपनी प्रतिष्ठा की बात है कि एक भारतीय इंग्लैण्ड में गया और ईलाज के अभाव में मर गया अत: जैसे-तैसे कोई उपाय सोचा जाये। डॉक्टर स्केन्डिंग ने कहा—कोई सीट खाली नहीं है। वेटिंग लिस्ट में नाम लिखा दो। पर तब तक जीवित रहने की आशा नहीं थी। डॉक्टर गिब्सन हर हालत में केस को सुरक्षित रखना चाहते थे। उन्होंने दिमाग लगाया। उनको चिंतित देखकर डॉक्टर स्केन्डिंग ने उन्हें बड़े प्रधान के कमरे में रखने का सुझाव दिया। वहां से स्वीकृति प्राप्त कर डॉक्टर झवेरी को तत्काल वहीं भर्ती किया गया। इलाज प्रारम्भ हुआ। चार दिनों तक इलाज चलता रहा पर स्थिति गंभीर से गंभीर बन रही थी। उसकी छटपटाहट नियंत्रण से परे हो चुकी थी। उसे दिन-रात गहल (नींद) के इन्जेक्शन पर ही रखा गया। डॉक्टर ने उसकी पत्नी शांता बहन से मृत्यु-पत्र पर साइन करने के लिए कहा। इसकी जानकारी डॉक्टर झवेरी को हो गई। उसे यह कभी कल्पना ही नहीं थी कि इतनी छोटी उम्र में मेरे साथ यह घटना घटेगी। उसने कई मरीजों से इस

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकार साइन करवाए थे पर आज स्वयं की इस स्थिति ने उसे भीतर से विचलित कर दिया।

अब उसे माँ की शिक्षा और धर्म की बात याद आने लगी। वह कुछ शांत हुआ। सीधा कायोत्सर्ग की मुद्रा में लेटा। उसे ऐसा महसूस हुआ मानो कोई भीतर से महामंत्र के जप की प्रेरणा दे रहा है। उन्होंने महामंत्र का जप शुरू किया। बिना इन्जेक्शन डॉक्टर झवेरी चैन से सो नहीं सकता था पर वह लम्बे समय तक कायोत्सर्ग की मुद्रा में जप करता रहा। उसे आनंद की अनुभूति हुई। कुछ समय पश्चात् नींद भी आ गई। आज चार दिनों से उन्हें नींद आई थी। डॉक्टरों ने सोचा वह शांत हो चुका है, उसे झकझोरा। वह जागृत हुआ। उसने करवट बदली और कहा–मुझे आत्मविश्वास है कि मैं ठीक हो जाऊँगा। मेरा नमस्कार महामंत्र मेरे साथ है। उन्होंने प्रसन्नता से बातचीत करना शुरू कर दिया। सब डॉक्टरों को आश्चर्य हुआ कि अचानक इसके दर्द में इतना परिवर्तन कैसे आ गया? स्थिति में परिवर्तन देख डॉक्टर ने कहा–अब ऑपरेशन हो जायेगा। उसे ऑपरेशन थियेटर में ले जाया गया। उसने पत्नी से कहा–चिन्ता मत करना। मैं एकदम स्वस्थ हो जाऊँगा। नमस्कार महामंत्र की शरण स्वीकार करने के बाद मैं अभय बन गया हूँ। यह रक्षणहार मंत्र मेरे साथ है। तुम भी इसका जप करती रहना।

ऑपरेशन थियेटर में जाने के पश्चात् जब तक होश रहा, वह नमस्कार महामंत्र का जप करता रहा। उधर पत्नी भी नमस्कार महामंत्र का जप करती रही। ऑपरेशन के दौरान उसके शरीर से साढ़े पाँच हड्डियां और छः औंस रस्सी निकाली गई। अच्छी तरह से ऑपरेशन हो गया। क्रमशः औषधोपचार से वह स्वस्थ हो गया। हॉस्पिटल से छुट्टी हो गई। डॉक्टर को भी आश्चर्य हुआ कि यह कैसे ठीक हो गया?

इस घटना ने डॉक्टर झवेरी को नास्तिक से आस्तिक बना दिया। माँ के प्रति उनका मन इस धार्मिक शिक्षा के लिए अत्यन्त कृतज्ञता से भर गया। उसने सोचा M.R.C.P. की डिग्री प्राप्त कर माँ के पास जाऊँगा। कुछ समय पश्चात् वे डिग्री प्राप्त करके पुनः भारत लौट आये। अब महामंत्र और धर्म उनकी रग-रग में रम चुका था।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महामंत्र का श्रद्धापूर्वक जप करने से अशुभ कर्म नष्ट होते हैं और शुभ कर्मों का उदय होता है। परिणाम स्वरूप रोग आरोग्य में, बेड़ियां आभूषण में, अमंगल मंगल में और नास्तिकता आस्तिकता में परिवर्तित हो जाती है। कहा भी है–

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हरइ दुहं कुणइ सुहं जणइ जसं सोसओ भव समुद्दं।
इह लोय पारलोइय सुहाण मूलं णमुक्कारो॥

अर्थात् नमस्कार महामंत्र दु:ख हरण, सुख करण, जश उत्पन्न करण, भव समुद्रशोषक है। और यह नमस्कार महामंत्र इहलोक और परलोक में सभी सुखों का मूल है।

(4) रिवोल्वर बनी खिलौना

लगभग पचहत्तर वर्ष पूर्व की बात है। जिस समय महाराष्ट्र की धरती पर धुलिया और पांचारानो के राजमार्ग पर व्यापारार्थ वाहन आदि का यातायात प्रचूर मात्रा में होता था। एक बार चिमनजी भाई घोड़ागाड़ी पर बैठकर यूरोपियन मित्रों के साथ व्यापारपार्थ धूलिया से पांचारानों जा रहे थे। जैन परिवार में जन्मे चिमनजी भाई की नमस्कार महामंत्र पर गहरी श्रद्धा थी। जैनत्व के संस्कार उनकी रग-रग में रमे हुए थे। यही कारण था कि विदेशियों के साथ रहते हुए भी उनकी आहार शुद्धि और व्यसन मुक्ति की सबके दिलों में गहरी छाप थी। वे अंग्रेजी भाषा को अच्छी तरह बोलते और समझते थे। अत: अंग्रेजों के साथ उनका अच्छा सम्पर्क था। उनके कई यूरोपियन व्यापारी घनिष्ट मित्र भी थे। वे उनको समय-समय पर भारतीय संस्कृति और जैन संस्कृति से परिचित भी कराते रहते थे।

जब वे धूलिया से पांचारानों जा रहे थे तब मार्ग में भारतीय संस्कृति के विषय में चर्चा चल रही थी। वे यूरोपीय मित्रों को भारतीय संस्कृति के विषय में अच्छी तरह से समझा रहे थे। वे भी आनन्द और हर्ष के साथ एक-एक बात को बड़े ध्यान से सुन रहे थे। इसी बीच घने जंगल में उन्हें हिरणों का एक झुण्ड दिखाई दिया। उनका मन शिकार खेलने के लिए आतुर हो उठा। चर्चा के मध्य बार-बार उनका ध्यान हिरणों की तरफ जा रहा था। चिमनजी भाई इस बात को समझ गये कि इनका मन शिकार के लिए उतावला हो रहा है। उनका बात को समझाने का तरीका निराला था। चर्चा करते-करते वे कहने लगे ''भारतीय संस्कृति की यह दुर्लभ विशेषता है कि भारतीय उसी को लेता है, जिसको वापस दे सकता है।'' मित्रों का मन शिकार की तरफ था। उन्होंने अनमने मन से कहा–''इसमें क्या विशेषता है–सभी वो ही लेते हैं, जो वापस दे सकते हैं।'' चिमनजी भाई ने कहा–''तो क्या आप आज मुझे यह वचन दे सकते हैं कि हम वो ही लेंगे जिसको वापस दे सकेंगे?'' उन्होंने बड़े गर्व से कहा–''हाँ! हम आपको वचन देते हैं कि हम वो ही लेंगे जो वापस दे सकेंगे।''

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

इस प्रकार बातचीत करते हुए उन्होंने अपनी बंदुकें निकाली और हिरणों का शिकार करने की तैयारी करने लगे। तभी चिमनजी भाई ने कहा, ''यह बंदूक मुझे दे दो।'' क्यों? क्योंकि तुम वचनबद्ध हो चुके हो कि जो दे सकेंगे वो ही लेंगे। तुम हिरणों की जान लेने जा रहे हो, क्या उन्हें वापस प्राण दे सकोगे? वे समझ गये कि चिमनजी भाई ने हमें बातों-बातों में फंसा लिया है। वे कहने लगे, ''शिकार तो कभी-कभी होता है और यह हमारी रुचि का विषय है अत: आप हमें इसकी जगह कोई दूसरा संकल्प करवा दें।'' चिमनजी भाई ने कहा—''ऐसा कैसे हो सकता है?'' बहुत समझाया पर वे समझने के मूड में नहीं थे। चिमनजी भाई नहीं चाहते थे कि मेरी आँखों के सामने ऐसी घटना घटे। निरपराध प्राणियों को मौत के घाट उतारा जाये। जब कोई उपाय कारगर होता नहीं लगा तब वे रथ से नीचे उतरे और एक वृक्ष के नीचे कायोत्सर्ग कर नमस्कार महामंत्र का जप शुरू कर दिया, इस भावना से कि अहिंसा का वातावरण बने। तभी उन्हें भीतर से एक आवाज सुनाई दी कि ''जोरदार संकल्प-शक्ति कभी निष्फल नहीं होती।'' चिमनजी भाई दृढ़ संकल्प शक्ति के साथ कायोत्सर्ग मुद्रा में महामंत्र के ध्यान में स्थित हो गये।

इधर वे यूरोपियन मित्र घोड़ा-गाड़ी से नीचे उतरकर हिरणों की दिशा में चल पड़े। कुछ दूरी से उन्होंने निशाना साधा, गोली चलाई, इस आशा के साथ कि अभी सात-आठ हिरण एक साथ गिर पड़ेंगे। पर उनके आश्चर्य का पार नहीं रहा क्योंकि आज तक उनका निशाना कभी खाली नहीं गया। आकाश में उड़ते पक्षियों को गिराना भी उनके बांये हाथ का खेल था, पर आज निशाना चूक गया। गोली का धमाका सुन चिमनजी भाई ने आँखें खोलकर देखा तो ऐसा लगा कि उनका निशाना चूक गया है। हिरण तो निर्भयता के साथ खेल रहे हैं, मानो उन्हें गोली की आवाज सुनाई ही नहीं दी हो। उनकी आस्था ने बल पकड़ा और गहरी निष्ठा से पुन: महामंत्र के जप में ध्यानस्थ हो गये।

यूरोपियन मित्रों ने एक-एक कर हार खाली। कहावत भी है कि हार्‌यो जुवारी दुगुणो खेलै। उन्होंने बार-बार निशाना लगाया पर एक भी निशाना सही नहीं लगा। जब निशाना लगाते-लगाते थक गये, आखिर हार माननी पड़ी। निराश हो जब वे पुन: घोड़ा-गाड़ी में आकर बैठ गये, तब चिमनजी ने ध्यान सम्पन्न किया और उनके साथ आकर बैठ गये। वे बोले—''मेरे कहने से नहीं माने पर हारकर मानना पड़ा।'' मित्र हंस पड़े और कहने लगे—''आज तक हमारा निशाना खाली नहीं गया पर हमें ऐसा लगता है कि आप यहां खड़े-खड़े कोई मंत्र बोल रहे थे। आपके मंत्र के प्रभाव से हमारी रिवोल्वर रमतीया (खिलौना) बन

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

गई। आपके मंत्र की महिमा अचिंत्य है।'' चिमनजी भाई घोड़ा गाड़ी में बैठे-बैठे भी महामंत्र का जाप करते रहे।

यह हुआ आन्तरिक आस्था से महामंत्र को जपने का चमत्कार। इसके जप, ध्यान तथा स्मृति मात्र से प्राणी सुख और शांति से जुड़ता है। भीतरी पवित्रता व्यवहार में प्रकट होने लगती है, तथा व्यवहार की शुद्धता भीतर को साफ-सुथरा बनाने में निमित्त बनती है। अत: प्रतिक्षण इस पवित्र महामंत्र को अपने हृदय में स्थापित रखना चाहिए।

(5) मंत्र का प्रभाव मुझे देखने को मिले

जिनदास नामक एक श्रावक प्रतिदिन नमस्कार महामंत्र की माला फेरता था। माला फेरते समय उसके मन में यह भावना होती कि इस मंत्र का प्रभाव मुझे देखने को मिले तो अच्छा हो। जहां चाह होती है, वहां राह मिल ही जाती है। जिनदास का मित्र अजैन था और वह शक्तिमाता का उपासक था। शक्तिमाता का उपासक होने के कारण अनेक भोपों से उसका परिचय था। एक दिन मित्र ने जिनदास से कहा—''यदि शक्ति की उपासना का चमत्कार देखना है तो मेरा निमंत्रण है। भोपा चमत्कार बता सकता है।''

जिनदास ने सोचा कि मैं जैन हूँ पर देखने में क्या लगता है? मेरी श्रद्धा को तो कोई खण्डित नहीं कर सकता। मुझे वहां चलकर शक्ति माता का चमत्कार अवश्य देखना चाहिए।

दोनों शक्तिमाता के मंदिर पहुँचे। जिनदास को वहां का वातावरण ही विचित्र लगा। शक्ति माता की देह पर ऐसे चिह्न लगे थे कि बहादुर भी घबरा जाये। मित्र ने भोपे से कहा—''मेरा एक जैन मित्र शक्ति माता का चमत्कार देखने आया है। मेरा आपसे निवेदन है कि शक्तिमाता को मित्र के शरीर में प्रविष्ट करवाकर चमत्कार दिखाना।'' भोपा ने कहा—''मैं प्रयोग शुरू करता हूँ, जिसको शक्ति माता का चमत्कार देखना है वह वर्तुलाकार स्थान में आसन जमाकर बैठ जाये।'' जिनदास वहां बैठ गया। चारों तरफ भय का वातावरण था। अभय के सहारे के रूप में वहां बैठा-बैठा नमस्कार महामंत्र को जपता रहा। दो पल में जोर-जोर से नगाड़े बजने लगे। जमीन भीग गई। भोपे के शरीर में शक्तिमाता ने प्रवेश किया। वह अपने स्थान से बाहर आकर जिनदास की ओर चला। शक्तिमाता को जिनदास के शरीर में प्रवेश कराने का प्रयोग शुरू किया। जमीन को ठोकता हुआ अपने स्थान पर बैठ गया। उसे ऐसा लगा कि शक्तिमाता उसके शरीर में प्रवेश करने में असमर्थ है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

फिर भी भोपे ने हिम्मत नहीं हारी। तीन बार पुन:-पुन: ऐसा प्रयोग किया पर असफल रहा। तब झुक-झुक कर बार-बार शक्तिमाता को निवेदन करने लगा—आप इस जैन मित्र के शरीर में अवश्य प्रवेश करें, इसे चमत्कार दिखाना है। शक्तिमाता ने कहा—''मैं इस जैन मित्र के शरीर में प्रविष्ट होने में असमर्थ हूँ क्योंकि इसके आस-पास चारों ओर इसके इष्ट मंत्र का तेजस्वी वर्तुल बना हुआ है जो मुझे इसके शरीर में प्रविष्ट होने से रोक रहा है। अत: शरीर तक जाकर मुझे वापस लौटना पड़ता है।'' भोपे ने फिर निवेदन किया कि आप किसी भी हालत में चमत्कार दिखाएं पर दिखाएं जरूर। कोई कमी हो तो बताएं। शक्ति माता ने कहा एक उपाय है—''यदि यह जैन अपने इष्टदेव का त्याग कर दे, जप बंद कर दे और आजीवन जप न करने का मुझे वचन दे दे तो मैं इसके शरीर में प्रवेश कर सकती हूँ, अन्यथा नहीं। मैं कितनी ही शक्तिशाली हूँ पर इसके मंत्र से उत्पन्न वर्तुल के तेज के पास जाते ही मेरी आँखों के आगे अंधेरा छा जाता है। उसको छेदकर आगे जाने में मैं असमर्थ हूँ।''

भोपा और देवी के बीच चल रहे वार्तालाप को सुनकर श्रावक जिनदास ने निर्णय किया—ओ हो! चमत्कार तो मेरे घर में है, मैं इधर-उधर भटक रहा हूँ। नमस्कार महामंत्र कितना शक्तिशाली है कि शक्तिमाता ने भी हार मान ली। मुझे नमस्कार महामंत्र के बारे में विशेष जानकारी नहीं है। सिर्फ माता-पिता की प्रेरणा से मैं प्रतिदिन इस मंत्र की एक माला फेरता हूँ। जब नाम मात्र की श्रद्धा भी इतना चमत्कार दिखा सकती है तो यदि मैं समझ-पूर्वक श्रद्धा से महामंत्र का जप करूँगा तो इस भवसागर से निश्चित ही नैय्या पार हो जायेगी। जिनदास ने अपने मित्र से कहा—जो चमत्कार देखना था वह देख लिया। मेरे मंत्र में प्रचण्ड ताकत है। भोपे ने पूछा—क्या तुम्हारे मंत्र का पाठ जानने का मेरा अधिकार है। जिनदास ने खुशी से कहा—''णमो अरहंताणं''।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि राधावेध को सिद्ध करना दुर्लभ नहीं, पर्वत को मूल से उखाड़ना दुर्लभ नहीं तथा गगन तल में गमन दुर्लभ नहीं परन्तु नमस्कार महामंत्र की प्राप्ति दुर्लभ है। इस दुर्लभ मंत्र को प्राप्त कर अतीत काल में अनेक भव्यात्मा मोक्ष गये हैं, वर्तमान काल में जा रहे हैं और भविष्य में मोक्ष जायेंगे। यह सब महामंत्र का ही प्रभाव है। यह मंत्र जिसके पास रहता है, वह जिनदास श्रावक की तरह विजयश्री का वरण करता है उसकी आस्था को और अधिक दृढ़ करता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(6) इसका मंत्र बलवान है

झखोरा (झांसी) निवासी अब्दुल रजाक नाम का एक मुस्लिम भाई था। एक बार जैन साधुओं के सम्पर्क में आने से उसने जैन धर्म की श्रद्धा को स्वीकार किया। उसने जैन धर्म को बारीकी से समझा। वह कर्मणा जैनी बन गया। वह आमिष भोजन नहीं करता, रात्रि भोजन भी नहीं करता, सामायिक व प्रतिक्रमण नियमित करता तथा नमस्कार महामंत्र पर उसकी गहरी आस्था थी। वह नमस्कार महामंत्र की प्रतिदिन माला फेरता था तथा रात्रि को सोने से पूर्व वह नमस्कार महामंत्र अवश्य बोलता था।

पारिवारिकजन नहीं चाहते थे कि वह दूसरे धर्म में जाये। अत: उसे बार-बार धर्म छोड़ने की बात समझाते पर वह अपने संकल्प पर दृढ़ रहा। घर में आमिष भोजन चलता था। वह अपने हाथ से अपनी रोटी बनाकर खा लेता पर आमिष भोजन नहीं करता। पारिवारिकजनों ने सोचा यह दूसरे धर्म को पाले इससे तो अच्छा है कि इसे मरवा दिया जाये। यह सोचकर एक बार जब वह बाहर गया हुआ था तब उसके पलंग पर बिस्तर के नीचे एक सर्प छोड़ दिया। उन्होंने सोचा जब अंधेरे में आकर सोयेगा तब सारा काम तमाम हो जायेगा। अब्दुल रजाक ने अपने नियमित क्रम के अनुसार बिस्तर पर सोने से पूर्व नमस्कार महामंत्र का स्मरण किया और सो गया। सोते ही उसे एक आवाज आई—उठ-उठ बिस्तर में सर्प है। वह तत्काल उठा, लालटेन लेकर आया। देखा तो सचमुच बिस्तर में सर्प था। प्रकाश होते ही वह सर्प चला गया।

सुबह जब वह सकुशल मिला तब पारिवारिक जनों ने उसे मारने का एक दूसरा षड्यंत्र रचा। जब वह सामायिक करने बैठा तब एक पड़ोसन के पुत्र को रुपयों का लालच देकर कहा—''जिस कमरे में वह सामायिक कर रहा है उस कमरे में सर्प को छोड़कर कमरे को बंद कर आना।'' वैसा ही किया गया। जब अब्दुल रजाक को पता चला कि साँप को अंदर छोड़कर कमरा बंद किया जा चुका है। उसने सामायिक में समता भाव का परिचय दिया। आसन से उठा नहीं, वहीं पर सामायिक में बैठा-बैठा नमस्कार महामंत्र का जप शुरू कर दिया। सर्प भी महामंत्र की मंगल ध्वनि सुन उससे कुछ दूरी पर शांत होकर ठहर गया। उसकी सामायिक पूर्ण नहीं हुई तब तक वह सर्प वहीं बैठा रहा और महामंत्र सुनता रहा। सामायिक पूरी होने पर वह सावधानीपूर्वक उठा और एक तरफ से निकलकर धीरे से दरवाजा खोल दिया। सर्प धीरे-धीरे बाहर चला गया। पर जिस लड़के ने कमरे में सांप को छोड़ा था, रात्रि में उसी सर्प ने उस लड़के को काट दिया। उसकी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

माँ रोती-रोती वहां आई और कहने लगी किसी को इस जन्म के पाप का फल अगले जन्म में मिलता है पर मुझे तो इसी जन्म में मिल गया। कल मैंने रुपयों के लालच में अपने पुत्र से अब्दुल को मारने के लिए सर्प छोड़ाया था, आज मेरा पुत्र मर गया।

पारिवारिकजनों ने जान लिया इसका मंत्र बलवान है। इसका धर्म महान है। हम इसको मौत के मुख में डालते हैं तो भी यह अपने धर्म और मंत्र के प्रभाव से बच निकलता है। धीरे-धीरे महामंत्र की श्रद्धा पारिवारिकजनों के दिल में भी जमने लगी।

महामंत्र के प्रभाव से आया हुआ काल भी प्रेम का बर्ताव कर चला गया। इस चमत्कार ने पारिवारिकजनों को चिंतन के लिए मजबूर किया। उन्होंने सोचा वास्तव में इस महामंत्र की महिमा अपरम्पार है। इससे जग में सदैव जय-जयकार होती है। अपेक्षा है साधक इस महामंत्र को देखे, समझे, परखे और एक-एक अक्षर के रहस्य को आत्मसात् करने का प्रयत्न करे। यदि ऐसा प्रयास रहता है तो यह महामंत्र अपनी विराटता से साधक को विराट, विशाल और दृष्टि सम्पन्न बनाने में सहायक है।

(7) बुनकर बना महर्द्धिक देव

एक बुनकर अपनी दो पत्नियों के साथ एक उद्यान में क्रीड़ा हेतु गया। रास्ते में एक मुनि पदव्रज्या करते हुए आ रहे थे। वह उद्यान से मुनि के दर्शन करने आया। मुनि ने ज्ञान बल से जुलाहे की आयु को अत्यल्प जानकर कहा– ''बुनकर! देह की नश्वरता को समझो, इन राग-रंगों के छूटने में केवल अब दस मिनट ही अवशेष रह गये हैं। मेरी बात पर गौर करो।'' जुलाहा आश्चर्य और भीति के स्वर में बोला–''मुनि! अब क्या होगा? इस पापी का उद्धार करो।''

मुनि ने अत्यासन्न मृत्यु को जानकर उसे नमस्कार महामंत्र सुनाया। महामंत्र के प्रभाव से वह बुनकर मरकर महर्द्धिक देव बना।

दोनों पत्नियों को इस घटना की पूर्व जानकारी नहीं दी गई। अत: वे दोनों अपने पति की मृत्यु का कारण उस मुनि को समझकर राज दरबार में फरियाद लेकर पहुँची। राजा ने अपनी न्यायप्रियता का परिचय दिया और तुरन्त इस प्रसंग की न्यायिक जाँच का आदेश दिया। पुलिस घटना स्थल पर पहुँची। जंगल में एकाकी मुनि को देखकर बेड़ियां पहना दीं। मुनि का मानस सधा हुआ था। वे मानते थे कि अहिंसा के क्षेत्र में अप्रतिकार भी एक प्रतिकार होता है। दरबार में

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उन्हें उपस्थित किया गया। उसी समय वह देव अपने उपकारी की स्मृति करता हुआ वहां पहुँचा। देव मुनि को बंधन मुक्त करके कृतज्ञता ज्ञापित करते हुए चला गया।

देव द्वारा वस्तुस्थिति का अवलोकन कर दोनों पत्नियों को पश्चाताप हुआ। मुनि के पास पहुँचकर अपने द्वारा कृत दुर्व्यवहार की क्षमायाचना की और महामंत्र के प्रति श्रद्धासिक्त भावों से प्रणत हो गई।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महामंत्र मन की शक्तियों का उत्थान और संरक्षण दोनों कार्य करता है। बंधन का मूल कारण है—राग और द्वेष, जो विषय और कषाय के सेवन से बढ़ते हैं तथा पंच परमेष्ठी के स्मरण से घटते हैं।

(8) गाय बनी देवी

वि.सं. 2028, जबलपुर में एक दिन एक गाय डेढ़ बजे के लगभग एक घर के परिसर में बीमार हो गई। गृह स्वामिनी ने उस मरणासन्न गाय को घास डाली, पानी पिलाया तथा नमस्कार महामंत्र सुनाया। महामंत्र सुनते-सुनते गाय की छटपटाहट कुछ कम हुई। वह उसे एकाग्रता पूर्वक सुनने लगी। उसकी आँखों में पानी झरने लगा। ऐसा लग रहा था, मानो उसे महामंत्र से शांति मिल रही हो। अत: दिन भर वह गृह स्वामिनी उसे महामंत्र का श्रवण कराती रही। फिर अवसर देखकर उसे सागारी अनशन करवाया। जब उसके प्राण पखेरू उड़ गये तब उसने गाय को एक गड्ढे में दफना दिया और उसके ऊपर पांच किलो नमक डाल दिया।

इस घटना के ठीक छ: माह पश्चात् उसका पति अचानक बीमार हो गया। अनेकों औषधोपचार के दौरान भी स्वास्थ्य में कोई सुधार नहीं हो रहा था। एक रात्रि में जब वह सो रही थी, अचानक दिव्य प्रकाश दिखाई दिया। वह घबरा गई पर हिम्मत कर उसने पूछा—''आप कौन हैं?'' इतने में प्रकाश-पुञ्ज में से एक दिव्य आकृति पैदा हुई। आवाज आई—मुझे नहीं पहचाना, मैं मदद करने आई हूँ। यह कहकर उस दिव्य आकृति ने गाय का रूप बनाया और कहा—''तुमने मुझे नमस्कार महामंत्र सुनाया, उसके प्रभाव से मैं देवी बनी हूँ। तुम्हारे पति को कल सवेरे 9 बजे से शाम को 5 बजे तक नींद लेने देना, वे स्वस्थ हो जायेंगे।'' वैसा ही किया गया। जब नींद लेने के बाद उसका पति जागृत हुआ तो एकदम स्वस्थ था। उसने भी उसी दिन से महामंत्र का जप शुरू कर दिया।

वि.सं. 2041 पोष महीने में पुन: देवी ने एक रात्रि में उसे कहा—दो दिनों के भीतर तुम्हारी संतान पर संकट आने वाला है। उसने अपने दोनों पुत्रों को दो

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

दिन घर में ही रखा, कहीं बाहर नहीं जाने दिया। दूसरे दिन अहमदाबाद उसकी लड़की के ससुराल से समाचार आया कि आपकी पुत्री छप्पर से गिर गई है। स्थिति गंभीर है। आप शीघ्र यहाँ पहुँच जायें। जब वे वहां गये, पुत्री की ऐसी स्थिति देखी तो देवी को याद किया। देवी ने कहा—''तुम्हारी पुत्री की उम्र इतनी ही है अत: उसे बचाया नहीं जा सकता। बुधवार को रात्रि के नौ बजे इसकी मृत्यु होगी।'' मृत्यु समय निकट जान माता ने उसे अनशन करवाया, महामंत्र का जप सुनाया। बुधवार को रात्रि के नौ बजे महामंत्र का जप सुनते-सुनते उसने इस जीवन की अंतिम श्वास ली।

पुत्री का संस्कार करने के बाद माता-पिता अपने घर आ गये। पर माँ का पुत्री पर मोह ज्यादा होने के कारण वह आर्त्तध्यान करती रहती। पुत्री की याद आते ही रोने लगती। उसका खाना-पीना सब छूट गया। इस प्रकार पुत्री विरह के कारण दु:खी देखकर देवी ने एक रात्रि में उसे कहा—''तुम रोती क्यों हो? तुम चिंता मत करो, तुम्हारी पुत्री महामंत्र और अनशन के प्रभाव के कारण स्वर्ग में देवी बनी है। उसकी सद्गति हुई है, वह वहां पर सकुशल है।''

माँ ने पुत्री के दर्शन करने की इचछा व्यक्त की। देवी ने उसे अपनी पुत्री के दर्शन कराये, जो महामंत्र के प्रभाव से देवी बनी थी। उसे संतोष हुआ कि मेरी पुत्री सुखी है। उसकी पहले से ही महामंत्र पर आस्था थी अब और दृढ़ हो गई।

कथानक के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महामंत्र में सद्गति और सद्बुद्धि का बीज निहित है। पापी व्यक्ति भी इसके प्रभाव से सद्गति को प्राप्त होते हैं। तिर्यञ्च भी इस महामंत्र के प्रभाव से दिव्य शक्तियों को प्राप्त कर उपकारी के उपकार में सहयोगी बनते हैं।

(९) नमस्कार महामंत्र एक अचिन्त्य औषधि

सनातनीय संस्कारों में पली बहन कलावती (पंजाब रामामण्डी) ने अणुव्रत अनुशास्ता आचार्यश्री तुलसी के चरण-कमलों में सम्यक्त्व दीक्षा ग्रहण कर जैन धर्म (तेरापंथ) के संस्कारों में पलने लगी। कलावती ने दीर्घ तपस्याएं, जप व ध्यान से तेरापंथ धर्मसंघ के गौरव में श्रीवृद्धि की है। तपस्या के साथ-साथ नमस्कार महामंत्र कलावती का सिद्ध मंत्र था। कुछ प्रभावशाली घटना-प्रसंग जो बहिन के साथ जुड़े हुए हैं, वे निम्न प्रकार हैं—

वि.सं. 2017, गीदड़-बाहा ग्राम में कलावती बहिन की ननद भागवती का पूरा परिवार एक साथ रोग ग्रस्त हो गया। सभी को वमन होने लगी। घबराहट

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

का होना तो स्वाभाविक ही था। सूचना मिलते ही तत्क्षण कलावती वहां पहुँची। उपचार प्रारंभ किया। कई घंटों तक महामंत्र का जप उन सभी लोगों को सुनाया। मंत्र ध्वनि ने अपना अचिन्त्य प्रभाव दिखाया। भगवती और पुत्र बनारसीदास को छोड़कर सब स्वस्थ हो गये।

जप का क्रम अब भी चालू था। माँ भगवती भी अब अपने आपको स्वस्थ महसूस करने लगी। लेकिन पुत्र की स्थिति में अब भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ। फिर भी संकल्प और साहस की मूर्ति कलावती आस्था और श्रद्धा के साथ चार घंटे तक नमस्कार महामंत्र उसे सुनाती रही। अब स्थिति ने अचानक मोड़ लिया। बनारसीदास ने अपने सामने एक सुन्दर और भव्य विमान को देखा। उसके अन्दर स्थित देव ने कहा—''आज तुम्हारे घर जो तुरई की सब्जी बनी थी, उसमें काले नाग का थूका हुआ था। उसके कारण यह सब हुआ। तुमने अधिक मात्रा में खाई इसलिए जहर ने तुम्हारे शरीर पर ज्यादा असर किया। यदि कलावती समय पर नहीं पहुँचती तो परिणाम कुछ और ही होता। अब घबराने की जरूरत नहीं है'', इतना कह वह देव अदृश्य हो गया। बनारसीदास पूर्ण स्वस्थ हो गया।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र आधि, व्याधि, उपाधि से व्यक्ति को मुक्त करता है। जहर के प्रभाव को भी प्रभावहीन बना देता है। इसलिए महापुरुषों ने इसे कामधेनू, कल्पवृक्ष और चिंतामणि रत्न की उपमा दी है।

(10) 500 अनुपूर्वी पढ़ने का संकल्प

तपस्या प्रारंभ करने से पूर्व कलावती कुछ-न-कुछ विशेष साधना का संकल्प ग्रहण करती थी। यह उसके साधनामय जीवन की विशेषता थी। एक बार उसने ग्यारह की तपस्या में पांच-सौ अनुपूर्वी पढ़ने का संकल्प लिया। रात्रि में अनुपूर्वी पढ़ते-पढ़ते उसका गला अवरुद्ध हो गया। वह उच्चारण करने का प्रयत्न करती लेकिन स्वर नहीं निकलता। फिर भी उसने अनुपूर्वी पढ़ना बंद नहीं किया। अन्तर्जल्प जप करती रही।

एक रात्रि में लगभग दो बजे एक देव उपस्थित हुआ और व्यंग्य में —''तेरे पास तो तपस्या की ताकत है, फिर मेरी पकड़ को क्यों नहीं छुड़ा पा रही हो?''

देव बोला—''तेरे आराध्य मेरे सामने कुछ भी नहीं हैं, वे मेरा कुछ भी नहीं कर सकते। अगर तू अपना कल्याण चाहती है, तो मेरे चरणों में झुक जा। तेरा मनोवांछित सब पूर्ण होगा। जो भी तू मांगेगी वही मैं दे दूँगा।''

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देव के इन शब्दों को सुनते ही बहिन शेरनी की तरह गरज पड़ी—''तेरे पास है ही क्या, जो तू मुझे दे सकता है। स्वयं तो बासी टुकड़े खाता है और मुझे देने का दंभ भरता है। अगर तेरे पास कुछ देने को है तो मुझे मुक्ति (मोक्ष) दे दे अन्यथा यहाँ से सकुशल चला जा।''

मुक्ति की बात सुनते ही देव के तो मानो छक्के ही छूट गये। वह अपनी हार स्वीकार करता हुआ वहां से चला गया।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र के प्रभाव से व्यक्ति के चारों तरफ फैला स्पेस या इलेक्ट्रोडायनेमिक-फिल्ड परिवर्तित हो जाता है और उसके आस-पास एक निर्मल आभामंडल का निर्माण हो जाता है। महामंत्र में आभामंडल को शक्तिशाली बनाने की अद्‌भुत क्षमता है। उस शक्तिशाली आभामण्डल में पहुँचकर देव भी परास्त होकर उपासक बन जाते हैं।

(11) मंत्र प्रयोग से भावना परिष्कार

कलावती के पति भगवानदास के ईंटों-भट्ठों का काम था। वि.सं. 2018 में महकमे वालों की नियत में बदलाव आने से 80 टन कोयला कम भेजा। जब पूछताछ की गई, क्लर्क ने सफेद झूठ बोलते हुए कहा—''हमने तो कोयला भेज दिया है।'' भगवानदासजी का चिन्तित होना स्वाभाविक था क्योंकि कोयले की आपूर्ति न होने से भारी नुकसान होने की संभावना थी। जिस समय पत्नी को इस बात की जानकारी मिली, उस समय उसके दस दिन की तपस्या अनुष्ठान पूर्वक चल रही थी। उसने अपने पति से कहा—''इंजीनियर को अपने घर भोजन का निमंत्रण दे दो, समस्या स्वत: समाहित हो जायेगी।''

निर्देशानुसार इंजीनियर को बुलाया गया। भोजन के पश्चात् उन्हें नमस्कार महामंत्र से मंत्रित जल पिलाया गया। बस अब क्या था? क्षण भर में ही दूषित भावना का परिष्कार होने लगा। महकमे वालों को अपनी गलती का अहसास हुआ। तत्काल उन्होंने 80 टन कोयला भेज दिया। अब तो भगवानदासजी की चिंता काफूर हो गई और भट्टे का कार्य पूर्ववत् प्रारंभ हो गया।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र भाव शुद्धि का मंत्र है। भाव शुद्धि से आत्मा की पवित्रता बढ़ती है। धर्म का निवास स्थान भी पवित्र हृदय है। अत: यह महामंत्र आत्मा की पवित्रता का मंत्र है। आत्मा के उत्कर्ष का मंत्र है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

रंगीन बोतलों में पानी सूर्य की रश्मियों में रखा जाता है। वह पानी रंग से भावित हो जाता है। सूर्य की रश्मियों से रंगीन बोतलों के द्वारा भावित पानी में चिकित्सा के गुण उपलब्ध हो जाते हैं। इस प्रकार के पानी से असाध्य रोगों की चिकित्सा की जाती है। अनेक रोग मिटते हैं। मंत्र-विद्या का प्रयोक्ता जल को भावित करता जाता है, वह जल शक्तिशाली हो जाता है। उसमें इतनी क्षमता आ जाती है कि वह बड़े-बड़े उपद्रवों को मिटा सकता है, फिर वह केवल पानी नहीं रहता और कुछ बन जाता है।

(12) निराशा दूर हो गई

वि.सं. 2019 में कलावती ने पन्द्रह दिन की चौविहार तपस्या की। इसी वर्ष उन्होंने चौविहार पंचोला किया और पंचोले में पानी का स्पर्श तक नहीं किया। तप की विशिष्टता यह थी कि उसने पांच दिन तक बंद कमरे में खड़े-खड़े नमस्कार महामंत्र का जप किया। पारणे के दिन वह ज्यों ही पारणे की तैयारी में थी कि सहसा भगवती बहिन उसे बुलाने आई।

वह कहने लगी भाभीजी मेरे साथ चलो। मेरा पौत्र बेहोशी की स्थिति में है। डॉक्टरों ने लुधियाना ले जाने को कहा है, आप एक बार मेरे साथ चलें।

दूसरों के दु:ख-दर्द में संभागी कलावती बिना पारणा किये ही चल पड़ी। बच्चे की स्थिति को देखकर उसने नमस्कार महामंत्र का उच्चारण प्रारम्भ कर दिया। स्थिति में किञ्चित सुधार होते देख उसने पारिवारिक जनों से कहा—अब घबराने की कोई बात नहीं है। रात्रि के नौ बजे बेहोशी अपने आप टूट जायेगी। ठीक रात्रि के नौ बजे कलावती के कथानुसार बच्चे की मूर्च्छा टूट गई। होश में आते ही उसने कहा—जाप बंद क्यों कर दिया? मैं तो मंत्र के प्रभाव से ठीक हुआ हूँ। मुझे मंत्र सुनाते रहो। कलावती ने एक सप्ताह तक सुबह और शाम एक-एक घंटा बच्चे को नमस्कार महामंत्र का जप करवाया। बच्चा बिल्कुल स्वस्थ हो गया। निराश पारिवारिक जनों के दिलों में आशा की नई किरण प्रस्फुटित हुई।

वस्तुत: श्रद्धा और विश्वास के साथ किया गया हर कार्य अपना सही परिणाम लाता है। श्रद्धा से असंभव लगने वाला कार्य भी संभव हो जाता है। समस्या स्वयं समाधान बन पथ-दर्शक बन जाती है। महामंत्र का जप निष्ठा के साथ करने से पारिवारिकजनों की निराशा आशा में बदल गई।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(13) मैं अब कभी नहीं आऊँगी

वि.सं. 2019 पोष का महिना था। कलावती बहिन के तपस्या का तेरहवां दिन था। वह अपने उपासना कक्ष में ध्यान-साधना में रत थी। उसकी पुत्रवधु शांता फर्श की सफाई कर रही थी। अचानक झाडू फैंकती हुई बोली—क्या मैं घर की नौकरानी हूँ, मुझसे घर की सफाई का काम नहीं होता। विनीत, सुशील एवं संस्कारी बहु के इस व्यवहार से सभी विस्मित थे।

सास को पता चलते ही वह तत्काल उपासनाकक्ष से बाहर आकर स्वयं तपस्या में ही झाडू लेकर सफाई करने लगी। फिर बहु शांता की ओर दृष्टिपात किया। मन में कुछ संदेह उत्पन्न हुआ। उसे लगा कि स्थिति कुछ दूसरी ही है। उसने बहु के हाथ लगाया। इतने में वह बेहोश हो गई। कलावती बहिन ने उच्च स्वर में नमस्कार महामंत्र का जप सुनाना प्रारंभ किया।

जैसे ही मंत्रोच्चारण से निःसृत परमाणु वातावरण में फैले, एक अज्ञात आवाज की ओर उसका ध्यान आकृष्ट हुआ। वह आवाज थी—''मैं तो यहां पर भीनी-भीनी सुगंध लेने आई। तेरी बहु ने सुगंधित द्रव्य लगा रखे थे, इसी कारण मैं उसके साथ आ गई। लेकिन मुझे क्या पता? यहाँ तपस्विनी आत्मा भी रहती है। इसके तप और जप की ज्योति के सामने मैं ठहर नहीं पा रही हूँ। मुझे अब और मत जलाओ। मैं फिर यहां नहीं आऊँगी।'' इन शब्दों के साथ ही उपद्रव शांत हो गया और बहु सामान्य स्थिति में आ गई।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि विघ्न-बाधाएं और भयंकर उपद्रव भी नमस्कार महामंत्र के प्रभाव से विलीन हो जाते हैं। यह महामंत्र अव्याबाध सुख की राह दिखाने वाला पवित्र मंत्र है।

(14) पैर चिपक गये

एक बार कलावती खड़े-खड़े ध्यान कर रही थी। उस समय एक विचित्र घटना घटित हुई। पड़ोसी कंवरसेन के घर पर शादी का कीमती सामान आया हुआ था। एक चोर की कई दिनों से उस पर नजर थी। अवसर देखकर वह उस घर में चोरी करने के लिए प्रविष्ट होने का प्रयत्न करने लगा। कलावती को ध्यानावस्था में सारा दृश्य स्वयं प्रत्यक्ष हो गया। उसने ध्यान सम्पन्न किया और तत्काल दरवाजे के पास खड़ी होकर पड़ोसिन को आवाज लगाने लगी—''ए जमना! ए जमना! आओ हम दोनों सामायिक करें।''

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जमना ने कहा–''बहिन कैसे आऊँ? बाहर से दरवाजा बंद है, लगता है चोर ने सांकल लगा दी है।''

कलावती दरवाजे की सांकल खोलने गई। चोर तो अवसर की प्रतीक्षा में ही था। वह कलावती के मकान की छत पर चढ़ गया, क्योंकि वहां से पड़ोसिन के घर में जाना सहज था। पड़ोसी के घर को उजड़ता देख उसका दिल करुणार्द्र हो उठा। उसने नमस्कार महामंत्र का जप शुरू कर दिया। जप के प्रभाव से चोर के पैर चिपक गये। वह एक कदम भी आगे नहीं जा सका। इसी बीच मण्डी के सैकड़ों व्यक्ति वहां इकट्ठे हो गये। सबकी निगाहें चोर की तरफ थी। चोर अब लज्जावश कांप रहा था। उसे अब अपने अपराध की अनुभूति होने लगी। उसने कहा–''बहिन! मुझे बंधन से मुक्त कर दो, मैं भविष्य में कभी चोरी नहीं करूँगा।''

नमस्कार महामंत्र के मंत्रोच्चारण के साथ ही चोर न केवल पैरों से चलने में समर्थ हुआ अपितु वह अस्तेय धर्म की साधना में भी समर्थ हो गया। सदा सर्वदा के लिए चोरी जैसी जघन्य प्रवृत्ति का त्याग कर दिया।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि नमस्कार महामंत्र का जीवन के प्रत्येक पहलु पर सम्यक् प्रभाव पड़ता है। यह महामंत्र अंधकार में प्रकाश की राह दिखाने वाला है। उन्मार्ग से सन्मार्ग पर आरोहण कराने वाला है और जीवन को सुख, शांति और आनन्द से भरने वाला है। इस शक्तिशाली मंत्र के पुनः-पुनः उच्चारण से कषायाग्नि शांत हो जाती है। पर-द्रव्यों के प्रति आसक्ति नष्ट हो जाती है और हृदय में बोध प्रदीप प्रज्वलित हो जाता है।

(15) मंत्र बल और सद्भावना का चमत्कार

वि.सं. 2002 की घटना है कि घसियन गांव (उड़ीसा) के निवासी श्री चन्दगीरामजी जैन रात के समय बैलगाड़ी से प्रातः 35 मील दूर कांटाबाजी जा रहे थे। मार्गवर्ती गांव बैलपाड़ा से लगभग पांच-सात मील दूर घने वन में शेर युगल अकस्मात् रास्ते में लगभग 30-40 हाथ की दूरी पर आकर खड़ा हो गया। इस प्राण लेवा परिस्थिति में भी गाड़ी में बैठे हुए श्री चन्दगीरामजी जैन घबराये नहीं। अपना सम्पूर्ण आत्मविश्वास संजोकर गाड़ी हांकने वाले नौकर से कहने लगे कि ''बैल बिदक नहीं जाये''। इसकी पूरी सावधानी रखते हुए सिंह युगल की पूरी हरकतों पर नजर रखना। मैं मंत्रोच्चारण करता हूँ।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्रोच्चारण की बात सुनकर गाड़ी हांकने वाला कुछ आश्वस्त और निर्भय बनकर प्राणघातक उस सम्पूर्ण विकट परिस्थिति पर नजर रखने लगा। मंत्राधिराज नमोक्कार महामंत्र का श्री जैन ने जोर-जोर से उच्चारण करना प्रारंभ कर दिया। लगभग दस मिनट तक यथास्थिति बनी रही। न तो उस स्थल से सिंह युगल ही हिला और न बैल ही। नमोक्कार महिमा में लिखा है—

थंमई जलं जलणं चिंतियमितो वि पचनवकारो,
अरि, मारि, चोर, राउलं घोरूवसग्गं पणासेइ।

हरई दुहं कुणइ सुहं, जणइ जसं सोसए भव समुद्दं,
इहलोइय-परलोइय सुहाण मूलं णमोक्कारो॥

गाथाओं का सार है—एकाग्र हो शुद्ध हृदय से किये गये महामंत्र का जाप—पानी, अग्नि, दुश्मन, चोर, विष आदि के समस्त उपसर्गों (दुःखों) को विनष्ट कर देता है। सुख व यश प्रदान करता है। भव समुद्र को सोख लेता है। इस लोक और परलोक के समस्त सुखों का मूल है—पंच नमस्कार का जप।

दस मिनट के मंत्रोच्चारण के पश्चात् आत्मविश्वास भरे, साहस के धनी श्री जैन उच्च स्वर में उड़िया भाषा में कहने लगे—''तुमे जंगलर राजा, एनू तुमे शहरर राजा संग रे मुकाबला करिथांत्! आभ छोटे मनुष्य, पथई चालवार संगरे आमंकू कांहि कि निरोध करू छो?'' अर्थात् वनराज! तुम वन के राजा हो अत: तुम्हें यदि सामना करना ही है तो नरराज (नरेश) से करो। हम राहगीर जो प्रजा हैं, उनकी राह रोककर खड़े हो जाना कहाँ तक उचित है? सोचें और रास्ता दे दें।

इस स्नेहसिक्त सद्भाव भरे कथन के साथ एक के बाद एक शेर बिना गरजे, बिना दहाड़े, रास्ता छोड़कर जंगल की ओर आगे बढ़ गये। इसके बाद बैल भागे तो इतने भागे कि दो-तीन मील तक बिना रुके, लगभग 10-12 मील तक भागते रहे, जिससे वे पसीने से लथपथ हो गये। उन दिनों लोग-बाग बैलों को बिनौले-कुलथी आदि पौष्टिक पदार्थ खिलाते थे और बैल सपाटे से चलते भी थे। हाँ, तो बैल बैलपाड़ा गाँव में पहुँचकर ही रुके।

सच है कि आत्मविश्वास, दृढ़ निश्चय, सुदृढ़ धर्मनिष्ठा एवं सद्भावना से ओत-प्रोत सुसंकल्प असंभव प्रतीत होने वाले कार्य को संभव ही नहीं अपितु दुनियां की नजरों में एक अद्भुत चमत्कार बना देता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

(16) महामंत्र में छुपी दिव्य शक्ति

कहा जाता है कि आठवें सुभूम चक्रवर्ती जिह्वा लोलुपता के कारण भयंकर संकट में पड़ गये। एक दिन की बात है, महाराजा भोजन के लिए बैठे थे। पाचक खीर लाया। खीर इतनी अधिक गर्म थी कि महाराज का मुँह जल गया। इस प्रसंग पर उत्तेजित होना स्वाभाविक ही था। चक्रवर्ती ने उस दुर्व्यवहार के प्रतिशोध हेतु खीर से लबालब भरे उस बर्तन को पाचक के सिर पर उड़ेल दिया। फलत: वह पाचक (रसोइया) तीव्र जलन के कारण मरकर लवण समुद्र में व्यन्तर देव बना। देवता ने उत्पन्न होते ही ज्ञान दृष्टि से अपने हत्यारे सम्राट को देखा। देखते ही वह चक्रवर्ती पर आग-आग हो गया। देव के मन में प्रतिस्पर्धा की ज्वाला भभक उठी। उसी क्षण वह तापस का रूप धारण करके मधुर फल की भेंट लिये दरबार में पहुँचा। महाराज ने उपहार में प्राप्त उस सुस्वादु फल का उपयोग किया। फल की मधुरता ने महाराज के मन को मुग्ध बना दिया। क्या ऐसे मधुर फल मुझे प्रतिदिन उपहार में मिल सकते हैं? राजा ने आतुरता पूर्वक पूछा।

तापस ने कहा—मेरे टापू में आप प्रतिदिन पधारने का कष्ट करें तो प्रतिदिन मिल सकते हैं।

महाराज लोभ में फँस गये। दूसरे दिन अवसर देखकर महाराज स्वयं वहां पहुँचे। तापस ने कहा—''मुझे पहचानते हो या नहीं? मैं वही तेरे पाचक का जीव हूँ। अब खैरियत नहीं है। मैं फल का प्रलोभन देकर मात्र बदला लेने के लिए तुम्हें यहाँ लाया हूँ।'' देव की इस भीषण वाणी को सुनकर राजा सिहर उठा। धड़कन तेज हो गई। राजा ने सोचा हाय! कहां फंस गया। अब मेरे लिए नमस्कार महामंत्र ही त्राण है, शरण है। चक्रवर्ती ने मृत्यु की भयानकता से ऊपर उठकर परमबंधु, चिंतामणि महामंत्र का निष्ठापूर्वक स्मरण प्रारंभ कर दिया।

महामंत्र की अचिन्त्य ताकत के सामने देव हिम्मतहीन हो गया। वह दुविधा में पड़ गया। इस जप के चलते मैं कैसे बदला ले सकूंगा? देव चिंतन की गहराई में उतरा और एक तरकीब सोच निकाली। व्यन्तर ने राजा से कहा—हे नीच पामर! यदि वास्तव में तुझे जीवन चाहिए तो नमस्कार महामंत्र को एक बार लिखकर अपने बायें पैर के अंगूठे से मिटा दे। ''मरता क्या नहीं करता'' इस उक्ति के अनुसार राजा ने शर्त स्वीकार कर ली। विनाशकाल में विपरीत बुद्धि का योग अनिवार्य होता है। राजा ने जिस महामंत्र को संकटमोचक परमबंधु माना था, आज उसी महामंत्र की अवज्ञा कर रहा था। राजा ने महामंत्र को जैसे ही पैर के अंगूठे से मिटाया व्यन्तर देव ने राजा को मारकर समुद्र में फैंक दिया।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

अब तक जिन देव शक्तियों ने उसे बचाये रखा था, वे सब इस महामंत्र से आकर्षित थीं। जब यह स्पष्ट हो गया कि यह जिनशासन का सेवक नहीं अपितु उसकी आशातना-अविनय करने वाला तथाकथित उपासक है, तब किसी ने उसे सहारा नहीं दिया। यह है नमस्कार महामंत्र में छिपी दिव्य शक्ति का एक उदाहरण।

(16) हथिनी से श्रेष्ठ कन्या

घटना कालचक्र के साथ बदलते हुए चैतन्य की है। मुक्ति लाभ के पूर्व प्रत्येक प्राणी को विविध योनियों में पड़ाव करना होता है, जैसे—कभी नरक, तिर्यंच में और कभी मानव देह में। साध्वी सती सीता के जीव को भी इसी भांति भव भ्रमण करना पड़ा।

एक बार हथिनी के रूप में सीता के जीव ने इस रंगमंच पर अभिनय किया। इस अभिनय के दौरान वह घने जंगल में बहुत दूर चली गई। मार्ग में कीचड़ बहुत था। पैर फंस गये। लाखों प्रयत्नों के बावजूद वह स्वयं को निकाल न सकी। इस बीच पुण्य योग से सुरंग नामक विद्याधर पहुँचा। उसने मरणासन्न स्थिति को देखकर नमस्कार महामंत्र सुनाया। उस मंत्र के प्रभाव से वह मरकर नन्दवती श्रेष्ठी कन्या बनी। उसके बाद वह क्रमश: सीता सन्नारी बनी।

जिस स्थान पर मयूर अपने पंखों को फैलाकर नृत्य करते हैं, उस स्थान पर सर्प आदि विषैले जन्तुओं का भय नहीं रहता। ऐसी भी एक मान्यता है कि मयूर पिच्छी जहां रहती है, वहां विषैले जानवर नहीं आते। उसी प्रकार जिस व्यक्ति के मन मंदिर रूपी स्थान में नमस्कार महामंत्र रूप मयूर नृत्य करता है, वह व्यक्ति अभय बनकर संसार में विचरण करता हुआ संसार में आसक्त नहीं होता अपितु एक दिन संसार के बंधन से मुक्त हो जाता है।

(17) ऋषभध्वज

महापुर नगर में पद्मरुचि नामक श्रेष्ठी रहता था। बचपन से ही वह जैन धर्म के प्रति श्रद्धालु और जैन तत्त्वज्ञान का विशेषज्ञ था। एक दिन उस नगर के मध्य से एक गोकुल गुजरा। एक बूढ़ा और असक्त वृषभ वहां बेहोश होकर गिर पड़ा। गोकुल आगे निकल गया। वृषभ को कुछ होश हुआ पर वह उठकर चलने की स्थिति में नहीं था। उसी समय पद्मरुचि वहां पहुँचा। उसने वृषभ की स्थिति

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

देखी और उसे धार्मिक सहयोग देने की दृष्टि से वह ठहर गया। उसने वृषभ को नमस्कार महामंत्र सुनाया, चार शरण सुनाए और उसकी आत्मा को अध्यात्म के भावों से भावित करने का प्रयत्न किया। वृषभ ने शुभ अध्यवसायों में अपने उस जीवन की अंतिम सांसें ली और उसी नगर के राजा छत्रच्छाया के घर में राजकुमार के रूप में जन्मा। उसके तन पर वृषभ और ध्वज का आकार होने के कारण उसका नाम ऋषभध्वज रखा गया।

ऋषभध्वज एक दिन भ्रमण करता हुआ उस स्थान पर पहुँचा जहां उसकी मृत्यु हुई थी। उसे वह स्थान परिचित-सा लगा। ईहापोह करने से उसको जाति स्मृति ज्ञान हो गया। उसने अपना पिछला जन्म देखा और अपने उपकारी व्यक्ति की खोज करने के लिए उसने वहां एक मंदिर बनवा दिया और उसके भित्ति चित्रों में वह पूरी घटना अंकित कर दी गई। वहां एक आरक्षक नियुक्त था जो दर्शकों की हर गतिविधि पर अपनी दृष्टि रखता और कोई विशेष घटना घटित होती तो उसे राजा को निवेदन कर देता।

किसी समय श्रेष्ठी पद्मरुचि उस मंदिर के पास पहुँचा। उसने वहां अंकित चित्र देखे। उसने आरक्षक से उस देहरे के संबंध में पूछताछ की तो उसने राजा के बारे में पूरी जानकारी दे दी। पद्मरुचि समझ गया कि हमारे नगर का राजा उस वृषभ का ही जीव है। आरक्षक ने भी श्रेष्ठी का पूरा परिचय प्राप्त कर राजा तक पहुँचा दिया। राजा श्रेष्ठी से मिलकर बहुत प्रसन्न हुआ। उसने श्रेष्ठी के चरणों में अपना सारा राज्य न्यौछावर कर दिया। पद्मरुचि ने राज्य-व्यवस्था संभालने से इन्कार कर दिया। तब राजा ने उसको अपने ज्येष्ठ बंधु के समान सम्मानित किया और राज्य के प्रत्येक कार्य में उसके परामर्श को प्राथमिकता देने का निर्णय लिया। उसने अन्त तक अपना मैत्री सम्बन्ध निभाया।

श्रेष्ठी आत्मा अपने किसी अग्रिम भव में श्रीराम के रूप में उत्पन्न हुई और वृषभ की आत्मा सुग्रीव के रूप में। सुग्रीव की आत्मा श्रेष्ठी के द्वारा कृत उपकार से अनुबंधित थी। इस जन्म में उसने सीता की पहली खबर लाकर राम को दी और एक सीमा तक अपने अनुबंध को सफल बना लिया। दोनों इसी भव से अष्ट कर्मक्षय कर मोक्ष गये अर्थात् सिद्ध, बुद्ध और मुक्त बने।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि जिस प्रकार दलदल (कीचड़) में फँसी हुई मोटर को निकालने के लिए रस्सा, ट्रेक्टर, चैनल और ड्राइवर की अपेक्षा होती है, उसी प्रकार संसार में परिभ्रमण की हेतुभूत चार गतियों के दलदल में फँसी आत्मा को निकालने के लिए नमस्कार महामंत्र नाम स्मरण रूपी रस्सा,

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तपस्या रूपी ट्रेक्टर, सुगुरु की निश्रा रूपी चैनल और आज्ञापालक रूपी ड्राइवर की अपेक्षा होती है। जब यह सुयोग मिल जाता है तब आत्मा का उत्थान होता है, वह चार गतियों की आसक्ति से मुक्त होकर पंचम गति (सिद्ध गति) को प्राप्त करने का अधिकारी बन जाता है।

(18) भगवान ऋषभ के ग्यारहवें गणधर जयकुमार

चक्रवर्ती सम्राट भरत के प्रमुख सेनापति जयकुमार जो भगवान ऋषभ के ग्यारहवें गणधर बने। उनके गृहस्थ जीवन की घटना है। एक बार जयकुमार युद्ध में विजय प्राप्त कर हाथी पर आरूढ़ होकर अपने शिविर की ओर जा रहे थे। भूल से उसने हाथी को गहरे जल में उतार दिया। हाथी अपनी सूंड ऊपर उठाकर गंगा नदी में आगे बढ़ने लगा। सूंड का केवल अग्रभाग पानी में नहीं डूबा हुआ था। तभी एक मगरमच्छ ने हाथी को जकड़ लिया। तट पर खड़े लोगों ने हाथी को डूबते हुए देखा तो सभी घबरा गये। काशी नरेश अकंपन की सुपुत्री सुलोचना ने जब अपने पति पर आये हुए इस भयानक संकट को देखा तब उसने उपसर्ग दूर होने तक आहार-जल (अन्न-पानी) का त्याग करके ''णमो अरहंताणं'' बोलकर साहस और श्रद्धा के साथ अपनी सखियों के साथ गंगा नदी में कूद पड़ी। साथ में राजकुमारी का भाई हेमांगद और अन्य अनेक व्यक्ति नमस्कार महामंत्र का स्मरण कर गंगा में कूद पड़े।

तभी गंगादेवी का आसन प्रकंपित हुआ। वह शीघ्र वहां उपस्थित हुई और मगर रूप धारिणी कालिका देवी को डांट कर उपसर्ग दूर किया। वह सबको किनारे पर लाई। वहां तट पर एक भवन का निर्माण किया तथा एक रत्न जड़ित सिंहासन पर सुलोचना को बिठाया और उसे नमस्कार कर कहा—''सुलोचना! तुमने मुझे पहचाना या नहीं। मैं कौन हूँ? मैं तुम्हारी प्रिय सखी विन्ध्यश्री हूँ। कुछ वर्षों पूर्व जब हम दोनों बगीचे में घुमने गये तब तुमने कहा—सखी! फूलों को मत तोड़ो, इससे वनस्पति काय के जीवों की हिंसा होती है पर मैं नहीं मानी। फूलों को तोड़ते वक्त एक सर्प ने मुझे डंक लगा दिया। मरते वक्त तुमने मुझे नमस्कार महामंत्र सुनाया, जिसके प्रभाव से मैं यहां गंगानदी की अधिष्ठात्री देवी बनी हूँ। अब जब तुमने नमस्कार महामंत्र बोला तब मेरा आसन प्रकंपित हुआ। मैंने ज्ञान से जाना अपना पूर्व भव और तुम्हारे उपकार से उपकृत हो संकट के समय में मैं तत्काल यहां पहुँच गई।'' इतना कह देवी सुलोचना को नमस्कार करती हुई अन्तर्धान हो गई।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

जयकुमार सुलोचना के साथ अपने बंधु-बांधवों व सैनिकों को लेकर हस्तिनापुर पहुँचा। वहां जनता ने अपने महाराजा को बहुत दिनों के पश्चात् अपने बीच पाकर उनका हार्दिक स्वागत किया। महाराज जयकुमार ने एक दिन शुभ दिन व शुभ लग्न में उत्सव किया। उसमें सुलोचना को पट्ट महिषी का पटबंधन बांधकर सम्मानित किया तथा हेमांगद आदि को बहुमूल्य उपहार भेंट कर वहां से विदा किया तथा अपने भाइयों व अन्य लोगों को भी उपहार प्रदान कर संतुष्ट किया।

जयकुमार और सुलोचना दोनों अनेक भवों से साथ-साथ ही जन्म-मरण कर रहे थे। इस भव में भी दोनों का योग मिला। एक बार दोनों ने इस अवसर्पिणी काल के प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभ के दर्शन किये। दोनों के मन में विरक्ति हो गई। तत्पश्चात् जयकुमार ने अपने पुत्र अन्तवीर्य का राज्याभिषेक किया।

सुलोचना सहित जयकुमार ने अपने भाइयों व चक्रवर्ती के पुत्रों के साथ भगवान ऋषभ के पास दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा लेने के बाद जयकुमार चार ज्ञान का धारक, सम्पूर्ण श्रुत का ज्ञाता, सात ऋद्धियों का स्वामी और भगवान ऋषभ का ग्यारहवां गणधर बना। जयकुमार इसी भव से मोक्ष गये।

सुलोचना महासती ब्राह्मी के पास साधना व तप करके अन्त में अच्युत (बारहवें) स्वर्ग में देव रूप में उत्पन्न हुई और वहां से मनुष्य भव में जन्म ले मोक्ष जायेगी।

निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि जो अज्ञान रूपी अंधकार दीपक, सूर्य, चन्द्र या अन्य किसी द्रव्य प्रकाश से नष्ट नहीं होता वह अंधकार नमस्कार महामंत्र के जप रूपी प्रकाश से नष्ट हो जाता है तथा मृत्यु के अवसर पर महामंत्र का श्रवण मनन करने से समाधि पूर्वक मृत्यु होती है। मृत्यु क्षण की समाधि आत्मा को सद्गति प्रदान करती है तथा भव-परम्परा को भी परिमित बना देती है।

(19) देव विमान रुका

नारायणदत्ता नामक सन्यासिनी के बहकावे में आकर मालव नरेश चण्डप्रद्योत ने नरेश उदायन की पत्नी प्रभावती के रूप-सौन्दर्य पर आकर्षित होकर राजा उदायन की अनुपस्थिति में आक्रमण किया। उस समय रानी ने जब तक संकट न टले तब तक अन्न जल का त्याग कर नमस्कार महामंत्र का जाप शुरू कर दिया। चण्डप्रद्योत की सेना जिस समय नगर में उपद्रव कर रही थी उसी समय आकाश मार्ग से एक देव विमान जा रहा था। रानी प्रभावती के शील व

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मंत्र के प्रभाव से विमान आकाश में रुक गया। देव ने अवधिज्ञान से जाना कि रानी प्रभावती संकट में है और नमस्कार महामंत्र का जाप कर रही है। मुझे उसकी रक्षा करनी चाहिए। देव ने अपनी दिव्य शक्ति के द्वारा चण्डप्रद्योत की सेना को उड़ाकर उज्जयिनी में पहुँचा दिया।

सारा उपद्रव शांत कर देव रानी की परीक्षा करने हेतु राजा चण्डप्रद्योत का रूप बनाकर उसके सम्मुख पहुँचा और कहने लगा–मैंने सेना को मार डाला है। अब आप पूरी तरह से मेरे अधीन हैं अत: अब आप आँख खोलकर मेरे को देखिए। मैंने उदायन को भी कैद कर लिया है। अब आप मेरे साथ चलिए और पटरानी बनकर जीवन का आनंद लें।

चण्डप्रद्योत के रूप में देव वचन सुनकर रानी नमस्कार महामंत्र के ध्यान में और ज्यादा तल्लीन हो गई। उसका एक रोम भी शील धर्म से विचलित नहीं हुआ। देव ने अवधि ज्ञान से देखा कि रानी दृढ़धर्मिणी और शीलवती है। अत: मूल रूप में प्रकट हुआ और कहने लगा–देवी! आप धन्य हैं। मैं देव हूँ। पूरा वृतान्त देव ने कह सुनाया और कहा लोक वास्तव में सती नारियों के सतीत्व पर ही आधारित है। मैं आपके नमस्कार महामंत्र से प्रभावित होकर यहां आया, आपकी सुरक्षा की, अब मैं जा रहा हूँ। इतना कहते हुए देव पुष्पवृष्टि करता हुआ अन्तर्धान हो गया।

प्रभावती ने कुछ समय पश्चात् दीक्षा ग्रहण की तथा अनशन पूर्वक आयु पूर्ण कर पांचवे ब्रह्म स्वर्ग में दस सागरोपम स्थिति में महर्द्धिक देव के रूप में उत्पन्न हुई। कालान्तर में प्रभावती देव गति की आयु पूर्ण कर मनुष्य भव से मोक्ष जायेगी।

वस्तुत: भव्य पुरुषों द्वारा पठित, गुणित, श्रवित और चिंतित यह भाव नमस्कार महामंत्र सुख और मंगल का घर है। स्वर्ग और मोक्ष का सच्चा मार्ग है। दुर्गति प्रायोग्य अशुभ कर्मों को उड़ाने में प्रलय काल के पवन समान है। इसे अंतिम आराधना के समय में विशेष प्रकार से पढ़ना, गुणना, सुनना और चिंतन करना चाहिए।

(20) शक्ति सम्पन्न देव से भी शक्ति सम्पन्न है–महामंत्र

जिनदत्त और जिनदत्ता, दोनों ही पति-पत्नी सामायिक, उपवास, पौषध, प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाएं साथ-साथ करते थे। सब आर्थिक अनुकूलताएं होने के बावजूद भी उनके कोई संतान नहीं थी। एक दिन जिनदत्ता ने कहा–आप दूसरी शादी कर लें। हो सकता है शुभ पगफेरे से हमारे कोई सन्तान हो जाये।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

उस समय की परम्परा के अनुसार बहुपत्नीवाद चलता था। जनदत्त ने सोचा धन की अपने घर में कोई कमी नहीं है। कोई सामान्य से घर की लड़की से शादी करूँगा तो घर में शांति रहेगी।

एक दिन वह किसी कार्यवश बाहर जा रहा था। उसने एक कुएं के पास एक बुढ़िया को अपनी पुत्री के साथ बैठे देखा। वह उसके समीप गया। बातचीत के दौरान उस लड़की से शादी का निर्णय कर अपने घर लौटा। कुछ समय पश्चात् जब वह शादी कर आया तो उसने अपनी नवविवाहित पत्नी, जिसका नाम अल्का था, उससे कहा—''अपनी बड़ी बहिन जिनदत्ता का मान, सम्मान रखना। इसकी आज्ञा में रहना।''

अल्का ने सोचा—घर में मेरे कहे अनुसार सब कुछ होना चाहिए। वह जिनदत्ता के साथ ऊपर से अच्छा व्यवहार रखती है पर भीतर ही भीतर उसे मारने की योजना बनाने लगी। जब वह पीहर गई अपनी माँ से कहा—माँ कोई ऐसा उपाय सोचो, जिससे जिनदत्ता का अस्तित्व ही समाप्त हो जाये। घर में एक छत्र मेरा ही राज्य रहे।

माँ-पुत्री दोनों एक मंत्रवादी के पास गए और कहा—''तुम्हें मंत्र के प्रभाव से जिनदत्ता के जीवन को समाप्त करना है।'' उसने कहा—''तुम्हें इस कार्य के लिए दीपावली तक इंतजार करना होगा।'' वह उस दिन का पलक पावड़े बिछाए इन्तजार करने लगी।

प्रतीक्षा करते-करते वह दिन भी आ गया। जिनदत्त और जिनदत्ता दोनों कई वर्षों से दीपावली उत्सव को उपवास और पौषध कर धर्माराधना पूर्वक मनाते आ रहे हैं। इस वर्ष पर भी उन्होंने उपवास और पौषध किया। रात्रि के समय दोनों नमस्कार महामंत्र का जप कर रहे थे।

इधर मंत्रवादी ने रात्रि के समय मंत्रोच्चारण से देव को आहूत कर निर्देश दिया कि जिनदत्ता की सर और धड़ अलग कर खून से सनी तलवार मुझे लाकर दे। मंत्र के वशीभूत देव ने ज्योंही जिनदत्ता को मारने के लिए तलवार का वार करना चाहा महामंत्र के प्रभाव से देव का हाथ ऊपर का ऊपर ही रह गया। शक्ति सम्पन्न देव लाख कोशिश करके भी हाथ नीचे नहीं कर सका। देव शक्ति वापस लौटी। मंत्रवादी ने मंत्रोच्चारण के प्रभाव से देवता को बार-बार भेजा, किन्तु हर बार देव का हाथ ऊपर का ऊपर ही रहा, नीचे नहीं आया। आखिर बार-बार उसके द्वारा भेजने पर देव को गुस्सा आ गया और समीपस्थ कमरे में सो रही अल्का पर देव ने तलवार का वार किया और खून से सनी तलवार मंत्रवादी के

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

हाथों में सौंप दी। प्रात:काल होते ही अल्का की माँ बहुत उमंगों के साथ पुत्री के ससुराल पहुँची पर सारा उल्टा खेल देखकर वह सिर पर हाथ रख रोने लगी। ''हाथ कमाया कामड़ा किन दिजै दोष'' वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी। अपनी बात को छिपाने के लिए उसने एक योजना बनाई।

वह जोर-जोर से रोने लगी लोग इकट्ठे हुए। क्या बात हुई सबने पूछा? तब वह कहने लगी–इन दोनों ने मिलकर रात्रि में मेरी पुत्री को मार दिया और अब अपना पाप छिपाने के लिए पौषध का बहाना बनाकर बैठ गये हैं।

इधर पौषध में स्थित दम्पत्ति ने दृढ़-संकल्प कर लिया कि जब तक हमारे ऊपर आया हुआ कलंक नहीं उतरेगा तब तक हमें इस आसन से उठना नहीं, अन्न-जल ग्रहण करना नहीं और नमस्कार महामंत्र का जप करते रहना है।

कुछ समय पश्चात् शासन देवी का आसन चलायमान हुआ। उसने अवधि ज्ञान लगाया। सम्पूर्ण घटनावृत्त को जाना और आकाशवाणी की। सारा घटनावृत्त अनावृत्त हो गया। लोगों को यथार्थ जानकारी मिल गई। अल्का की माँ अपना मुँह नीचे किये वहां से चली गई। कबीर की ये पंक्तियां यथार्थता का उद्घाटन कर रही है–

जो ताको कांटा बोए ताहि बो तू फूल।
तो ही फूल को फूल है, वां को है त्रिशूल॥

जिनदत्त और जिनदत्ता अपना कलंक उतरने के पश्चात ही उस आसन से उठे। पौषध को सम्पन्न किया और उपवास का पारणा किया तथा महामंत्र की महिमा से सबको परिचित करवाया।

कथा के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि शक्ति-सम्पन्न देव से भी अनन्त शक्ति सम्पन्न है–नमस्कार महामंत्र। जिसके पास महामंत्र का सुरक्षा कवच है, देव भी उसका बाल बांका नहीं कर सकता। देवता भी उसको नमस्कार करते हैं।

(21) श्रीपाल–मैना सुन्दरी

अंग देश की राजधानी चम्पापुरी का शासक राजा सिंहरथ था। सिंहरथ के मंत्री का नाम मतिसार था। वह राजा का दाहिना हाथ था। राजा सिंहरथ की रानी का नाम कमलप्रभा था। कमलप्रभा कोंकण के राजा बसुपाल की छोटी बहिन थी। राजा बसुपाल कोंकण देश की राजधानी थानापुरी में राज्य करता था।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

रानी कमलप्रभा ने एक पुत्र को जन्म दिया। उसका नाम श्रीपाल रखा गया। अभी श्रीपाल 5-6 वर्ष का शिशु ही था कि राजा सिंहरथ का स्वर्गवास हो गया। सिंहरथ की चिता ठण्डी ही नहीं हो पाई थी कि उसके छोटे भाई वीरदमन ने सिंहासन पर अधिकार कर लिया। उसने श्रीपाल को भी मौत के घाट उतारने का षड्यंत्र किया। लेकिन मंत्री मतिसार की सावधानी से रानी कमलप्रभा अपने पुत्र श्रीपाल को लेकर निकल गई। वन में उसे सात सौ कोढ़ियों का दल मिला। वीरदमन के सैनिकों से बचने के लिए कमलप्रभा अपने पुत्र को लेकर कोढ़ी दल में मिल गई। वह उनके साथ रहने लगी। कोढ़ियों के सम्पर्क से श्रीपाल को भी कोढ़ हो गया। यद्यपि श्रीपाल कोढ़ी हो गया, फिर भी सभी कोढ़ी उसे अम्बर राणा कहते और राजा के समान ही आदर देते।

श्रीपाल के कोढ़ी होने से रानी कमलप्रभा चिंतित हो गई। जब कोढ़ी दल एक नगर के समीप पहुँचा तो कमलप्रभा नगर में कोढ़ की दवा लेने गई। जाते-जाते उसने कोढ़ियों के मुखिया को इतना अवश्य पूछ लिया कि आगे वे लोग किस नगर को जाएंगे। कमलप्रभा के जाने के बाद कोढ़ी दल आगे बढ़ा और उज्ञयिनी नगरी की सीमा पर जा पहुँचा।

मालव देश की राजधानी उज्ञयिनी में उस समय प्रजापाल नाम का राजा राज्य करता था। उसकी दो पुत्रियां थीं। बड़ी सुरसुन्दरी और छोटी मैना सुन्दरी। सुरसुन्दरी की माता का नाम सौभाग्य सुन्दरी और मैना सुन्दरी की माता का नाम रूप सुन्दरी था। राजा प्रजापाल बहुत ही अभिमानी था। वह अपने आपको सबका भाग्य विधाता मानता था। उसकी मान्यता थी कि मैं किसी को भी सुखी या दु:खी कर सकता हूँ। सुरसुन्दरी तो राजा के अहं को पुष्ट करती थी और मैना सुन्दरी जिन धर्म और कर्म सिद्धान्त को समझती थी अत: उसकी आस्था कर्म, आत्मा, पुनर्जन्म आदि में थी।

एक दिन राजसभा में दोनों पुत्रियां आईं। बातों के दौरान सुरसुन्दरी ने अपने पिता के विचारों का समर्थन किया अत: राजा प्रसन्न हो गया और उसने उसका विवाह उसके इच्छित वर शंखपुर के राजकुमार अरिमर्दन के साथ कर दिया किन्तु मैना सुन्दरी ने अपने पिता के विचारों का समर्थन नहीं किया। सुख-दु:ख का कारण प्राणी के अपने कर्मों को बताया। इस पर राजा प्रजापाल उससे नाराज हो गया। उसने उसका विवाह कोढ़ी अम्बर राणा के साथ कर दिया।

मैना सुन्दरी इस दु:खद परिस्थिति में भी न घबराई और न ही निराश हुई। उसने नमस्कार महामंत्र के नवपद की आराधना की और न केवल अपने

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

पति को वरन् उन सभी सात सौ कोढ़ियों को स्वस्थ कर दिया। सभी के कोढ़ जड़ मूल से नष्ट हो गई। उन सबका शरीर कुन्दन के समान दमकने लगा। श्रीपाल की माता भी आ गई। वह अपने पुत्र व पुत्रवधू को देखकर हर्षित हुई।

इसके पश्चात् श्रीपाल विदेश यात्रा को चला गया। वहां उसने रैन मंजूषा, गुणमाला आदि सात राजकन्याओं के साथ विवाह किया। अत्यधिक यश, सम्मान और ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त की। उसने चतुरंगिणी सेना भी तैयार कर ली। जब वह लौटकर आया तो उसके वैभव को देखकर राजा प्रजापाल ने भी स्वीकार किया वास्तव में किये हुए कर्म ही व्यक्ति को सुख-दु:ख देते हैं।

उसके बाद श्रीपाल का युद्ध उसके चाचा वीरमर्दन से हुआ। वीरमर्दन की पराजय हुई। पराजय से खिन्न होकर उसने वहीं मुनिव्रत स्वीकार कर लिया।

श्रीपाल ने नौ सौ वर्षों तक राज्य किया। अपने बड़े पुत्र त्रिभुवनपाल को राज्य देकर स्वयं ने संयम स्वीकार कर लिया। मैना सुन्दरी भी साध्वी बन गई। तपाराधना करके श्रीपाल मुनि ने आयु पूर्ण की और नौवें देवलोक में उत्पन्न हए। नवें भव में उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होगी।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि महामंत्र महाशक्ति है। इसके महाप्रभाव से असाध्य रोगों का भी शमन होता है। इसके जप से आत्मशुद्धि के साथ-साथ स्नायु-तंत्र का तनाव दूर होता है। उन्हें समुचित बल मिलता है। रक्त की शुद्धि होती है। मंत्राक्षरों की शक्ति हड्डियों तथा उत्तकों तक पहुँचकर उन्हें नया जीवन प्रदान करती है। परिणाम यह होता है कि शरीर की रोग से लड़ने की शक्ति बढ़ जाती है। यही जप-आराधना ब्रह्ममुहूर्त्त यानि प्रात:काल तीन से पांच बजे के अन्तराल में की जाती है तो आज्ञा-चक्र की पिच्युटरी ग्रंथि से निकलने वाले सोमरस की धारा गले से नीचे उतरकर पूरे शरीर में प्रवाहित होती है। शास्त्रों की भाषा में कहा गया है कि यह सोम-रस शरीर के लिए अति महत्त्वपूर्ण है। इस रस के द्वारा शरीर के हार्मोन्स का व्यवस्थित विकास होता है और शरीर का कायाकल्प बना रहता है। नियमित ब्रह्ममुहूर्त्त में धर्मजागरणा के बाद मुँह में आते हुए रस का स्वाद फीके या खारे के बदले मधुर अमृतमय हो जाता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

परिशिष्ट–2

उद्धृत, उल्लिखित अथवा अवलोकित ग्रंथों की तालिका

1. भगवती भाष्य	–	वाचना प्रमुख गणाधिपति तुलसी संपादक : भाष्यकार आचार्य महाप्रज्ञ
2. ठाणं	–	वाचना प्रमुख आचार्यश्री तुलसी संपादक : विवेचक मुनि नथमल
3. समवायांग	–	वाचना प्रमुख आचार्यश्री तुलसी सम्पादक : विवेचक मुनि नथमल
4. आचारांग	–	वाचना प्रमुख आचार्यश्री तुलसी संपादक : विवेचक मुनि नथमल
5. श्री भिक्षु आगम विषय कोष (भाग-1)	–	वाचना प्रमुख–गणाधिपति तुलसी प्रधान संपादक–आचार्य महाप्रज्ञ निर्देशन–मुनि दुलहराज, डॉ. सत्यरंजन बनर्जी संग्रहण/अनुवाद/संपादन–साध्वी विमल प्रज्ञा, साध्वी सिद्ध प्रज्ञा
6. मनोनुशासनम्	–	आचार्यश्री तुलसी
7. मेरा जीवन मेरा दर्शन (आत्मकथा-11)	–	आचार्य तुलसी सम्पादक–साध्वी प्रमुखा कनकप्रभा
8. आराधना	–	प्रवाचक युगप्रधान आचार्य तुलसी
9. मन हंसा मोती चुगे	–	आचार्य तुलसी
10. एसो पंचणमोक्कारो	–	आचार्य महाप्रज्ञ
11. अर्हं	–	आचार्य महाप्रज्ञ
12. भीतर की ओर	–	आचार्य महाप्रज्ञ
13. मंत्र : एक समाधान	–	आचार्य महाप्रज्ञ
14. साधना और सिद्धि	–	आचार्य महाप्रज्ञ
15. किसने कहा मन चंचल है	–	आचार्य महाप्रज्ञ
16. एकला चलो रे	–	आचार्य महाप्रज्ञ

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

17. शक्ति की साधना	–	आचार्य महाप्रज्ञ
18. प्रेक्षा : अनुप्रेक्षा	–	आचार्य तुलसी
19. जैन धर्म अर्हत्-अर्हताएं	–	युवाचार्य महाप्रज्ञ
20. तुम स्वस्थ रह सकते हो	–	आचार्य महाप्रज्ञ
21. मैं कुछ होना चाहता हूँ	–	आचार्य महाप्रज्ञ
22. मन के जीते जीत	–	युवाचार्य महाप्रज्ञ
23. जैन योग	–	आचार्य महाप्रज्ञ
24. जैन धर्म के साधना सूत्र	–	आचार्य महाप्रज्ञ
25. प्रेक्षाध्यान चैतन्य केन्द्र प्रेक्षा	–	युवाचार्य महाप्रज्ञ
26. संभव है समाधान	–	लेखक—आचार्य महाप्रज्ञ संपादक—मुनि दुलहराज संकलन—समणी स्थित प्रज्ञा
27. उपासना कक्ष	–	युगप्रधान आचार्यश्री महाप्रज्ञ युवाचार्यश्री महाश्रमण
28. विशेषावश्यक भाष्य	–	जिनभद्रगणि क्षमाश्रमण
29. आवश्यक निर्युक्ति	–	आचार्य भद्रबाहु (हरिभद्रीय वृत्ति सहित)
30. व्यवहार भाष्य	–	सम्पादक मुनि माणेक
31. आवश्यक निर्युक्ति	–	आचार्य भद्रबाहु (मलयगिरी वृत्ति सहित)
32. श्री भगवती सूत्र (भाग-1)	–	प्रवचनसार आचार्यश्री जवाहरलालजी महाराज-सा
33. ज्ञानार्णव	–	शुभचन्द्राचार्य
34. योगशास्त्र	–	आचार्य हेमचन्द्र
35. नियमसार	–	
36. जैन दर्शन और विज्ञान	–	समाकलन—मुनि महेन्द्र कुमार प्रेक्षाप्राध्यापक, जेठालाल एस. झवेरी प्रेक्षा प्रवर्त्तक
37. नमस्कार महामंत्र की प्रभावक कथाएं	–	मुनि किशनलाल

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

38. साधना प्रयोग और परिणाम – मुनि किशनलाल
39. जीवन विज्ञान 9, 10 – मुनि किशनलाल, शुभकरण
40. सुमरो नित नवकार – मुनि शुभकरण
41. तेरापंथ का इतिहास – मुनि बुद्धमल
42. जैन साधना पद्धति में तपोयोग – मुनि श्रीचन्द्र
43. नमस्कार महामंत्र साधना के आलोक में – साध्वी राजीमती
44. ज्योति किरण – साध्वी राजीमती
45. नमस्कार चिंतामणि – पूज्य मुनिश्री कुन्दनमलजी महाराज
46. परमेष्ठी नमस्कार – श्री भदंकर विजयजी गणिवर्य
47. मंत्र भलो नवकार – श्री भदंकर विजयजी गणिवर्य
48. मंत्र रहस्य – डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली
49. णमोक्कार महामंत्र – रत्नचन्द भारिल्ल
50. अरिहंत – डॉ. साध्वी दिव्या
51. नवकार महामंत्र – कन्हैयालाल दक
52. लोगस्स सूत्र—एक दिव्य साधना – साध्वी डॉ. दिव्य प्रभा
53. मंत्राधिराज (भाग-3) – लेखक—पन्यास प्रवरश्री भद्रंकर विजयजी गणिवर्य
54. ऋषि मंडल स्तोत्र – संग्राहक सेठ चन्दनमलजी नागोरी
55. यंत्र-मंत्र-तंत्र विज्ञान (प्रथम भाग) – लेखक—हीरालाल दूगड़
56. रक्षणहार एक नवकार – लेखक—पूज्य आचार्य देव श्रीमद् विजयपूर्णचन्द्र सूरीश्वरजी महाराज
57. महाप्रभाविक नवस्मरण (पूर्वाचार्य विरचित) – संपादक—संशोधक साराभाई मणिलाल नबाब

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

58. बहुआयामी महामंत्र णमोक्कार	–	डॉ. नेमीचन्द जैन
59. मंगलमंत्र णमोक्कार —एक अनुचिंतन	–	प्रो. नेमिचन्द्र शास्त्री
60. महामंत्र नवकार	–	उपाध्याय श्री मधुकर मुनि
61. नमस्कार मंत्रोदधि	–	अनुवाद व संग्रहकर्त्ता शाह जे. बाबूलाल जैन
62. मूलाचार	–	कुंदकुंदाचार्य, हि. अनु. जिनदास पार्श्वनाथ फडकले शास्त्री, न्यायतीर्थ
63. जैन भारती वीतराग वंदना विशेषांक	–	प्रधान सम्पादक—श्रीचन्द रामपुरिया सम्पादक—मुमुक्षु डॉ. शान्ता जैन
64. आगम—प्रश्न रत्न मंजूषा	–	मुनि हस्तीमलजी
65. स्वयं से साक्षात्कार	–	श्री चन्द्रप्रभ
66. सहज मिले अविनाशी	–	श्री चन्द्रप्रभ
67. लाइफ पॉजेटिव (कण-कण में संगीत)		
68. निरामया	–	साध्वी जयश्री, साध्वी रमाकुमारी
69. चिंता हटाओ सुख पाओ	–	स्वेट मार्डन
70. चैत्य वंदना	–	साध्वी कनकश्रीजी
71. जैन धर्म जीवन और जगत	–	साध्वी कनकश्रीजी
72. जैन भारती, वर्ष-53	–	मानद संपादक—शुभू पटवा
अंक-10 अक्टूबर, 2005	–	मानद सह-संपादक—बच्छराज दूगड़
73. संबोधि का समीक्षात्मक अनुशीलन	–	डॉ. समणी स्थित प्रज्ञा
74. साधना के शलाका पुरुष गुरुदेव श्री तुलसी	–	डॉ. समणी कुसुम प्रज्ञा
75. कर्म पुराण	–	आनन्द स्वरूप गुप्त
76. भिखू-स्याम भिखू स्याम	–	श्रमण सागर

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

77. तपस्विनी बहन—
    कलावती जीवनवृत्त
78. हस्त मुद्रा प्रयोग और परिणाम – मुनि किशनलाल
79. णमोक्कार अनुप्पेहा – उमेश मुनि
80. पर्युषण साधना – साध्वी राजीमती
81. सोया मन जग जाए – आचार्य महाप्रज्ञ
82. आमंत्रण आरोग्य को – आचार्य महाप्रज्ञ
83. भक्तामर अन्तस्तल में – आचार्य महाप्रज्ञ
84. मन का कायाकल्प – आचार्य महाप्रज्ञ
85. जीवन की पोथी – आचार्य महाप्रज्ञ

॥ ॐ अर्हम् ॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

नमस्कार महामंत्र — एक अनुशीलन

भाग-1

साध्वी पुण्ययशा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकाशक : **जैन विश्वभारती**
लाडनूँ-341306 (राजस्थान)

© जैनविश्वभारती, लाडनूँ

आर्थिक सौजन्य : स्व. पिताश्री रामलालजी डागा एवं
मातुश्री सुरजीदेवी डागा की पुण्य स्मृति में
जीवनमल, मोहनलाल, गुलाबचन्द डागा परिवार
बीदासर/मुम्बई

प्रथम संस्करण : 2009

मूल्य :

लेजर टाइप सेटिंग : मोहन कम्प्यूटर्स, लाडनूँ, 9887111345

मुद्रक : श्री वर्धमान प्रेस, दिल्ली

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आशीर्वचन

नमस्कार महामंत्र साधना का शक्तिशाली प्रयोग है। साध्वी पुण्ययशा ने उसके अनेक पक्षों को प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

प्रत्येक वस्तु को अनेक कोणों से देखा जा सकता है। इससे उसके व्यापक स्वरूप को समझने का अवसर मिलता है। पाठक वर्ग के लिए यह उपयोगी हो सकेगा।

15 जनवरी, 2009 **आचार्य महाप्रज्ञ**

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

स्वकथ्य

नवोन्मेषीय-प्रतिभा के धनी विवेकानन्द जब साधना करने के उद्देश्य से रामकृष्ण परमहंस के पास पहुँचे, तब रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द की मन:स्थिति का परीक्षण करते हुए कहा–''मेरे पास अष्ट सिद्धियां हैं, वे तुम्हें देना चाहता हूँ।'' आत्मजिज्ञासु, मुमुक्षु विवेकानन्द जिज्ञासा के स्वर में बोले–गुरुदेव! क्या सिद्धियों से ईश्वर की प्राप्ति हो सकेगी? रामकृष्ण परमहंस ने कहा–नहीं। तब विवेकानन्द बोले–मुझे तो पहले ईश्वर के दर्शन करने हैं।

भगवान् बुद्ध से शिष्य ने पूछा–भंते! पानी पर चलने की क्षमता वाली विलक्षण विद्या का क्या मूल्य है? भगवान् बुद्ध ने कहा–''सिर्फ दो कोड़ी, क्योंकि केवल पानी पर चलने के लिए इतनी साधना करनी व्यर्थ ही तो है। नदी तो दो कोड़ी देकर नाव से भी पार की जा सकती है।

उपरोक्त दोनों घटनाओं के निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि सच्चे साधक का साध्य सिद्धियां और सुख-सुविधाएं नहीं हो सकती, उसका साध्य है–आत्मदर्शन। आत्मा और परमात्मा के अन्तर को यदि एक ही शब्द में बताया जाये तो वह है–विषमता। जब इस स्वरूप की विषमता का अन्तर समाप्त हो जाता है तब स्वरूप की समता प्रकट होती है। स्वरूप की समता प्रकट होते ही सम्पूर्ण निर्मलता की आभा प्रस्फुटित हो जाती है। वह आभा ही आत्मा की परम स्थिति है और उसे आत्मा से परमात्मा बनाती है। एक शेर में कहा गया है–

खुदी को कर बुलन्द इतना कि हर तकदीर के पहले
खुदा बन्दे से खुद पूछे बोल तेरी रजा क्या है?

भगवान् महावीर ने कहा–''अप्पा सो परमप्पा'' अर्थात् खुद से खुदा बनता है। जो आत्मा है, वही परमात्मा बनता है। नर से नारायण, आत्मा से परमात्मा यही प्रकृति का प्राकृतिक विकास क्रम है। नर से जुदा नारायण नहीं होता और आत्मा से अलग परमात्मा नहीं होता है।

अप्पा सो परमप्पा का सिद्धान्त प्रत्येक ऊँच-नीच आत्मा में सम्यक् आस्था स्थापित करता हुआ उनमें उच्चतम विकास कर लेने की अटूट प्रेरणा भरता है। केवल इस हद तक खुद को बुलन्द बनाने की अपेक्षा है। इस बुलन्दी या आत्मदर्शन की भूमिका में नमस्कार महामंत्र नींव के समान है। यह परम आध्यात्मिक मंत्र है। मंत्राधिराज महामंत्र अचिन्त्य चिंतामणि, अलौकिक पारसमणि और अद्वितीय हीरकणी है। यह अनन्त-अनन्त शक्तियों का भंडार

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

तथा अपाय-निरोध का राजमार्ग है। यह अनुपम, अनुत्तर, अपराजित असाम्प्रदायिक और अनादि मंत्र है। इसके जप से हिंसक मनोवृत्तियां क्षीण होती हैं। फलतः अहिंसा के प्रति आन्तरिक अनुराग जागृत होता है। इस अपेक्षा से प्राचीन आचार्यों ने इसे अहिंसक मंत्र भी कहा है। अहिंसक मंत्र होने के कारण इसकी साधना सुखकर, शांतिप्रद और अभयकारक है। इस प्रकार इसे समता, शांति, समृद्धि और श्रेष्ठता का प्रतीक मंत्र कहा जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। जिस प्रकार एक वैज्ञानिक हमेशा जिज्ञासु, विनम्र, धैर्यशील और अन्वेषण में संलग्न रहता है उसी प्रकार साधना के क्षेत्र में भी एकाग्रता, अविचल संकल्प, धैर्य, लगन, निःसंशय और सतत् साधना साधक की सफलता के सशक्त सोपान हैं।

वर्तमान वैज्ञानिक युग में राधावेध को साधना, पर्वत को मूल से उखाड़ना तथा गगन में गमन करना दुर्लभ नहीं रहा है परन्तु अलौकिक महिमा से अभिमंडित इस परमेष्ठी-मंत्र की प्राप्ति दुर्लभ ही नहीं, अत्यन्त दुर्लभ है। इस शक्तिशाली और सिद्ध मंत्र में हमारे जीवन के सारे उद्देश्य निहित हैं। जगत् में कोई ऐसा मंत्र नहीं होगा, जिसमें जीवन के उद्देश्य लिखे गये हों। व्यक्ति-सापेक्ष न होकर गुण-सापेक्ष होना ही इस महामंत्र की विरल विशेषता है। मंत्र स्थित अर्हत् आत्मा का स्वरूप है, सिद्ध आत्मा का पूर्ण शुद्ध स्वरूप है, आचार्य चारित्रिक निर्मलता के प्रेरक हैं, उपाध्याय ज्ञान के देवता और मुनि निष्काम सेवा के संवाहक हैं। सचमुच नमस्कार महामंत्र एक मात्र आध्यात्मिक उन्नयन का महान सेतु है।

इसकी रचना, शक्तिशाली वर्णों की संयोजना, ध्वनि प्रकंपन और शब्द विज्ञान अपने आप में अनूठा और अद्वितीय है। कुछ समय पूर्व तक सूक्ष्म ध्वनि तरंगों का कर्त्तृत्व धार्मिक जगत् तक ही सीमित था, किन्तु वर्तमान युग में सूक्ष्म ध्वनि वैज्ञानिक तत्त्व बन गई है। सम्पूर्ण विश्व की घटनाओं को एक टेबल पर लाना अब इन्टरनेट के द्वारा आसान हो चुका है। कम्प्युटर के द्वारा चेट (विचार-विमर्श) के प्रयोग की तुलना जैन आगमों में प्राप्त आहारक लब्धि से की जा सकती है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनि अपनी जिज्ञासा का समाधान प्राप्त करने के लिए अपने शरीर से एक पुतला निकालते थे, जिसे आहारक शरीर कहा जाता था। जिसके माध्यम से वे विशिष्ट ज्ञानी (केवल ज्ञानी) व्यक्ति से जिज्ञासा का बिना विलम्ब समाधान पा लेते थे। वर्तमान में चेट के द्वारा विशेष व्यक्तियों से अपनी जिज्ञासा का समाधान शीघ्र पाया जा सकता है।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

सुना है एक बार सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ ओंकारनाथ लाहौर के प्राणीगृह को देखने गये। पंडितजी को देखते ही एक बाघ गर्जना करने लगा। तुरंत ही पंडितजी ने एक राग छेड़ी।............राग का श्रवण करते ही वह बाघ पालतू कुत्ते की भाँति एकदम शांत होकर पंडितजी को देखने लगा।

रूसी वैज्ञानिक एस.बी. कोदाफे ने एक संगीत ध्वनि के द्वारा आँखों की बीमारी दूर करने के सफल प्रयोग किये हैं।

जापान में स्वप्न रिकॉर्ड करने के लिए एक मशीन का निर्माण किया गया है जो मनुष्य की आँखों और जबड़ों पर फीट की जाती है। क्योंकि स्वप्न देखते समय मनुष्य की आँखों की पुतलियां बहुत तेजी से काम करती हैं। इस मशीन का उपयोग अपराध भावना की जानकारी करने हेतु विशेष रूप से किया जाता है।

अर्हत् भगवान मालकोश राग में देशना (प्रवचन) देते थे जिसे सुनते ही प्राणियों के रौद्र परिणाम तुरन्त नष्ट हो जाते थे और वे अत्यन्त शांत व गंभीर बन जाया करते थे।

वैज्ञानिक प्रयोगों ने भी यह सिद्ध किया है कि यदि विशेष प्रकार का मधुर संगीत बजाया जाये तो वृक्ष अधिक फल देने लगते हैं, गायें अधिक दूध देती हैं। थोड़े आगे के प्रयोगों ने यह प्रमाणित किया है कि यदि लगातार प्रिय संगीत बजाया जाये, मंत्रों का प्रयोग किया जाये तो वृक्ष मौसम से पहले ही फल देने लगते हैं। शब्द की प्रभावशाली शक्ति को कौन इन्कार कर सकता है? ध्वनि तरंगों की शक्ति शारीरिक शक्तियों से अपेक्षाकृत सूक्ष्म है। आधुनिक संचार-विज्ञान के अनुसार ध्वनि-तरंगें अधिक दूरी की यात्रा नहीं कर सकती। इसलिए ध्वनि तरंगों को विद्युत् चुम्बकीय तरंगों में बदलकर प्रेषित किया जाता है। इस प्रक्रिया का नाम 'मोड्युलेशन' है। मंत्रविद्या में भी ध्वनि तरंगों को विद्युत प्रकंपनों में बदला जाता है। इन विद्युत् तरंगों को मंत्र-शास्त्र में अग्नि-बीज कहा जाता है। ये अग्नि-बीज मस्तिष्क की उच्च ट्रांसमिशन क्षमता से सुदूर अदृश्य लोक में प्रतिष्ठित देवता तक मंत्र, आदेश वैसे ही पहुँचा देते हैं जैसे आज उपग्रह के जरिये मैनफ्रेम (मुख्य कम्प्युटर) तक संदेशों का ट्रांसमिशन किया जाता है।

प्राचीन समय में भी टेलीपेथी प्रक्रिया के द्वारा संदेशों का आदान-प्रदान ऋषि-मुनि करते थे। लगभग साठ वर्ष पूर्व की एक घटना है। एक वैज्ञानिक उत्तरी-ध्रुव की खोज में निकला था। उसके साथ एक शक्तिशाली वायरलेस सेट

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

था। इस यंत्र से वह अपने केन्द्र को समाचार भेजता था। एक व्यवस्था साथ में और भी की गई थी। एक अतीन्द्रिय चेतना सम्पन्न व्यक्ति से भी संदेशों का आदान-प्रदान होता था। वैज्ञानिकों को उस समय बहुत आश्चर्य हुआ जब मौसम की खराबी के कारण वायरलेस मैसेज (रेडियो-संदेश) न भेजे जा सके। जो भेजे गये, वे भी बाद में मिलाने पर 72 प्रतिशत से ज्यादा सही न निकले। जबकि उस अतीन्द्रिय दृष्टि प्राप्त व्यक्ति के माध्यम से भेजे और प्राप्त किये जाने वाले संदेश 80 प्रतिशत से 92 प्रतिशत तक सही और स्पष्ट सिद्ध हुए।

आजकल रूस और अमेरिका जैसे संपन्न तथा उन्नत देशों के वैज्ञानिक यह जानने के लिए बहुत समुत्सुक हैं कि जब आधुनिकतम यंत्र भी इतना अच्छा कार्य नहीं करते तब कैसे मनुष्य का साइकिक पावर सफल हो जाता है?

इन तथ्यों से निष्कर्ष निकलता है कि साइंस की शक्ति की अपेक्षा योग शक्ति के चमत्कार अधिक शक्तिशाली हैं। भौतिक जगत् में भाप की शक्ति, इलेक्ट्रोनिक शक्ति, विद्युत् शक्ति, गुरुत्वाकर्षण शक्ति—ये शक्तियां बड़ी मानी जाती हैं पर आत्मविश्वास उन सबका संचालक होने से उसकी शक्ति सबसे अधिक है। आत्मशक्ति व संकल्प-शक्ति का विकास ही शिव-संकल्प, भीष्म-प्रतिज्ञा अथवा भगीरथ प्रयत्न का पर्यायवाची बन सकता है जो नियति तथा प्राकृतिक शक्तियों को बदलने की क्षमता रखता है।

इतिहास यह भी बताता है कि आयुद्धशाला से युद्ध मैदानों तक अस्त्र-शस्त्र भी मंत्रों द्वारा भेजे जाते थे। ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, पाशुपतास्त्र आदि कई नाभिकीय प्रक्षेपास्त्रों को ढोने और दागने के लिए मंत्र-विद्या का प्रयोग किया जाता था। परामनोविज्ञान की भाषा में इसे दूर चालन कहते हैं। रणभेरी बजाने के पीछे भी यही उद्देश्य है कि सैनिक इतने जोश में आ जाये कि मरने का डर भूल जाये। इस जोश में ऐसे लड़े की शत्रुओं को परास्त कर दे। यह भी अनुभव किया जाता है कि पुंगी बजाने से सर्प आता है हारमोनियम, सितार, सारंगी आदि बजाने से नहीं। यह सारा शब्द ध्वनियों का ही चमत्कार है। ध्वनि तरंगों का विज्ञान, मंत्र-विज्ञान अति प्राचीन है। मंत्र-शक्ति से आत्मा की सुप्त चेतना का जागरण तथा अधोगामी चेतना का उर्ध्वीकरण किया जाता है।

यद्यपि चुम्बक चेतनाहीन होता है फिर भी इसके दोनों छोर किसी दूसरे चुम्बक के छोरों की मैत्री या घृणा को पहचान सकते हैं, या एक दूसरे को दूर फेंक सकते हैं। ऐसा क्यों होता है? कुछ नहीं कहा जा सकता, पर होता है। ठीक इसी

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रकार मंत्र शरीर और मन के विकारों को दूर फैंकता है। शरीर की प्रतिक्रियाओं पर प्रभाव डालता है। रक्त और स्नायुओं के माध्यम से रक्त संचार के विकार दूर करता है। इससे स्नायुओं को बल मिलता है। बुद्धिजीवी लोग जैसे न्यायाधीश, वकील, अध्यापक आदि नियमित रूप से नमस्कार महामंत्र का जप करें अथवा ध्यान करें तो वे अपने कार्यक्षेत्र में भी बहुत सफल और लाभान्वित हो सकते हैं।

मंत्रों के रचयिता महापुरुष बहुत सामर्थ्यवान होते हैं। उनकी रचनाओं में विशिष्ट प्रकार की सिद्धियां सन्निहित होती हैं। नमस्कार महामंत्र तो अर्हत् वाणी है। इसमें अष्ट कर्म क्षय का पूर्ण सामर्थ्य है। अत: इसके आराधक मोक्ष मंजिल को तो पाते ही हैं, पर साथ-साथ जिनकी वाणी और हृदय में यह महामंत्र रम जाता है उनके व्याधि, जल, अग्नि, चोर, सिंह, हाथी, संग्राम, तथा सर्प आदि के भय भी स्वत: नष्ट हो जाते हैं। इस महामंत्र के प्रभाव से शत्रु मित्र-रूप, विष अमृत-रूप, विपत्ति सम्पत्ति-रूप और दु:ख सुख-रूप में बदल जाते हैं। यह महाप्रभावी, विघ्न-विनाशक और मंगलकारी मंत्र है।

आत्म विकास के अभ्युदय में निमित्तों की सहभागिता भी अपना विशेष मूल्य रखती है। न जाने जिंदगी में कब, कौन किसका प्रेरक बन जाये? वि.सं. 2061, माघ शुक्ला त्रयोदशी (इ. सन् 22 फरवरी, 2005) मेरा संयम पर्याय के बाईसवें बसंत में प्रवेश। लाडनूं विश्वभारती का पावन प्रांगण। प्रमुदित मन। शुभ संकल्पों से अनुप्राणित प्राण चेतना। महाप्राण आचार्य श्री महाप्रज्ञजी का पावन ऊर्जावलय। मैं श्रीचरणों में सविनय पंचाग प्रणति वंदन कर रही थी। साध्वी श्री सरोजकुमारी जी ने कहा—गुरुदेव! आज पुण्ययशाजी का दीक्षा दिवस है। परमाराध्य आचार्य प्रवर ने अमीय दृष्टि का वर्षण करते हुए मुझसे पूछा—''संयम पर्याय के कितने वर्ष हो गये।'' मैंने कहा—गुरुदेव! इक्कीस वर्ष पूरे हो गये आज बाईसवें वर्ष में प्रवेश हो रहा है।'' आचार्य प्रवर ने स्मित वदन आशीर्वाद की मुद्रा में फरमाया—''तुमने बहुत अच्छा विकास किया है, इस वर्ष और अधिक विकास करो।'' नि:संदेह गुरु शिष्यों के आत्मविद्युत् प्रवाह को एक मार्ग देते हैं। गुरु के मुख रूपी मलयाचल से नि:सृत वचन रस चन्दन के स्पर्श सदृश होता है। कवि ने बहुत सुन्दर और यथार्थ कहा है—

टिक जाती जिस शिष्य पर गुरुदृष्टि विशाल।
बस जाती उस रसना में सरस्वती तत्काल॥

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

आचार्य प्रवर के आशीर्वाद एवं प्रेरणा पाथेय से मेरे मानस में एक रचनात्मक संकल्प जगा।

आचार्य प्रवर का मंगल-पाठ सुन 1 मार्च, 2005 को हमने लाडनूँ से भीलवाड़ा चातुर्मास हेतु विहार किया। मैंने कुछ लेख लिखे जो प्रेक्षाध्यान पत्रिका में प्रकाशित होते रहे। भीलवाड़ा चातुर्मास के लगभग डेढ़ माह पश्चात् एक दिन कुछ लेख प्रोफेसर डी.सी. जैन (धर्मचन्दजी जैन) को संशोधन की दृष्टि से दिखाए। जिसमें एक लेख का शीर्षक था—''अध्यात्म-विज्ञान, मनोविज्ञान में नमस्कार महामंत्र।'' प्रो. जैन ने सुझाव की भाषा में कहा—साध्वीश्री जी आप अपनी चेतना को विभिन्न दिशाओं में न लगाकर एक नमस्कार महामंत्र पर ही केन्द्रित करें। इस एक विषय पर लिखें और आज से ही लिखना आरम्भ कर दें।

साध्वी श्री सरोजकुमारी के प्रोत्साहन और प्रो. डी.सी. जैन की प्रेरणा से मैंने उसी दिन से नमस्कार महामंत्र को अपनी लेखनी का विषय बनाया। लगभग 50 पृष्ठ लिखकर मैंने जैन साहब को पढ़ाये। उन्होंने मेरे उत्साह को वृद्धिंगत करते हुए कहा—आप लिखते रहें। समय-समय पर प्रदत्त उनके सुझाव तथा दिशा-निर्देश ने मेरी लेखनी को सुदृढ़ बनाया। जैन भारती के सम्पादक शुभू पटवा ने भी नमस्कार महामंत्र के कुछ लेखों को संशोधित परिमार्जित कर उन्हें न केवल प्रकाशित ही किया अपितु दर्शन कर मुझे उत्साहित भी किया। संकल्प प्राणवान बनता गया तथा टार्च के फोक्सड् प्रकाश वत् मैंने अपनी चेतना को नमस्कार महामंत्र के अध्ययन, मनन एवं प्रयोगों में केन्द्रित करने का प्रयास किया। दृष्टि की अन्वेषणशीलता में कदम-कदम चलते-चलते मंत्रद्रष्टा जयाचार्य और नमस्कार महामंत्र—इस विषय पर लिखने के बाद स्वयं मुझे भी आश्चर्य होता है कि लेखनी में तीव्रता कैसे आई? इसे मैं महामंत्र की अचिन्त्य महिमा, गुरु का अनुग्रह या शक्तिपात ही मानती हूँ। परमपूज्य आचार्य श्री महाप्रज्ञजी की सृजनधर्मी प्रेरणा एवं असीम शक्ति संप्रेषण दोनों का योग मुझे मिला है। इस योग ने ही कुछ कर गुजरने की आकांक्षा पैदा की है। मुझे हार्दिक प्रसन्नता है कि मेरा लघु और प्रारम्भिक प्रयास जब गुरुबल और पुरुषार्थ के साथ चला तो सफल परिणाम तक पहुँच गया।

पक्षी अपने पंखों के बल से अनन्त आकाश का पार नहीं पा सकता फिर भी उड़ना नहीं छोड़ता। वह अपनी शक्ति भर अनन्त आकाश में भ्रमण करता ही है तथा इस विचार से वह प्रसन्न भी होता है कि जिसमें मैं परिभ्रमण कर रहा हूँ वह आकाश अनन्त है। मंत्र के रहस्यों का उद्घाटन एक मंत्रविद् आचार्य या

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

प्रत्यक्षदर्शी ऋषि ही कर सकते हैं। तत्त्वद्रष्टा प्रज्ञापुरुषों ने नमस्कार महामंत्र पर बहुत कुछ लिखा है, कहा है, किन्तु फिर भी वह आलोक्य और अकथ्य ही रहा है। एक अल्पजीवी व्यक्ति के द्वारा इसके अनन्त रहस्यों का द्वार कभी नहीं खुल सकता। इस महामंत्र का एक-एक अक्षर अपने आप में महान रहस्यों को समेटे हुए है। कहाँ, कैसे और किस प्रकार उनको प्रयुक्त कर चेतना के प्रसुप्त तारों को झंकृत किया जा सके, यह गुरुजनों की कृपा बिना संभव नहीं है। नमस्कार महामंत्र का अर्थ पूरा न जान सकने पर भी इस पवित्र, शक्तिशाली एवं तेजस्वी महामंत्र के अवगाहन में मुझे अहर्निश जिस आनन्द की अनुभूति हुई वह अनिर्वचनीय है। मुझे प्रसन्नता इस बात की है कि मैंने जिस महामंगल रूप महामंत्र में अवगाहन करने का प्रयास किया है, वह अनन्त है।

सिद्धान्त-दर्शन, जीवन-दर्शन, आत्म-दर्शन और परमात्मा-दर्शन के चार दार्शनिक खंभों पर महामंत्र का आध्यात्मिक, व्यावहारिक, दार्शनिक एवं वैज्ञानिक स्वरूप वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत करने का मैंने विनम्र प्रयास किया है अत: इस कृति का नाम–''नमस्कार महामंत्र-एक अनुशीलन (भाग-1)'' रखा गया है। इस कृति को मैंने दो भागों में विभाजित किया है। प्रथम भाग में महामंत्र के दार्शनिक और वैज्ञानिक पक्ष को उजागर करने का प्रयास किया है तथा द्वितीय भाग में महामंत्र के आध्यात्मिक और व्यावहारिक पक्ष को उजागर करने का प्रयत्न रहा है। जो लेख इस पुस्तक के निर्माण में प्रेरक और नींव तुल्य बना उस लेख की सामग्री पुस्तक के अलग-अलग लेखों में पुनरावर्तित होने पर भी उसको मैंने यथावत् ही रखा है, जो द्वितीय भाग के प्रारम्भ में लिखा गया है। इस पुस्तिका में महामंत्र के जिन प्रयोगों को दर्शाया गया है, वे काफी प्रभावी पाये गये हैं। नि:संदेह नमस्कार महामंत्र व्यक्ति से लेकर समष्टि तक सत् परिवर्तन की क्रांतिकारी क्षमता रखता है। सचमुच यह महामंत्र महाशक्ति है, महाऊर्जा है, महाप्राण है, महानिधि है, महामंगल है और महाश्रुत रूप है।

गण या गणि के अनन्त उपकारों से उपकृत, आचार-निष्ठ, संघ व संघपति के प्रति समर्पित, तत्त्वज्ञान व संस्कार प्रदात्री स्वर्गीया साध्वी श्री सुखदेवां जी एवं स्वर्गीया तपस्विनी साध्वी श्री भत्तूजी के जीवन से मुझे जो मिला उसे कभी नहीं भुलाया जा सकेगा। मुझे सहज ही गौरव की अनुभूति होती है कि गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी ने जीवन निर्माण के उन अपूर्व क्षणों में मुझे उन कलात्मक हाथों में सौंपा जिससे यह लघुकृति निर्मित हो पाई।

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

मैं श्रद्धानत हूँ गणाधिपति गुरुदेव श्री तुलसी के प्रति जिन्होंने इस वीणा में किया वीणा का सरगम ललाम। अर्थात् अमूल्य संयम रत्न प्रदान कर मेरे जीवन की दिशा को बदला।

श्रद्धासिक्त प्रणति है आचार्यश्री महाप्रज्ञजी के पावन पादारविन्दों में जिनकी अतीन्द्रिय चेतना से नि:सृत पवित्र रश्मियों के उजास ने मेरे पथ को प्रशस्त किया है।

प्रणत हूँ आचार-निष्ठा और अध्यात्म-निष्ठा के प्रतीक श्रद्धेय युवाचार्य श्री महाश्रमण जी के प्रति जिनकी अबोल प्रेरणा हर पल शक्ति-संप्रेषण और शक्ति-संवर्धन करती रहती है।

नत मस्तक हूँ अहर्निश सारस्वत साधना में संलग्न आदरणीया महाश्रमणी साध्वी प्रमुखा श्री कनकप्रभा जी के प्रति जिनके वात्सल्य नेत्र हमें प्रोत्साहित करते रहते हैं। मैं आभारी हूँ मुख्य नियोजिका जी की जिन्होंने मुझे इस दिशा में उत्साहित किया। बहुत-बहुत कृतज्ञ हूँ अग्रगामी साध्वी श्री सरोज कुमारीजी के प्रति जिनका पूरा-पूरा सहयोग व मार्ग-दर्शन मुझे बराबर मिलता रहा। विशेष आभारी हूँ साध्वी श्री चन्द्र लेखाजी एवं साध्वी श्री सोमप्रभाजी की जिन्होंने समीक्षा के द्वारा मेरी लेखनी को सुदृढ़ बनाया तो प्रमोद भावना के द्वारा मेरे उत्साह को भी बढ़ाया। साध्वीश्री उदितयशाजी, साध्वीश्री संगीतप्रभाजी एवं समणी सुमेधाप्रज्ञाजी ने भी प्रुफ संशोधन में अपना पूरा श्रम लगाया है। मैं नहीं भूल सकती साध्वीश्री प्रभावनाश्री जी एवं साध्वी विनीतयशाजी को भी जिनका व्यक्त-अव्यक्त सतत् सहयोग मिलता रहा। कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ साध्वीश्री विमल प्रज्ञाजी, साध्वीश्री श्रुतयशाजी, साध्वीश्री शुभ्रयशाजी एवं समणी मल्लिप्रज्ञाजी व समणी प्रतिभाप्रज्ञाजी के प्रति, जिन्होंने इस कृति को सजाने, संवारने एवं समृद्ध बनाने में अपने श्रम, समय और शक्ति का नियोजन किया है। मैं भाव-विभोर हूँ प्रोफेसर डी.सी. जैन के प्रति जिन्होंने मुझे अपने जीवन के विराट लक्ष्य नमस्कार महामंत्र में अभिस्नात करने के लिए प्रेरित किया। अन्त में मैं उन सब विद्वद् रचनाकारों की हृदय से आभारी हूँ जिनकी साहित्य-स्रोतस्विनी में यत्किंचित् अवगाहन कर मुझे महामंत्र को समझने की दिव्य दृष्टि मिली। जो पढ़ा, समझा वही संक्षिप्त रूप में प्रस्तुत किया है। प्रेस संबंधी दायित्व के निर्वहन में बहिन कमला कठोतिया ने जो श्रम और सहयोग किया है, उसे भी भुलाया नहीं जा सकता। मोहन ने इस पुस्तक के टंकण कार्य को शीघ्रातिशीघ्र

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org

टंकित करके मेरे कार्य में सहयोग दिया है। यह कृति पाठक के हृदयाम्बुधि में आनन्द की उर्मियों का सृजन करेगी, इसी भावना के साथ नमस्कार महामंत्र जो अनन्त-अनन्त आस्थाओं का केन्द्र है, इस महामंत्र के विषय में मेरा स्वकथ्य क्या हो सकता है, केवल नमन-नमन अन्तहीन नमन.......।

''कोई भीगता बाहर से कोई भीगता भीतर से।
पर वह भीगना भीगना है जो आर-पार भीगे॥
मैं इस महामंत्र रूपी गंगोत्री में आर-पार भीग जाऊँ।
परमेष्ठी नमन से अपने शुद्ध स्वरूप को शीघ्र पाऊँ॥''

इन्हीं मंगल भावों के साथ हृदय सम्राट आचार्यश्री तुलसी की निम्नोक्त पंक्तियों से यह स्वकथ्य स्वतथ्य बने, दीक्षा पर्याय के पच्चीसवें वर्ष प्रवेश पर गुरुदेव के इसी आशीर्वाद के साथ-

''नमन हमारा अरहंतों को, सिद्धों को आचार्यों को है।
आगम पुरुष उपाध्यायों को, और लोक के सब सन्तों को॥
नमस्कार पंचक यह पावन, करता सब पापों का नाश।
सभी मंगलों में प्रधान है, प्रकटे भीतर दिव्य प्रकाश॥''

-साध्वी पुण्ययशा

© Jain Vishva Bharati For Personal & Private Use Only https://books.jvbharati.org